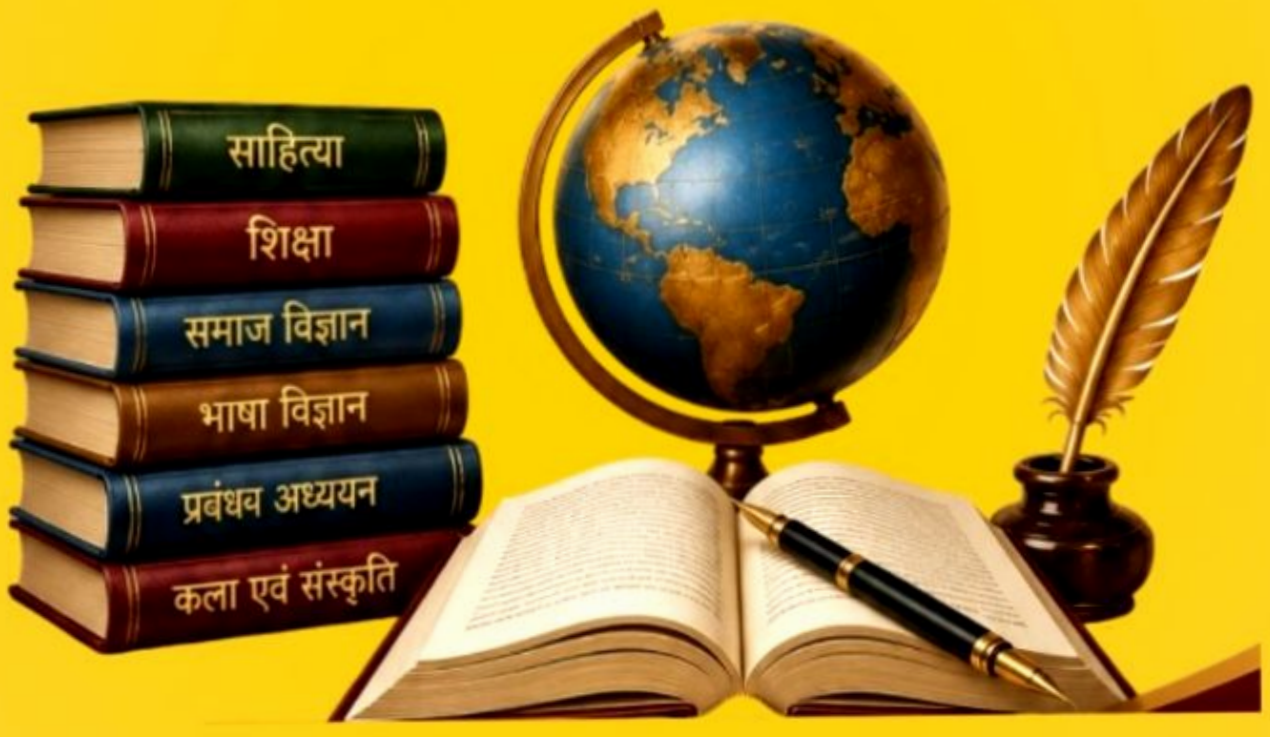
Bohal Shodh Manjusha Aug. 2026 Dr. Naresh Sihag, Advocate

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115
Impact Factor 8.642
Aug. 2026
Vol.-24, Issue-2

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL



Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 24 I SSUE-2(part-one) (अगस्त 2026) ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल
विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

Disclaimer :
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा 'शंकी'
पूर्व शिक्षा अधिकारी,
साहित्यकार,
चरखी दादरी (हरियाणा)

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि.
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुन्द्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी
हिन्दी विभाग, त्रिभुवन वि.वि.
काठमाण्डू, नेपाल।

डिल्लीराम शर्मा संग्रौला
विभागीय प्रमुख, संस्कृत, पत्रकारिता, हिंदी
पद्मकन्या बहुमुखी कैंपस, काठमांडू, नेपाल।

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. इस्पाक अली
पूर्व प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

डॉ. मो. रियाज़ खान
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

डॉ. वनिता कुमारी
च. दादरी (हरियाणा)

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. वर्षा रानी
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास।

डॉ. करमजीत कौर
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब।

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. शबाना हबीब
गवर्नमेंट कॉलेज फॉर वूमैन
त्रिवन्तपुरम, केरल।

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत विभाग
हरियाणा सरकार।

प्रो. नरेन्द्र सोनी
सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी,
हरियाणा सरकार।

पठान चिन्ना जानी
सहायक प्राध्यापक
सी.एच.एस.डी. सेंट थेरेसा
महिला महाविद्यालय (ए)
एलुरु, आंध्र प्रदेश

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. राजकुमारी शर्मा
श्रीराम कॉलेज,
नई दिल्ली।

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

श्री राकेश शंकर भारती
साहित्यकार व अनुवादक,
यूक्रेन।

डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

डॉ. शिवकरण निमल
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान
एसपीसी राजकीय महा. भीम, राजस्थान।

डॉ. नीलम आर्या
संस्कृत विभाग
उत्तर प्रदेश।

डॉ. रोहतास
एस.जी.पी.जी.आई.एम.एस.
लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

डॉ. वैशाली सिंह
सहायक प्राध्यापक
शिक्षा विभाग, एस.एम.टी. अनार देवी
टी.टी. कॉलेज, बखराना
(कोटपुतली) राजस्थान।

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
भारत कला भवन
वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

डॉ. रवि सुण्डयाल
हॉयर एजुकेशन डिपार्टमेंट
जम्मू कश्मीर।

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य, कैलिफोर्निया।

डॉ. रेखा रानी
गवर्नमेंट रणबीर कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. के.के. मल्होत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

शोध-पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतू बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्दीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव-10, कृतिदेव-21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :- उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र : टेलीफोन, मोबाईल नं., ई-मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

★ शोध पत्र 2000-2500 शब्दों (4-6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

★ पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

★ शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

★ सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/- रू. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/- रू. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

बैंक का नाम	:	पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार, भिवानी (हरियाणा)
खाता धारक का नाम	:	गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी
बैंक खाता संख्या	:	1182000109078119
IFSC Code	:	PUNB0118200
MICR CODE	:	127024003

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc.,)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

अनुक्रमणिका - अगस्त 2026

क्र०	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	संपादकीय	डॉ० नरेश सिहाग	10-10
2.	कालिदास के साहित्य में नारी : एक आलोचनात्मक अध्ययन	Dr. Vinita Sharma	11-15
3.	मैत्रयी पुष्पा के उपन्यासों मे नारी विमर्श : एक आलोचनात्मक अध्ययन	डॉ० सुमन कुमारी	16-19
4.	नागार्जुन के उपन्यासों में स्त्री	शिल्पी सक्सेना, प्रोफेसर निशात बानो	20-25
5.	भारतीय समाज में अंधविश्वास के प्रतिरोध में उभरती दलित चेतना	डॉ. भाविनकुमार अंबालाल वणकर	26-28
6.	अर्चना पैन्यूली के उपन्यास 'परिवर्तन' में अन्तरपीढ़ी संघर्ष	प्रियंका	29-32
7.	भगवद्गीता में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा: एक आलोचनात्मक अध्ययन	Dr. Vinita Sharma	33-36
8.	आदिवासी समाज की सामाजिक एवं राजनितिक स्थिति	मोनिका	37-42
9.	स्त्री विमर्श आधुनिक युग के संदर्भ में	सुनीता कुमारी	43-45
10.	केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रेम	अलिका कुमारी	46-50
11.	हाडौती की हथकरघा विरासत और स्वाधीनता संग्राम: मांगरोल के खादी उद्योग का ऐतिहासिक व सामाजिक-आर्थिक विश्लेषण	विवेक सोनी	51-56
12.	ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦਾ ਸਥਾਨ	ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ	57-62
13.	ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਦਾ ਮਹੱਤਵ	ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ ਬਲਵਿੰਦਰ ਕੌਰ	63-67
14.	Gendered Encounters with Policing and the Reconstitution of State Accountability	Keerthi P R	68-71
15.	समकालीन प्रेम का समाजशास्त्र और काव्य-चेतना: 'पनसोखा है इन्द्रधनुष' के विशेष संदर्भ में	ब्लेस्सनराजू	72-76
16.	यात्रा-साहित्य और जनपदीयता का अंतर्संबंध	अमित कुमार यादव	77-79
17.	उपेन्द्रनाथ अश्क -हिन्दी नाटक के यथार्थवादी स्वर	Dr.Amalakumary.B	80-83
18.	ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ : ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਯੋਗਦਾਨ	ਅਵਤਾਰ ਸਿੰਘ	84-89
19.	भारतीय ज्ञान परंपरा और मानव संसाधन प्रबंधन: एक	प्रो. विरेंद्र मुवेल	90-96

	वर्णनात्मक अध्ययन		
20.	बढ़ते आर्थिक विकास का पर्यावरण पर प्रभाव: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. सुल्तान मोरे	97-104
21.	'दीवार में एक खिड़की रहती थी' : आम आदमी की रोज़मर्रा की ज़िंदगी का दस्तावेज़	अंजना प्रसाद . एस	105-107
22.	“असमिया लोक साहित्य: सामान्य परिचय एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष”	मालोती बांगठाई	108-113
23.	मलयज की डायरी: सृजन के विविध आयाम	डॉ० वागीश तिवारी	114-121
24.	कण्वाश्रम का ऐतिहासिक भौगोलिक विश्लेषण	डॉ० चन्द्रप्रभा कण्डवाल	122-126
25.	पद्य साहित्य के अनुवाद की चुनौतियाँ	डॉ० रेणु देवी	127-130
26.	1084 वें की माँ : एक किशोरवय बागी की क्रांति गाथा	डॉ० अंकित भोई	131-134
27.	'मुड़-मुड़के देखता हूँ' (राजेन्द्र यादव) में प्रतिरोध	Breese k Rudhan, Dr. Hema. G	135-143
28.	State Intervention in the Context of Forced Return: Nitaqat and Kerala's Policies on Migrant Reintegration	Risana CP	144-148
29.	सामाजिक नियमों के पुनर्मूल्यांकन का आग्रह (काशीनाथ सिंह के उपन्यास 'महुआचरित' के संदर्भ में)	कमलेश कुमार मीना	149-153
30.	“झारखण्ड के लोक संगीत के शैक्षिक उपयोग एवं विद्यार्थियों के सांस्कृतिक बोध के विकास का अध्ययन”	अजय सिंह	154-158
31.	संजीव के ‘धार’ उपन्यास में आदिवासी जीवन का संघर्ष और संवेदना	डॉ० हेलन मेरी ए जे	159-164
32.	आधुनिक हिंदी प्रबंधकाव्य: ह्रास और रूपांतरण	फरहीन	165-168
33.	बारेला जनजाति में पलायन की प्रवृत्ति तथा उसके स्वरूप का अध्ययन (बड़वानी जिले के विशेष संदर्भ में)	डॉ. परम सिंह बरडे	169-171
34.	'आधागाँव' उपन्यास में सौहार्द एवं साम्प्रदायिकता	गुडिया शाक्य, डॉ० गौरव रस्तोगी	172-175
35.	पड़हा ईयार-सइहा अरा टून्टा खूटा	जगदीश उराँव	176-179
36.	जितेन्द्र श्रीवास्तव के काव्य में स्त्री जीवन की विविध छवियाँ	शुभम शर्मा	180-184
37.	आदिवासी 'उराँव' समाज की पारंपरिक पर्व-त्योहारों में हावी	कृष्णा उराँव	185-187

	होती आधुनिकता		
38.	हिन्दी यात्रा-साहित्य: भाषागत वैशिष्ट्य	बबीता कुमारी, डॉ०अरुण लता वर्मा	188-193
39.	"समकालीन हिन्दी कविता में जन सरोकार और मानवीय मूल्य"	गोविन्द कुमार	194-200
40.	बुद्धचरित में प्रतिपादित चार आर्यसत्य	डॉ. अश्विनी कुमार	201-203
41.	बदलते भू-राजनीतिक परिदृश्य में हिंद महासागर : भारत की भूमिका का विश्लेषण	आशीष कुमार	204-207
42.	भारत छोड़ो आन्दोलन : पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार के सन्दर्भ में	रामजीत राम	208-211
43.	आधुनिक जीवन में पारिवारिक विघटन और मानवीय मूल्यों का संकट	डॉ. जे. अजिता कुमारी	212-215
44.	केरल के वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में राजभाषा हिंदी की समस्याएँ	सुजिता एल.	216-219
45.	खाड़ी देशों में राजनितिक अस्थिरता और भारत के ऊर्जा हित : कच्चे तेल एवं प्राकृतिक गैस की आपूर्ति के संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ० अमित कुमार	220-224
46.	उषा यादव के बाल कथा-साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ	आशा कुमारी	225-231

संपादकीय



ज्ञान-सृजन की निरंतर यात्रा और शोध की सामाजिक प्रतिबद्धता

प्रिय पाठकों!

सप्रेम नमस्कार।

'बोहल शोध मंजूषा' के अगस्त 2026 अंक को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यंत प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। प्रत्येक अंक हमारे लिए केवल शोध-पत्रों का संकलन नहीं, बल्कि ज्ञान, चिंतन, विमर्श और नवाचार की सतत यात्रा का एक नया पड़ाव होता है। यह पत्रिका उन शोधकर्त्ताओं, शिक्षकों, साहित्यकारों और युवा विद्वानों के लिए एक ऐसा साझा मंच है जहाँ विचारों को अभिव्यक्ति, शोध को दिशा और समाज को नई दृष्टि प्रदान करने का प्रयास किया जाता है।

आज का समय तीव्र परिवर्तन का समय है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल तकनीक, वैश्वीकरण, पर्यावरणीय संकट, नई शिक्षा नीति, सांस्कृतिक चुनौतियाँ तथा बदलते सामाजिक मूल्य हमारे सामने अनेक प्रश्न उपस्थित कर रहे हैं। ऐसे समय में शोध का उद्देश्य केवल तथ्यों का संकलन भर नहीं रह जाता, बल्कि समाज के समक्ष उपस्थित जटिल समस्याओं का विवेकपूर्ण विश्लेषण और उनके समाधान की खोज भी बन जाता है। एक सार्थक शोध वही है जो पुस्तकालयों की अलमारियों तक सीमित न रहकर समाज के जीवन से जुड़ सके और जनहित में उपयोगी सिद्ध हो।

'बोहल शोध मंजूषा' का उद्देश्य केवल शोध-पत्र प्रकाशित करना नहीं, बल्कि एक स्वस्थ अकादमिक संस्कृति का निर्माण करना भी है। हम ऐसे विमर्श को बढ़ावा देना चाहते हैं जिसमें मतभेद के स्थान पर संवाद, प्रतिस्पर्धा के स्थान पर सहयोग और संकीर्णता के स्थान पर व्यापक मानवीय दृष्टिकोण को महत्व मिले। ज्ञान का वास्तविक विस्तार तभी संभव है जब विचार स्वतंत्र हों और शोध समाज के प्रति उत्तरदायी हो।

हम अपने सभी लेखकों, समीक्षकों, संपादकीय मंडल, सलाहकारों तथा पाठकों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं, जिनके सहयोग और विश्वास ने **'बोहल शोध मंजूषा'** को निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर रखा है। विशेष रूप से युवा शोधार्थियों से हमारा आग्रह है कि वे मौलिक चिंतन, गंभीर अध्ययन और नैतिक शोध-परंपरा को अपनाते हुए भारतीय ज्ञान-संपदा को समृद्ध बनाने में सक्रिय भूमिका निभाएँ।

आइए, हम सब मिलकर शोध को केवल शैक्षणिक उपलब्धि का माध्यम न मानकर समाज, संस्कृति और मानवता के कल्याण का सशक्त साधन बनाएँ। ज्ञान तभी सार्थक है जब वह जीवन को प्रकाशित करे, समाज को दिशा दे और आने वाली पीढ़ियों के लिए एक समृद्ध बौद्धिक विरासत का निर्माण करे।

इसी विश्वास और शुभकामना के साथ हम **'बोहल शोध मंजूषा'** के अगस्त 2026 अंक को आपके समक्ष समर्पित करते हैं। आशा है कि यह अंक आपके ज्ञान-विस्तार, चिंतन और शोध-अभिरुचि को नई ऊर्जा प्रदान करेगा।

आपके सुझावों और प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

– **संपादक**

बोहल शोध मंजूषा

अगस्त 2026

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 11-15
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कालिदास के साहित्य में नारी : एक आलोचनात्मक अध्ययन

Dr. Vinita Sharma
(Sanskrit department)
Monad University, Hapur

संस्कृत साहित्य में महाकवि कालिदास का स्थान सर्वोच्च कवियों में माना जाता है। उनकी रचनाओं में प्रकृति, प्रेम, संस्कृति, धर्म, दर्शन तथा मानवीय मूल्यों का अत्यंत सुंदर समन्वय दिखाई देता है। कालिदास के साहित्य की एक प्रमुख विशेषता उनकी नारी-दृष्टि है। उन्होंने नारी को केवल सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति के रूप में चित्रित नहीं किया, बल्कि उसे संवेदनशील, बुद्धिमती, कर्तव्यनिष्ठ, स्वाभिमानी, प्रेममयी तथा आध्यात्मिक चेतना से युक्त व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत किया है। उनके साहित्य में शकुन्तला, पार्वती, इन्दुमती, सुदक्षिणा, उर्वशी तथा यक्षपत्नी जैसे स्त्री-पात्र भारतीय संस्कृति के आदर्शों के साथ-साथ नारी के विविध मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक आयामों को अभिव्यक्त करते हैं।

यद्यपि कालिदास की रचनाओं में नारी के सौन्दर्य का अत्यंत सूक्ष्म एवं कलात्मक चित्रण मिलता है, तथापि उनकी नारी-दृष्टि केवल शारीरिक आकर्षण तक सीमित नहीं है। वे नारी को परिवार, समाज तथा संस्कृति की धुरी के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। आधुनिक नारीवादी विमर्श की दृष्टि से देखा जाए तो कालिदास के साहित्य में एक ओर पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था की झलक मिलती है, वहीं दूसरी ओर स्त्री के आत्मसम्मान, उसकी भावनात्मक गरिमा तथा उसके नैतिक व्यक्तित्व का भी सशक्त चित्रण दिखाई देता है। शोध-पत्र में कालिदास के प्रमुख ग्रंथों—*अभिज्ञानशाकुन्तलम्*, *कुमारसम्भवम्*, *रघुवंशम्*, *मेघदूतम्* तथा *ऋतुसंहार*—के आधार पर नारी के स्वरूप का आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है। साथ ही आधुनिक साहित्यिक एवं नारीवादी दृष्टिकोण से कालिदास की नारी-दृष्टि का मूल्यांकन भी प्रस्तुत किया गया है।

संस्कृत साहित्य के इतिहास में महाकवि कालिदास का व्यक्तित्व अनुपम एवं अद्वितीय है। भारतीय काव्य परम्परा में उन्हें "कविकुलगुरु" की संज्ञा दी गई है। उनकी रचनाओं में काव्य-सौन्दर्य, भाव-गाम्भीर्य, प्रकृति-चित्रण, सांस्कृतिक चेतना तथा मानवीय संवेदनाओं का अद्भुत समन्वय मिलता है। कालिदास केवल एक महान कवि ही नहीं, बल्कि सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक तथा समाज-दृष्टा भी थे।

कालिदास के साहित्य की सबसे उल्लेखनीय विशेषताओं में से एक उनकी नारी-दृष्टि है। उन्होंने नारी को भारतीय संस्कृति के आदर्शों से जोड़ते हुए उसके बहुआयामी व्यक्तित्व का चित्रण किया है। उनके स्त्री-पात्र केवल पुरुष के जीवन की सहचरी नहीं हैं, बल्कि प्रेरणास्रोत, शक्ति, त्याग, करुणा तथा आत्मसम्मान की प्रतीक भी हैं।

भारतीय साहित्य में नारी का चित्रण वैदिक काल से ही विविध रूपों में मिलता है। ऋग्वेद में गार्गी, मैत्रेयी तथा अपाला जैसी विदुषी स्त्रियों का उल्लेख है। महाभारत एवं रामायण में सीता, द्रौपदी, कुन्ती तथा गांधारी जैसे पात्र नारी की विविध भूमिकाओं को व्यक्त करते हैं। कालिदास ने इस परम्परा को और अधिक कलात्मक एवं मानवीय बनाया।

आधुनिक युग में स्त्री-विमर्श (Feminist Discourse) साहित्यिक अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र बन चुका है। इस दृष्टिकोण से कालिदास के साहित्य का पुनर्पाठ आवश्यक हो जाता है, क्योंकि उनकी रचनाओं में स्त्री की गरिमा और सामाजिक मर्यादा के साथ-साथ तत्कालीन समाज की पितृसत्तात्मक संरचना भी प्रतिबिम्बित होती है।

कालिदास का साहित्य एवं नारी-दृष्टि

कालिदास के समस्त साहित्य में नारी का अत्यंत सम्मानजनक चित्रण मिलता है। उनकी दृष्टि में नारी केवल सौन्दर्य की प्रतिमा नहीं है, बल्कि वह संस्कृति की वाहक, प्रेम की संवाहिका तथा परिवार एवं समाज की आधारशिला है। कालिदास ने नारी के बाह्य एवं आन्तरिक दोनों सौन्दर्यों को समान महत्त्व दिया है। उनके यहाँ सौन्दर्य केवल शरीर का नहीं, बल्कि शील, करुणा, विनय, धैर्य, बुद्धिमत्ता तथा त्याग का भी है। यही कारण है कि उनके स्त्री-पात्र आज भी भारतीय साहित्य में आदर्श माने जाते हैं।

उनकी नारी-दृष्टि में प्रकृति और स्त्री का अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध दिखाई देता है। शकुन्तला का आश्रम-जीवन, पार्वती की तपस्या, इन्दुमती की कोमलता तथा यक्षपत्नी का विरह—इन सभी में प्रकृति और नारी एक-दूसरे के पूरक बन जाते हैं।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् में नारी का स्वरूप

कालिदास के नाटकों में **अभिज्ञानशाकुन्तलम्** को विश्व-साहित्य की महानतम कृतियों में स्थान प्राप्त है। इस नाटक की नायिका शकुन्तला भारतीय नारी के आदर्श स्वरूप का प्रतिनिधित्व करती है। शकुन्तला का जन्म ऋषि विश्वामित्र और अप्सरा मेनका से हुआ, किन्तु उसका पालन-पोषण ऋषि कण्व के आश्रम में हुआ। इसलिए उसमें प्राकृतिक सरलता, निष्कपटता तथा आध्यात्मिक संस्कारों का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है।

कालिदास शकुन्तला का परिचय केवल उसकी रूप-सुन्दरता से नहीं देते, बल्कि उसके संवेदनशील हृदय के माध्यम से कराते हैं। वह आश्रम के वृक्षों को अपने परिवार का सदस्य मानती है। पशु-पक्षियों के प्रति उसका वात्सल्य यह दर्शाता है कि वह प्रकृति के साथ आत्मीय सम्बन्ध रखती है। दुष्यन्त से उसका प्रेम भी केवल आकर्षण नहीं, बल्कि भावनात्मक एवं नैतिक सम्बन्ध है। गान्धर्व-विवाह के पश्चात जब दुष्यन्त उसे भूल जाते हैं, तब भी शकुन्तला अपने आत्मसम्मान को नहीं छोड़ती। राजसभा में उसका संवाद अत्यन्त मार्मिक एवं प्रभावशाली है। वह सत्य का साहसपूर्वक प्रतिपादन करती है और अपने सम्मान की रक्षा करती है।

यह प्रसंग स्पष्ट करता है कि कालिदास की नारी केवल आज्ञाकारी पत्नी नहीं, बल्कि स्वाभिमानी व्यक्तित्व भी है। शकुन्तला के चरित्र में करुणा, प्रेम, धैर्य, क्षमा तथा मातृत्व का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। वह अपने पुत्र भरत का पालन-पोषण अकेले करती है और परिस्थितियों का साहसपूर्वक सामना करती है। इस दृष्टि से शकुन्तला भारतीय साहित्य की सबसे सशक्त नायिकाओं में से एक है।

आलोचनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो शकुन्तला का जीवन पुरुष-प्रधान सामाजिक व्यवस्था से प्रभावित है। दुर्वासा के शाप और दुष्यन्त की विस्मृति के कारण उसे अनेक कष्ट सहने पड़ते हैं। आधुनिक स्त्रीवादी आलोचना यह प्रश्न उठाती है कि इन परिस्थितियों में दोषी पुरुष की अपेक्षा स्त्री को अधिक पीड़ा क्यों सहनी पड़ती है। तथापि कालिदास शकुन्तला की गरिमा को कहीं भी कम नहीं होने देते। अंततः सत्य की विजय होती है और उसका सम्मान

पुनः स्थापित होता है। इसी कारण *अभिज्ञानशाकुन्तलम्* केवल प्रेम-कथा नहीं, बल्कि नारी की गरिमा, धैर्य और आत्मसम्मान की भी कथा है।

कालिदास के साहित्य

महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि एवं नाटककार माने जाते हैं। भारतीय साहित्यिक परम्परा में उन्हें "कविकुलगुरु" की उपाधि प्राप्त है। उनकी रचनाओं में भारतीय संस्कृति, धर्म, दर्शन, प्रकृति, प्रेम, मानवीय संवेदना तथा आदर्श जीवन-दर्शन का अद्वितीय समन्वय मिलता है। यद्यपि उनके जीवनकाल के संबंध में विद्वानों में मतभेद है, तथापि अधिकांश इतिहासकार उन्हें गुप्तकाल (चौथी–पाँचवीं शताब्दी ईस्वी) का महान साहित्यकार मानते हैं। यह काल भारतीय इतिहास का "स्वर्णयुग" माना जाता है, जिसका प्रभाव कालिदास के साहित्य में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

कालिदास की साहित्यिक प्रतिभा का विस्तार महाकाव्य, नाटक तथा खण्डकाव्य तीनों विधाओं में समान रूप से दृष्टिगोचर होता है। उनकी भाषा सरल, मधुर, परिमार्जित तथा अलंकारों से समृद्ध है। उनके काव्य में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास आदि अलंकारों का अत्यंत स्वाभाविक प्रयोग मिलता है। इसी कारण उन्हें "उपमा कालिदासस्य" कहकर स्मरण किया जाता है।

कालिदास की सात प्रामाणिक रचनाएँ सर्वमान्य हैं—

महाकाव्य

1. **रघुवंशम्**
2. **कुमारसम्भवम्**

खण्डकाव्य

1. **मेघदूतम्**
2. **ऋतुसंहार**

नाटक

1. **अभिज्ञानशाकुन्तलम्**
2. **विक्रमोर्वशीयम्**
3. **मालविकाग्निमित्रम्**

इन सभी रचनाओं में नारी विभिन्न रूपों में उपस्थित है—कहीं वह आदर्श पत्नी है, कहीं तपस्विनी, कहीं प्रेमिका, कहीं माता, कहीं देवी तथा कहीं त्याग और करुणा की प्रतिमूर्ति।

कालिदास की नारी-दृष्टि

कालिदास के साहित्य में नारी केवल सौन्दर्य का विषय नहीं है। उन्होंने नारी को जीवन की सृजनात्मक शक्ति के रूप में चित्रित किया है। उनके स्त्री-पात्रों में आत्मसम्मान, संवेदनशीलता, धैर्य, त्याग, बुद्धिमत्ता तथा कर्तव्यपरायणता का समन्वय मिलता है। वे नारी के शारीरिक सौन्दर्य का वर्णन अवश्य करते हैं, किन्तु उससे कहीं अधिक उसके आन्तरिक गुणों पर बल देते हैं।

कालिदास की नारी भारतीय संस्कृति के आदर्शों का प्रतिनिधित्व करती है। वह परिवार की मर्यादा, सामाजिक उत्तरदायित्व तथा धार्मिक आस्था का पालन करती है, किन्तु आवश्यकता पड़ने पर अपने सम्मान एवं सत्य की रक्षा के लिए दृढ़तापूर्वक खड़ी भी होती है। यही कारण है कि शकुन्तला, पार्वती, उर्वशी, इन्दुमती तथा सुदक्षिणा जैसे पात्र आज भी साहित्यिक आदर्श माने जाते हैं।

कुमारसम्भवम् में पार्वती का व्यक्तित्व

कुमारसम्भवम् कालिदास का अत्यंत महत्वपूर्ण महाकाव्य है, जिसमें भगवान शिव एवं पार्वती के विवाह तथा कार्तिकेय के जन्म का वर्णन किया गया है। इस महाकाव्य की नायिका पार्वती भारतीय नारी के आदर्श स्वरूप की प्रतिनिधि हैं। पार्वती केवल रूपवती युवती नहीं, बल्कि दृढ़ संकल्प, तप, त्याग तथा आत्मबल की प्रतिमूर्ति हैं। शिव को पति रूप में प्राप्त करने के लिए वे कठोर तपस्या करती हैं। यह तपस्या केवल व्यक्तिगत इच्छा की पूर्ति के लिए नहीं, बल्कि देवताओं एवं सम्पूर्ण सृष्टि के कल्याण के लिए भी आवश्यक थी, क्योंकि तारकासुर-वध हेतु कार्तिकेय का जन्म अनिवार्य था।

कालिदास ने पार्वती के व्यक्तित्व में सौन्दर्य और शक्ति का अद्भुत समन्वय प्रस्तुत किया है। वे एक ओर अत्यंत कोमल एवं विनम्र हैं, तो दूसरी ओर अदम्य साहस एवं धैर्य से युक्त हैं। उनकी तपस्या यह सिद्ध करती है कि स्त्री केवल भावुक नहीं, बल्कि कठिन परिस्थितियों का धैर्यपूर्वक सामना करने में भी सक्षम है। शिव द्वारा उनकी परीक्षा लेना तथा अंततः उनके गुणों से प्रभावित होकर उन्हें स्वीकार करना यह दर्शाता है कि कालिदास के अनुसार विवाह का आधार केवल रूप नहीं, बल्कि चरित्र, तप, समर्पण और नैतिक उत्कृष्टता होना चाहिए।

आधुनिक स्त्रीवादी दृष्टि से देखा जाए तो पार्वती का चरित्र स्त्री की सक्रिय भूमिका (Agency) को व्यक्त करता है। वे अपने जीवन का लक्ष्य स्वयं निर्धारित करती हैं और उसे प्राप्त करने के लिए कठिन साधना करती हैं। अतः पार्वती का चरित्र केवल आदर्श पत्नी का नहीं, बल्कि आत्मनिर्णय करने वाली सशक्त स्त्री का भी प्रतीक है।

रघुवंशम् में नारी-चित्रण

रघुवंशम् में कालिदास ने रघुवंश के अनेक राजाओं का वर्णन किया है। इस महाकाव्य में इन्दुमती, सुदक्षिणा, कौशल्या तथा सीता जैसे स्त्री-पात्र अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं।

(क) इन्दुमती

इन्दुमती स्वयंवर में अपनी इच्छा से अज का चयन करती हैं। यह प्रसंग स्त्री की स्वतंत्र इच्छा एवं निर्णय-क्षमता का परिचायक है। विवाह के पश्चात वे आदर्श पत्नी एवं रानी के रूप में चित्रित की गई हैं।

उनकी आकस्मिक मृत्यु पर अज का विलाप संस्कृत साहित्य की अत्यंत मार्मिक घटनाओं में से एक है। इससे स्पष्ट होता है कि कालिदास नारी को केवल पुरुष की आश्रिता नहीं मानते, बल्कि उसके अभाव को परिवार एवं समाज की अपूरणीय क्षति के रूप में चित्रित करते हैं।

(ख) सुदक्षिणा

राजा दिलीप की पत्नी सुदक्षिणा आदर्श सहधर्मिणी का स्वरूप प्रस्तुत करती हैं। वे अपने पति के प्रत्येक धार्मिक एवं सामाजिक कार्य में सहभागी बनती हैं। नन्दिनी गौ की सेवा में भी उनका योगदान समान रूप से महत्वपूर्ण है।

सुदक्षिणा का चरित्र यह स्पष्ट करता है कि कालिदास के अनुसार वैवाहिक जीवन समान सहभागिता, सहयोग और पारस्परिक सम्मान पर आधारित होना चाहिए।

विक्रमोर्वशीयम् एवं मालविकाग्निमित्रम् में नारी

विक्रमोर्वशीयम् की नायिका उर्वशी प्रेम, सौन्दर्य और समर्पण की प्रतीक है। वह स्वर्ग की अप्सरा होते हुए भी मानवीय भावनाओं से पूर्ण है। उसका प्रेम त्याग, करुणा और निष्ठा से परिपूर्ण है।

मालविकाग्निमित्रम् की नायिका मालविका कला, विनम्रता और सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति है। यद्यपि इस नाटक में राजदरबार की पृष्ठभूमि है, फिर भी कालिदास ने मालविका के चरित्र में आत्मसम्मान और नैतिक मर्यादा को प्रमुख स्थान दिया है।

कालिदास के स्त्री-पात्रों का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि वे नारी को केवल अलंकरण या पुरुष-कथा का गौण पात्र नहीं बनाते। अधिकांश स्थानों पर कथा का नैतिक एवं भावनात्मक केन्द्र नारी ही होती है। यद्यपि उनके

साहित्य पर तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था का प्रभाव दिखाई देता है, तथापि उनके स्त्री-पात्रों में आत्मसम्मान, संवेदनशीलता, निर्णय-क्षमता तथा नैतिक दृढ़ता जैसे गुण उन्हें संस्कृत साहित्य के अन्य अनेक पात्रों से विशिष्ट बनाते हैं। कालिदास की नारी-दृष्टि में आदर्शवाद अवश्य है, किन्तु वह केवल कल्पना पर आधारित नहीं है। उनके पात्र मानवीय भावनाओं, संघर्षों और संबंधों की वास्तविकता से जुड़े हुए हैं। इसी कारण उनकी नायिकाएँ आज भी साहित्यिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विमर्श का महत्वपूर्ण विषय बनी हुई हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. अय्यर, सी.वी. (1987)। कालिदास: उनकी कला और संस्कृति। भारतीय विद्या भवन.
2. कीथ, ए.बी. (1928)। संस्कृत साहित्य का इतिहास. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
3. कृष्णमूर्ति, के. (1994)। कालिदास में अध्ययन. साहित्य अकादमी.
4. मैकडोनेल, ए.ए. (1900)। संस्कृत साहित्य का इतिहास. विलियम हेनीमैन.
5. राइडर, ए.डब्ल्यू. (ट्रांस.). (1912). शकुंतला और अन्य लेख. जे. एम. डेंट एंड संस।
6. शर्मा, जी.आर. (1971)। कालिदास: एक सांस्कृतिक अध्ययन। चौखम्बा विद्याभवन।
7. शास्त्री, एच. (1961)। कालिदास. मोतीलाल बनारसीदास.
8. श्रीनिवास शास्त्री, वी. (1964)। कालिदास. साहित्य अकादमी.
9. विंटरनित्ज़, एम. (1963)। भारतीय साहित्य का इतिहास (खंड 3)। मोतीलाल बनारसीदास.
10. दासगुप्ता, एस.एन. (1962)। संस्कृत साहित्य का इतिहास. मोतीलाल बनारसीदास.

Email-Sharma.vinita8791@gmail.com

Mobile-8171771385

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 16-19
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी विमर्श : एक आलोचनात्मक अध्ययन

डॉ. सुमन कुमारी
आरा, बिहार

सार (Abstract)

हिंदी साहित्य में नारी विमर्श ने बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से एक सशक्त वैचारिक आंदोलन का रूप ग्रहण किया है। इस विमर्श का मूल उद्देश्य स्त्री की अस्मिता, स्वतंत्रता, समानता तथा उसके सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकारों की स्थापना करना है। समकालीन हिंदी कथा साहित्य में मैत्रेयी पुष्पा का नाम उन प्रमुख महिला उपन्यासकारों में लिया जाता है जिन्होंने ग्रामीण समाज की स्त्री के जीवन–संघर्ष, शोषण, विद्रोह और आत्मसम्मान को अत्यंत यथार्थवादी दृष्टि से प्रस्तुत किया है। उनके उपन्यासों में स्त्री केवल करुणा की पात्र नहीं है, अपितु वह सामाजिक रूढ़ियों और पितृसत्तात्मक व्यवस्था के विरुद्ध संघर्षरत एक सशक्त व्यक्तित्व के रूप में उभरती है।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास चाक, इदन्नमम्, अल्मा कबूतरी, अगनपाखी तथा विजन में स्त्री जीवन की विविध समस्याओं, लैंगिक असमानता, जातिगत विषमता, आर्थिक निर्भरता तथा सामाजिक दमन का सजीव चित्रण मिलता है। प्रस्तुत शोध आलेख में इन उपन्यासों का नारीवाद दृष्टिकोण से विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि लेखिका स्त्री को आत्मनिर्भर, संघर्षशील और परिवर्तनकारी शक्ति के रूप में स्थापित करती हैं।

प्रमुख शब्द : मैत्रेयी पुष्पा, नारी विमर्श, स्त्री अस्मिता, पितृसत्ता, स्त्री–सशक्तिकरण, ग्रामीण समाज, हिंदी उपन्यास।

भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति समय के साथ अनेक परिवर्तनों से गुजरी है। वैदिक काल में जहाँ उसे सम्मानजनक स्थान प्राप्त था, वहीं मध्यकाल में सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक कारणों से उसकी स्वतंत्रता सीमित होती चली गई। आधुनिक युग में शिक्षा, सामाजिक सुधार आंदोलनों तथा संवैधानिक अधिकारों के परिणामस्वरूप स्त्री ने अपनी पहचान और अधिकारों के लिए संघर्ष आरंभ किया। इसी संघर्ष ने साहित्य में नारी विमर्श को जन्म दिया।

नारी विमर्श केवल स्त्री–पुरुष समानता का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह स्त्री के अस्तित्व, आत्मसम्मान, स्वतंत्र निर्णय क्षमता और सामाजिक न्याय की स्थापना का आंदोलन है। हिंदी साहित्य में महादेवी वर्मा, कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी, मृदुला गर्ग, प्रभा खेतान तथा मैत्रेयी पुष्पा जैसी लेखिकाओं ने स्त्री जीवन की वास्तविक समस्याओं को केंद्र में रखा।

मैत्रेयी पुष्पा का साहित्य विशेष रूप से ग्रामीण भारत की स्त्रियों की पीड़ा, संघर्ष और प्रतिरोध का दस्तावेज है। उन्होंने स्त्री के जीवन को किसी आदर्शवादी दृष्टि से नहीं, अपितु सामाजिक यथार्थ के धरातल पर चित्रित किया है। उनके उपन्यासों की नायिकाएँ सामाजिक बंधनों को चुनौती देती हैं तथा अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष करती हैं।

नारी विमर्श : अवधारणा एवं स्वरूप

नारी विमर्श अंग्रेजी शब्द Feminism का हिंदी रूप है। इसका उद्देश्य समाज में स्त्री के प्रति व्याप्त असमानता, शोषण, भेदभाव तथा लैंगिक अन्याय के विरुद्ध वैचारिक और सामाजिक चेतना का विकास करना है। नारी विमर्श स्त्री को पुरुष के विरोध में नहीं, बल्कि उसके समान अधिकारों और सम्मानजनक अस्तित्व की स्थापना के पक्ष में खड़ा करता है।

प्रख्यात विचारक सिमोन द बोउवार ने अपनी प्रसिद्ध कृति The Second Sex में कहा है–

- ^One is not born, but rather becomes, a woman.'

अर्थात् स्त्री जन्म से नहीं बनती, बल्कि सामाजिक संरचनाएँ उसे वैसा बनाती हैं। यह कथन नारी विमर्श की आधारभूत अवधारणा को स्पष्ट करता है कि स्त्री की पहचान जैविक से अधिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक निर्माण का परिणाम है।

भारतीय संदर्भ में नारी विमर्श का स्वरूप पश्चिमी नारीवाद से कुछ भिन्न है। यहाँ स्त्री की समस्याएँ जाति, वर्ग, धर्म, परंपरा और ग्रामीण जीवन से भी गहराई से जुड़ी हुई हैं। इसलिए भारतीय नारी विमर्श में सामाजिक न्याय, समान अवसर और सांस्कृतिक अस्मिता पर विशेष बल दिया गया है।

मैत्रेयी पुष्पा का साहित्य इसी भारतीय नारी विमर्श का प्रतिनिधि साहित्य है। उनके यहाँ स्त्री केवल घर–परिवार तक सीमित नहीं रहती, बल्कि सामाजिक अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाती है। उनकी नायिकाएँ शिक्षा, आत्मनिर्भरता, स्वाभिमान और स्वतंत्र निर्णय के माध्यम से अपने व्यक्तित्व का निर्माण करती हैं।

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

मैत्रेयी पुष्पा का जन्म सन् 1944 उ०प्र० अलीगढ़ जिले के इगलास तहसील सिकुर्रा नामक गाँव में मूल रूप से वे वहाँ के एक ब्राह्मण परिवार में जन्मी थी। उनके व्यक्तित्व और प्रारंभिक जीवन की कुछ झलकियाँ अवश्य प्राप्त होती हैं। उनकी माता का नाम कस्तूरी देवी और पिता का नाम हीरालाल पांडे था, जो उपाध्याय गोत्र के ब्राह्मण थे। उस समय समाज में ब्राह्मण वर्ग को विशेष सम्मान और सुविधाएँ प्राप्त थीं, इसलिए उनके सामाजिक परिवेश और अनुभव अन्य वर्गों, विशेषकर दलित समाज, से भिन्न थे।

समकालीन हिंदी कथा–साहित्य में मैत्रेयी पुष्पा का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने ग्रामीण भारतीय समाज, विशेषतः बुंदेलखंड के जनजीवन, स्त्री–अस्मिता, जातीय विषमता, लैंगिक असमानता तथा सामाजिक विसंगतियों को अपनी रचनाओं का आधार बनाया। उनका साहित्य अनुभवजन्य यथार्थ पर आधारित है, इसलिए उनकी भाषा, शैली और कथ्य में कृत्रिमता नहीं, बल्कि जीवन की सजीवता और प्रामाणिकता दिखाई देती है।

मैत्रेयी पुष्पा ग्रामीण परिवेश में पली–बढ़ी होने के कारण उन्होंने स्त्री जीवन की वास्तविक परिस्थितियों को निकट से देखा और अनुभव किया। यही कारण है कि उनके उपन्यासों में गाँव की स्त्री केवल संवेदना की पात्र नहीं अपितु संघर्ष और परिवर्तन की वाहक के रूप में सामने आती है।

मैत्रेयी पुष्पा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे स्त्री को केवल करुणा की मूर्ति या आदर्श गृहिणी के रूप में प्रस्तुत नहीं करतीं, बल्कि उसे एक स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में स्थापित करती हैं। उनके साहित्य में स्त्री अपनी इच्छाओं, निर्णयों और अधिकारों के प्रति सजग दिखाई देती है। वह अन्याय का विरोध करती है और सामाजिक रूढ़ियों को चुनौती देने का साहस रखती है।

उनकी भाषा में बुंदेली लोकजीवन की सहजता, लोक–प्रतीक, मुहावरे और लोक–संस्कृति की सजीव उपस्थिति दिखाई देती है। यही कारण है कि उनका कथा–साहित्य भारतीय ग्रामीण समाज का प्रामाणिक दस्तावेज माना जाता है।

समग्र विश्लेषण

मैत्रेयी पुष्पा के सभी उपन्यासों का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि उनकी स्त्रियाँ परिस्थितियों से समझौता करने वाली नहीं हैं। वे संघर्ष करती हैं, निर्णय लेती हैं, अन्याय का प्रतिरोध करती हैं तथा अपने अस्तित्व को स्थापित करती हैं।

उनके साहित्य में नारी विमर्श केवल सैद्धांतिक विचार नहीं, बल्कि जीवन के कठोर यथार्थ से जुड़ा हुआ है। उन्होंने ग्रामीण समाज की उस स्त्री को आवाज दी है जिसकी पीड़ा लंबे समय तक साहित्य में उपेक्षित रही।

भाग–3

सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ

मैत्रेयी पुष्पा के अधिकांश उपन्यास ग्रामीण भारतीय समाज की पृष्ठभूमि पर आधारित हैं। उनके साहित्य में गाँव का सामाजिक ढाँचा, जातीय व्यवस्था, धार्मिक मान्यताएँ, पारिवारिक संबंध तथा लोक–संस्कृति का अत्यंत सजीव चित्रण मिलता है।

ग्रामीण समाज में स्त्री को अनेक स्तरों पर संघर्ष करना पड़ता है। वह केवल पुरुष–सत्ता से ही नहीं, बल्कि जाति–व्यवस्था, आर्थिक अभाव, अशिक्षा तथा सामाजिक रूढ़ियों से भी जूझती है।

लेखिका ने यह स्पष्ट किया है कि स्त्री–मुक्ति केवल कानूनी अधिकारों से संभव नहीं है। इसके लिए समाज की मानसिकता, शिक्षा तथा सांस्कृतिक मूल्यों में परिवर्तन आवश्यक है।

आलोचनात्मक मूल्यांकन

मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य का सबसे बड़ा योगदान यह है कि उन्होंने हिंदी उपन्यास को ग्रामीण स्त्री की वास्तविक समस्याओं से जोड़ा।

उनकी रचनाएँ स्त्री के संघर्ष, स्वाभिमान तथा स्वतंत्र अस्तित्व की समर्थक हैं।

फिर भी कुछ आलोचकों ने यह प्रश्न उठाया है कि उनके साहित्य में देह–विमर्श अपेक्षाकृत अधिक मुखर है, जिससे कभी–कभी सामाजिक विमर्श गौण प्रतीत होता है। दूसरी ओर अनेक आलोचक इसे स्त्री–अधिकारों की निर्भीक अभिव्यक्ति मानते हैं।

वास्तव में मैत्रेयी पुष्पा का साहित्य भारतीय समाज की जटिल संरचना को समझने का सशक्त माध्यम है। उनकी नायिकाएँ न तो परंपरा का पूर्ण निषेध करती हैं और न ही आधुनिकता का अंधानुकरणय वे विवेकपूर्ण स्वतंत्रता और मानवीय गरिमा की पक्षधर हैं।

भाग–4

मैत्रेयी पुष्पा की रचनाओं में स्त्री अपनी अस्मिता की खोज करती है, पितृसत्तात्मक व्यवस्था को चुनौती देती है तथा अपने अधिकारों के प्रति सजग दिखाई देती है। उनके उपन्यासों की नायिकाएँ सामाजिक बंधनों को तोड़ते हुए आत्मसम्मान और स्वतंत्र अस्तित्व की स्थापना करती हैं। यही कारण है कि उनका साहित्य केवल स्त्री–विमर्श तक सीमित नहीं रहता, बल्कि सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक मूल्यों और मानवीय गरिमा के व्यापक विमर्श का हिस्सा बन जाता है।

चाक में सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा, इदन्नमम् में स्त्री–अस्मिता, अल्मा कबूतरी में जाति एवं लैंगिक शोषण का यथार्थ, अगनपाखी में आत्मनिर्णय की चेतना तथा विजन में आधुनिक स्त्री के मानसिक संघर्ष का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण मिलता है। इन सभी उपन्यासों का समग्र अध्ययन यह सिद्ध करता है कि मैत्रेयी पुष्पा स्त्री को समाज का सक्रिय और परिवर्तनकारी केंद्र मानती हैं।

उनका साहित्य भारतीय नारीवाद की उस धारा का प्रतिनिधित्व करता है जो पश्चिमी नारीवाद का अनुकरण मात्र नहीं है, बल्कि भारतीय समाज, ग्रामीण संस्कृति, जातीय संरचना और लोकजीवन की वास्तविकताओं से निर्मित है। यही कारण है कि उनकी रचनाएँ समकालीन हिंदी साहित्य में अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती हैं।

और यह कहा जा सकता है कि मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास नारी–विमर्श की दृष्टि से हिंदी साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं। उन्होंने स्त्री को मौन से संवाद, पराधीनता से स्वाधीनता और शोषण से प्रतिरोध की ओर अग्रसर किया है। उनके साहित्य का अध्ययन भारतीय समाज में स्त्री की बदलती भूमिका और उसकी चेतना को समझने के लिए अत्यंत उपयोगी एवं प्रासंगिक है।

संदर्भ सूची (MLA शैली)

1. पुष्पा, मैत्रेयी। चाक। नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
2. पुष्पा, मैत्रेयी। इदन्नमम्। नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
3. पुष्पा, मैत्रेयी। अल्मा कबूतरी। नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।

4. पुष्पा, मैत्रेयी। अगनपाखी। नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
5. पुष्पा, मैत्रेयी। विजन। नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
6. पुष्पा, मैत्रेयी। बेतवा बहती रही। नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
7. पुष्पा, मैत्रेयी। स्मृति–दंश। नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
8. वाल्मीकि, ओमप्रकाश। दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र। राधाकृष्ण प्रकाशन।
9. खेतान, प्रभा। स्त्री उपेक्षिता। राजकमल प्रकाशन।
10. अग्रवाल, सुषमा। हिंदी उपन्यास और नारी चेतना। वाणी प्रकाशन।
11. शर्मा, रामविलास। नई कविता और अस्तित्ववाद। राजकमल प्रकाशन।
12. बच्चन सिंह। हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास। राधाकृष्ण प्रकाशन।
13. निर्मला जैन। साहित्य का समाजशास्त्र। वाणी प्रकाशन।
14. गोपाल राय। हिंदी उपन्यास का इतिहास। राजकमल प्रकाशन।
15. मैनेजर पाण्डेय। साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका। वाणी प्रकाशन।
16. सुधीश पचौरी। उत्तर आधुनिक साहित्य विमर्श। वाणी प्रकाशन।
17. कृष्णा सोबती। ऐ लड़की। राजकमल प्रकाशन।
18. मन्नू भंडारी। महाभोज। राधाकृष्ण प्रकाशन।
19. महादेवी वर्मा। श्रृंखला की कड़ियाँ। लोकभारती प्रकाशन।
20. मृदुला गर्ग। कठगुलाब। राजकमल प्रकाशन।
21. आशारानी व्होरा। भारतीय नारी : दशा और दिशा। नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
22. हिंदी साहित्य की विभिन्न शोध–पत्रिकाओं में प्रकाशित मैत्रेयी पुष्पा एवं नारी–विमर्श संबंधी शोध आलेख।

suman49.bsc@gmail.com.
संपर्क सूत्र :– 8434398620

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 20-25
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

नागार्जुन के उपन्यासों में स्त्री

शिल्पी सक्सेना,
पीएचडी शोधार्थी, हिन्दी विभाग,
महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली।
प्रोफेसर निशात बानो
(विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग) शोध पर्यवेक्षक,
राजकीय महिला पी.जी. महाविद्यालय, रामपुर 244901

सारॉंशः– अपने साहित्य के लंबे जीवनकाल में आम आदमी की व्यथा को सुनने वाले एवं दूसरों के सुख–दुख को साझा करने वाले एवं राजनीति पर अपनी रचनाओं के माध्यम से तीक्ष्ण टिप्पणियों के लिए मशहूर अदम्य साहस एवं जिजीविषा के कवि एवं कथाकार बाबा नागार्जुन जी हिंदी के प्रगतिशील साहित्य में एक अलग स्थान रखते हैं। नागार्जुन जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। उन्होंने अपना पूरा जीवन साहित्य सृजन में ही व्यतीत किया। नागार्जुन जी को मानवीय संवेदनाओं के चितेरे उपन्यासकार के रूप में भी जाना जाता है। उनके साहित्य में एक तरफ बिहार के मिथिलांचल के ग्रामीण जीवन, सामाजिक समस्याओं, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जीवन की झलक दिखाई पड़ती है, वहीं उनके उपन्यासों में दूसरी ओर मानवीय दशाओं एवं चरित्रों का अद्भुत् खरापन उभर कर सामने आता है। नागार्जुन जी ने अपने कथा साहित्य में युवक–युवतियों, वर्ण–भेद, अमीर–गरीब तथा शोषक एवं शोषण के ऐसे पारदर्शी चित्र चित्रित किए हैं, कि उनके आर–पार देखते हुए हम समाज की बुनियादी दशाओं को बखूबी टटोल एवं परख सकते हैं। नागार्जुन जी ने आम लोगों के जनजीवन को अत्यंत निकटता से देखा एवं उसका अनुभव किया है। उनके उपन्यासों में ग्रामीण परिवेश की स्त्रियों की दयनीय स्थिति एवं उनके कष्टप्रद जीवन को समाज के सामने उजागर करने का प्रयास किया गया है। उनके उपन्यासों में मिथिला अंचल के जनजीवन में व्याप्त विभिन्न प्रकार की रूढ़ियों, समस्याओं का चित्रण हमें यथावत् रुप में इस प्रकार देखने को मिलता है, जैसे उसके चित्र हमारी आँखों के सामने सजीव हो उठते हैं। नागार्जुन जी के पात्र मुख्यतः समाज के सताए हुए वे लोग हैं, जो समाज में उत्पन्न बुराइयों को दूर करने का साहस भी रखते हैं।

बीज शब्दः– राजनीति, बहुमुखी, प्रतिभा, समस्याओं, जनजीवन, दयनीय, संवेदनाओं, प्रगतिशील आदि।

नागार्जुन जी के उपन्यासों में स्त्रीः– नागार्जुन जी के उपन्यासों में मानवीय संवेदनाओं के साथ–साथ चरित्रों का भी अत्यंत ही अद्भुत खरापन उभर कर सामने आता है। जिस प्रकार के वातावरण में उनके कथा साहित्य के पात्र आते हैं, उसी प्रकार के वातावरण का निर्वहन उनकी समूची कथावस्तु विस्तार में होता चलता है। नागार्जुन जी के कथा साहित्य के समाज में युवक–युवतियों, स्त्री–पुरुष एवं शोषित जनता और जातिगत वर्ण भेद के ऐसे पारदर्शी चित्र हमें देखने को मिलते हैं, जिनके आर–पार देखते हुए भी समाज की बुनियादी दशाओं को अच्छी तरह से टटोला एवं परखा जा सकता है। नागार्जुन जी ने यहाँ स्त्री के दो पक्षों को दर्शाया है। एक ओर तो उन्होंने स्त्री को कमजोर एवं असहाय रूप में दर्शाया है, वहीं दूसरी तरफ उन्होंने दर्शाया है, कि यदि एक स्त्री को भी अपनी प्रतिभा दिखाने का मौका मिले

तो वह भी दुर्गा का रूप धारण कर सकती है। वह अपने ऊपर हो रहे अत्याचारों का डटकर विरोध कर सकती है।

नागार्जुन की ने अपने साहित्य में जिसप्रकार सामाजिक विकृतियों पर प्रहार किया है, वह समाज के दर्शन की गहन दृष्टि के बिना संभव नहीं था। उन्होंने आमआदमी की एवं मुख्य रूप से स्त्री की पीड़ा को अत्यंत निकटता से देखा एवं अनुभव किया। यही कारण हैं, कि उनके उपन्यासों में ही नहीं अपितु काव्य में भी स्त्री जीवन की पीड़ा को उन्होंने दर्शाने का प्रयास किया है।

"जारे राक्षस, जारे पुरुष–जात!
तेरी ही मेरी मार रही है हम,
कराह रही हैं, कुहर रही हैं हम
खरीदते हो हमें देकर के टाका,
रुलाते हो हमें होकर बाप और काका
गुजरता है पानी की तरह दिन मेरा
जीवन हो गया है कैसा कठिन मेरा
सुने कौन आज, किसे क्या कहूँ,
फटो हे धरती, समा में जाऊँ!"

इन पंक्तियों के माध्यम से नागार्जुन जी ने यह दर्शाने का प्रयास किय किया है, कि किस प्रकार पुरुष समाज से एक स्त्री अत्यंत ही पीड़ित है, वह अपने सबसे नजदीकी रिश्तों, अपने पिता, भाई, चाचा आदि पर भी विश्वास नहीं कर पाती है, जिस कारण वह अपने अस्तित्व को समाप्त कर अपने जीवन को खत्म करना चाहती है।

इसी प्रकार 'विलाप' नामक मैथिली की एक कविता में लेखक ने एक बाल विधवा के विलाप को दर्शाया है,

"नन्ही सी कली पीती थी दूध,
सुनती थी राजा रानी की कथा।"

इस कविता में नागार्जुन जी ने एक छोटी बच्ची की व्यथा को दर्शाया है, कि जिस उम्र में बच्चे दूध पीते, खेलते और राजा रानी की कथा सुनते हैं, उस उम्र में बच्ची को एक विधवा का जीवन व्यतीत करना पड़ रहा है। नागार्जुन जी ने जिस तरह अपने काव्य में स्त्रियों की दयनीय स्थिति एवं व्यथा को दर्शाया है, उसी प्रकार अपने उपन्यासों में भी ऐसे समाज का चित्रण किया है, जहाँ पर पुरुषों के सामने स्त्री का कोई अस्तित्व नहीं था। स्त्री ना तो अपने विचार पुरुषों के सामने रख सकती थी और ना ही वह घर से बाहर निकल सकती थी।

एक सत्ता को दिए एक साक्षात्कार में बाबा नागार्जुन जी ने कहा है, कि यदि **"विधाता हो तो सात या नौ वर्ष के लिए माँग लें, कि हमको स्त्री बनाओ, मुझे लगता है कि सबसे बड़ी हरिजन (दलित) जो हैं, वो स्त्रियाँ हैं, इनका दलितपना कब समाप्त होगा, यह हम सबको नजर नहीं आ रहा है, विदेशी रेडियो से हम सुनते हैं, कि औरत को तेरह तरह के भार झेलने होते हैं, गर्भ भार उसकी तुलना में बहुत कम है।"**

यह सब कहने का साहस केवल बाबा नागार्जुन की ही कर सकते थे। नागार्जुन जी के उपन्यासों के विषय में गोपाल राय जी ने लिखा है, कि ''नागार्जुन प्रेमचंद की परंपरा के उपन्यासकार हैं। प्रेमचंद ने उत्तर प्रदेश के अवध–बनारस क्षेत्र के किसानों की कथा के माध्यम से समस्त उत्तर भारत के किसानों की भाग्य विधाता प्रस्तुत् की थी। नागार्जुन ने भी यही मिथिलांचल के गांव को अपनी कर्मभूमि बनाकर किया। नागार्जुन के सामने मिथिला का सामाजिक रूढ़ियों से बुरी तरह जकड़ा हुआ समाज था। जहां विधवाओं को जीवित ही मृत होने की पीड़ा भुगतनी पड़ती थी। जहां आठ–दस वर्ष की बालिकाओं का विवाह साठ–साठ वर्ष के बूढ़ों से कर दिया जाता था।

गौरी:– गौरी नागार्जुन जी के प्रतिष्ठित उपन्यास 'रतिनाथ की चाची' के प्रमुख पात्र एवं उपन्यास की नायिका है। गौरी अत्यंत सुंदर और रूपवती है। उसका विवाह दरिद्र और रोगी वैधनाथ झा से हुआ था। अत्यंत ही कम उम्र में गौरी विधवा हो जाती है। उसका देवर जयनाथ भी विदुर है। उसके बेटे का नाम रतिनाथ है। जयनाथ गौरी की इच्छा के विरुद्ध उससे संबंध स्थापित करता है, जिस कारण गौरी गर्भवती हो जाती है। जयनाथ को पुरुष होने के कारण से कोई कुछ नहीं कहता, परंतु गौरी का सब विरोध करते

हैं। उसकी कोई गलती ना होने पर भी समाज उसे गलत निगाहों से देखाता है, और उसका विरोध करता है। यहाँ तक की लोग उससे बोलचाल बंद कर देते हैं। उसके घर आना जाना भी बंद कर देते हैं। गौरी की साहसी माँ उसका गर्भपात करवाकर उसको इस कलंक से मुक्त करती है। गौरी के बेटे को अपनी माँ के जब इस कार्य का पता चलता है, तो वह अपनी माँ का तिरस्कार करने लगता है। चाची के लिए रतिनाथ जीने का सहारा बन जाता है और चाची अपना जीवन आत्मनिर्भर होकर तापसी की तरह बिताती हैं। बेटे उमानाथ ने तो उसका इतना तिरस्कार किया, कि वह गौरी के अंतिम संस्कार के लिए भी नहीं आया। गौरी का चरित्र भावुकता पूर्ण होते हुए भी संजीदगी से भरा हुआ है। उपन्यास के अंत में आते–आते चाची के सारे कलंक एवं दोष का परिमार्जन हो जाता है। गौरी चाची के चरित्र में मातृत्व एवं वात्सल्य उसकी आँखों में झलकता है। रतिनाथ द्वारा चाचा के प्रति कह गए यह शब्द **''ऐसा लगता है, कि दिन दिनों दिन तुम देवता होती चली जा रही हो।''** रतिनाथ और चाची के प्रेम को दिखाते हैं। इस प्रकार इस उपन्यास में यह दिखाया गया है, कि गौरी निर्दोष होकर भी लोगों के सामने दोषी बन जाती है। नागार्जुन जी ने यहाँ पर चाची के एक रूप को दिखाया है, जहाँ वह अबला के रूप में प्रतिदिन प्रताड़ित होती है, वहीं दूसरी ओर नागार्जुन जी हमारे सामने चाची के ऐसे रुप को रखते हैं, जिसमें वह जागरूक स्त्री के रूप में कार्य करती है। वह गाँव में मलेरिया फैलने पर इसकी मुफ्त दवा बाँटती है। उन क्रांतिकारियों को अपना पुराना कंबल देकर सहायता करती है, जो जमीदारों के विरुद्ध संघर्ष करते हैं। इसके साथ ही वह अखिल भारतीय शोध प्रतियोगिता में अव्वल आती है।

मधुरीः– यह नागार्जुन जी के एक अन्य उपन्यास **वरुण** के बेटे की प्रमुख नायिका है। वह बहुत ही सामान्य युवती है तथा उसका कद मझोला है। मधुरी खुनखुन की बड़ी बेटी है। वह मंगल नाम के युवक से प्रेम करती है, किंतु किसी और से विवाह हो जाने के बाद में वह उससे संबंध तोड़ देती है। मधुरी मंगल से कहती है, कि **''देखो मंगल! अब हम छोकरा, छोकरी नहीं रहे। धूल मिट्टी के बचकाने खेल काफी खेल चुके। सायान समझदार माँ–बाप और सास–ससुर ने तुम पर जो जिम्मेदारी सौंपी है उनसे जी चुराना कायरता होगी। तुम्हें अपनी घरवाली के प्रति वफादार होना, मुझे अपने घर वाले के प्रति।..... मैं तुम्हारा घर बर्बाद नहीं करना चाहती मंगल, मैं नहीं चाहती कि एक औरत की सिंदूरी मांग पर कालिक पोतती रहूँ।''**

वहीं दूसरी ओर मधुरी मछुआरों के साथ खड़ी होकर जमींदारों का विरोध करती है। हमारे सामने एक ऐसी स्त्री की छवि दिखाई पड़ती है, जो समाज के आदर्श रूप की पक्षधर है। वह गरीब एवं निम्न वर्ग के लोगों के हक के लिए खड़ी होने में सक्षम है। वह अन्याय के विरुद्ध खड़ी होने एवं उनके खिलाफ आवाज उठाने से डरती नहीं। इस उपन्यास के माध्यम से नागार्जुन जी ने मधुरी के रूप में स्त्री के व्यक्तित्व एवं चरित्र के दो भागों को हमारे सामने प्रस्तुत् किया है। पहले भाग में माधुरी के विवाह से पहले का वर्णन किया है। उसमें वह हमें एक प्रियसी एवं अल्हड़ युवती के रूप में दिखाई देती है। वहीं दूसरी ओर वह एक जन चेतना की अलख जगती दिखाई पड़ती है। वह मछुआरों के हक के लिए जिमींदारों के सामने डटकर खड़ी हो जाती है और नारे लगा लगाकर मछुआरों का उत्साह वर्धन करती है। मधुरी के माध्यम से नागार्जुन जी ने दर्शाया है, कि एक स्त्री चाहे तो वह कुछ भी कर सकती है। समय आने पर वह कभी पीछे नहीं हटती

बिसेसरीः– बिसेसरी 'नई पौध' उपन्यास की प्रमुख नारी पात्र है। वैसे तो इस उपन्यास में कोई भी नारी पात्र नायिका नहीं है, परंतु बिसेसरी के रूप में हमें कहीं ना कहीं नायिका के गुण दिखाई पड़ते हैं। वह एक पितविहीन गरीब घर की कन्या है। उसके नाना उसे नौ सौ रुपए में बेचकर उसका बेमेल विवाह करना चाहते थे, परंतु बिसेसरी इससे व्याकुल हो जाती है और वह एक ऐसी स्त्री पात्र के रूप में हमारे सामने आती है, जो सामंती परंपराओं, भ्रष्ट रूढ़ियों एवं थोथी नैतिकता की बलबेदी पर स्त्रियों को चढ़ाए जाने का कट्टर विरोध करती है। वह प्रगतिशील युवकों के साथ मिलकर वेमेल विवाह का विरोध करती है। इस उपन्यास में हमें देखने को मिलता है, कि गाँव के बड़े बुजुर्गों की जीत को तोड़कर किस प्रकार युवा वर्ग ने एक लड़की के जीवन को चौपट होने से बचाया है। वेमेल विवाह की यह समस्या हमारे समाज में आज भी बहुत ही विकराल रूप लिए हुए हैं, जिसमें कभी तो किसी को सामने आना ही पड़ता है। इस उपन्यास में नागार्जुन जी ने दिखाया है, कि स्त्री की जागरूकता ही उसे सामाजिक दमन से बचा सकती है। वह अपना अस्तित्व यदि बचाना चाहे, तो उसे स्वयं ही की क्षमताओं को पहचानना होगा। इस प्रकार यह उपन्यास आकर में लघु होने पर भी प्रभाव के लहजे से बड़ा ही व्यापक साबित हुआ।

चंपाः– चंपा कुंभीपाक उपन्यास की एक प्रमुख नायिका है। जिसका स्थान इसी उपन्यास की दूसरी नायिका भुवन के बराबर है। इस उपन्यास में नागार्जुन जी ने वेश्यावृत्ति के दलदल में छोड़ दी जाने वाली स्त्रियों की लाचारी एवं पीड़ा को बहुत ही बारीकी के साथ प्रस्तुत् किया है। इस उपन्यास के विषय में कहा गया है, कि **"कुंभीपाक में स्त्रियों को बेचने वालों के विरुद्ध स्त्रियों के संघर्ष की गाथा है। नागार्जुन जी ने इस उपन्यास के स्त्री पात्रों के माध्यम से दिखाया है, कि जो स्त्रियाँ समाज द्वारा प्रताड़ित होती है, वह समाज के ठेकेदारों के विरुद्ध विद्रोह का बिगुल भी बजा सकती हैं।"**

चंपा एक सुंदर स्त्री है। वह एक भ्रष्ट इंसान की कामवासना का शिकार होती है, जो रिश्ते में उसके जीजा लगते हैं। अपने जीवन की त्रासदी के बारे में वह बताती है, जिसमें हमें पता चलता है, कि उसके जीजा ने उसे कुलसुम, सरदार जी ने सतवंत और शर्मा जी चंपा बनाया। इस प्रकार वह अपने जीवन में कुंभीपाक होने का तथ्य वह एक वाक्य में ही उजागर कर देती है। हमें इस वाक्य से पता चलता है, कि किस प्रकार अलग–अलग पुरुषों ने उसका शोषण अपनी–अपनी तरह से किया है।

इस प्रकार पहले तो चंपा एक निर्बल स्त्री की भाँति लोगों का शोषण एवं अत्याचार सहन करती, परंतु समय और परिस्थिति के साथ–साथ उसके चरित्र में परिवर्तन आता जाता है। अत्यंत दयनीय और निर्बल स्त्री के रूप में जीवन यापन करने वाली चंपा के जीवन का उद्देश्य उन स्त्रियों की मदद करना हो जाता है, जो वेश्यावृत्ति के दलदल में फँसी हुई है। वह उन सारी स्त्रियों को बाहर निकाल कर और मुक्त करके उनका उत्थान करके, उन्हें एक नया जीवन देना चाहती है। वह नहीं चाहती है, कि जिस प्रकार का जीवन उसने व्यतीत किया कोई अन्य करे। चंपा के माध्यम से नागार्जुन जी ने यह स्पष्ट करने की कोशिश की है, कि यदि घोर अनैतिक कार्यों में लिफ्ट स्त्री को उचित अवसर मिले तो वह स्वयं को सचरित्रता की प्रतिमूर्ति के रूप में स्थापित कर एक आत्मनिर्भर से के रूप में सामने आ सकती है।

भुवनः– भुवन चंपा के समक्ष कुंभीपाक की नायिका है। उसका असली नाम इंदिरा था। उसका जन्म मुंगेर जिले के एक संपन्न परिवार में हुआ था। उसके पति पायलट थे। जिनकी विवाह के कुछ महीने बाद की हवाई दुर्घटना में मृत्यु हो गई थी। जब भुवन के पति की मृत्यु हुई थी, उस समय वह गर्भवती थी। उसका एक रिश्तेदार चिकित्सा करने के बहाने उसे आसनसोल ले गया और वहीं पर उसे एक धर्मशाला में अकेली छोड़कर भाग गया। इसके बाद इंदिरा का जीवन भी उसी कुंभीपाक नामक नर्क में जा फँसा, जहाँ चंपा रहती थी। बहुत ही जल्द उसे इस बात का अनुभव हो गया, कि जिस नर्क में वह रह रही है, वहाँ पर उसका कोई भविष्य नहीं है। वह वहाँ से निकलने की बहुत कोशिश करती है और उसे नीरू नाम की एक युवती से सहायता मिलती है। नीरू की सहायता से वह कुंभीपाक नामक नर्क से मुक्ति पाकर वापस काशी में चली जाती है। जहाँ से उसके सामाजिक सम्मान का मार्ग प्रशस्त हो जाता है।

इमरतियाः– इमरतिया इसी नाम के उपन्यास की प्रमुख नायिका पत्र है। वह एक संन्यासी है और जमानिया के मठ पर रहती है। संन्यासी होने के बाद भी उसके मन में एक सामान्य स्त्री की भाँति विचार एवं उद्‌गार होते हैं। उसके मन में कामवासना मरी नहीं है। वह मठ के बाबा के द्वारा किए जाने वाले घिनौने कार्यों का विरोध करती है और बाबा के प्रति उनकी श्रद्धा भी धीरे–धीरे खत्म हो जाती है। जमानिया के बाबा/इमरतिया उपन्यास में जमानिया का मठ पाखंडी एवं बिलासी साधुओं का अड्डा बना हुआ है। इन मठों में रहने वाले साधुओं के चेलों का मुख्य कार्य अमीरों को पटाकर उनका धन लूटना होता है। जमानिया के बाबा में मठ में इमरतिया का भी शोषण होता है। यह बात इमरतिया को स्वीकार नहीं होती, परंतु उसे मजबूरी में यह सब स्वीकार करना पड़ता है। मठ में रहकर भी उसका शोषण हो रहा है। अब मठ नेताओं के काले धंधों का अड्डा बन चुका था। इस उपन्यास में जनता को ठगने वाले एवं आँखों में धूल झोंकने वाले साधुओं का पर्दाफाश किया गया है। इसके साथ ही साथ जनता के अंधविश्वास का परिचय भी मिलता है। इमरतिया का चरित्र आज की कई ठगी जाने वाली स्त्रियों से प्रासंगिकता करता है।

पारोः– पारो (पार्वती) उपन्यास की प्रधान नायिका है, जिसका वेमेल विवाह 45 वर्षीय चुल्हाई चौधरी के साथ घटक लूच झा द्वारा संपन्न कराया जाता है। वह पारो की माँ के समक्ष चौधरी के अमीरी व ठाठ–बाट की इतनी प्रशंसा करता है, कि उसकी माँ राजी हो जाती है, परंतु दांपत्य जीवन की नींव में ही मेल एवं समर्पण का भाव नहीं है। वे आपस में नहीं मिल पाए। उस समय स्त्री को कुछ बोलने या विरोध करने का कोई अधिकार नहीं था। जिस पर नागार्जुन जी ने पारो की व्यथा को इन शब्दों में व्यक्त किया है, कि **"मुझे दूसरे लोगों ने बताया कि चौधरी जी की उम्र पैंतालीस की है। पहले मैंने उनकी उम्र पैंतीस की**

सुनी थी। मगर जिसे कुछ भी कहने का हक नहीं है, जैसा पैंतीस वर्षों का वर वैसा ही पैंतालीस वर्षों का लंगड़ा रहे या काना, कोढ़ी रहे या पागल, बूढ़ा हो या प्रौढ़–पति साक्षात परमेश्वर होता है, यह शिक्षा तो आपके यहाँ छुटपन से औरतों को मिलती है।"

इन शब्दों के माध्यम से नागार्जुन जी ने भारतीय स्त्री की व्यवस्था को जाँचा व परखा है कि लोक–लाज के भय से पत्नी को पति पर उंगली उठाने का कोई अधिकार नहीं है। इस समाज की एक मान्यता है, इसका शिकार स्त्रियों को ही सदैव होना पड़ता है। पारो बिरजू भैया से कहती है, कि **"जिन्हें आप लोग चौधरी कहते हैं, उनसे मेरा संबंध ही क्या है? पति–पत्नी का संबंध नहीं, हरगिज नहीं।"** पारो के माध्यम से नागार्जुन जी ने बताया है, कि कैसे कच्ची उम्र में कन्याओं को विवाह की वैशाखी थमा दी जाती है। उनका अधिक उम्र के व्यक्ति के साथ विवाह करके उनकी जिंदगी को नर्क के समान बना दिया जाता है। इस तरह पारो भी वेमेल का शिकार हो जाती है तथा उसका पति भी उसकी भावनाओं को नहीं समझ पाता है। आज भी समाज में इस प्रकार की घटनाओं की जानकारी प्राप्त होती है।

बलचनमा की माँः– बलचनमा की माँ अपने जीवन की अनंत विसंगतियों को चलते हुए जमींदार की कड़ी मार खाती हैं, लेकिन अपनी बेटी रेबनी का शील भंग नहीं होने देती। उसने बालचनमा से आँसू भरी आँखों से रो–रोकर बताया था, कि **"बबुआ मर जाना अच्छा है, मगर इज्जत का सौदा करना अच्छा नहीं।"** माँ के इन वाक्यों को सुनकर बलचनमा के जीवन की दिशा ही बदल दी और जीवन में व्याप्त परेशानियों की संख्या के क्रम में भी इसका संघर्ष निरंतर चेतना जागृत करता रहता है। वह एक स्वाभिमानी स्त्री के रूप जमींदारों के यहाँ काम करती हैं। बलचनमा के शब्दों में, **"बड़ी पिटाई पड़ी थी, उस पर आह–उह करके, हायराम करके हमारी मां ने सारा दर्द, सारी पीर निकली..... बड़े भगमंत को ही ऐसी मां मिलती है भैया!"** इस प्रकार बलचनमा का यह कथन उसकी की माँ उसके पुत्र व पुत्री के लिए प्रेम और ममता को दर्शाता है।

रामेसरीः– रामेसरी का चरित्र नई पौध उपन्यास में माँ पुत्री के संबंध के अत्यंत आत्मीय और प्रगतिशील धरातल पर चित्रित है। रामेसरी ने अपनी पुत्री को बड़े ही प्यार से पाल पोसकर बड़ा किया है। रामेसरी बिसेसरी का विवाह बूढे़ व्यक्ति के साथ इसलिए नहीं करना चाहती है, कि उसका जीवन कष्ट में ना हो जाए। वह कहती है, कि बूढ़े के साथ विवाह करने से तो अच्छा है, कि अपनी पुत्री को विष देकर मार दिया जाए। वह सोंचती है, कि **"बिसेसरी को कनेर की गुठली घिसकर पिला दे। क्या करेगी जीकर बिसेसरी? ऐसी जिंदगी से तो मौत लाख गुना बेहतर।"** रामेसरी समाज में उस स्रोत को समाप्त करना चाहती है, जहाँ से समाज में ऐसी विकृतियाँ फैलती हैं और दांपत्य जीवन बर्बाद हो जाता है। रामेसरी अपने माँ–बाप की सबसे बड़ी बेटी थी और 13 वर्ष की उम्र में ही विधवा हो गई थी। उसके पिता ने उसकी बाकी बहनों को बेंच दिया था। नागार्जुन जी ने रामेसरी के माध्यम से ऐसे समाज को चित्रित किया है, जहाँ पर आर्थिक विषमता है। मिथिला के अंचल में स्त्री के क्रय–विक्रय की बहुत बुरी प्रथा विद्यमान है। लोग अत्यंत गरीबी और दरिद्रता के कारण एवं दहेज प्रथा के कारण अपनी पुत्री को बेचने के लिए मजबूर हो जाते हैं या फिर वेमेल विवाह कर देते हैं।

निर्मलाः– निर्मला के माध्यम से नागार्जुन जी ने ऐसी स्त्रियों का चित्रण किया है, जो परिवेश और परिस्थिति का शिकार बनाकर पुरुष जाति द्वारा शोषित होती है। निर्मल का चरित्र एक नायिका के समान है। निर्मला इंदिरा और चंपा से नरकीय जीवन से छुडा लेती है और इंदिरा को अपने मौसेरे भाई की यहाँ भेज देती है। वह अपने पत्र में संक्षेप में लिखकर अंत में लिखती है, कि **"लड़कियों और औरतों की खरीद बिक्री जिसका धंधा था, ऐसे ही एक राक्षस के चंगुल से अपनी छोटी बहन, झपटटा मारकर चील की तरह छीन लाई है।"** निर्मला के अंदर विचार करने की शक्ति और उन विचारों को कार्य रूप देने की हिम्मत है। वह बुद्धिमान स्त्री है। समाज व्यवस्था को सुधारने का उसे उचित अवसर ना मिल सका, इसलिए वह कहती है, कि **"मैं भी तो पढ़ लिख सकती थी। मैं भी तो भाभी की तरह इंटर कॉलेज में प्रोफेसर हो सकती थी।"**

इस प्रकार नागार्जुन जी ने निर्मला के माध्यम से यह दिखाया है, कि भारत गुलामी की जंजीरों से तो मुक्त हो गया है, परंतु सामाजिक रूढ़ियों एवं परंपराओं से आज भी मुक्त नहीं हो पाया है। स्त्री को आज भी यहाँ बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है और समाज से तिरस्कृत, हेय और घृणित जीवन जीने पर भ्रष्ट भेड़ियों की कामवासना का शिकार होने पर मजबूर हैं।

उगनीः– उगनी एक बाल–विधवा है। वह एक विदुर व्यक्ति कामेश्वर की ओर आकर्षित हो जाती है। वह उससे शादी करना चाहती है, किंतु समाज उन दोनों के प्रेम को स्वीकार नहीं करता। वे दोनों समाज से भाग कर गाँव से दूर चले जाते हैं, परंतु फिर भी उन्हें पकड़वाकर लोग जेल में बंद कर देते हैं। जेल का हवलदार भाभीखन सिंह उसके सौंदर्य पर मोहित हो जाता है और उसके साथ बलात्कार करता है। दोनों जब जेल से छूटते हैं, तो विवाह कर लेते हैं। दोनों का प्रेम छल–कपट से अत्यंत दूर है। वे यौन तृप्ति के लिए प्रेम नहीं करते। उगनी और कामेश्वर दोनों ही बड़ी निर्भीकता से एक दूसरे को पति–पत्नी स्वीकार करते हैं। नागार्जुन जी उगनी के माध्यम से दिखाते हैं, कभी–कभी स्त्रियाँ असहाय भाव से परपुरुष की कमवासना को स्वीकार कर लेती है, परंतु फिर हिम्मत दिखाकर खुद को उसे नर्क से निकाल लेती हैं।

सारांशः– नागार्जुन जी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से स्त्री के प्रत्येक रूप को दर्शाने का प्रयास किया है। उन्होंने स्त्री जीवन की विभिन्न समस्याओं के साथ–साथ उसके समाधान के लिए भी निष्कर्ष भी निकले हैं। एक तरफ जहाँ उन्होंने स्त्री जीवन की विभिन्न समस्याओं, जैसे दहेज प्रथा, बाल–विवाह, अनमेल विवाह, वेश्यावृत्ति अदि का चित्रण किया है, वहीं दूसरी ओर स्त्री के प्रतिशोध भाव, स्वाभिमान, मातृत्व, मर्यादा आदि गुणों का भी चित्रण किया है। नागार्जुन जी दैहिक पवित्रता की बात ना करके मन की पवित्रता की बात बोलते हैं। जिसमें बहुत सी रूढ़ियों अपने आप ही टूट जाती हैं। नागार्जुन जी स्त्री जीवन की समस्याओं को उजागर करके उन्हें आत्मनिर्भर एवं स्वाभिमानी बनाने की कोशिश करते हैं। वे स्त्री की शिक्षा पर अधिक जोर देते हैं। नागार्जुन जी का मानना है, कि यदि स्त्री सशक्त होगी तो प्राचीन समय से चले आ रहे पुरुष जाति के अत्याचारों एवं शोषणों को समाप्त कर समाज में अपना उचित स्थान प्राप्त कर सकती है। वे कहते हैं, कि उसका अपना भी कोई अस्तित्व है, नागार्जुन जी स्त्री को हर दिशा में स्वतंत्र करके उनके स्वतंत्र व्यक्तित्व की कल्पना करते हैं। वे एक ऐसे समाज के बारे में सोचते हैं, जहाँ स्त्री एवं पुरुष दोनों में समानता हो और नारी को भी पूर्ण सम्मान एवं अधिकार प्राप्त हों।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः–

१.) नागार्जुन रचनावलीः संपादक शोभाकांत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018,
२.) उपन्यासकार नागार्जुनः बाबूराम गुप्त, श्याम प्रकाशन, जयपुर, 1985,
३.) नागार्जुन का रचना संसारः विजय बहादुर सिंह, संभावना प्रकाशन, हापुड़, 1982,
४.) नागार्जुन के नारी पात्रः अर्जुन धरत, शब्द शक्ति प्रकाशन, कानपुर, 1990,
५.) हिंदी उपन्यास में नारी चित्रणः बिंदु अग्रवाल, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली, 1968.

शिल्पी सक्सेना
पीएचडी शोधार्थी, हिन्दी विभाग, महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली 243006
पता –479, विद्या बाल विकास स्कूल के पीछे, शेषनाग मंदिर के पास, ज्वालानगर, रामपुर 244901
मोबाइल नंबर–9807644868
मेलआईडी – saxenashilpi974@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 26-28
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारतीय समाज में अंधविश्वास के प्रतिरोध में उभरती दलित चेतना

डॉ. भाविनकुमार अंबालाल वणकर
सहायक प्राध्यापक,
नवगुजरात आर्ट्स एंड कोमर्स कोलेज, बालासिनोर, (गुजरात)

प्रस्तावना:-

धर्म के पाखंडियों ने अपना उल्लू सीधा करने के लिए जन्म-मरण, पुनर्जन्म, स्वर्ग-नरक और पाप-पुण्य जैसी वाहियात बातों के माध्यम से लोगों को अंधविश्वास में धकेला है। शिक्षित लोग भी वैज्ञानिक तर्क किए बिना अंधविश्वास में डूबते जा रहे हैं। वे किसी भी बात को तथ्य और तर्क के आधार पर परखने के बजाय पाखंडवाद में फँसते जाते हैं। अंधविश्वास से मुक्त होने के लिए स्वयं पर विश्वास रखना आवश्यक है तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सोचने की क्षमता विकसित करनी चाहिए। तभी मनुष्य पाखंडवादी प्रवृत्तियों से निजात पा सकता है।

निःसंतानता वर्तमान समय की एक ज्वलंत समस्या है। महिलाएँ शिक्षित होने के बावजूद पाखंडवाद और अंधविश्वास में फँसती जा रही हैं तथा डॉक्टरों की अपेक्षा तांत्रिकों और पाखंडियों पर अधिक विश्वास करती हैं। कई तांत्रिक संतान प्राप्ति का झूठा लालच देकर महिलाओं को अपने जाल में फँसाते हैं और उनका शारीरिक शोषण करते हैं।

➢ **अनुष्ठान**

रत्नकुमार सांभरिया द्वारा लिखित 'अनुष्ठान' कहानी भारतीय समाज में फैले अंधविश्वास, काला जादू, तंत्र-मंत्र और पाखंडवाद जैसी परंपरागत कुरीतियों को तोड़कर वैज्ञानिक दृष्टिकोण स्थापित करने वाली महत्वपूर्ण कहानी है। सरस्वती पुत्र-प्राप्ति के लिए एक तांत्रिक के पास जाती है। तांत्रिक स्त्रियों को अपने जाल में फँसाने के लिए प्रायः पुराने खंडहर जैसे स्थानों को चुनते हैं, ताकि उनका आसानी से शोषण किया जा सके।

सरस्वती के सुंदर चेहरे को देखकर तांत्रिक के भीतर कामवासना जाग उठती है। सरस्वती अंधविश्वासी है, इसलिए वह उसकी सारी बातों को सहज रूप से स्वीकार कर लेती है। सरस्वती तांत्रिक से कहती है- "तंत्र-मंत्र से आपने जिस दिन यह बताया कि मेरे आदमी में कमी है, मैं उसी दिन से अपने पति से ज्यादा आपकी हूँ। उनको चाहे रुखा खिलाऊँ, आपकी खातिर देसी घी का पकवान लाती हूँ। मुँह माँगी दक्षिणा देती हूँ। महाराज जी, मैं गाँव में बदनाम हो गई हूँ। छिनाल, बेवफा, बेहया। बस, इसी बात की खातिर की मैं माँ बन जाऊँ।"[1]

तंत्र-मंत्र का झूठा स्वांग रचाकर तांत्रिक सरस्वती को अपने वश में करना चाहता है। जब सरस्वती को गर्भधारण नहीं होता, तब तांत्रिक इसे अपने पुरुषत्व की चुनौती समझकर अंतिम उपाय के रूप में 'अनुष्ठान' कराने

की बात करता है। वह कहता है- "तुम्हें मानव रक्त से अनुष्ठान करवाना होगा, अपने नाम पर"[2] यह पाखंडपूर्ण मान्यता समाज में लंबे समय से चली आ रही है कि कच्चे कलवों का तर्पण करने से स्त्रियों को गर्भधारण हो जाता है, जबकि वास्तव में ऐसा कभी सिद्ध नहीं हुआ। तांत्रिक सरस्वती से कहता है कि 'जैसा स्वस्थ और सुंदर बच्चा तुम्हें चाहिए, वैसे ही बच्चे के रक्त से कच्चे कलवों का तर्पण करना होगा।'

एक क्षण के लिए सरस्वती के भीतर आत्मचेतना जाग उठती है। वह मन-ही-मन सोचती है कि अपनी गोद भरने के लिए वह किसी दूसरी स्त्री की गोद सूनी नहीं कर सकती। लेखक ने यह भी संकेत किया है कि ढोंगी बाबा और तांत्रिक निःसंतान स्त्रियों का शोषण करते हैं, यहाँ तक कि उनके साथ बलात्कार भी करते हैं, फिर भी अंधविश्वास के कारण अनेक स्त्रियाँ संतान-प्राप्ति की आशा में उनके पास जाती रहती हैं।

मातृत्व की लालसा से वशीभूत सरस्वती तांत्रिक की बात मान जाती है। वह यह काम स्वयं न करके किसी और से करवाने की बात कहती है। तब तांत्रिक उसे वीरसिंह से यह कार्य करवाने की सलाह देता है। तांत्रिक उसे खंडहर में पकड़कर अपनी ओर खींचता है, तब सरस्वती वहाँ से उठकर बाहर निकल जाती है। वह शनिवार तक अनुष्ठान संपन्न कराने की बात कहता है।

घर जाकर सरस्वती वीरसिंह की राह देखने लगती है। वीरसिंह ग्वाला है; वह गाँव में दूध बेचने का काम करता है। शाम के समय वीरसिंह उसे आता हुआ दिखाई देता है। सरस्वती उसे आवाज देकर अपने घर बुलाती है और अपनी बात रखते हुए कहती है, "मुझे अनुष्ठान करवाना है, वीरसिंह जी।"[3]

अनुष्ठान का नाम सुनते ही वीरसिंह को तांत्रिक याद आ जाता है। वह बहुत क्रोधित हो उठता है। वीरसिंह अंधश्रद्धा के विरोध में चेतना जगाते हुए कहता है, "वह तो बदनाम सै, पाखंडी सै, दुसट सै, पहल्या तो औरतों को मरदाँ ने नामरद बात के अपणी बनावै सै| अर जब उसके बस की बात ना रहे तो बालक के खून ते मनतर पढ़ण का बहाना बणा के दूर हट जा सै| गाँव की दो बीरवानी उसके चक्कर में आई सैं| उनके तो चिड़ी का बच्चा भी हुआ, ना आज तक| अपनी आबरू माटी कर बैठीं| दो घराँ में घुप्प अंधेरा कर दिया| मैं अब खून ना करूँ| जी कौन पावै सै|"[4]

तांत्रिक पाखंड करते हुए मंत्र-तंत्र के माध्यम से संतान प्राप्ति का ढोंग करता है। बच्चों की बलि देने से महिलाओं को गर्भधारण होता है, ऐसे अंधविश्वास के कारण अनेक बच्चों की जान भी गई है। यह पूर्णतः अवैज्ञानिक है, फिर भी महिलाएँ संतान-प्राप्ति की इच्छा से वशीभूत होकर तांत्रिकों के जाल का शिकार बन जाती हैं।

सरस्वती वीरसिंह की जूतियाँ छूकर उन्हें माथे से लगाती है और कहती है, 'मेरी नहीं तो बाबूजी की इज्जत रख लो।' वह गिड़गिड़ाने लगती है। तब वैज्ञानिक चेतना से प्रेरित वीरसिंह कहता है, "बहू जी, कितनी-सी उमर सै थारी, छब्बीस-सत्ताईस साल। शहर जाकर अच्छा-सा डाक्टर ने दिखाते। तान्तरिक का जाल, जी का जंजाल।"[5] जहाँ विज्ञान और तर्क का स्थान होता है, वहाँ अंधविश्वास का कोई महत्व नहीं रह जाता। इसलिए वीरसिंह सरस्वती को जागरूक करने का प्रयास करता है। किंतु सरस्वती उसकी बात न मानते हुए उसे एक शीशी बच्चे का खून लाने के लिए मना लेती है।

वीरसिंह शनिवार के दिन एक लड्डू में बेहोशी की दवा मिलाकर स्कूल के पास वटवृक्ष की आड़ में बैठ गया। स्कूल छूटते ही उसने एक स्वस्थ बच्चे को लड्डू खिलाकर बेहोश कर दिया और अपने काम को अंजाम देने के लिए उसे गाड़ी में बिठाकर खेतों की ओर ले गया। वीरसिंह ने सरस्वती को खून से भरी एक शीशी दे दी। जब सरस्वती उसे पाँच हजार रुपये देने लगी, तब उसने लेने से मना कर दिया। सरस्वती वह शीशी लेकर तुरंत तांत्रिक के पास पहुँची। तांत्रिक ने उसे रात में अनुष्ठान के लिए श्मशान घाट चलने को कहा। वीरसिंह ने उसे आगाह किया कि वह रात के बारह बजे दरवाजे की कुंडी खटखटाएगा, इसलिए वह तैयार रहे।

समय होते ही उसने कुंडी खटखटाई और सरस्वती को साथ लेकर श्मशान की ओर निकल पड़ा। रास्ते में जंगली जानवरों की डरावनी आवाजें सुनकर सरस्वती डर गई, किंतु तांत्रिक उसका हाथ पकड़कर आगे बढ़ने लगा। तांत्रिक सरस्वती को लेकर श्मशान घाट पहुँचा, जहाँ मानव अस्थियों की खोपड़ियाँ अत्यंत डरावनी लग रही थीं। रात का सन्नाटा, पेड़ों पर उल्लुओं की डरावनी आवाजें और झाड़ियों से आती सियारों की आवाजें सरस्वती को और डरा रही थीं। तांत्रिक ने मंत्रोच्चार करते हुए लहू को अपनी अंजलि में लेकर नर-कपालों पर छिड़का। वह कहने लगा, 'सरस्वती अनुष्ठान अधूरा जाएगा मुझे दोष मत देना, कल।' लाचार सरस्वती अब छटपटाने लगी थी, क्योंकि उसके पास दूसरा कोई चारा नहीं था।

तांत्रिक सरस्वती को उसके घर छोड़कर अपने घर पहुँचा। अंदर से पत्नी छबीली का रुदन सुनकर वह तुरंत भीतर दौड़ा। छबीली गला फाड़कर रोने लगी और बोली, "आज अपना राजू स्कूल से वापस नहीं लौटा। मैं तो समूचा गाँव छान आई हूँ।" यह सुनकर तांत्रिक को ऐसा आघात लगा कि उसका माथा दीवार से जा टकराया। वह अचंभित रह गया। टेबल पर पड़ी राजू की तस्वीर को छाती से लगाकर वह फूट-फूटकर रोने लगा। उसका कलेजा फट गया था। वह इतना ही कह पाया, "लाख दवा दारू करने पर राजू हुआ था| आज... तो... मैंने अपना घर ही फूंक डाला, दुष्ट वीर... मेरा... रा... रा... जू...|"[6] उसे अंतर्मन से विश्वास हो गया कि जिस खून का तर्पण उसने किया था, वह उसके अपने बेटे राजू का ही था। यह सोचकर उसे दिल का दौरा पड़ा और उसकी मृत्यु हो गई। यहाँ 'जैसी करनी वैसी भरनी' कहावत चरितार्थ होती दिखाई देती है। पत्नी छबीली भी फूट-फूटकर रोने लगी। इतने में ही वीरसिंह राजू को लेकर वहाँ आ जाता है। पत्नी भी अचंभित हो जाती है कि वह पति की मृत्यु का शोक मनाए या बेटे के मिल जाने की खुशी व्यक्त करे।

➢ निष्कर्ष:

वर्तमान समय में भी हम देखते हैं कि तांत्रिक निःसंतान स्त्रियों को अपने जाल में फँसाने के लिए झूठे प्रपंच रचते हैं। वे स्त्रियों को अपनी हवस का शिकार बनाते हैं। जब तक उनका भंडाफोड़ होता है, तब तक वे अनेक स्त्रियों का जीवन बर्बाद कर चुके होते हैं। विज्ञान के तथ्यों को स्वीकार करने पर ही अंधविश्वास को मात दी जा सकती है। इस कहानी में लेखक ने तंत्र-मंत्र और जादू-टोने के झूठे खेल के माध्यम से समाज को किस प्रकार ठगा जाता है, इसका प्रभावी ढंग से पर्दाफाश किया है।

सन्दर्भ-सूची

1. रत्नकुमार सांभरिया, एयरगन का घोड़ा, कहानी- 'अनुष्ठान', अनामिका पब्लिशर्स एंड
2. डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रा. लि.- नई दिल्ली, प्रथम संस्करण- 2015, पृ., सं.- 40
3. वही, पृ., सं.- 40
4. वही, पृ., सं.- 44
5. वही, पृ., सं.- 44
6. वही, पृ., सं.- 45
7. वही, पृ., सं.- 51

दूरभाष: 9724249933

E-mail: bhavinvankar2016@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 29-32
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

अर्चना पैन्यूली के उपन्यास 'परिवर्तन' में अन्तरपीढ़ी संघर्ष

प्रियंका
शोधार्थी
हिन्दी-विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय चंडीगढ़।

परिवर्तन उपन्यास अर्चना पैन्यूली द्वारा लिखा गया उनका पहला उपन्यास है। यह उपन्यास एक साथ कई क्षितिजों को छूता है। उपन्यास की कथा तीन पीढ़ियों में है। जिसके संबंध में लेखिका कहती है कि " रत्ना, उषा और प्रिया – तीन पीढ़ियों के परिवर्तनों की यह कहानी, बदलती हुई दुनिया के अनेक जीवंत दृश्य उपस्थित करती है।" [1] प्रत्येक पीढ़ी अपने समय की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परिस्थितियों में पलती-बढ़ती है, जिसका प्रभाव उसकी सोच और आचरण पर पड़ता है। समाज परिवर्तनशील है समय के अनुरूप परिवर्तन देखा भी जाता है एक पीढ़ी जिस नियमों से चलती है जरूरी नहीं की भावी पीढ़ी भी उन नियमों का अनुसरण करें । "भारतीय समाज में अन्तरपीढ़ी संघर्ष की समस्या आधुनिक समाज की देन है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद लोकतांत्रिक व्यवस्था में स्वतंत्रता व समानता के भाव विकसित हुए, पश्चिमीकरण, आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण, नगरीकरण व लौकिककरण के प्रभाव में नयी संस्कृति का आगमन हुआ। फलस्वरूप युवा पीढ़ी ने समाज के प्रथागत नियमों व व्यवहार के ढंगों का विरोध करना प्रारंभ किया, जो लंबे समय से भारतीय जीवन का अंग बना हुआ था। पुरानी पीढ़ी परम्परागत व प्रथागत नियमों को महत्वपूर्ण मानकर उसके अनुसार चलने के पक्षधर रहे। फलस्वरूप पुरानी पीढ़ी व नई पीढ़ी के बीच संघर्ष की दशा उत्पन्न हो गई है। "[2] आधुनिक समय में अन्तरपीढ़ी संघर्ष समस्या बनती जा रही है, जिसे मैंने उपन्यास के माध्यम से दर्शाने का प्रयास किया है।

बीज शब्द – पीढ़ी, संघर्ष, समाज,संस्कृति, प्रेम, जाति

दो पीढ़ियों के मध्य जब अन्तराल आता है तब अन्तरपीढ़ी संघर्ष दृष्टिपात होता है। यदि प्रथम पीढ़ी भारतीय परिवेश की है और द्वितीय पीढ़ी प्रवासी परिवेश की है तो पीढ़ियों के मध्य वैचारिक, सांस्कृतिक टकराव स्वाभाविक रूप से देखने को मिलता है जिससे द्वंद्व की स्थिति उत्पन्न होती है। जिसके सम्बन्ध में पंजाबी साहित्यकार बलविंदर, कौर धीर ने व्रतानती पंजाबी कहानी बिच परवासी जीवन-यथार्थ लेख में कहा है कि "प्रवासियों के मानसिक संताप का एक बड़ा कारण नई और पुरानी पीढ़ी का अंतर है नई पीढ़ी के बच्चे ब्रतानिया सांस्कृतिक माहौल में रहते हैं जिस

[1] पैन्यूली, अर्चना, परिवर्तन,नयी दिल्ली, अभिरुचि प्रकाशन, संस्करण प्रथम, 2003, प्राक्कथन

[2] https://share.google/cgJ9s9iBnw0QjAEK4 फातमा, क़ायनात, भारतीय समाज में अन्तरपीढ़ी संघर्ष एवं परिवर्तनों के कारण

कारण उनकी सोच ब्रतानिया सोच जैसी बन चुकी है वह माता-पिता के बंधनों से आजादी चाहते है और प्रत्येक काम अपनी मनमर्जी का करना चाहते हैं। "[3]

उपन्यास की पहली पीढ़ी : रुक्मणी - परंपराओं में जकड़ी हुई स्त्री है जो उस समाज का प्रतिनिधित्व करती है जहाँ स्त्री शिक्षित नहीं थी, प्रेम, विधवा-विवाह समाज में वर्जित थे। समाज रूढ़ियों में बँधा हुआ था। परिवार और परंपरा ही सबसे बड़ा नियम माने जाते थे। बहुओं का देवरों से बातचीत तक करना गलत माना जाता था। इसी पीढ़ी की दूसरी स्त्री विधवा रत्ना (छोटी बहू) को जब श्रीधर (देवर) से प्रेम होता है , तो रुक्मणी (सास) उसे कठोर शब्दों में डांटती है और एक दिन गुस्से में उसका हाथ तक गर्म लकड़ी से जला देती है तथा अपने बेटे को शहर कमाने को भेज देती है और जल्द से जल्द अपने बेटे की शादी का प्रबंध करने लग जाती है , इस प्रकार रुक्मणी की सोच बताती है कि पहली पीढ़ी में नारी की स्वतंत्रता और इच्छाओं का कोई अस्तित्व नहीं है। इस प्रकार यह पीढ़ी भावनाओं को दबाकर समाज की इच्छा के अनुसार जीवन जीने के लिए मजबूर थी ।

दूसरी पीढ़ी : रत्ना की बेटी उषा है । वह एक शिक्षिका है, आत्मनिर्भर है और अपने निर्णय स्वयं लेने वाली स्त्री है । अपने घर में स्वतंत्र रूप से रहती है विधवा होने के बाद भी टूटती नहीं है । वह प्रेम और विवाह पर अपने निर्णय खुद लेती है उसे जब अपने सह-अध्यापक भानु से प्रेम होता है, तो वह साफ कह देती है—"माँ, मैं और भानु शादी करने जा रहे हैं।"[4] लेकिन भानु द्वारा अपनी पूर्व पत्नी के साथ बाल विवाह की बात छुपाने पर उषा तुरंत विवाह से मना कर देती है। इससे पता चलता है कि— उषा पुरानी पीढ़ी की तरह दकियानूसी नहीं है, वह आत्मसम्मान से समझौता नहीं करती, वह विवेकपूर्ण निर्णय लेने में सक्षम है।

तीसरी पीढ़ी : उषा की तीन बेटियाँ प्राची, प्रज्ञा, और प्रया है जो आधुनिकता की ओर बढ़ती नई स्त्री चेतना का प्रतिनिधित्व करती हैं। इनमें कई विशेषताएं दिखाई देती हैं-पश्चिमी पहनावा, प्रेम विवाह,जाति-पांति की परवाह नहीं,तलाक और पुनर्विवाह को स्वीकार करना, करिअर-केन्द्रित जीवन, अपनी पसंद से जीवन जीने की इच्छा ।

तीसरी पीढ़ी में आधुनिकता का प्रभाव था जिस कारण पश्चिमी पहनावा उन्हें आकर्षित करता है लेकिन वही पहली पीढ़ी को पश्चिमी लिबास बिल्कुल नहीं भाते जिसकारण दोनों पीढ़ीयों में लिबास को लेकर टकराव देखा जाता है उपन्यास में रत्ना को अपनी नातिनों का पहनावा बिल्कुल नहीं भाता " रत्ना अपने सामने खड़ी प्राची से बोली "यह क्या हर समय कसी पैंट पहने रखती हो ? रत्ना को उनका कसी जींस व तंग टॉप पहनना बिल्कुल भी नहीं सुहाता था । उनका यह पाश्चात्य लिबास अक्सर उसकी आँख की किरकिरी बन जाया करता "हिन्दुस्तानी लड़कियां अपने देश के लिबास में ही खूबसूरत लगती है । "[5] जिस पर प्राची पलट कर जवाब देती है कि 'किस लिबास' पर तो रत्ना कहती है साड़ी में जिस पर नातिने हंसने लगती है और साड़ी को लिबास की जगह महज कपड़े का टुकड़ा कहती है तथा प्राची तो सभी को समझाते हुए कहती है कि " साड़ी कोई ड्रेस नहीं, कोई भी आयताकार कपड़े का टुकड़ा जिसकी लंबाई, चौड़ाई से कई गुना हो, साड़ी कहलाने लगता है । साड़ी अस्तित्व में आती ही तब है, जब वह बदन में लपेट ली जाती है। नहीं तो जब तक वह एक तरफ पड़ी है, कपड़े के एक टुकड़े के अलावा और कुछ भी नहीं"[6] नातिनों की बात सुनकर रत्ना बोली " बस बस बहुत हो गया रत्ना टोकते हुए चिल्लाई "ये लड़कियां जरा सा पढ़-लिख गई, इनके दिमाग फिर गये । साड़ी को भी कपड़े का बेकार टुकड़ा बताने लगी हैं । साड़ी स्त्री के तन को ही नहीं

---

[3] धीर, बलविंदर कौर, ब्रतानवी पंजाबी कहनी विच परवासी जीवन-यथार्थ (लेख), सिंह, सुरिंद्रपाल, विदेशी पंजाबी साहित्य, अमृतसर पंजाबी अध्ययन स्कू ल, गुरुनानक यूनिवर्सिटी 1993, पृष्ठ संख्या -149

[4] पैन्यूली, अर्चना, परिवर्तन,नयी दिल्ली, अभिरुचि प्रकाशन, संस्करण प्रथम, 2003, पृष्ठ संख्या-371

[5] पैन्यूली, अर्चना, परिवर्तन,नयी दिल्ली, अभिरुचि प्रकाशन, संस्करण प्रथम, 2003, पृष्ठ संख्या- 401

[6] यथावत पृष्ठ संख्या - 401

ढकती, उसकी लाज रखती है, उसके आत्मगौरव को बढ़ाती है। रत्ना बड़बड़ाती हुई बोलती है कि " यह लड़कियां सोचती है कि जीन्स पहन लेने से ही स्मार्ट बन जाते हैं जीन्स पहन कर किसी से भी जीत सकते हैं हमने भले ही हमेशा सूती धोती पहनी हो, लेकिन हम लोग भी किसी से कम नहीं थे। "[7] इस प्रकार देखा जा सकता है कि दोनों पीढ़ियों में वेशभूषा को लेकर टकराव है।

साहित्य परम्परा में प्रेम के सुखांत और दुखांत दोनों स्वरूप देखने को मिलते हैं। प्रेम संबंधों का जागृत होना, प्रेमी – मिलन, प्रेम संबद्धों पर समाज और परिवार द्वारा लगाये गए प्रतिबंध की कथा से भारतीय साहित्य परिपूर्ण है। भले ही हम आज आधुनिक समाज में जी रहे है लेकिन प्रेम का स्वरूप आज भी जाति, वर्ग, धर्म के शासन तले प्रभावित होता दिखाई देता है। उपन्यास में रत्ना को पसंद नहीं है कि उसकी नातिने दूसरी जाति में शादी करें जिस कारण वह अपनी नातिनों के प्रेम-विवाह का विरोध करती है "चाहे गौरव की बात हो या न हो लेकिन मेरे घर की लड़कियां केवल ब्राह्मण से ही सम्बन्ध जोड़ेंगी। अगर तुम अपनी नानी को जरा भी मान देती हो... सहसा रत्ना रुककर प्राची के सर पर स्नेह से हाथ फेरती हुई भावुक स्वर में बोली... "तुम्हारी नानी ने तुम्हें बड़े प्यार से पाल-पोस कर बड़ा किया है। अगर इस बात का तुम्हें रत्ती भर अहसास है तो तुम अपनी नानी की मर्जी के बगैर किसी गैर जाति में शादी नहीं करोगी। हम ब्राह्मण कुल के लोग हैं बेटा... हम ब्राह्मणों से ही रिश्ता जोडते हैं। " [8] प्राची नानी को मनाते हुए कहती है नानी मैं अतुल से प्रेम करती हूँ। ऐसा हो सकता है कि प्रेम किसी और से और शादी किसी और से जिसपर रत्ना सहसा भड़कते हुये बोलती है "प्रेम करने से पहले कम से कम देखना तो चाहिये कि लड़का तुम्हारी जाति-बिरादरी या वर्ग का है की नहीं। मनुष्य हो... भगवान ने सोचने-समझने के लिये दिमाग दे रखा है। यह क्या जानवरों की तरह कि न नस्ल देखी न जाति और लग गये। "[9] नातिने नानी का स्वभाव देखकर अचंभित हो जाती है।

आधुनिक समय में पीढ़ियों के बीच संवाद कम हुआ है और बढ़ो का सम्मान और आज्ञाकारिता नई पीढ़ी में कम दिखाई देती है। रत्ना का भाई गणेश जब तपेदिक से बीमार बीवी के इलाज के लिए देहरादून रत्ना के पास आने के लिए चिट्ठी लिखता है तो रत्ना की बेटी उषा और उसकी नातिने माना करती है कि वह इस घर पर नहीं रहेगे। नातिनों की प्रतिक्रिया देख रत्ना भड़कती है "उषा की और उन्मुख होकर वह बोली – यह तू अपनी लड़कियों को आधुनिकता की होड़ में क्या बना रही है ? बड़ों के लिए न कोई अदब , अपनों के लिए न कोई अपनत्व। बस हमेशा केवल अपनी चिंता करती है। "[10] इस प्रकार कह सकते है कि परोपकार ,सह अस्तित्व जैसे मूल्य आधुनिक जीवन में संकुचित होते जा रहे है। पहले समाज में पड़ोसी , रिश्तेदार और समुदाय एक दूसरे के दुख – सुख में सहभागी होते थे, जबकि आज आत्मकेंद्रित जीवनशैली ने सभी रिश्तों को संकुचित कर दिया है।

पीढ़ीगत अंतराल के कारण सांस्कृतिक संघर्ष की स्थिति भी देखी जाती है जैसे भारत में बड़ों को आदर व सम्मान से संबोधित किया जाता है, और हर रिश्ते के लिए एक आदरसूचक शब्द होता है लेकिन विदेश में ऐसा नहीं है। रत्ना जब अपनी नातिन प्राची के पास डेनमार्क जाती है तो वह देखती है कि वहां सभी को उनके प्रथम नाम से संबोधित किया जा रहा है। अतुल और प्राची का बेटा राहुल जब अपनी नानी के साथ अपनी माँ से मिलने डेनमार्क जाता है तो राहुल भी अपनी माँ के दूसरे पति को उसके प्रथम नाम से संबोधित करता है " राहुल से भी पीटर की प्रत्यक्ष तौर पर बातचीत हो जाती थी। राहुल उसे पीटर ही संबोधित करता था। रत्ना को अच्छा नहीं लगता था, लेकिन इसमें

---

[7] यथावत पृष्ठ संख्या - 402

[8] पैन्यूली, अर्चना, परिवर्तन,नयी दिल्ली, अभिरुचि प्रकाशन, संस्करण प्रथम, 2003, पृष्ठ संख्या- 461

[9] यथावत, पृष्ठ संख्या -461

[10] यथावत, पृष्ठ संख्या-411

राहुल का दोष नहीं था। राहुल को सिखाया ही ऐसा गया था इन मुल्कों में सभी एक दूसरे को उनके प्रथम नाम से ही संबोधित करते है। ऐना भी प्राची को प्राची..प्राची पुकारती है। "[11] रत्ना न ही उस संस्कृति से परिचित थी न ही इस पीढ़ी से जिस कारण उसे यह सब बहुत अशोभनीय लगता। इस प्रकार देखा जा सकता है कि पश्चिमीकरण के कारण जहां आधुनिक पीढ़ी परिवर्तन को स्वीकार करती रहती है वहीं पुरानी पीढ़ी को बदलते समय के साथ हो रहे परिवर्तन अस्वीकार होते है। अन्तरपीढ़ी संघर्ष का सबसे प्रमुख कारण समय का परिवर्तन है। समाज निरंतर गतिशील है। जीवन मूल्य, परम्पराएं, सामाजिक संरचना , समय के साथ परिवर्तित होती रहती है जो मान्यताएं व मूल्य एक समय में उचित नहीं मानी जाती थी वहीं मान्यताएं नयी पीढ़ी को प्रासंगिक लगने लगती है।

निष्कर्ष : अन्तरपीढ़ी संघर्ष एक स्वाभाविक सामाजिक प्रक्रिया है, जो समय और परिवर्तन के साथ उत्पन्न होती है। उपन्यास में जहां प्रथम पीढ़ी परंपराओं व रूढ़िवादिता में दिखायी दे रही है वहीं दूसरी पीढ़ी अपने अधिकारों के प्रति सजग है तथा तीसरी पीढ़ी में आधुनिकता का प्रभाव है जिससे कहा जा सकता है कि लेखिका ने उपन्यास में बदलती पीढ़ियों की बदलती तस्वीर उकेरी है जिसके माध्यम से सारे भारतीय समाज की बदलती तस्वीर दिखाई देती है जिसमें लेखिका ने अन्तरपीढ़ी संघर्ष को उत्कृष्ट रूप से दर्शाया है।

[11]पैन्यूली, अर्चना, परिवर्तन,नयी दिल्ली, अभिरुचि प्रकाशन, संस्करण प्रथम, 2003, पृष्ठ संख्या - 475,476

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 33-36
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भगवद्गीता में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा: एक आलोचनात्मक अध्ययन

Dr. Vinita Sharma
(Sanskrit department)
Monad University, Hapur

वर्तमान समय में पर्यावरणीय संकट मानव सभ्यता के समक्ष सबसे गंभीर चुनौतियों में से एक है। जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता का ह्रास, वनों की कटाई, जल एवं वायु प्रदूषण तथा प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए खतरा बन चुके हैं। इन समस्याओं के समाधान हेतु केवल वैज्ञानिक एवं तकनीकी उपाय पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि एक ऐसी नैतिक एवं दार्शनिक दृष्टि की आवश्यकता है जो मनुष्य और प्रकृति के संबंधों को संतुलित एवं उत्तरदायी बनाए। भारतीय ज्ञान परंपरा में प्रकृति को पूज्य एवं जीवन का अभिन्न अंग माना गया है। **श्रीमद्भगवद्गीता** इस परंपरा का सर्वोत्तम प्रतिनिधि ग्रंथ है।

यद्यपि भगवद्गीता का मुख्य उद्देश्य आध्यात्मिक एवं नैतिक जीवन का मार्गदर्शन करना है, तथापि इसमें प्रतिपादित कर्मयोग, यज्ञभावना, लोकसंग्रह, समदृष्टि, आत्मसंयम तथा प्रकृति के प्रति श्रद्धा जैसे सिद्धांत आधुनिक पर्यावरणीय नैतिकता के आधारभूत तत्वों के रूप में देखे जा सकते हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य भगवद्गीता में निहित पर्यावरण संरक्षण संबंधी अवधारणाओं का आलोचनात्मक अध्ययन करना तथा उनकी समकालीन प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना है।

मुख्य शब्द: भगवद्गीता, पर्यावरण संरक्षण, प्रकृति, कर्मयोग, यज्ञ, लोकसंग्रह, पर्यावरणीय नैतिकता।

इक्कीसवीं शताब्दी को पर्यावरणीय संकट की शताब्दी कहा जा सकता है। औद्योगीकरण, शहरीकरण, उपभोक्तावाद तथा अनियंत्रित आर्थिक विकास ने प्राकृतिक संसाधनों पर अभूतपूर्व दबाव डाला है। संयुक्त राष्ट्र तथा विभिन्न अंतरराष्ट्रीय संगठनों ने बार-बार चेतावनी दी है कि यदि वर्तमान विकास मॉडल में परिवर्तन नहीं किया गया तो भविष्य में जल, खाद्य तथा जैव विविधता का संकट और गहरा होगा।

भारतीय संस्कृति में प्रकृति को केवल उपयोग की वस्तु नहीं माना गया, बल्कि उसे माता, देवी तथा ईश्वर की अभिव्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। वेदों, उपनिषदों, रामायण, महाभारत तथा पुराणों में प्रकृति के प्रति सम्मान एवं संरक्षण का संदेश मिलता है। भगवद्गीता भी इसी सांस्कृतिक दृष्टि का प्रतिनिधित्व करती है। यद्यपि इसमें "पर्यावरण संरक्षण" शब्द प्रत्यक्ष रूप से नहीं मिलता, किंतु इसके दार्शनिक सिद्धांत आधुनिक पर्यावरणीय चिंतन के साथ आश्चर्यजनक साम्य रखते हैं।

पर्यावरण की अवधारणा

'पर्यावरण' शब्द 'परि' तथा 'आवरण' से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है—वह समस्त प्राकृतिक एवं सामाजिक परिवेश जो जीवधारियों को चारों ओर से घेरता है। इसमें पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश, वनस्पति, पशु-पक्षी, पर्वत, नदियाँ तथा मानव समाज सम्मिलित हैं। भारतीय दर्शन में पंचमहाभूतों—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश—को सम्पूर्ण सृष्टि का आधार माना गया है। इन तत्वों का संतुलन ही जीवन का आधार है। भगवद्गीता इसी संतुलन को दार्शनिक रूप प्रदान करती है।

भगवद्गीता में प्रकृति की अवधारणा

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं—

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥ (गीता 7.4)

इस श्लोक में प्रकृति के आठ स्वरूपों का उल्लेख किया गया है। इनमें पंचमहाभूतों के साथ मन, बुद्धि एवं अहंकार भी सम्मिलित हैं। इससे स्पष्ट है कि गीता के अनुसार प्रकृति केवल भौतिक सत्ता नहीं, बल्कि मानसिक एवं आध्यात्मिक आयामों से भी युक्त है।

यज्ञ की अवधारणा और पर्यावरणीय संतुलन

भगवद्गीता के तृतीय अध्याय में यज्ञ को सृष्टि के संतुलन का आधार बताया गया है—

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥ (3.11)

यहाँ यज्ञ का अर्थ केवल वैदिक अग्निहोत्र नहीं है, बल्कि परस्पर सहयोग, संतुलन और उत्तरदायित्व से है। मनुष्य यदि प्रकृति का संरक्षण करेगा तो प्रकृति भी उसके जीवन का पोषण करेगी। आधुनिक पर्यावरण विज्ञान इसी पारिस्थितिक परस्पर निर्भरता (Ecological Interdependence) को स्वीकार करता है।

कर्मयोग और पर्यावरणीय उत्तरदायित्व

गीता का कर्मयोग मनुष्य को स्वार्थरहित कर्म करने की प्रेरणा देता है—

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। (2.47)

पर्यावरण संरक्षण भी ऐसा ही निष्काम कर्म है। वृक्षारोपण, जल संरक्षण, ऊर्जा की बचत, जैव विविधता की रक्षा तथा प्रदूषण नियंत्रण ऐसे कार्य हैं जिनका लाभ सम्पूर्ण समाज एवं भावी पीढ़ियों को प्राप्त होता है।

लोकसंग्रह की भावना

भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः। (3.21)

तथा—

लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि। (3.20)

लोकसंग्रह का अर्थ है—समाज एवं समस्त प्राणियों के कल्याण के लिए कार्य करना। पर्यावरण संरक्षण का मूल उद्देश्य भी यही है कि वर्तमान और भविष्य दोनों पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण किया जाए।

समदृष्टि और जैव विविधता

गीता कहती है—

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः॥ (5.18)

यह श्लोक सभी प्राणियों के प्रति समान दृष्टि रखने का संदेश देता है। आधुनिक जैव विविधता संरक्षण (Biodiversity Conservation) का आधार भी यही है कि प्रत्येक जीव का अपना पारिस्थितिक महत्व है।

आत्मसंयम और सतत उपभोग

आज की पर्यावरणीय समस्याओं का एक प्रमुख कारण उपभोक्तावाद है। गीता इन्द्रियनिग्रह, संयम और संतुलित जीवनशैली का समर्थन करती है। सात्त्विक जीवन कम संसाधनों में संतोषपूर्वक जीने की प्रेरणा देता है।

पर्यावरणीय नैतिकता

भगवद्गीता में प्रकृति का शोषण नहीं, बल्कि उसके साथ सह-अस्तित्व की भावना है। श्रीकृष्ण स्वयं को सम्पूर्ण सृष्टि में विद्यमान बताते हैं—

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति। (6.30)

यदि प्रत्येक जीव एवं प्राकृतिक तत्व में ईश्वर का दर्शन किया जाए तो पर्यावरण विनाश की प्रवृत्ति स्वतः समाप्त हो सकती है।

भगवद्गीता और सतत विकास

संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्य (SDGs) निम्न सिद्धांतों पर आधारित हैं—

- प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण।
- समानता एवं न्याय।
- भावी पीढ़ियों के प्रति उत्तरदायित्व।
- पर्यावरणीय संतुलन।

इन सभी सिद्धांतों का दार्शनिक आधार भगवद्गीता में कर्मयोग, लोकसंग्रह एवं यज्ञभावना के माध्यम से मिलता है।

भगवद्गीता आधुनिक अर्थों में पर्यावरण विज्ञान का ग्रंथ नहीं है। इसमें जलवायु परिवर्तन, कार्बन उत्सर्जन, जैव विविधता संरक्षण अथवा प्रदूषण नियंत्रण जैसी वैज्ञानिक अवधारणाओं का प्रत्यक्ष वर्णन नहीं मिलता। इसलिए इसके आधार पर आधुनिक पर्यावरण विज्ञान का प्रत्यक्ष प्रतिपादन करना उचित नहीं होगा। फिर भी गीता की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह पर्यावरणीय संकट के मूल कारण—मानव के लोभ, अहंकार, अनियंत्रित इच्छाओं और स्वार्थ—की पहचान करती है। आधुनिक पर्यावरणीय संकट भी मुख्यतः इन्हीं कारणों से उत्पन्न हुआ है। गीता का समाधान बाह्य तकनीक से अधिक आंतरिक नैतिक परिवर्तन पर आधारित है।

आलोचनात्मक दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि गीता पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रत्यक्ष नीतियाँ प्रस्तुत नहीं करती, बल्कि ऐसी नैतिक चेतना विकसित करती है जिसके आधार पर पर्यावरण-अनुकूल नीतियों और व्यवहार का विकास संभव है। इसलिए इसकी उपयोगिता **Environmental Ethics** के क्षेत्र में अधिक है।

समकालीन प्रासंगिकता

आज जब विश्व जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदाओं और संसाधनों के संकट से जूझ रहा है, तब भगवद्गीता के निम्न सिद्धांत विशेष रूप से प्रासंगिक हैं—

- प्रकृति के प्रति श्रद्धा।
- सीमित एवं संयमित उपभोग।
- निष्काम सेवा।
- लोककल्याण की भावना।
- सभी जीवों के प्रति समान दृष्टि।
- प्राकृतिक संसाधनों के उत्तरदायी उपयोग की चेतना।

यदि इन सिद्धांतों को शिक्षा, प्रशासन, उद्योग तथा सामाजिक जीवन में अपनाया जाए तो पर्यावरण संरक्षण को अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

भगवद्गीता भारतीय दार्शनिक परंपरा का ऐसा ग्रंथ है जो मनुष्य, प्रकृति और परमात्मा के मध्य गहरे संबंध को स्थापित करता है। इसमें प्रतिपादित कर्मयोग, यज्ञभावना, लोकसंग्रह, समदृष्टि, आत्मसंयम तथा प्रकृति के प्रति सम्मान आधुनिक पर्यावरणीय नैतिकता के मूल आधारों से सामंजस्य रखते हैं। यद्यपि यह आधुनिक पर्यावरण विज्ञान का ग्रंथ नहीं है, तथापि इसके दार्शनिक सिद्धांत पर्यावरण संरक्षण के लिए एक सुदृढ़ नैतिक एवं सांस्कृतिक आधार प्रदान करते हैं।

वर्तमान पर्यावरणीय संकट के समाधान के लिए केवल तकनीकी प्रगति पर्याप्त नहीं है; मानव की जीवनशैली, उपभोग संस्कृति और नैतिक दृष्टिकोण में परिवर्तन भी आवश्यक है। इस संदर्भ में भगवद्गीता की शिक्षाएँ आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं जितनी उनके प्रतिपादन के समय थीं। अतः यह कहा जा सकता है कि भगवद्गीता पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा को प्रत्यक्ष वैज्ञानिक रूप में नहीं, बल्कि नैतिक, आध्यात्मिक और दार्शनिक आधार प्रदान करती है, जो सतत विकास और मानव-प्रकृति के संतुलित संबंध के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

संदर्भ ग्रंथ (References)

प्राथमिक स्रोत

1. गीता प्रेस. (2023). *श्रीमद्भगवद्गीता*। गोरखपुर: गीता प्रेस।
2. शंकराचार्य. (2015). *श्रीमद्भगवद्गीता शांकरभाष्य*। वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत संस्थान।
3. तिलक, बाल गंगाधर. (2018). *गीता रहस्य*। पुणे: केसरी प्रकाशन।

द्वितीयक स्रोत

1. राधाकृष्णन, एस. (1948). द भगवद्गीता. लंदन: जॉर्ज एलन एंड अनविन.
2. अरबिंदो. (1972). एसेज ऑन द गीता. पुडुचेरी: श्री अरबिंदो आश्रम.
3. ईश्वरन, ई. (2007). द भगवद् गीता. नीलगिरि प्रेस.
4. शर्मा, सी. (2000). ए क्रिटिकल सर्वे ऑफ़ इंडियन फिलॉसफी. मोतीलाल बनारसीदास.
5. गाडगिल, एम., और गुहा, आर. (1995). इकोलॉजी एंड इक्विटी: द यूज़ एंड अब्यूज़ ऑफ़ नेचर इन कंटेंपरेरी इंडिया. पेंगुइन बुक्स.
6. सिंह, उपिंदर. (2008). ए हिस्ट्री ऑफ़ एंशिएंट एंड अर्ली मेडिवल इंडिया. पियर्सन एजुकेशन.
7. संयुक्त राष्ट्र. (2015). ट्रांसफॉर्मिंग आवर वर्ल्ड: द 2030 एजेंडा फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट.
8. नेस, ए. (1989). इकोलॉजी, कम्युनिटी एंड लाइफस्टाइल. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.
9. कार्सन, आर. (1962). साइलेंट स्प्रिंग. ह्यूटन मिफ्लिन.
10. शिवा, वी. (1988). स्टेइंग अलाइव: विमेन, इकोलॉजी एंड डेवलपमेंट. ज़ेड बुक्स.
11. IPCC. (2023). AR6 सिंथेसिस रिपोर्ट: क्लाइमेट चेंज 2023. इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज.

Email-Sharma.vinita8791@gmail.com

Mobile-8171771385

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 37-42
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

आदिवासी समाज की सामाजिक एवं राजनीति स्थिति

मोनिका
शोधार्थी,
हिंदी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
डॉ० अनिल कुमार
सहायक प्रोफेसर,
हिंदी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा

सामाजिक स्थिति

साहित्य को समझने और जानने के लिए समाज को जानना अति आवश्यक है। समाज के विभिन्न पहलुओं का जिक्र साहित्य में मिलता है। हिन्दी कहानियों में अभिव्यक्त आदिवासी समाज के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षिणक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक अनुशीलन के लिए यह आवश्यक हैं कि कथित कहानियों के समसामयिक देश काल का अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाए।

इस सन्दर्भ में विस्वंभर दयाल गुप्ता का कहना हैं – ''साहित्य समाज की उपज हैं। वह समाज से अपना खाद्द ग्रहण करता है; पोषित पल्लवित करता है। उसके स्वरूप–निर्धारण में सामाजिक संस्कृतिक पृष्टभूमि का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। वह समाज से प्रभावित ही नहीं होता, समाज को प्रभावित भी करता है। समाज–स्वीकृत सामाजिक मूल्य आदेश, रीतियाँ जो कि किसी समूह की परस्पर संबंध कर संगठित करती हैं। साहित्य में प्रतिबिंबित होकर साहित्य की संरचनाओं के निर्माण में योगदान करती है। जिससे साहित्य अपने अस्तित्व को ग्रहण करता है।''[1]

इसलिए समकालीन हिन्दी कहानियों में आदिवासी समाज के जीवनसंघर्ष के सामाजिक सन्दर्भ के अन्तर्गत जाति एवं वर्ण व्यवस्था, गोत्र, परिवार, विवाह, आचार–विचार, प्रथाएँ और आदिवासी जीवन में नारी का संघर्ष एवं भुमिका की अध्ययन आवश्यक हैं।

अदिवासी कहानियाँ (सं. केदार प्रसाद मीणा) नामक संग्रह में चरण सिंह पथिक की कहानी 'बक्खड़' राजस्थान के मीणा आदिवासी समाज पर आधारित हैं। इस कहानी में दर्शाया गया है कि राजपूतों द्वारा मीणा आदिवासियों की जमीन आदि छल–कपट से हड़प लेते हैं। और मीणा आदिवासी राजपूतों के आक्रमण के चलते दो वर्ग में बाँट दिये जाते हैं। एक जंमीदार मीणा और दुसरा चौकीदार मीणा जो किसान मजदूर होते हैं। कहानी के पात्र मुल्ला की माँ की शादी एक जमींदार मीणा से होती हैं पर उन्हें मारा–पीटा एवं प्रताड़ित किया जाता है। एक दिन वह अपना घर छोड़कर चली जाती हैं फिर उनकी शादी एक दुसरे मीणा जमींदार से होती हैं। लेकिन अब वह मुल्ला दुसरे पिता का बेटा बन जाता है। समाज की दृष्टि से वह दुसरा मीणा कहलाता है। इसमें कहानी के पात्र मुल्ला के शब्दों में – ''मैं नए घर का राजकुमार था। माँ महारानी। मैं अब मुला मीणा वल्द हजारी मीणा हो चुका था''[2]

[1] सुरेश पवार – हिन्दी कहानियों में अभिव्यक्त आदिवासी जीवन 1990–2010, पृ० सं० 70
[2] केदार प्रसार मीणा आदिवासी कहानियाँ (कहानी ले – चरण सिंह पथिक, पृ० 107

इस तरह पर यह स्पष्ट है कि भारतीय समाज में दुसरा विवाह होने पर उनकी सन्तान का नाम भी बदल जाता है। इसी तरह की परम्पराऐं आदिवासी समाज में भी दिखाई पड़ती हैं।
इसी कहानी का पात्र मुल्ला जमींदार सुखराम पटेल के बेटों को धोबीघाट खेल में हरा देता हैं और यह बात उस पटेल को पता चल जाती हैं और इस मुल्ला से हारना अपमान मानते हुए कहते हैं – ''हरामजादे, मूला से हार गया। एक बक्खड से..... ना जाने किसता मूत हैं। वे और तू इसी से मात खा गया। डूब मर मादर.....। आक्क थू.....।''[3]

इस से ज्ञात होता है कि समाज में किसी भी सन्तान के माँ–बाप की शादी दूसरे से हो जाती हैं। तब उन्हें समाज में कोई स्थान नहीं दिया जाता और ऊपर से उन्हें समाज में हीन दृष्टि से देखा जाता हैं इस तरह की परम्परा सिर्फ मीणा आदिवासी समाज में ही नहीं बल्कि पूरे भारतीय समाज में पाई जाती हैं। इन्ही सामाजिक विसंगतियों के चक्कर में समाज में मनुष्य आपस मे दुश्मनी बनाकर एक–दुसरों की जिन्दगी को बरबाद करने पर तुल जाते हैं

'अरावली उद्घोष' में आदिवासी कहानी विशेषाक में स्नेहलता शर्मा की 'जंगल का फूल' कहानी में आदिवासी जीवन – संघर्ष का चित्रण मिलता हैं। कहानी में एक फारेस्ट अधिकारी की तैनाती आदिवासी क्षेत्रों में विश्राम करता है तब वहाँ अचानक से एक साँप उसकी चारपाई के नीचे फन निकाला दिखाई देता हैं। तब वह एक पेड़ के ऊपर से उस गाँव की एक छोटी सी लड़की तीर के निशान से साँप को मार कर फारेस्ट आफिसर की जान बचाती है। वह ऐसे अचंभित होकर सोचने लगता है कि तीन फीट लंबा साँप को बीस फीट की दूरी से निशाना लगाकर मारना यह कोई मामुली बात तो नहीं इसकी कुशलता को देखकर वह इन्हें खेल में प्रवेश दिलाने के लिये ले जाता हैं तब वहाँ के दिकू अधिकारी की दृष्टि साफ–साफ दिखाई पड़ती हैं – 'रहने दे बाबू जी, जंगल का फूल जंगल में अच्छा लगता है। शहर में आकर वह मुरझा जाता है। अब तक तो हम समझे थे जगल में ही जहरीले नाग बिचरते हैं पर साहब यहाँ तो उनसे भी जहरीले नाग हैं। जिन पे निशाना लगाना हमें नहीं आता। आप हमें हमारे गाँव के वापिस छोड़ दे।[4]
इस से स्पष्ट हैं कि आदिवासी के प्रति तथा कथित सभ्य समाज की दृष्टि कैसी हैं।

आदिवासियों की अपनी प्राचीन संस्कृति तथा धार्मिक मान्यताओं के कारण भारतीय समाज में हीन दृष्टि से देखा जाता है। स्वतंत्रता – पूर्व तथा पश्चात सबसे अधिक शोषण इस जाति का हुआ। संजीव की 'दुनिया की सबसे हसीन औरत' कहानी आदिवासियों की इस व्यथा को बयान करती हैं 'दुनिया की सबसे हसीन औरत' कहानी की केन्द्रीय पात्र एक उराँव जनजाति की स्त्री हैं। यह औरत अपनी रोजी–रोटी के लिए सब्जी बेचने बेचने रेल में सफर करती हैं।
इसके अलावा वहाँ पर महिला टी.टी. और दो बिना टिकट के यात्रा करने वाली महिलाएं थी 'अभी वे चटखोर ले रही थी कि एक शरीफजादी पर ऊपर से एक मूली गिरी द्व भक्षक वह मास्टर जी डरकर ऐसे चीजे जैसे कोई छिपकली गिरी हों। तब उसे पता चला जो बिफर पड़ी दृ ''ऐ तुम लोगों को अक्कल नहीं हैं।'' ''का हुआ बहिनी'' उस औरत ने कातर स्वर में पूछा। ''बहिनी–बहिनी मत बोलों, जंगली कहीं की।। हम तेरी तरह बाजारू नहीं है।''[5]

इस से ज्ञात होता है। कि आदिवासी औरत द्वारा सभ्य समाज की शरीफजादियों की बहन कहने पर वे उखड़ जाती हैं और उसे 'जंगली बाजारू' कहती हैं भारतीय समाज में ऐसे दमनात्मक और अपमानित शब्दों से यह पता चलता है कि आदिवासी स्त्री को जातिवादी देश की पीड़ा और अपमान झेलना पड़ता हैं। इसमें लेखक आदिवासी श्रमिक महिला की स्थिति का चित्रण करता है।

भारतीय समाज में आदिवासी सामज के प्रति कहीं–कहीं विचित्र तरीके की धारणा बनी है। गैर समुदाय के लिए आदिवासी गरीब, बदहाल बेईमान और कामचोर। गाँव–देहात में रहने काम आदिकासी लोग शहरी लोगों को गंवार लगते हैं। आदिवासी अर्थात् जंगली और जंगली यानी असभ्य, राक्षस, वानर कहते है। आदि असभ्य रहने के पीछे मूल कारण के पीछे कभी किसी से विचार नहीं लिया। ये हमें रणेन्द्र

---

[3] वही,
[4] स्नेहलता शर्मा, जंगल का फूल (भरावली उद्घोष) पृ.59
[5] संजीव 'दुनिया की सबसे हसीन औरत' पृ. 108

की कहानी 'रात बाकी' एवं अन्य कहानियाँ' में बाँध–निर्माण, विस्थापन जैसी स्थिति को दिखाया गया है। सभ्य समाज के मन में जो आदिवासियों के लिए धारणा बनी हैं। वह सब इस कहानी में दिखाई देता है। इस सन्दर्भ में लेखक कहते हैं–सोफे के कोने पर तनकर बैठी थी पुष्पा : खुलता रंग, चाकू की धीर सी नाक, बीस–इक्कीस की उम्र, चेरो प्रधान रामावतार सिंह की बड़ी बेटी। पहले कभी देखा नहीं वेश–भूषा से ग्रामीण नहीं दिखाती थी। आदिवासी तो एकदम ही नहीं। 'धत'। आदिवासी दिखने के लिए काला – कलूटा, चपटी नाक का होना जरूरी हैं। क्या ? अरे नहीं। मैं झेप गया।''[6]

इनसे ज्ञात होता है कि वर्धस्वादी समाज में आदिवासियो में क्या स्थान है। उनके मानसिक पटल पर सबसे पहले यही चित्र सामने आता है कि आदिवासी लोग राक्षक, काले असुर, वानर आदि है और कुछ वहीं मुख्य धारा वाले समाज से आदिवासी समाज की वेश–भूषा बोली की, भाषा, संस्कृति काफी भिन्न है। रत्नकुमार की 'खेत तथा नयाँ तथा अन्य कहानियाँ संग्रह के 'बेस' कहानी में आदिवासी समाज की स्त्री का सामाजिक शोषण दिखाया गया है। कहानी में मुख्य स्त्री पात्र अग्नि–शिक्षक हैं और अपाहिज (अंधी) भी हैं। लेकिन ये उसके रिश्ते की बात चलती हैं, तब वह कपड़े सिलाने उद्यपुर जाती हैं। लेकिन वह जाते समय राजपुत स्त्री की कपड़े पहन कर जाती हैं। जबकि उसकी माँ उसे ऐसे कपड़े पहनने से मना करती हैं। फिर भी वह माँ की बात टालकर चली जाती हैं। जब वह वापिस आती हैं तो रास्ते में बस पंक्चर हो जाती है। सभी उतरकर कर अपने घर चले जाते हैं। वह चौराहे में बैठ जाती है। लेकिन रास्ते मे आने वाले सभी उसको नजरअंदाज करते हैं। ऐसे में वहाँ से गुजरने वाले पुरूष उसे फसाना चाहते हैं। लेकिन उसके कपड़े देखकर वे भयभीत होकर एक दूसरे से कहते हैं। 'मुझे मरजी' हूँ। यह आदिवासी नहीं, किसी राजपुत भी बीनणी हैं। बेस देखा लहँगा, काचली, कुरती, लुगड़ी, जूड़ा। तु खुद तो मरेणा ही मुझे भी मरवाएगा।[7]

इस से स्पष्ट होता है। कि समाज में वेशभूषा को देखकर उसकी पहचान होती हैं। यदि मुख्य धारा का आर्थिक संपन्न स्त्री हो तो उसने साथ गलत करते समय दस बार सोचा जाता हैं। यदि कोई गरीब स्त्री है तो उनका शिकार बड़ी आसानी से किया जाता है ये लोग मजबूर या गरीब होते है। मुख्य धारा के समाज से डरते हैं।

हिन्दी की आदिवासी कहानियों में भारतीय जनजीवन का संघर्ष दिखाया गया है। और इन कहानियों में सामाजिक व्यवस्था से गहराई के साथ अभिव्यक्त किया। इसके अन्तर्गत भारतीय आदिवासी समाज का स्वरूप उसकी परम्परागत और परिवर्तनशील स्थिति और भारतीय व्यवस्था के नियमनुसार बनाया गया जाति व्यवस्था, अस्पृश्यता पारिवारिक व्यवस्था, अस्पृश्यता पारिवारिक व्यवस्था, विवाह, समाज में स्त्री की दशा सूक्ष्म ढ़ग से चित्रण किया है।

राजनीति स्थिति :

राजनीति की सता – प्राप्ति या शासन–प्रक्रिया तक सीमित करके देखा जाता हैं। किन्तु वस्तुतः इसका आरंभ व्यक्ति के दैनिक जीवन और पारिवारिक व्यवहार से होता है। जब परिवार का कोई सदस्य अपेक्षाकृत अधिक शिक्षित या जागरूक होकर कानून अधिकारों अथवा समाजिक प्रश्नों पर विचार व्यक्त करता है। तो अन्य सदस्य उसे व्यंग्यात्मक रूप में अधिक राजनीति करने वाला कहकर संबोधित करते हैं।

इसी प्रकार सामज में नेतृत्व करने वाले या पहल करने वाले व्यक्तियों के प्रति भी ऐसी धारणाएँ निर्मित होती हैं।

इस से स्पष्ट होता है कि राजनीति केवल औपचारिक क्षेत्र तक सीमित न होकर एक विचार, व्यवहार और आचार–पद्वति के रूप में समाज के विभिन्न स्तरों पर सक्रिय रहती हैं। वास्तव में किसी समाज विशेष को उसके हितों के प्रति जागरूक करना, उसे उसमें अधिकार एवं कर्तव्यों की जानकारी देना, उसकी समझ का विकास करना तथा उसे उचित दिशा प्रदान करना राजनीति का एक सकारात्मक पक्ष आवश्यक पक्ष हैं। जिसके द्वारा समाज में चेतना उत्पन्न होती है।

---

[6] रणेन्द्र, 'रात बाकी एवं अन्य कहानियां' पृ 10

[7] रत्न कुमार साँभरिया, खेत तथा अन्य कहानियाँ, पृ० 24

किन्तु इसने समान्तर राजनीति का नकारात्मक और शोषणकारी पक्ष भी समकालीन कथा साहित्य में उभरकर सामने आता हैं। अनेक प्रसंगों में देखा जाता हैं कि कुछ स्वार्थी व्यक्ति अथवा संगठित समूह अपने हितों की पूर्ति के लिए भोले–भाले लोग विशेषतः आदिवासी समुदाय के युवाओं का उपयोग करते हैं। वे उन्हें आर्थिक प्रलोभन, वैचारिक प्रभाव या 'माइंडवाश' के माध्यम से अपने साथ जोड़ लेते हैं और उन्हें अपने उद्देश्यों की पूर्ति का साधन बना लेते हैं।

राजनीति का यह रूप न केवल शोषणकारी हैं बल्कि यह व्यक्ति की स्वतंत्र चेतना को भी नियंत्रित कर लेता हैं। ऐसी स्थिति में युवावर्ग चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित अनजाने में ही राजनीतिक हिस्सों का हिस्सा बन जाता है और कई बार विनाशकारी गतिविधियों में भी शामिल हो जाते हैं।

इस तरह की राजनीतिक कुटिलता का प्रभाव केवल व्यक्तिगत एक सीमित नहीं रहता है। बल्कि यह पारिवारिक और सामाजिक संरचनाओं को भी प्रभावित करता है। परिवारों में विघटन, सामाजिक अविश्वास और समुदाय के भीतर तनाव जैसी स्थिति उत्पन्न होने लगती है। यह स्थिति आगे चलकर व्यापक सामाजिक संकट का रूप धारण कर सकती हैं। जहाँ राजनीति केवल मार्गदर्शन का साधन न रहकर विनाश का कारण बन जाती हैं। राजनीतिक कुटिलता परिवार विघटन से लेकर विश्व की सर्वान्य व्यक्तियों को धराशाही करने के लिए उपयोग की जाते हैं।

बोल्तर भेगरा तंत्र की कहानी में इस प्रकार की राजनीतिक चेतना और उसके दुष्परिणामों की स्पष्ट अभिकसित देखने को मिलती है। 'जंगल की ललकार' तथा 'अपना – अपना युद्ध' जैसी कहानियों में आदिवासी समाज के भीतर व्याप्त राजनीतिक हस्तक्षेप, उसके प्रभाव और उससे उत्पन्न संघर्षो को गहराई से प्रस्तुत किया गया है। इन कहानियों में स्पष्ट होता है कि किस प्रकार बाहरी शक्तियाँ समाज की सरलता और विश्वास का लाभ उठाकर उन्हें अपने वैचारिक और राजनीतिक उद्देश्यों के लिए उपयोग करती है। परिणामस्वरूप आदिवासी समाज न केवल अपनी सांस्कृतिक अस्मिता के संकट से जुझता है, बल्कि वह राजनीतिक जाल में फंसकर अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए भी संघर्षरत हो जाता हैं। रामदयाल मुण्डा की कहानी 'खरगोश का कत्ल' में जगल के राजा खरगोश के साथ किए गए अन्यायपूर्ण व्यवहार के माध्यम से सत्ता के दुरुपयोग और शोषण की प्रवृति को उजागर किया हैं जो आज के सन्दर्भ में भी अत्यंत प्रासंगिक प्रत्तीत होता है। कहानी में यह दर्शाया गया है कि किस प्रकार सत्ता में आने के बाद व्यक्ति अपने मूल स्वभाव और संबंधो को भुलकर अत्याचारी बन जाता हैं। इस विषय पर यह लेख उल्लेखनीय है :–

''खरगोश जनता यह देखकर बड़े आश्चर्य में पड़ गई कि उनके साथ मन प्राण से बंधा हुआ उनका अपना आदमी कैसे इतना बदल गया।''[8]

इससे स्पष्ट है कि व्यक्ति के चरित्र में ऐसा परिवर्तन ला देती है जिससे वह अपने ही समुदाय के हितों के विरूद्व कार्य लग जाते हैं.

स्वतंत्र भारत में भी सरकारी अधिकारियों के इन्हीं नकारात्मक चित्रण लेखक संजीव की 'दुनिया की सबसे हसीन औरत'। कहानी में ओराँव जनजाति की अनपढ़ गरीब औरत सब्जी बेचकर अपने जीवन का पालन–पोषण करती है। आदिवासी महिला रेल से सब्जी बेचकर अपने जीवन का पालन–पोषण करती है। आदिवासी महिला रेल से सब्जी लेकर सफर करती हैं। आदिवासी महिला रेल से सब्जी लेकर सफर करते समय रेल में टी. टी. साहिबा उनकी मूलियों को उलट–पुलटकर कहती है – ''अरे फूलगोभी या टमाटर–टमाटर नही हैं ?'[9]

टी. टी साहिबा को मनपंसद सब्जी नहीं मिलती तथा वह कहती है–''देखो, हमारी गाड़ी में चढ़ी तो अच्छी सब्जी लेकर। वरना दुसरी गाड़ी में देखो समझी।''[10] इस कथन से स्पष्ट है कि अधिकारी अपने अधिकार का दुरुपयोग कर आदिवासी महिलाओं का का शोषण करते हैं।

---

[8] मुण्डा रामपाल (2017) खरगोश का कत्ल, वंदना टेटे, लोकप्रिय आदिवासी कहानियाँ प्रथम संस्करण पृ० 22

[9] संजीव दुनिया की सबसे हसीन औरत, पृ० 166

[10] वहीं, पृ० 116

भारत को गाँवों का देश कहा जाता है। गाँव ही देश की रीढ भी होते हैं भारत के चुनाव में गाँव के मतदान ही पूरे देश की राजनीति की दिक्षा दिखाते हैं. इसलिए राजनीतिक दलों का पूरा ध्यान और झुकाव गाँव की ओर ही होता है। चाहे वह गाँव दलितों का हो या आदिवासियो का गाँव तो गाँव है। किन्तु गाँव के भोले–भाले एवं अशिक्षित आदिवासियों राजनीतिक दल गुमराह करते हैं। झूठे वादे करके उनको फँसाते हैं कभी–कभी आदिवासियों के क्षेत्र में जाकर वहाँ के खनिज भंडार के चक्कर में उनके क्षेत्र में पहुंच जाते हैं। राजनीति लोग वहां इसलिए जाते है वहाँ के खनिज भंडार उनके हाथ लगे और वे मालामाल हो जाए। इसी तरह का चित्रण लेखक उदय प्रकाश में की कहानी 'और अन्त में प्रार्थना' में दिखाई देता है।[11] ''पी.एम. टिंगर गाँव इसलिए आए थे कि वे यहाँ एशिया के सबसे बड़े अमेरिका के सहयोग से विश्व – बैंक के कर्ज और कॉरपोरेट किंग फिरोजलाल भालकानी की पूँजी से बनाने वाले कागज के कारखाने का शिलान्यास करें।

इससे स्पष्ट है कि राजनीतिक दल के नेता आदिवासी क्षेत्रों में क्यों जाते हैं। उनके कारखानों से अपना विकास कैसे किया जाए। सभी नेता गण पूँजी की स्वार्थ–नीति से ही जनजाति क्षेत्रों में जाकर उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करते हैं और यही इनका उद्देश्य होता हैं।

केदार प्रसाद मीणा की 'कामरेड़ मीणा' नामक कहानी एक आदिवासी मीणा युवा के संघर्ष की कहानी है। कहानी के मुख्य पात्र मनीष मीणा जो एक शोधार्थी है। आदिवारियो के बारे में सोच–विचार कर आदिवासियों की लड़ाई लड़ने के लिए शोध कार्य पूरा करने के पश्चात नक्सलवाद का रास्ता अपनाता है और कहानी में उनकी एक मित्र से आदिवासियों के प्रति राजनीति का विचार–विमर्श करते हैं उन्हीं के शब्दों में–'राजनीति नगर गरीबों–आदिवासियों के हक में हो रही हैं तो बुरा क्या हैं। कुछ हलचल तो देश में मचनी ही चाहिए, यहीं से तो आगे रास्ता बनेगा ....दवाब बनता है सरकारों पर.....''[12]

वहाँ पर आदिवासियों के हक के लिए राजनीतिक संघर्ष ही उन्हें दिशा देता है। राजनीति के सन्दर्भ में आगे लिखता है–''लेकिन इन सबका पढ़ाई से क्या लेना–देना हमारी दिल्ली यूनिवर्सिटी में तो ऐसा नहीं हैं–दूसरी बात इसका देश के इस्फ्रास्ट्रक्चर और जी. डी. पी. पर कि कोई अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता है। बल्कि इन हरकतों से नेगेटिव असर होता हैं। जंतर मंतर पर होने वाले धरनों से होकर बाजार गिर जाता है और करोड़ों–अरबों का घाटा हो जाता हैं। ये सब बकवास हैं। कोरी राजनीति हैं।''[13]

इस कथन से स्पष्ट है कि आदिवासियों के लिए ही किसी और पक्ष में के यदि कोई राजनीति होती है तो सबसे पहले जन्तर–मन्तर पर ही धरना बैठा जाता है और इस तरह का कोई भी संघर्ष राजनीति में उथल–पुथल जरूर मचाती हैं और अपनी ओर सरकार का ध्यान आकर्षित करती हैं।

केदार प्रसाद मीणा संग्रह में मंगल सिंह मुंडा की 'महुआ का फुल' नामक कहानी आदिवासी स्त्री के संघर्ष एवं चेतना की कहानी हैं। कहानी में आदिवासी महिला जो कि शिक्षक है। वह आदिवासियों के पक्ष में उन तमाम गुण्डों से संघर्ष करती हैं और कैसे में मूल चन्द के फालतू गुण्डे बिरजू की हत्या इसलिए करते है कि वह बहु–बेटियों का बलात्कार करता हैं। इसी कारण पुलिस उन्हें गिरफ्तार कर लेती हैं। इस विषय पर वल्डसेना की महिला कहती हैं कि ''स्त्रियों की तरफ से सामूहिक नारे गुँज उठते हैं– राधिका बाई जिन्दाबाद....ब्लेड सेना जिन्दाबाद– करम् सरपंच मुर्दाबाद... मूलचन्द, हाय हाय राधिका बाई जिन्द....। राममोहन महतो की पत्नी से न रहा गया। वह गला फाड़–फाड़कर, लहंगा झाड़–झाड़कर तथा चुड़ियाँ दिखा–दिखाकर चिल्ला रही हैं। कौंवा काट खापे तुम मरद जात वालों की। तुम्हारी अकल बुगला उड़ा ले गया क्या ? तुम मरद जात केवल परा–परोसा जानते हो, दाना–पानी कैसे आता हैं। तुम नही जानते। बहु–बेटियों की इज्जत लुटती रही और तुम्हारें कानों में जूँ तक नहीं रेंगती, हाय मरद जात। राधिका तुझे दादा देती है। तुने ब्लेड़ की एक ही तन में दुष्ट बीरजू की आँतड़ी बाहर कर दी। साला बीरजू माँ–बेटी की इज्जत क्या चीज होती हैं। अब जान गया न।''[14]

---

[11] उदय प्रकाश और अन्त में प्रार्थना, पृ० 15

[12] केदार प्रसाद मीणा– आदिवासी कहानियाँ (कामारेड़ मीणा कहानी लेखक), पृ० 54

[13] वहीं, पृ० 54

[14] केदार प्रसाद नीना से, आदिवासी कहानियाँ, (महुआ का फूल कहानी, लेखक मंगल सिंह मुण्डा पृ० 82

इस से स्पष्ट है कि कोई भी राजनीतिक दल ऐसा नहीं हैं जो भूमिहिन, कृषक, भूमिहीन दलित, भूमिहीन कृषक आदिवासी के कल्याण के प्रति रूचि रखता हो, और देश के उन तमाम शोधित पीड़ित दबे–कुचले, स्त्री आदिवासी दलित अशिक्षित जनता का सही मार्गदर्शन करने वाला हो।

निष्कर्ष

इन सभी कहानियों से ज्ञात होता है। कि भारतीय समाज में आदिवासी की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति अच्छी है। नहीं कदम–कदम पर आदिवासियों को शोषण, अन्याय, अत्याचारों का शिकार होना पड़ा हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. डॉ० सुरेश पवार – हिन्दी कहानियों में अभिव्यक्ति आदिवासी जीवन 1990, पृ० 70
2. केदार प्रसाद मीणा आदिवासी कहानियां (बक्सड कहानी ले–चरण. सिंह पचिक हांक
3. वहीं पृ० 108
4. स्नेहलता शर्मा, जंगल का फूल (अरावली उद्यान) में 59
5. संजीव – दुनिया की सबसे हसीन औरत पृ 108
6. रणेन्द्र, रात बाकी एवं कन्या कहानियां पृ० 10
7. रत्न कुमार साँवरिया, खेत तथा अन्य कहानियाँ पृ० 127
8. मुण्ग रामपाल (2017) परगोश का कत्ल, चंदना टेटे, लोकप्रिय आदिवासी कहानियाँ प्रथम संस्करण पृ० 22
9. संजीव, दुनिया की सबसे हसीन औरत पृ० 116
10. वहीं पृ० 16
11. उदय प्रकाश और अन्त में प्रार्थना दूं
12. नेदार प्रसाद मीणा – आदिवासी कहानियाँ कामरेड मीणा पृ० 13
13. वहीं पृ 54
14. केदारप्रसाद मंगल सिंह मुण्डा – महुआ का फूल पृ० 22

Email : monikagohana973@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 43-45
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

स्त्री विमर्श आधुनिक युग के संदर्भ में

सुनीता कुमारी
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड)

प्रस्तावना :–

आज के आधुनिक युग में स्त्री के मनुष्यत्व को स्वीकारना सबसे अहम मुद्या है। क्योंकि पुरुष प्रधान समाज में मात्र पुरुषों को पहला स्थान दिया गया है। लेकिन ये सोच कहीं न कहीं अब हर क्षेत्र में बदलती नजर आ रही है। स्त्री का व्यक्ति के रूप में पहचान कर अपनी सम्पूर्णता में जी सकना, स्त्री–विमर्श का महत्वपूर्ण अंक बन गया है।

स्त्री–विमर्श ना केवल स्त्री की स्वतंत्रता, स्वच्छंदता, निजता, सामाजिक–आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक रूप से भोपी गई मान्यताओं और रुढ़ियों के विरोध में उभरा वैचारिक आन्दोलन है। नारी समाज का अभिन्न अंग है, जब से सृष्टि में नर और नारी का सृजन हुआ है तब से अब तक स्त्री विमर्श एक महत्वपूर्ण मुद्दा बना है। समय परिवर्तन के साथ – साथ स्त्री–विमर्श में भी बदलाव एवं परिवर्तन हुए है स्त्री विमर्श कोई संस्कार नहीं है और न ही कोई विचारधारा है, बल्कि इस बदलते आधुनिक समाज में स्त्री के पारंपरिक मानदंडों को तोड़ने की एक पहल है। जिससे स्त्री को समानता का अधिकार एव स्वतंत्रता प्राप्त हो सके। स्त्री विमर्श और कुछ नहीं आत्मचेतना, आत्मसम्मान, आत्मगौरव, समता और समानाधिकारी की पहल का दूसरा नाम है।

आधुनिक युग के संदर्भ में स्त्री विमर्श :–

आधुनिक युग की कई ऐसी लेखिकाएं हुई हैं। जिन्होंने अपने लेखन में स्त्री–विमर्श के ज्वलंत मुद्दा को उठाया है। उनकी समस्याओं को लेखन का विषय बनाया। इनमें से कुछ चर्चित लेखक–लेखिकॉए इस प्रकार है :–

रमणिका गुप्ता, वंदना ग्रीथिका, ममता कालिया, अलका सरावगी, नासिरा शर्मा आदि है।

स्त्री जो अपने हक–अधिकार के लिए विचार–वार्तालाप, बहस, संघर्ष, लड़ाई करती है इसे ही सामान्य तौर पर स्त्री–विमर्श के रूप में जाना जाता है। अतः कहा है कि स्त्री किसी एक परिस्थिति का पक्षधर नहीं है। यह पक्षधर है स्त्री के उस अतीत का जो उसने शोषण से भोगा है। उस वर्तमान का जो लैंगिक भेद से बुना है, उस भविष्य का जिसकी पीड़ा आने वाली पीढ़ी भी भोगेगी।

स्त्री विमर्श एक नवीन विचारधारा है जो समाज के समक्ष स्त्री के हितों को ध्यान में रखकर उन्हें स्वतंत्रता, समानता का अधिकार देने की प्रेरणा देता है। जिससे उसके अस्तित्व की पहचान हो सके।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी गद्यकार एवं कवि रघुवीर सहाय जी नारी जीवन की वास्तविक चित्र को खींचा उन्होंने स्वतंत्रता के बाद स्त्री जीवन की अनेक समस्याओं को विषय बनाया। उन्होनें कहा वैदिक काल में जहाँ ''यत्र नार्यस्तु पूज्यते तत्र रमते देवता'' कहा जाता है, वही आज वह अनेक शोषण का शिकार हो रही है।

''नारी बेचारी है, पुरुष की मारी। तन से क्षुदित्त है, लपक कर झपक कर, अंत में चित्र है''[1]

भारत सरकार ने सन् 2001 को महिलाओं के सशक्तिकरण वर्ष के रूप में घोषित किया। अब नारी हरेक अधिकार को लेकर रहेगी। यही लड़ाई स्त्री–विमर्श या नारी सशक्तिकरण के रूप में परिलक्षित होती है। सुशीला टाकभौरे के काव्य–संग्रह ''स्वाति बूँद और खारे मोती'' और ''यह तुम भी जानो'' चर्चित कविता है इनकी कविताओं में विद्रोहिणी आक्रोश की ध्वनि सुनाई पड़ती है।

''माँ–बाप ने पैदा किया था गूँगा, परिवेश ने लंगड़ा बना दिया। चलती रही परिपाटी पर बैसाखियां चरमराती है, अधिक बोझ से अकुलाकर विस्कारित मन हुंकारता है, बैसाखियां तोड़ दूँ।[2]

काव्यों की तरह आधुनिक युग को चर्चित लेखिकाओं जिन्होनें कहानी, उपन्यासों के माध्यम से स्त्री–विमर्श को ज्वलंत मुद्दा बनाई और सदियों से उपेक्षित तिरस्कृत महिलाओं को मान–सम्मान दिलाई। हिंदी साहित्य में नारी–विमर्श की मजबूत नींव महादेवी वर्मा ने डाली थी। उन्होंने गद्य एवं पद्य दोनों में अनेक रचनाएँ लिखी थी। महादेवी वर्मा के नारी मुक्ति के उपायों की गहन चिंतन और विद्रोही तेवर है।

महादेवी वर्मा ने नारी की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए लिखा है – ''नारी शून्य के समान पुरुष की ईकाई के साथ सब कुछ है परंतु उससे रहित कुछ नहीं।'' मन्नू भंडारी एक प्रतिनिधि कथाकार है, इन्होंने नारी जीवन के तनाव, घुटन नारी–पुरुष के बदलते संदर्भो, यौन सम्बन्धों एवं पारिवारिक कलह को यथार्थता की पृष्ठभूमि पर लाकर खड़ा किया है। मन्नू भंडारी का उपन्यास आपका बंटी एक साथ यथार्थ परक आधुनिक युग की घटना है। लेखिका ने उपन्यास की नायिका 'शकुन' के माध्यम से आज की आधुनिक नारी के सुख–दुखों समस्याओं और संघर्षों को दिखाया है। शकुन का कथन 'तर्को और बहसों' में दिन बीतते थे और ठंडी लाशों की तरह लेटे–लेटे दुसरों को दुखी, बैचैन और छटपटाते हुए देखने की आकांक्षा में रातें साथ रहने की यंत्रणा भी बड़ी विकट थी और अलगाव का त्रास थी। दोनों ही एक–दूसरे के बीच की दूरी को इतना बढ़ाया कि फिर बंटी भी उस खाई को पाटने के लिए संतु न बन सका।[3]

आधुनिक युग में रमणिका जी अपने कहानियों एवं उपन्यासों की नायिकाओं के जुझारूपन से समाज की अन्य नारियों के लिए प्रेरणा का काम करती है । सीता उपन्यास की नायिका 'सीता' कोई गुंगी बहरी गाय नहीं है वह खुद को पुरुषों के बराबर ही मनुष्य समझने वाली नारी अधिकारों के प्रति सचेत महिला है। सीता आधुनिक सोच अन्याय, अत्याचार, शोषण के खिलाफ विद्रोहात्मक है। सीता ना तो एक मजदूर के रूप में चुपचाप खामोशी से ठेकेदारों, भ्रष्ट अफसरों, मुंशियों का जुल्म सहती है और ना ही एक स्त्री के रूप में पति के द्वारा किए जाने वाले अपराधों को क्षमा करती है। जो इन पंक्तियों में देखी जा सकती है – ''साले हमर के रामायण पढ़ाये है। उसने (यासीन) को राम कहे है जो दूसर औरत कर लेले। राम जी तो दूसर ब्याह नाय कर ले। पर जाए दे– हम उ सीता जी नाय है जे वन में चला जाय। हम तो एही साले के वनों मे भेज देब।''[4]

स्त्री विमर्श एक ऐसा विमर्श है जो समाज में फैले जाति, धर्म, वर्ग देश में फैले अराजकता से हटकर हैं। स्त्री विमर्श नाम से ही पता चलता है स्त्री के ऊपर हो रहे अन्याय, अत्याचार, शोषण, उपेक्षा आदि का विरोध करना।

रमणिका गुप्ता के उपन्यास सीता की नायिका 'सीता' पौराणिक चरित्र से प्रेरित सीता नहीं है। यह आज की आधुनिक युग की सीता है जो अपने साथ हुए अन्याय, अत्याचार करने वालों को जमीन में जिन्दा दफन करने का सामर्थ्य रखती है। अन्याय को देखकर सीता का खून खौल जाता है वह कहती है– 'टाँगी देखत है न? अभी पजा के (तेज कराके) लायल है। काट के रख देब। हमर के मरे का डर नाय। साले तोर जोरू विधवा होय के रोवेगी। तोर बाल–बुतरू बिलखतो।[5]

स्त्री विमर्श स्त्रियों के ऊपर सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक रूप से थोपी गई मान्यताओं और रूढ़ियों के विरोध में उभरा वैचारिक आन्दोलन है। उषा प्रियवंदा जी के उपन्यास 'पचपन खंभे लाल दिवारे' की नायिका सुषमा शिक्षित होने पर भी पारिवारिक जिम्मेदारी के कारण विवाह की इच्छा को दबाकर रखने के लिए मजबुर है। वह कहती है– 'पिताजी को पेन्शन ही कितनी है? उसमें दो वक्त की दाल रोटी भी न चलें। मैं भी अगर काम न करूँ तो किसके सामने हाथ फैलाएंगे।'[6]

इसी प्रकार अन्य कई कथाकार भी हुए जिन्होंने अपने कहानी, उपन्यासों एवं काव्यों के माध्यम से स्त्री को महत्वपूर्ण स्थान दिया है, अक स्त्री अपाहिज व लाचार नहीं बल्कि खुद अपनी कहानी लिखने को तैयार है।

निष्कर्ष :–

अतः हम कह सकते है आज के आधुनिक युग के संदर्भ में स्त्री विमर्श क्षेत्र के क्षेत्र में बदलाव हुए है। आज के नारी में वैचारिक क्षमता उभर कर आई है। इनमें अब सोचने–समझने की क्षमता व्याप्त हो गयी है स्त्री घर, परिवार के अलावा समाज के लिए रचनात्मक कार्य करना चाहती है व कर भी रही है। आज नारी अपने हक के लिए दिनों–दिन आगे बढ़कर संघर्ष करती नजर आ रही है और इन सब के पीछे आधुनिक युग के हमारे प्रशंसनीय साहित्यकारों का काफी योगदान है एवं इनका प्रमुख ध्येय स्त्री–विमर्श को प्रशंसा योग्य बनाना।

संदर्भ सूची :–

(1) पंचशील शोध समीक्षा, प्रकाशक – पंचशील प्रकाशन जयपुर 2009 पृ0सं0 82

(2) टाकभौरे सुशीला, आजकल पत्रिका, मार्च 2013, पृ0 सं0 29

(3) भंडारी मन्नू आपका बंटी, प्रकाशक–राधाकृष्ण प्रकाशन 2019 पृ0 सं0 35

(4) गुप्ता रमणिका, सीता–मौसी (उपन्यास) प्रकाशक ज्योतिलोक प्रकाशन, दिल्ली (द्वितीय संस्करण–2019) पृ0 सं0 59–60

(5) ''वही'' पृ0 सं0 61

(6) प्रियंवदा उषा, पचपन खंभे लाल दिवारें – स्पीकिंग, टाईगर बुक 2021 पृ0 सं0 62

मो. नं. – 8210374008, 8578027718

ई मेल : sunitakrishna555@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 46-50
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रेम

अलिका कुमारी
शोधार्थी,
विश्व विद्यालय हिन्दी विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची
सम्प्रति – सहायक शिक्षिका(हिन्दी)
राजकीय कन्या उत्क्रमित उच्च विद्यालय सरायकेला।

केदरानाथ अग्रवाल एक ऐसे कवि और लेखक हैं जिन्हें आस–पास की चीजों को देखने और उनका वर्णन करने में अद्‌भुत क्षमता रखते थे। अग्रवाल जी का व्यक्तित्व सरल, सहज और शीशे की भाँति पारदर्शी था, इसलिए वह आसानी से जनसाधारण के समीप पहुँचे। अग्रवाल जी को मुख्य रूप से 'धरती और मनुष्य के कवि' माने जाते थे, जिनके जीवन और साहित्य में अटूट समानता थी। केदार जी कविता सिर्फ लिखते ही नहीं थे वह उसे जीते, भोगते और मुक्ति का मार्ग मानते थे।

मनुष्य जब तक प्यार करता है वह अपनी चरित्रगत उदारता से नहीं गिरता–पाश्चात्य विचारक लेम्ब का यह विचार जीवन का वह दर्शन है जो जीवन को स्वस्थ संपूर्ण और सही दिशा देता है। सच्चा प्रेम जीवन की वह शक्ति है जो मनुष्य की तमाम कमियों को खूबियों में बदल देती है। इसकी व्यापकता और सार्वभौमिकता सवालों से परे है। जब–जब मनुष्य प्रेम के स्वस्थ भाव–बोध से दूर हुआ है मनुष्यता की सीमा सीमित और संकीर्ण हुई है।

'प्रेम' महज स्त्री–पुरूष संबंधों की रागात्मकता को ही नहीं मानता वरन् उससे आगे वात्सल्य, क्षेत्र, देश, जन, धरती तक व्याप्त होता है। अपने देश और जनपद के प्रति कवि केदारनाथ का प्रेम वह रागात्मक अंतः सूत्र हैं जो उन्हें पारिवारिक प्रेम से लेकर विश्व प्रेम तक बांधता है। केदारनाथ अग्रवाल की कविताएँ प्रेम की सहजता और सरलता में भी जीवन के उस दर्शन से जोड़ती है, जो जीवन को हमेशा अर्थवान और मूल्यवान बनाता है कवि प्रेम को जीवन मानते है। आत्मगंध की भूमिका में उन्होंने लिखा है मैं प्रेम को जीवन का मूल्य मानता हूँ। इतना ही नहीं प्रेम मानवीय चेतना की परम उपलब्धि है जिसे प्राप्त कर आदमी मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकता है।''[1] जीवन का यह सर्वोच्च मूल्य ही वास्तव में जीवन का सबसे बड़ा दर्शन है। यही से जीवन का उत्स होता है और विसर्जन भी। यहीं से हम सशक्त होते हैं और कमजोर भी। जीवन के सभी क्रिया–कलाप यहीं से नियमित और नियंत्रित हैं। जो यहाँ चुक जाता है, वो हर जगह चुक जाता है। जीवन के इस वृत्ति को जो समझ लेता है वह जीवन में उत्तरोत्तर ऊँचा उठता ह। केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं –

''हे मरी तुम !
प्यार नहीं पाथर की नाव
डूब जाय जो नदिया में
.....
गमनागमनी हैं

आक्रीड़न है
आर–पार का उत्तोलन है।"[2]

प्रेम का यह दर्शन मनुष्य में मनुष्यता विकसित करता है, मानवता स्थापित करता है। मनुष्यता का विकास प्रेम का आधार है। बृहत्तर मानवता के जो मूल्य हैं वही प्रेम के मूल्य है। उज्ज्वल मन का उजास को वस्तुततः प्रेम का प्रकाश है। यह आधार वास्तव में जिना पुष्ट और पुख्ता होगा, जीवन का आनंद उतना ही गहरा और व्यापक होगा। स्वकीया प्रेम के भावभूमि पर भी ये कविताएँ प्रेम की व्यापकता का एहसास कराती हैं। जीवन के सभी रंग यहाँ मौजूद हैं। यह आनंद जीवन का ही ध्येय नहीं है बल्कि समग्र साहित्य का भी अंतिम लक्ष्य है–

"हे मेरी तुम !
आओ बैठें पास–पास
हम हास और परिहास करें
एक–दूसरे को निहारकर
जीने का अभ्यास करें।"[3]

जीने का यह अभ्यास ही जीवन में आस्था और सौंदर्य पैदा करता है।यहीं से उल्लास और उमंग उत्पन्न होता है। जायसी ने भी कहा हैं– संसार में प्रेम से अधिक सुन्दर और काव्य कुछ भी नहीं है। प्रेम ही मनुष्य के जीवन का चरम मूल्य हैं, जिसे पाकर मनुष्य बैकुंठी होता है, अन्यथा वह एक मुट्ठी राख नहीं तो क्या है–

"मानुष प्रेम भएउ बैकुंठी
नाहीं त काह छार भरि मुट्ठी।"4

कवि की प्रथम प्रकार की कविताओं को रोमानी कविताओं की संज्ञा दी जा सकती है। कवि ने स्वयं काव्य जीवन का प्रारंभ प्रेम और श्रृंगार के रोमानी कवि के रूप में किया है। 'नींद के बादल' छुटा है रात के जादू के बाद दिन के लाल सबेरे के साथ ओझल हो जाते हैं। इस प्रकार मेरे इस नये सबेरे के साथ प्रेम की इस संग्रह की कविताओं की इति हो जाती है।

केदारनाथ जी का कवि प्रेम और सौंदर्य का बड़ा मुग्धकारी कवि है। अपनी आरंभिक काल की कविताओं में वह बड़ी रोमांटिक कविताएँ रचता रहा। बाद में दाम्पत्य प्रेम की बेजोड़ कविताएँ दीं। एक पूरा संग्रह ही रच डाला अलग से – हे मेरी तुम! (पत्नी को संबोधित कविताओं का संकलन, मई 1981 ई0 में प्रकाशित) 70 वर्ष की आयु में काल को ठेंगा दिखाता प्रेम– वृद्धावस्था के दाम्पत्य– प्रेम को इन पंक्तियों के माध्यम से दिखाया गया हैं –

"हे मेरी तुम !
फूल तुम्हारे लिए खिला है
लाल – लाल पंखुड़ियां खोले
.....
धारा काटे निठुर कगाारा
मानव को मानव हो प्यारा
जग हो फूल गुलाब हमारा।"[5]

कवि की प्रणय सबंधी कविताओं की विशेषता यही है कि उसका प्रेम स्वस्थ दिशाओं की ओर प्रवाहित हुआ है और उसका स्वरूप कहीं भी विकृत नहीं हो सकता है। कवि की प्रणय संबंधी कविताओं में उसके भावों की निश्छल अभिव्यक्ति में जीवन के प्रति उत्साह भी प्रतीत होता है। कवि को कविता की प्रेरणा अपनी प्रिया से प्राप्त हुई है। अपनी प्रिया की सुन्दरता धरती और प्रकृति के समस्त उपकरणों में प्रतीत होती है।

प्रेम संबंधी कविताओं में कवि ने आशा और निराशा, संयोग और वियेाग दोनों ही प्रकार के चित्र उपस्थित किए हैं। आशा और संयोग के प्रेम के चित्रों में कवि पूर्ण उत्साह के साथ जीवन के प्रत्येक कण–कण में प्रेयसी और उसके सौंदर्य के चित्र को पाने की चेष्टा करता है। कवि की संयोग की भावनायें स्वाभाविक, सहज और कोमल है।

अग्रवाल जी की प्रेम कविताओं के संबंध में डॉ0 विश्वानाथ त्रिपाठी को यह टिप्पणी गौरतलब है– 'केदार ने नारी शरीर को अकुंठ भाव से उभारा है उसमें पत्नी का पारिवारिक रूप झलकता है। केदार ने

पत्नी को अपने ही संदर्भ में देखा है। वह माँ, बहन, सास, समधिन भी होगी, यह नहीं दिखाई पड़ता। नारी की शारीरिक काम्यता केदारनाथ अग्रवाल के यहाँ नई मर्यादा से संबद्ध है। केदार की कविताओं में कुंठा हीनता एवं निर्बध सौंदर्य स्वीकृत नारी स्वातंत्रय एवं सामाजिकता से जुड़ी है।''[6]

केदारनाथ उस प्रेम के कवि हैं जो मात्र दैहिक सौंदर्य पर ही अवलंबित नहीं है बल्कि भीतर ही लौ की तरह अबुझ होकर जलता रहता है। जिससे उनका अंतर पककर लगातार रस बुद्धि को प्राप्त करता रहता है। कार्य व्यवहारों में निरंतर अलग–अलग सौंदर्य रूपों के साथ एक विशिष्ट भाव लेकर प्रगट होता है, उनके प्रेम का यह विशिष्टमन आम जन का विशिष्ट है, सुपर मानसिकता वाले लोगों का विशिष्टपन है, 'हे मेरी तुम हाड़ बुढ़ाए रूखे–सूखे डगमग डोले'।

कवि पति–पत्नी के घरू प्रेम को ऊर्जावान बनाने वाला, संघर्षो में ताकत देने वाला मानते हैं। उसे सर्वांग और सुन्दर रूप से प्रस्तुत करने में विश्वास करते हैं, वह विवाह करके पत्नी को नहीं लाते वरन् वह साक्षात् प्रेम को ही ब्याह करके ले आते हैं –

''मैंने प्रेम अचानक पाया
गया ब्याह में युवती लाने ?
प्रेम ब्याह
कर संग में लाया।''[7]

केदारनाथ द्वारा बिल्कुल अकुंठ भाव से अपने को नारी प्रेमी घोषित करना स्वकीया प्रेम के प्रति स्वस्थ मानसिकता का द्योतक है।

सामाजिकता का विकास केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं का मूलाधार हैं, जो प्रेम जीवन को कर्ममय सौंदर्य से नवाजता हैं, वह प्रेम धन्य है –

''कष्टों में भी मुझको
कर्ममय बनाता प्रेम तुम्हारा।''[8]

प्रेम का यह दर्शन कर्मनिष्ठ जीवन का संदेश देता है। आज भौतिकवादी सोच और संस्कृति के परिणामस्वरूप प्रेम मनुष्य को कर्महीन बनाता है और कभी–कभी जीवनहीन भी।

आदि कवि वाल्मीकि ने भी राम और सीता के प्रेम का विकास मिथिला या अयोध्या के महलों और बगीचों में न दिखाकर दंडकारण्य के विस्तृत, कर्मक्षेत्र के बीच दिखाया है। ऐसा प्रेम वास्तव में जीवन–यात्रा के मार्ग में माधुर्य और आनंद फैलाने वाला होता है। संपूर्ण कर्मक्षेत्र जगमग हो जाता है। प्रिय के आनंद से प्रेमी का हृदय ही आनंदित नहीं होता बल्कि संसार की सभी वस्तुएँ अधिक प्रिय और आनंदप्रद हो जाती है।

केदारनाथ कृषक, मजदूर और प्रकृति के जितने निकट हैं, उतने ही गृह–जीवन के भी निकट है। उनकी कविता में, पत्नी के प्रति उत्कट प्रेम की सहज अभिव्यक्ति के ही साथ बच्चों के प्रति भी सहज वत्सलता प्रकट हुई है, जिसका उल्लेख मैं बाद में करूँगा पर पहले उनके पत्नी–प्रेम के कुछ मनोरम चित्र देखें। जब प्रेम प्रगाढ़, रूप में पत्नी और पति दोनों के बीच पलता है, तो वह सार्थक परिस्थिति के रूप में दांपत्य का आदर्श बनता है। एकतरफा प्रेम किसी के साथ हो, असफलता की कहानी बनकर रह जाता है। दोनों तरफ पलने वाले इस प्रेम को केदार कवित्त छंद में व्यक्त करते हुए मैथिलीशरण गुप्त और उर्दू के प्रसिद्ध शायर गालिब से होड़ लेते हैं।

जवानी में एक रूमानी लहर की तरह यह भाव आता है और चला जाता है, केदारनाथ की रचनाओं में यह भाव स्थायी है। प्रेम पर विभिन्न वर्षों में, उन्होंने बहुत सी छोटी–छोटी कविताएँ लिखी हैं। इनमें आंतरिक संबद्धता है, इनके मेल से एक सिम्फोनी तैयार होती है। शेक्सपियर के नाटक की एक पंक्ति Ripenes is all कीट्स को बहुत प्रिय थी। उनकी 'ओड टु आटम' कविता में राइपनेस का संगीत पकी फसल, पके फल, डूबते सूरज का गहरा सुनहला प्रकाश – सारी प्रकृति में जैसे व्याप्त हो गया है। केदारनाथ की कविता में पके पहले का स्वाद है, धरती आकाश के बदले दो व्यक्तियों के अस्तित्व की ऐसी अनुभूति है जिसमें मिलने की जरूरत नहीं, कुछ कहने की जरूरत नहीं–

''हे मेरी तुम !
हम मिलते हैं
बिना मिले ही ?
मिलने के एहसास में

.....
जीने के एहसास में
जैसे फूल के भीतर
फल के स्वाद में''[9]

निःसंदेह ये हिन्दी कविता के नये क्षितिज हैं और बहुत थोड़े कवि ही यहाँ तक पहुँच पाते हैं। अभिव्यक्ति के लिए नये उपकरण खोजते हुए केदारनाथ एक दुस्साहसिक प्रयोग किया और वह प्रयोग सफल हुआ–

''हे मेरी तुम !
जी रहा हूँ
.....
क्रिया कर्त्ता कर्म से
भव भर रहा हूँ।''[10]

केदारनाथ के यहाँ प्रेम का पुष्प पितृसत्ता के घेरे से बाहर समता की मिट्टी में पुष्पित और पल्लवित होता है यही वजह है कि वह प्रेम स्त्री के प्रेमिका रूप पर ही समाप्त नहीं हो जाता है, बल्कि पत्नी रूप में भी वह प्रेम उसी ताजगी के साथ खिलता और सुवासित होता है। केदारनाथ के लिए प्रेम में स्त्री केवल ग्रहण करने वाली नहीं वरन् खुद भी सक्रिय है। उस सक्रियता का स्वीकार्य और सम्मान ही केदारनाथ की कविता को प्रेम की उच्च धरातल तक पहुँचाती है और उसे स्थायी बनाती है।

यह बात केदारनाथ अग्रवाल जैसे कवि ही कह सकते हैं कि जिनके जीने और रचने में कोई फांक नहीं हैं, और इसी कारण वह जन–संघर्ष के जितने समर्थ कवि हैं, उतने ही वह प्रेम और सौंदर्य के भी समर्थ कवि हैं। प्रेम मनुष्य को अन्दर से भी जोड़ता है और बाहर से भी। यही एक ऐसा भाव है जिसके अभाव में मानव वास्तव में मानव नहीं रहता। यही एक ऐसा भाव है जिसकी व्यंजना रोकर भी की जाती है और हंसकर भी। जो जितना प्यार पाता है उससे ज्यादा देना चाहता है। प्रेम जीवन में ज्वार की तरह नहीं आता, बल्कि हार की तरह संपूर्ण जीवन को आनंदित करता है – सुख–दुःख में बांधे रखता है –

''हे मेरी तुम !
खेल–खेल में खेल न जीते
जीवन के दिन रीते बीते
हारे बाज़ी लगातार हम
अपनी गोट नहीं पक पाई
मात मुहब्बत ने भी खाई
हे मेरी तुम !
आओ बैठो इसी रेत पर
हमने – तुमने जिस पर चलकर
उमर गंवाई।''[11]

निष्कर्षतः कहा जा सकता हैं कि केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में स्वकीया प्रेम का वह दर्शन है जिससे भारतीय सामाजिक – सांस्कृतिक अवधारणा मजबूत होती है। केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रेम का सार यह है कि उनका प्रेम केवल प्रेमी–प्रेमिका तक सीमित न रहकर दाम्पत्य प्रेम, प्रकृति और समग्र मानवता के प्रति गाढ़ा और यथार्थवादी लगाव है। यह जीवन का सर्वोच्च मूल्य और संघर्ष की शक्ति है। अग्रवाल जी का दाम्पत्य प्रेम उम्र के साथ फीका नहीं पड़ता, बल्कि जीवन की विषमताओं के बीच और अधिक प्रगाढ़ होता जाता है।

संदर्भ–संकेत

1. आजकल, सीमा ओझा, मई 2011, पृ0–43
2. उपरिवत्, पृ0–43
3. उपरिवत्, पृ0–43
4. उपरिवत्, पृ0– 43
5. उपरिवत्, पृ0– 18
6. उपरिवत्, पृ0– 37

7. जमुन जल तुम, केदारनाथ अग्रवाल
8. आजकल, सीमा ओझा, मई 2011, पृ0– 44
9. हे मेरी तुम, केदारनाथ अग्रवाल, पृ0– 42
10. उपरिवत्, पृ0–67
11. आजतक, सीमा ओझा, मई 2011, पृ0– 44

मो0 सं0: 9931187336

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 51-56
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हाडौती की हथकरघा विरासत और स्वाधीनता संग्राम: मांगरोल के खादी उद्योग का ऐतिहासिक व सामाजिक-आर्थिक विश्लेषण

विवेक सोनी
शोधकर्ता
भूगोल विभाग,
पद : सहायक आचार्य भूगोल
माता भगवती देवी देव संस्कृति महिला कला महाविद्यालय, सीसवालीं जिला बारां (राजस्थान)

शोध सार (ABSTRACT)

राजस्थान का हाड़ौती क्षेत्र न केवल अपने ऐतिहासिक राजनीतिक क्रांतियों के लिए जाना जाता है, बल्कि यह पारंपरिक हथकरघा और खादी वस्त्र निर्माण का भी एक ऐतिहासिक केंद्र रहा है। वर्तमान बारां जिले (तत्कालीन कोटा रियासत) में स्थित मांगरोल कस्बा सदियों से पारंपरिक वस्त्र बुनाई का प्रमुख केंद्र रहा है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महात्मा गांधी द्वारा चलाए गए 'स्वदेशी आंदोलन और 'असहयोग आंदोलन' के दौरान मांगरोल के वस्त्र उद्योग को एक नई वैचारिक और राजनीतिक पहचान मिली। मांगरोल की प्रसिद्ध खादी धोती, सूती थान और पोशाकें केवल दैनिक आवश्यकता के वस्त्र नहीं थे, बल्कि वे ब्रिटिश आर्थिक औपनिवेशिक नीतियों के विरुद्ध एक सशक्त प्रतिरोध का प्रतीक बने। प्रस्तुत शोध पत्र में रियासती काल से लेकर स्वाधीनता संग्राम तक मांगरोल के खादी उद्योग के ऐतिहासिक क्रमिक विकास, स्वतंत्रता-पश्चात संस्थागत पुनर्गठन (हाड़ौती खादी ग्रामोद्योग समिति की भूमिका), सामाजिक-आर्थिक प्रभावों तथा आधुनिक युग में पावरलूम व वैश्वीकरण से उत्पन्न चुनौतियों का एक गहन विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

मुख्य शब्द (Keywords): मांगरोल, खादी उद्योग, कोटा रियासत, स्वदेशी आंदोलन, हाड़ौती खादी ग्रामोद्योग समिति, हथकरघा, बुनकर समुदाय, खादी धोती।

1. प्रस्तावना (Introduction)

खादी केवल एक वस्त्र नहीं है, बल्कि यह भारत के सामाजिक-आर्थिक इतिहास और स्वतंत्रता संग्राम की एक सांस्कृतिक एवं राजनीतिक विचारधारा है। 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में महात्मा गांधी ने खादी को 'आत्मनिर्भरता' और 'स्वदेशी प्रतिरोध' के एक प्रमुख हथियार के रूप में प्रतिपादित किया। राजस्थान में रियासती काल से ही हथकरघा एवं वस्त्र बुनाई की समृद्ध परंपरा रही है। कोटा रियासत के अंतर्गत स्थित मांगरोल (वर्तमान बारां जिला) अपनी उपजाऊ काली मिट्टी और कपास उत्पादन के कारण ऐतिहासिक रूप से बुनाई कला का एक समृद्ध केंद्र रहा। मांगरोल में पीढ़ी-दर-पीढ़ी निवास करने वाले बुनकर समुदाय (विशेषकर जुलाहा, कोली और मेघवाल समुदाय) ने अपनी बारीक बुनाई कल से राजस्थान ही नहीं, बल्कि संपूर्ण उत्तर भारत में मांगरोल की खादी धोती और कपड़ों को ख्याति दिलाई। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान जब विदेशी कपड़ों के बहिष्कार का आह्वान हुआ, तब मांगरोल के बुनकरों ने चरखे और हथकरघे को स्वाधीनता संग्राम की आर्थिक रीढ के रूप मे स्थापित किया।

2. शोध का उद्देश्य (Research Objectives)

इस शोध पत्र के मुखय उद्देश्य निम्नलिखित हैँ :

कोटा रियासत कालीन मांगरोल के पारंपरिक बुनाई उद्योग के ऐतिहासिक उद्भव का अध्ययन करना।

- भारतीय स्वाधीनता आंदोलन (विशेषकर स्वदेशी और असहयोग आंदोलन) में मांगरोल के खादी उत्पादन और बुनकरों के योगदान का विश्लेषण करना।
- स्वतंत्रता-पश्चात संस्थागत पुनर्गठन (KVIC और हाड़ौती खादी ग्रामोद्योग समिति) की भूमिका का मूल्यांकन करना
- मांगरोल की प्रसिद्ध खादी धोती और वस्त्रों की तकनीकी एवं कलात्मक विशिष्टताओं को रेखांकित करना।
- आधुनिक काल में यंत्रीकरण (Powerloom), बाजारीकरण और बुनकरों के समक्ष सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों का ऐतिहासिक प रिप्रेक्ष्य में विश्लेषण करना।

3. शोध कार्यप्रणाली (Research Methodology)

प्रस्तुत अध्ययन ऐतिहासिक और विश्लेषणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। शोध हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक सोतों में कोटा राज्य के ऐतिहासिक अभिलेख, राजपूताना एजेंसी की रिपोर्ट स्वतंत्रता संग्राम के स्थानीय वृत्तांत तथा हाडौती खादी ग्रामोद्योंग समिति के ऐतिहासिक दस्तावेज शामिल हैं। द्वितीयक स्रोतों के रूप में राजस्थान के आर्थिक इतिहास, खादी एवं ग्रामोद्योंग आयोग (KVIC) की वार्षिक रिपोर्टों, शोध पत्रिकाओं तथा क्षेत्रीय इतिहास विशेषज्ञों के अध्ययनों का सहारा लिया गया है।

4. मांगरोल के खादी उद्योग का ऐतिहासिक कालक्रम (Historical Evolution)

ऐतिहासिक कालखंड	उद्योग की स्थिति एवं विशेषताएं	ऐतिहासिक एवं सामाजिक प्रभाव
रियासती काल (18वीं-19वी शताब्दी)	कोटा रियासत के अधीन स्थानीय कपास पर आधारित हस्तनिर्मित स्रती वस्त्र निर्माण।	स्थानीय राजघरानों, कृषकों और सामंती मांग हेतु धोती, साफे और रेज़ा वस्त्रों की आपर्ति।
स्वदेशी आंदोलन एवं स्वाधीनता संग्राम (1920-1947)	गांधीवादी विचारधारा का प्रभावः हाथ से कते सूत (खादी) का बडे पैमाने पर उत्पादन।	विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार; स्वतंत्रता सेनानियों हेत वस्त्र आपूर्ति; स्वदेशी का गढ़।
स्वतंत्रता-पश्चात काल (1947-1980)	खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग (KVIC) तथा संस्थागत समितियों की स्थापना।	बुनकरों को नियमित रोजगार, वित्तीय सहायता एं राज्यस्तरीय पहचान का दौर।

समकालीन युग (1.990-वर्तमान)	पावरलूम से प्रतिस्पर्धा, पोली-खादी की शुरुआत, डिजिटल विपणन का प्रयास।	परपरागत बुनाई का संकट, युवाओं का पलायन लेकिन विशिष्ट खादी ब्रांड के रूप में पहचान कायम

5. स्वतंत्रता आंदोलन और स्वदेशी चेतना में योगदान (Role in Freedom Movement)

1920 के दशक में जब महात्मा गांधी ने "असहयोग आंदोलन' और 'चरखा अभियान' की शुरुआत की, तो हाड़ौती क्षेत्र में मांगरोल इसका प्रमुख केंद्र बनकर उभरा। कोटा प्रजामंडल के नेताओं और स्थानीय गांधीवादी कार्यकर्ताओं (जैसे पंडित नयनूराम शर्मा और अभिन्न हरि) ने मांगरोल के बुनकरों को संगठित किया।

मांगरोल में हाथ से काते गए सूत और गरीब बुनकरों द्वारा बुने गए खादी वस्त्र केवल हाड़ौती तक सीमित नहीं रहे, बल्कि इन्हें राजपूताना के विभिन्न प्रजामंडलों, खादी आश्रमों और सत्याग्रहियों तक पहुँचाया गया। ब्रिटिश काल में जब मैनचेस्टर और मिल-निर्मित कपड़ों का वर्चस्व था, तब मांगरोल के बुनकरों ने विदेशी वस्त्रों के सामने अपनी पारंपरिक बुनाई को जीवित रखकर एक मूक लेकिन आर्थिक क्रांति का संचालन किया।

6. संस्थागत विकास: हाडौती खादी ग्रामोद्योग समिति

आजादी के बाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था और गांधीवादी विचारों को जीवित रखने के लिए संस्थागत संरचना ढाली गई। इस दिशा में #"हाडौती खादी ग्रामोद्योग समिति"" की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही।

- **कच्चे माल और सूत का वितरण:** समिति द्वारा बुनकर परिवारों को अम्बर चरखों के लिए पूनी (Sliver) और धागा उपलब्ध कराया गया।
- **उत्पादन और खरीद की गारंटी**: बुनकरों द्वारा तैयार खादी वस्त्रों (विशेष रूप से खादी धोती और थान) की समिति द्वारा निश्चित मूल्य पर खरीद सुनिश्चित की गई।
- **मांगरोल की खादी धोती का ब्रांड निर्माण**: मांगरोल की धोती अपनी बारीक बुनाई, टिकाऊपन और सूती गुणवत्ता के कारण पूरे राजस्थान, मध्य प्रदेश और दिल्ली के खादी भंडारों में एक पहचान बनी

7. कलात्मक व तकनीकी विशिष्टताएँ (Technical & Artistic Excellence)

मांगरोल के खादी उद्योग की अपनी विशिष्ट तकनीकी पहचान रही है.

- **धागे की कताई**: अम्बर चरखे और पारंपरिक चरखों से 20 से 40 काउंट तक के महीन सूती धागे तैयार करना
- **पारंपरिक हथकरघा (Handloom):** पिट लूम (Pit Loom) और फ्रेम लूम का उपयोग करके बिना किसी विद्युत ऊर्जा के वस्त्र बुनाई।
- **मांगरोल की खादी धोती:** इसमें किनारों (Border) पर लाल या हरे धागों की महीन पट्टी और मध्य में अत्यधिक मुलायम व सॉस लेने योग्य (Breathable) कॉटन खादी का उपयोग किया जाता है।

8. आधुनिक चुनौतियाँ और सामाजिक-आर्थिक संकट (challenges & socio-Economic Crisis)

ऐतिहासिक गौरव के बावजूद, वर्तमान में मांगरोल का खादी उद्योग कई गंभीर संकटों से जूझ रहा है:

1. पावरलूम से असमान प्रतिस्पर्धा: सूरत और अहमदाबाद की मिलों में निर्मित सस्ते और सिंथेटिक पॉली-कॉटन कपड़ों ने बाजार पर कब्ज़ा कर लिया है, जिससे हाथ से बने शुद्ध खादी कपड़ों की मांग प्रभावित हुई है।

2. कम मजदूरी और आर्थिक तंगी: एक खादी धोती को बुनने में कई घंटों की कठिन शारीरिक मेहनत लगती है, लेकिन उस अनुपात में बुनकरों को मिलने वाली मजदूरी बेहद कम है।

3. नई पीढ़ी का विमुख होना: कम आय और श्रम-सघन प्रकृति के कारण बुनकर समुदाय की युवा पीढ़ी इस पारंपरिक पेशे को छोड़कर अन्य मजदूरी या शहरों की ओर पलायन कर रही है।

4. विपणन एवं डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर का अभाव: ई-कॉमर्स और आधुनिक डिजाइनिंग के दौर में स्थानीय खादी समितियों के पास मार्केटिंग के आधुनिक साधनों की कमी है।

9. संस्तुतियाँ और भावी राह (Recommendations & Way Forward)

मांगरोल की इस ऐतिहासिक और सांस्कृतिक धरोहर को बचाने के लिए निम्नलिखित कदम उठाए जाने आवश्यक हैं

- **"जीआई टैग' (Geographical Indication) का प्रयास**: मांगरोल की खादी धोती की ऐतिहासिक प्रामाणिकता को देखते हुए इसे GI टैग प्रदान किया जाना चाहिए ताकि इसे वैश्विक पहचान मिल सके।
- **बुनकरों का आर्थिक सुदृढीकरण:** खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड (KVIC) द्वारा बुनकरों की प्रति-मीटर मजदूरी में सम्मानजनक वृद्धिकी जाए।

- **आधुनिक तकनीक व ई-कॉमर्स एकीकरण:** खादी वस्त्रों को अमेजन, फ्लिपकार्ट और सरकारी ओएनडीसी (ONDC) प्लेटफॉर्म से जोड़कर वैश्विक ग्राहकों तक पहुँचाया जाए।
- **फैशन और टेक्सटाइल डिजाइनिंग में समावेश**: निफ्ट (NIFT) जैसे संस्थानों के सहयोग से मांगरोल खादी में आधुनिक परिधान डिज़ाइनों का समावेश किया जाए।
- **10. निष्कर्ष (Conclusion)**
- मांगरोल का खादी उद्योग केवल एक आर्थिक गतिविधि नहीं, बल्कि हाड़ौती क्षेत्र के श्रम, स्वाभिमान और स्वाधीनता संग्राम का ऐतिहासिक दस्तावेज है। जिस खादी ने देश के स्वतंत्रता आंदोलन को आर्थिक और नैतिक बल दिया, आज वह स्वयं अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही है। यदि समय रहते सरकारी प्रोत्साहन, न्यूनतम मजदूरी सुरक्षा, आधुनिक ब्रांडिंग और डिजिटल मार्केटिंग का संबल दिया जाए, तो मांगरोल की खादी न केवल अपनी ऐतिहासिक विरासत को संजोए रख सकती है, बल्कि 'वोकल फॉर लोकल' और 'आत्मनिर्भर भारत' के विज़न को चरितार्थ करने में एक मील का पत्थर साबित हो सकती है।

11. संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

1. गांधी, एम. के. (1927). सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा. नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद
2. शर्मा, के. एल.(1998). राजस्थान में प्रजामंडल आंदोलन और स्वदेशी चेतना. राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
3. Khadi and Village lndustries Commission (KVIC). (2022). Annual Report on Handloom and Khadi Clusters in Rajasthan. Ministry of MSME. Govt. of India,
4. कोटा राज्य अभिलेख (1930-1945). प्रजा मंडल एवं स्वदेशी वस्त्र संबंधी राजकीय पत्राचार राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर
5. हाड़ौती खादी ग्रामोद्योग समिति. (2020). मांगरोल खादी उत्पादन एवं बुनकर कल्याण प्रगति रिपोर्ट. बारां, राजस्थान
6. Joshi, Varsha. (2004).Handloom Weaving in Rajasthan: From Tradition to Modernity.Rawat Publications Jaipur:

मोबाइल :99506-61481

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 57-62
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦਾ ਸਥਾਨ

ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ
ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ
ਡੀ.ਏ.ਵੀ ਕਾਲਜ, ਬਠਿੰਡਾ।

ਨਾਟਕ ਹਮੇਸ਼ਾ ਹੀ ਸਾਹਿਤ ਅਤੇ ਕਲਾ ਦੇ ਉੱਚਤਮ ਨਮੂਨੇ ਵਜੋਂ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ । ਹਰੇਕ ਸਭਿਅਤਾ ਨੇ ਅਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਇਸ ਕਲਾ ਦੇ ਬਾਨੀ ਹੋਣ ਦੇ ਤੱਥ ਨੂੰ ਸਥਾਪਤ ਕਰਨ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕੀਤੀ ਹੈ । ਵੀਹਵੀਂ ਸਦੀ ਲੰਘ ਕੇ ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਇੱਕਵੀਂ ਸਦੀ ਤੱਕ ਆਪਣੀ ਅਲੱਗ ਪਹਿਚਾਣ ਬਣਾ ਚੁੱਕਾ ਹੈ । ਨਾਟਕ ਸਦਾ ਹੀ ਆਪਣੀਆਂ ਭੂਗੋਲਿਕ, ਸਮਾਜਿਕ, ਆਰਥਿਕ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਰਿਹਾ ਹੈ । ਡਾ. ਰਤਨ ਸਿੰਘ ਜੱਗੀ ਸਾਹਿਤ ਕੋਸ਼ ਵਿੱਚ ਨਾਟਕ ਸੰਬੰਧੀ ਲਿਖਦੇ ਹਨ, "ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਵਿੱਚ ਨਾਟਕ ਲਈ ਡਰਾਮਾ ਸ਼ਬਦ ਦਾ ਪ੍ਰਯੋਗ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ । ਡਰਾਮਾ ਸ਼ਬਦ ਯੂਨਾਨੀ ਸ਼ਬਦ ਤੋਂ ਬਣਿਆ ਹੈ । ਜਿਸ ਦਾ ਅਰਥ ਹੈ ਕਾਰਜ ਜਾਂ ਕੀਤਾ ਹੋਇਆ ਭਾਵ ਉਹ ਕਾਰਜ ਜਿਹੜਾ ਮੰਚ ਉੱਤੇ ਕੁੱਝ ਲੋਕ ਕਰਦੇ ਹਨ, ਜਿਸਨੂੰ ਦਰਸ਼ਕ ਦੇਖਦੇ ਹਨ, ਉਸਨੂੰ ਡਰਾਮਾ ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ।"[1] ਨਾਟਕ ਇੱਕ ਅਜਿਹੀ ਕਲਾ ਕਿਰਤ ਹੈ ਜਿਸਦਾ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ ਗਹਿਰਾ ਸੰਬੰਧ ਹੈ । ਭਰਤਮੁਨੀ ਨਾਟਕ ਨੂੰ ਪੰਜਵਾਂ ਵੇਦ ਕਹਿੰਦਾ ਹੋਇਆ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਗੀਤ, ਅਭਿਨੈ, ਸੰਬਾਦ, ਪਾਠ ਆਦਿ ਤੱਤਾਂ ਨੂੰ ਜ਼ਰੂਰੀ ਮੰਨਦਾ ਹੈ । ਨਾਟਕ ਦਾ ਰੰਗਮੰਚ ਨਾਲ ਗਹਿਰਾ ਸੰਬੰਧ ਹੈ | ਨਾਟਕ ਜਦੋਂ ਮੰਚ ਉੱਪਰ ਪੇਸ਼ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਅਸਲ ਜਿੰਦਗੀ ਵਰਗੀਆਂ ਘਟਨਾਵਾਂ ਵਾਪਰਦੀਆਂ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦੀਆਂ ਹਨ ।

ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਨਿਰੰਤਰਤਾ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਕਾਲ ਦੂਸਰੇ ਕਾਲ ਨਾਲ ਇਸ ਤਰਾਂ ਜੁੜਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਆਪਣੇ ਤੋਂ ਪਹਿਲੇ ਕਾਲ ਵਿੱਚੋਂ ਤਾਕਤ ਲੈ ਦੇ ਨਵੀਆਂ ਪ੍ਰਾਪਤੀਆਂ ਕਰਨ ਦੇ ਯੋਗ ਹੁੰਦਾ ਹੈ । ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਜੋ ਵੀਹਵੀਂ ਸਦੀ ਦੇ ਦੂਸਰੇ ਦਹਾਕੇ ਵਿੱਚ ਸਪੱਸ਼ਟ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਉੱਭਰ ਕੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆਇਆ, ਉਸ ਲਈ ਸੁਖਾਵੇਂ ਹਾਲਾਤ ਵੀਹਵੀਂ ਸਦੀ ਦੇ ਮੁੱਢ ਵਿੱਚ ਬਣਨੇ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਗਏ ਸਨ । ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਲੀਲਾ ਨਾਟਕ, ਰਾਸ ਲੀਲਾ, ਨੌਟੰਕੀ ਆਦਿ ਲੋਕ ਨਾਟਕ ਪਰੰਪਰਾ ਵਿੱਚ ਆਪਣਾ ਸਥਾਨ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਦਾ ਹੈ । ਪ੍ਰਥਮ ਰੰਗਮੰਚ ਹਾਊਸ 1776 ਈ: ਵਿੱਚ ਕਲਕੱਤਾ ਵਿਖੇ ਸਥਾਪਿਤ ਹੋਇਆ, ਜਿਥੇ ਕਾਲੀਦਾਸ ਦੀ ਰਚਨਾ 'ਅਭਿਗਿਆਨ ਸ਼ੰਕੁਤਲਮ' ਦਾ ਅਨੁਵਾਦ 'ਸ਼ੰਕੁਤਲਾ" ਨਾਮ

ਹੇਠ ਕਰਕੇ ਇਸਨੂੰ 1789 ਵਿੱਚ ਮੰਚ ਉੱਪਰ ਖੇਡਿਆ ਗਿਆ । 19ਵੀਂ ਸਦੀ ਦਾ ਦੂਸਰਾ ਅੱਧ ਪਾਰਸੀ ਰੰਗਕਰਮੀਆਂ ਦਾ ਸੀ, ਜੋ ਆਪਣੀ ਹੀ ਸ਼ੈਲੀ ਵਿੱਚ ਨਾਟਕ ਖੇਡਦੀਆਂ ਸਨ। ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਨਕਲੀਆਂ ਅਤੇ ਰਾਸਧਾਰੀਆਂ ਵੱਲੋਂ ਪਾਰਸੀ ਥੀਏਟਰ ਦੀ ਵਧਦੀ ਲੋਕਪ੍ਰਿਯਤਾ ਦੇਖ ਕੇ ਨਾਟਕ ਦੇ ਨਵੇਂ ਢੰਗ ਲੱਭੇ ਗਏ । ਸਿੰਘ ਸਭਾ ਨੂੰ ਵੀ ਇਹ ਗੱਲ ਸਮਝ ਆ ਗਈ ਸੀ ਕਿ ਨਾਟਕ ਮਨੋਰੰਜਨ ਅਤੇ ਕੁਪ੍ਰਵਿਰਤੀਆਂ ਫੈਲਾਉਣ ਦਾ ਸਾਧਨ ਹੀ ਨਹੀਂ, ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਪ੍ਰਚਾਰ ਦਾ ਵੀ ਸ਼ਕਤੀਸ਼ਾਲੀ ਸਾਧਨ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਖਾਲਸਾ ਟੈਂਪਰੈਂਸ ਸੁਸਾਇਟੀ ਵੱਲੋਂ ਡਰਾਮਾ ਕਮੇਟੀ ਬਣਾਈ ਗਈ । ਇਸ ਸਮੇਂ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਮੌਲਿਕ ਤੇ ਅਨੁਵਾਦਿਤ ਨਾਟਕ ਰਚੇ ਗਏ । ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਵੱਲੋਂ ਕਾਲੀਦਾਸ ਦਾ ਨਾਟਕ 'ਅਭਿਗਿਆਨ ਸ਼ੰਕੁਤਲਮ' ਦਾ ਅਨੁਵਾਦ 'ਸ਼ੰਕੁਤਲਾ' ਨਾਮ ਹੇਠ 1912 ਵਿੱਚ ਭਾਈ ਮੋਹਨ ਸਿੰਘ ਵੈਦ ਨੇ 'ਕਮੇਡੀ ਆਫ ਐਰਰਜ਼' ਨੂੰ 'ਭੁੱਲ ਭੁਲੱਈਆ" ਨਾਮ ਹੇਠ ਅਨੁਵਾਦ ਕੀਤਾ । 1912 ਈ: ਵਿੱਚ ਹੀ ਅਮਰ ਸਿੰਘ ਨੇ 'ਉਥੈਲੋ' ਨਾਟਕ ਨੂੰ 'ਦੇਸ਼ ਦਮਨ' ਨਾਮ ਅਧੀਨ ਅਨੁਵਾਦਿਤ ਰੂਪ ਦਿੱਤਾ। 1927 ਈ: ਵਿਚ ਬਲਵੰਤ ਸਿੰਘ ਨੇ 'ਦੁਖੀ ਰਾਜਾ' ਨਾਮ ਹੇਠ 'ਕਿੰਗ ਲੀਅਰ' ਦਾ ਅਨੁਵਾਦ ਕੀਤਾ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਕਈ ਨਾਟਕਕਾਰਾਂ ਨੇ ਇਸ ਸਮੇਂ ਮੌਲਿਕ ਨਾਟਕ ਵੀ ਲਿਖਣੇ ਆਰੰਭ ਕੀਤੇ। ਇਸ ਸੰਬੰਧੀ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਬਾਵਾ ਬੁੱਧ ਸਿੰਘ ਨੇ 'ਚੰਦਰਹਰਿ' ਨਾਟਕ ਦੀ ਰਚਨਾ ਕੀਤੀ। ਅਰੂੜ ਸਿੰਘ ਤਾਲਿਬ ਨੇ 'ਸੁੱਕਾ ਸਮੁੰਦਰ' ਅਤੇ 'ਨਲ ਦਮਯੰਤੀ' ਨਾਟਕ ਰਚੇ। ਗੁਰਬਖਸ਼ ਸਿੰਘ ਬੈਰਿਸਟਰ ਨੇ 'ਮਨਮੋਹਨ ਨਾਟਕ' ਦੀ ਰਚਨਾ ਕੀਤੀ। ਡਾ. ਸਤੀਸ਼ ਕੁਮਾਰ ਵਰਮਾ ਅਨੁਸਾਰ, "ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਇੱਕ ਨਿਰੰਤਰਤਾ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿਚ ਇੱਕ ਦੌਰ ਦੂਸਰੇ ਦੌਰ ਨਾਲ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਜੁੜਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਆਪਣੇ ਪਹਿਲੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚੋਂ ਤਾਕਤ ਲੈ ਕੇ ਨਵੀਆਂ ਪ੍ਰਾਪਤੀਆਂ ਦੇ ਸਮਰੱਥ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।"[2] ਈਸ਼ਵਰ ਚੰਦਰ ਨੰਦਾ ਰੰਗਮੰਚ ਦਾ ਮੋਢੀ ਨਾਟਕਕਾਰ ਹੈ ਜੋ ਸ੍ਰੀਮਤੀ ਨੈਰਾ ਰਿਚਰਡਜ਼ ਦੀ ਲਗਾਈ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਸਦਕਾ ਰੰਗਮੰਚ ਦੀ ਵਿਵਸਥਾ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਨੈਰਾ ਰਿਚਰਡਜ਼ ਨੇ 'ਸਰਸਵਤੀ ਸਟੇਜ ਸੁਸਾਇਟੀ' ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਕੀਤੀ, ਜਿਸ ਦਾ ਉਦੇਸ਼ ਭਾਰਤੀ ਬੋਲੀਆਂ ਵਿੱਚ ਨਾਟਕ ਖਿਡਾਉਣਾ ਸੀ। 1912ਈ: ਵਿਚ ਐਸ.ਐਸ. ਭਟਨਾਗਰ ਦਾ 'ਕਰਾਮਾਤ' ਅਤੇ ਰਜਿੰਦਰ ਲਾਲ ਸ਼ਾਹਨੀ ਦਾ 'ਦੀਨੇ ਦੀ ਜੰਞ' ਨਾਟਕ ਖੇਡੇ ਗਏ। 1913 ਵਿਚ ਈਸ਼ਵਰ ਚੰਦਰ ਨੰਦਾ ਦਾ ਨਾਟਕ 'ਦੁਹਲਨ' ਖੇਡਿਆ ਗਿਆ ਜੋ ਕਿ ਬਾਲ ਵਿਆਹ ਦੀ ਸਮੱਸਿਆ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੈ। ਨੈਰਾ ਅਤੇ ਨੰਦਾ ਦੋ ਅਜਿਹੇ ਥੰਮ੍ਹ ਹਨ ਜਿਹੜੇ ਨਾਟਕ ਨੂੰ ਰੰਗਮੰਚ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਲਗਾਉਂਦੇ ਹਨ।

ਪਹਿਲੀ ਪੀੜ੍ਹੀ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਹੁੰਦੇ ਨਾਟਕਕਾਰ ਹਰਚਰਨ ਸਿੰਘ, ਬਲਵੰਤ ਗਾਰਗੀ, ਕਰਤਾਰ ਸਿੰਘ ਦੁੱਗਲ, ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਸੁਧਾਰਵਾਦੀ ਯਥਾਰਥਵਾਦੀ ਵਿਧੀ ਰਾਹੀਂ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀ ਸਿਰਜਨਾ ਕਰਦੇ ਹਨ । ਹਰਚਰਨ ਸਿੰਘ ਕਮਲਾ ਕੁਮਾਰੀ, ਰੱਤਾ ਸਾਲੂ, ਸੋਭਾ ਸ਼ਕਤੀ, ਅਣਜੋੜ ਆਦਿ ਨਾਟਕਾਂ ਰਾਹੀਂ ਸਮਾਜਿਕ ਅਤੇ ਰਾਜਸੀ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ । ਬਲਵੰਤ ਗਾਰਗੀ ਆਪਣੀ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨਿਕ ਬਿਰਤੀ ਰਾਹੀਂ ਲੋਹਾ ਕੁੱਟ ਵਿੱਚ ਸੰਤੀ ਅਤੇ ਬੈਣੇ ਦੀ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਉਸ ਨੇ ਕਣਕ ਦੀ ਬੱਲੀ, ਪੱਤਣ ਦੀ ਬੇੜੀ, ਕਵਾਰੀ ਟੀਸੀ, ਸ਼ੇਕਣ, ਅਭਿਸਾਰਿਕਾ, ਮਿਰਜ਼ਾ ਸਾਹਿਬਾਂ ਅਤੇ ਬਲਦੇ ਟਿੱਬੇ ਆਦਿ ਨਾਟਕਾਂ ਵਿੱਚ ਵੱਖੇ- ਵੱਖਰੇ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਦੀ ਸਿਰਜਨਾਂ ਰਾਹੀਂ ਚੇਤਨਾ ਦੀਆਂ ਗੁੰਝਲਾਂ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕਰਦਾ ਹੈ । ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਕਲਾਕਾਰ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਗੌਤਮ ਅਹੱਲਿਆ ਦੀ ਮਿੱਥ ਦੀ ਸਿਰਜਨਾ ਕਰਕੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸੱਚ ਦੀ ਤਸਵੀਰ ਸਾਹਮਣੇ ਲਿਆਉਂਦਾ ਹੈ । ਮਿੱਤਰ ਪਿਆਰਾ ਜੋ ਕਿ ਲੈਨਿਨ ਉੱਪਰ ਲਿਖਿਆ ਨਾਟਕ ਹੈ ਰਾਜਸੀ ਚੇਤਨਾ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ । ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਉਸਨੇ ਨਾਰਕੀ, ਭੂ-ਦਾਨ, ਵਾਰਿਸ, ਬੇੜਾ ਬੰਧ ਨਾ ਸਕਿਓ, ਮੋਇਆ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ, ਸਿਆਲਾ ਦੀ ਨੱਢੀ

ਅਤੇ ਮਿੱਤਰ ਪਿਆਰਾ ਆਦਿ ਨਾਟਕ ਰਚੇ ਹਨ । ਦੂਸਰੀ ਪੀੜ੍ਹੀ ਦੇ ਨਾਟਕਕਾਰ ਸੁਰਜੀਤ ਸਿੰਘ ਸੇਠੀ, ਹਰਸਰਨ ਸਿੰਘ, ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਘੁੰਮਣ ਅਤੇ ਪਰਿਤੋਸ਼ ਗਾਰਗੀ ਹਨ। ਸੁਰਜੀਤ ਸਿੰਘ ਸੇਠੀ ਨੇ 'ਐਬਸਰਡ ਸ਼ੈਲੀ'' ਰਾਹੀਂ 'ਕਿੰਗ ਮਿਰਜ਼ਾ ਤੇ ਸਪੇਰਾ' ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਜੀਵਨ ਦੇ ਕਠੋਰ ਸੱਚ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕੀਤੀ ਹੈ । ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਉਸ ਨੇ ਕਾਫ਼ੀ ਹਾਊਸ, ਕੱਚਾ ਘੜਾ, ਕਾਦਰਯਾਰ, ਭਰਿਆ-ਭਰਿਆ ਸੱਖਣਾ-ਸੱਖਣਾ ਅਦਿ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀ ਰਚਨਾ ਕੀਤੀ । ਹਰਸਰਨ ਸਿੰਘ ਸਮਾਜਿਕ ਅਤੇ ਰਾਜਸੀ ਚੇਤਨਾ ਵਾਲਾ ਨਾਟਕਕਾਰ ਹੈ। ਗੁਰਚਰਨ ਸਿੰਘ ਜਸੂਜਾ ਪਰੀਆਂ ਨਾਟਕ ਰਾਹੀਂ ਨਾਰੀ ਚੇਤਨਾ ਅਤੇ ਉਹ ਕਿਵੇਂ ਅਜ਼ਾਦ ਹੋਣਾ ਚਾਹੁੰਦੀ ਹੈ ਨੂੰ ਧੁਰਾ ਬਣਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਤੀਜੀ ਪੀੜ੍ਹੀ 1975-90 ਵਿਚ ਆਤਮਜੀਤ, ਅਜਮੇਰ ਸਿੰਘ ਔਲਖ, ਚਰਨਦਾਸ ਸਿੱਧੂ ਅਤੇ ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਨਾਟਕਕਾਰ ਆਉਂਦੇ ਹਨ। ਅਜਮੇਰ ਸਿੰਘ ਔਲਖ ਆਪਣੇ ਨਾਟਕਾਂ ਵਿੱਚ ਨਿਮਨ ਕਿਸਾਨੀ ਸੰਕਟ, ਦਲਿਤ ਚੇਤਨਾ ਅਤੇ ਨਾਰੀ ਸੰਵੇਦਨਾ ਆਦਿ ਵੱਖੋ-ਵੱਖਰੇ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਚਰਨਦਾਸ ਸਿੱਧੂ ਦੁਆਬੇ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਨਿਮਨ ਸਥਿਤੀ, ਦਲਿਤ ਚੇਤਨਾ, ਰਾਜਸੀ ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਾਚਾਰ, ਵਿਦਿਆਕ ਸਿਸਟਮ ਵਿਚ ਆਇਆ ਨਿਘਾਰ ਆਦਿ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਵਿਸ਼ਿਆਂ ਉੱਪਰ ਆਪਣੇ ਨਾਟਕਾਂ ਭਜਨੇ, ਬਾਬਾ ਬੰਤੂ, ਚੰਨੇ ਬਾਜੀਗਰਨੀ, ਕੱਲ੍ਹ ਕਾਲਜ ਬੰਦ ਰਹੇਗਾ, ਜੀਤਾ ਫਾਹੇ ਲੱਗਣਾ ਆਦਿ ਵਿਚ ਨਵੇਂ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਸਾਹਮਣੇ ਲਿਆਉਂਦਾ ਹੈ। ਆਤਮਜੀਤ ਨੂੰ ਯੁਵਕ ਮੇਲਿਆਂ ਵਿੱਚੋਂ ਉਪਜਿਆ ਨਾਟਕਕਾਰ ਮੰਨਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਨੇ ਸ਼ਹਿਰੀ ਮੱਧ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਦੀਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਉਪਰ ਵਾਪਰਨ ਵਾਲੀਆਂ ਵਿਸੰਗਤੀਆਂ ਦੀ ਪਸ਼ਕਾਰੀ ਕੀਤੀ ਹੈ। ਇਸ ਪੀੜ੍ਹੀ ਵਿਚ ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਅਤੇ ਰੰਗਮੰਚ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਪਿੰਡ-ਪਿੰਡ ਅਤੇ ਘਰ-ਘਰ ਪਹੁੰਚਾਉਣ ਵਾਲਾ ਨਾਟਕਕਾਰ ਹੈ। ਉਸ ਨੇ ਆਪਣੀ ਨਾਟ-ਚੇਤਨਾ ਰਾਹੀਂ ਵੱਖੋ-ਵੱਖਰੇ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਵਿਚ ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਅਤੇ ਇਨਕਲਾਬੀ ਵਾਲੇ ਵਿਸ਼ਿਆਂ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕੀਤੀ ਹੈ। ਉਸ ਦੁਆਰਾ ਨੁੱਕੜ ਨਾਟਕ ਸ਼ੈਲੀ ਦੁਆਰਾ ਪਿੰਡ ਦੀਆਂ ਸੱਥਾਂ ਅਤੇ ਥੜ੍ਹਿਆਂ ਉੱਪਰ ਆਪਣੇ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕਰਨ ਕਰਕੇ ਉਸਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ 'ਰੰਗਮੰਚ ਦਾ ਬਾਬਾ ਬੋਹੜ' ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਚੋਥੀ ਪੀੜ੍ਹੀ ਦੇ ਨਾਟਕਕਾਰ ਸਵਰਾਜਬੀਰ, ਕੇਵਲ ਧਾਲੀਵਾਲ, ਜਤਿੰਦਰ ਬਰਾੜ, ਪਾਲੀ ਭੁਪਿੰਦਰ ਸਿੰਘ, ਮਨਜੀਤਪਾਲ, ਸ਼ਤੀਸ਼ ਕੁਮਾਰ ਵਰਮਾ ਅਤੇ ਕੁਲਦੀਪ ਸਿੰਘ ਦੀਪ ਹਨ। ਇਹਨਾਂ ਨਾਟਕਾਕਾਰਾਂ ਦਾ ਮੁੱਦਾ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਟੀ.ਵੀ. ਦੇ ਮਾਧਿਆਮ ਦੁਆਰਾ ਨਾਟਕਾਂ ਨੂੰ ਘਰ-ਘਰ ਪਹੁੰਚਾਉਣਾ ਸੀ। ਸਵਰਾਜਬੀਰ ਧਰਮ ਗੁਰੂ, ਮੇਦਨੀ, ਕ੍ਰਿਸ਼ਨ ਵਰਗੇ ਨਾਟਕਾਂ ਰਾਹੀ 'ਮਿੱਥ' ਸਿਧਾਂਤ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਕਰਕੇ ਦਲਿਤ ਚੇਤਨਾ, ਔਰਤ ਦੀ ਤ੍ਰਾਸਦਿਕ ਸਥਿਤੀ, ਧਾਰਮਿਕ ਆਗੂਆਂ ਦੇ ਪਾਖੰਡ, ਘਟੀਆ ਰਾਜਨੀਤੀ, ਸਮਾਜਿਕ-ਆਰਥਿਕ ਨਾ-ਬਰਾਬਰੀ ਜਿਹੇ ਸਰੋਕਾਰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਕੇਵਲ ਧਾਲੀਵਾਲ ਜੋ ਨੁੱਕੜ ਨਾਟਕਾਂ ਦਾ ਸਿਰਜਕ ਹੈ। ਉਸ ਨੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਸਥਿਤੀ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸਥਿਤੀ ਤੱਕ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਨਾਟਕਾਂ ਦੇ ਕਲਾਵੇ ਵਿਚ ਲਿਆ ਹੈ। ਕੇਵਲ ਧਾਲੀਵਾਲ ਨਾਟਕਕਾਰ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਨਿਰਦੇਸ਼ਕ ਵੀ ਹੈ ਅਤੇ ਰੰਗਮੰਚ ਦੀ ਅਥਾਹ ਸੂਝ ਰੱਖਣ ਵਾਲਾ ਨਾਟਕਕਾਰ ਹੈ। ਜਤਿੰਦਰ ਬਰਾੜ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਵਿਖੇ ਸਥਾਪਿਤ ਕੀਤੀ ਨਾਟਸ਼ਾਲਾ ਰਾਹੀਂ ਆਪਣੇ ਨਾਟਕ ਕੁਦੇਸਣ, ਫਾਸਲੇ ਲੋਹੇ ਦੀ ਭੱਠੀ, ਪਾਏਦਾਨ ਰਾਹੀਂ ਆਰਥਿਕ ਨਾ ਬਰਾਬਰੀ, ਔਰਤ ਦੀ ਤਰਸਯੋਗ ਹਾਲਤ, ਬੇਰੁਜਗਾਰੀ, ਸਰਕਾਰੀ ਦਫਤਰਾਂ ਵਿੱਚ ਫੈਲਿਆ ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਾਚਾਰ ਆਦਿ ਵਿਸ਼ਿਆਂ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਦਵਿੰਦਰ ਦਮਨ ਛੋਟੀ ਉਮਰ ਵਿਚ ਹੀ ਰੰਗਮੰਚ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਨਾਟਕਕਾਰ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਪਹਿਲੇ ਨਾਟਕ ਕਾਲਾ ਲਹੂ ਰਾਹੀਂ ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟ-ਜਗਤ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਵੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਹੁਣ ਤੱਕ ਛਾਂ ਵਿਹੂਣੇ, ਸੂਰਜ ਦਾ ਕਾਤਿਲ, ਛਿਪਣ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ, ਕਤਰਾ-ਕਤਰਾ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਆਦਿ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀ ਰਚਨਾ ਕਰ ਚੁੱਕਿਆ ਹੈ।।

ਮਨਜੀਤਪਾਲ ਦੇ ਲਗਭਗ ਸਾਰੇ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀ ਥੀਮ ਔਰਤ ਹੈ। ਨਾਟਕਕਾਰਾ ਨਾਟਕਾਂ ਦੇ ਵਿਸ਼ੇ ਲੋਕ-ਕਥਾਵਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਚੁਣਦੀ ਹੈ। ਮਨਜੀਤਪਾਲ ਆਪਣੇ ਨਾਟਕਾਂ ਰਾਹੀਂ ਨਾਰੀ-ਚੇਤਨਾ, ਧਰਮ, ਅੰਧ-ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਆਦਿ ਵਿਸ਼ਿਆਂ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਪਾਲੀ ਭੁਪਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਨੇ ਆਪਣੀ ਨਾਟਕੀ ਪ੍ਰਤਿਭਾ ਅਤੇ ਰੰਗਮੰਚੀ ਸੂਝ ਕਾਰਨ ਨਾਟਕ ਦੇ ਖੇਤਰ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਵਿਸ਼ੇਸ ਥਾਂ ਬਣਾਈ ਹੈ। ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਚੌਥੀ ਪੀੜ੍ਹੀ ਵਿੱਚੋਂ ਥੀਏਟਰੀ ਵਿਭਾਗ ਵਿਚੋਂ ਟ੍ਰੇਨਿੰਗ ਲੈ ਕੇ ਨਿਕਲੇ ਰੰਗਕਰਮੀਆਂ ਵਿੱਚੋਂ ਆਪਣੀ ਅਲੱਗ ਪਹਿਚਾਣ ਦਾ ਧਾਰਨੀ ਹੈ। ਸ਼ਤੀਸ ਕੁਮਾਰ ਵਰਗਾ ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿਚ ਲਿਖਦਾ ਹੈ "ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦੀ ਨਾਟਕਕਾਰੀ ਉੱਪਰ ਬਲਵੰਤ ਗਾਰਗੀ ਦਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਹੈ, ਇਹ ਅਨੁਕਰਨ ਦੀ ਪੱਧਰ ਤੇ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਪੁਨਰ ਸਿਰਜਕ ਦੀ ਪੱਧਰ ਤੇ ਹੈ।"[3] ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਬਲਵੰਤ ਗਾਰਗੀ ਦਾ ਵਿਦਿਆਰਥੀ ਹੈ ਬਲਵੰਤ ਗਾਰਗੀ ਆਪਣੇ ਨਾਟਕਾਂ ਵਿੱਚ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨ ਗੁੰਝਲਾਂ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕਰਦਾ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨਕ ਨੂੰ ਸਿਰਜਦਾ ਹੋਇਆ ਸਮਾਜ ਵਿਗਿਆਨ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਨੇ 'ਥੀਏਟਰ 79' ਨਾਂ ਦੇ ਨਾਟ-ਗਰੁੱਪ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਤੇ ਸੰਚਾਲਨ ਨਾਲ ਪੰਜਾਬੀ ਰੰਗਮੰਚ ਨਾਲ ਜੁੜਦਿਆਂ ਅਤੇ ਭਾਰਤ ਸਰਕਾਰ ਦੇ 'ਸੋਂਗ ਐਂਡ ਡਰਾਮਾ ਡਵੀਜ਼ਨ' ਦੇ ਅਧਿਕਾਰੀ ਵਜੋਂ ਰੰਗਮੰਚੀ ਤਜ਼ਰਬਿਆ ਨਾਲ ਦਸਤਪੰਜਾਂ ਲੈਂਦਿਆਂ ਨਾਟਕਕਾਰੀ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਵੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਉਸ ਦਾ ਮੰਨਣਾ ਹੈ ਕਿ "ਸਾਡਾ ਨਾਟਕ ਸਾਡੇ ਲੋਕਾਂ ਵਰਗਾ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ, ਸਾਡਾ ਨਾਟਕ ਸਾਡੇ ਵਿੱਚੋਂ ਪੈਦਾ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ।

ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਨੇ 1981-90 ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬ ਸਰਕਾਰ ਦੇ ਫ਼ਿਲਮ ਅਤੇ ਟੈਲੀਵਿਜ਼ਨ ਡਵੀਜ਼ਨ ਵਿੱਚ ਬਤੌਰ ਸਕਰਿਪਟ ਰਾਈਟਰ ਵਜੋਂ ਕੰਮ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਲੋਕ ਸੰਪਰਕ ਅਫ਼ਸਰ(ਗੀਤ ਤੇ ਨਾਟਕ) ਵਜੋਂ ਵੀ ਸੇਵਾ ਨਿਭਾਈ। ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਨੇ ਨਾਟਕ ਲਿਖਣ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਨਿਰਦੇਸ਼ਨਾ ਵੀ ਕੀਤੀ ਹੈ । ਇਸ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਨੇ ਆਡੀਓ ਕੈਸਟ ਤੇ ਫਿਲਮਾਂ ਵਿੱਚ ਵੀ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਈ ਹੈ। 'ਚੰਨ ਪ੍ਰਦੇਸੀ' ਫਿਲਮ ਵਿਚ ਨੈਸ਼ਨਲ ਐਵਾਰਡ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤਾ । ਟੀ. ਵੀ. ਸੀਰੀਅਲ 'ਉਡੀਕ' ਵਿੱਚ ਖੁਦ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਈ । ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਇੱਕ ਸਫ਼ਲ ਗੀਤਕਾਰ, ਗਾਇਕ, ਨਾਟਕਕਾਰ, ਨਿਰਦੇਸ਼ਕ, ਅਭਿਨੇਤਾ ਅਤੇ ਹੋਰ ਕਾਫ਼ੀ ਕਲਾਵਾਂ ਦਾ ਸੁਮੇਲ ਹੈ । ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਨੇ ਨਾਟਕ ਅਤੇ ਕਵਿਤਾ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਫ਼ਿਲਮਾਂ ਆਦਿ ਨੂੰ ਵੀ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਦਾ ਮਾਧਿਅਮ ਬਣਾਇਆ ਹੈ। ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦੀ ਬਾਕੀ ਨਾਟਕਕਾਰਾਂ ਨਾਲੋਂ ਇਹ ਵੱਖਰਤਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਦੇ ਨਾਟਕ ਖੇਡੇ ਜਾਣ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਹੀ ਲਿਖਤੀ ਰੂਪ ਧਾਰਨ ਕਰਦੇ ਹਨ । ਨਾਟਕੀ ਸਕ੍ਰਿਪਟ ਵਿੱਚ ਹੀ ਉਸ ਦੇ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀਆਂ ਕਈ-ਕਈ ਪੇਸਕਾਰੀਆਂ ਰੰਗਮੰਚ ਉੱਪਰ ਹੋ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ ਅਤੇ ਉਸ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਨਾਟਕਾਂ ਨੂੰ ਲਿਖਤੀ ਰੂਪ ਦਿੱਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ । ਉਸ ਦੇ ਸਾਰੇ ਨਾਟਕ ਮੰਚ ਦੀਆਂ ਜ਼ਰੂਰਤਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਮਾਂਜੇ ਸੁਆਰੇ ਹਨ।

ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ 1990 ਵਿੱਚ 'ਨਾਟਕ ਬਾਕੀ ਹੈ' ਰਾਹੀਂ ਨਾਟ ਜਗਤ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਵੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਉਸ ਨੇ ਤਮਾਸ਼ਾ, ਕੁੰਡਲੀ, ਘਰਲੀ, ਉਡਾਰੀ, ਭਬੱਕਾ, ਰਿਸ਼ਤੇ ਅਤੇ ਅੱਜ ਦੀ ਸਾਹਿਬਾਂ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀ ਰਚਨਾ ਕੀਤੀ। ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦੇ ਨਾਟਕ ਪੇਂਡੂ ਸਮਾਜਿਕ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਉੱਪਰ ਸਿੱਧਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਪਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਉਸਦਾ ਮਨੋਰਥ ਆਪਣੇ ਨਾਟਕਾਂ ਵਿੱਚ ਆਮ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸੰਘਰਸ਼ ਭਰੀ ਜਿੰਦਗੀ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰਨਾ ਹੈ। ਉਹ ਆਪਣੇ ਨਾਟਕਾਂ ਵਿੱਚ ਔਰਤ-ਮਰਦ ਦੇ ਸੰਬੰਧਾਂ ਵਿੱਚ ਆਏ ਪਰਿਵਰਤਨ, ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਦਿਨ-ਬ-ਦਿਨ ਮਾੜੀ ਹੁੰਦੀ ਜਾ ਰਹੀ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ, ਇਸ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਗਰੀਬਾਂ ਦੇ

ਹੋਰ ਗਰੀਬ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਵਿੱਚ ਆਉਂਦੀਆਂ ਦੁਸ਼ਵਾਰੀਆਂ ਨੂੰ ਵੱਖ ਵੱਖ ਪ੍ਰਤੀਕਾਂ ਰਾਹੀਂ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦੇ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀਆਂ ਭੂਮਿਕਾਵਾਂ ਤੋਂ ਪਤਾ ਚਲਦਾ ਹੈ ਕਿ ਸਰਕਾਰੀ ਨੌਕਰੀ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਵਿਹਲ ਘੱਟ ਮਿਲਣ ਕਾਰਨ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀ ਰਚਨਾ ਸਫ਼ਰ ਦੌਰਾਨ ਹੀ ਹੋਈ।

ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦਾ ਨਾਟਕ 'ਘਰਲੀ' ਵਾਣ-ਵੱਟੂਆ ਦੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਬਾਖੂਬੀ ਢੰਗ ਨਾਲ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਵਿਗਿਆਨਿਕ ਤਰੱਕੀ ਅਤੇ ਸੂਚਨਾ ਦੇ ਪਸਾਰ ਨਾਲ ਪਰੰਪਰਕ ਧੰਦਿਆਂ ਨਾਲ ਜੁੜੇ ਲੋਕ ਪਿੱਛੜ ਕੇ ਆਪਣੀ ਬਚੀ-ਖੁਚੀ ਹੋਂਦ ਬਣਾਈ ਰੱਖਣ ਲਈ ਸੰਘਰਸ਼ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ। ਪ੍ਰੰਤੂ ਸੂਚਨਾ ਦੀ ਅਗਾਂਹਵਧੂ ਹਨ੍ਹੇਰੀ ਅੱਗੇ ਉਹ ਤੀਲਿਆਂ ਵਾਂਗ ਖਿਲਰੇ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਨਾਲ ਹੀ ਮੁਕਾਬਲੇਬਾਜ਼ੀ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਆਪਣੇ ਹੱਥਾਂ ਦੀ ਮਿਹਨਤ ਦਾ ਕੰਮ-ਧੰਦਾ ਵੀ ਚੱਲਦਾ ਰੱਖਣ ਤੋਂ ਅਸਮਰਥ ਹਨ। 'ਘਰਲੀ' ਨਾਟਕ ਦੁਆਰਾ ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਵਾਣ-ਵੱਟੂਆਂ ਦੀ ਖੇਰੂੰ-ਖੇਰੂੰ ਹੋਈ ਜ਼ਿਦੰਗੀ ਨਾਲ ਜਦੋ-ਜਹਿਦ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਤਿੰਨ ਪਾਤਰਾਂ ਦੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਇਹ ਤਿੰਨ ਪਾਤਰ ਜੱਗਾ, ਸੰਤੀ ਅਤੇ ਮੁੰਡਾ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਗੁਰਬਤ ਭਰੀ ਜ਼ਿਦੰਗੀ ਬਤੀਤ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਮਸ਼ੀਨੀਕਰਨ ਕਰਕੇ ਵਾਣ-ਵੱਟੂਆਂ ਦੇ ਕੰਮ ਉੱਪਰ ਪਈ ਮਾਰ ਨੂੰ ਸੰਤੀ ਆਪਣੇ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਗਟਾਉਂਦੀ ਹੈ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ,

"ਮੈਂ ਆਖਿਆ ਹੁਣ ਤੇ ਸਾਰੇ ਕਾਨੇ ਮੁੱਕਦੇ ਜਾ ਰਹੇ ਨੇ, ਮੁੰਜ ਮੁੱਕਦੀ ਜਾ ਰਹੀ ਏ। ਵਾਣ ਨਹੀਂ ਵਿਕਦਾ। ਲੋਕੀਂ ਵਾਣ ਨਹੀਂ ਖ੍ਰੀਦਦੇ, ਮੰਜੀਆਂ ਨਵਾਰਾਂ ਵਾਲੀਆਂ ਆ ਗਈਆਂ ਨੇ। ਅਸੀਂ ਕੀ ਕਰੀਏ ? ਕਿਥੋਂ ਖਾਈਏ ? ਵਾਣ ਨਹੀਂ ਵਿਕਦਾ ਹੁਣ।"[4]

ਉਸਦਾ 'ਵਿਹੜੇ ਦੀ ਮਹਿਕ' ਨਾਟਕ ਨਿੱਜੀ ਜਾਇਦਾਦ ਦੀ ਵੰਡ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੈ। ਜਾਇਦਾਦ ਦੀ ਸਮੱਸਿਆ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਕਤਲ ਕਰਨ ਤੱਕ ਦੀ ਨੌਬਤ ਪੈਦਾ ਕਰ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦੇ ਨਾਟਕ 'ਕੁੰਡਲੀ' ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦੀ ਤ੍ਰਾਸਦਿਕ ਸਥਿਤੀ ਨੂੰ ਬਿਆਨ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਪਿੰਕੀ ਦੇ ਮਾਪੇ ਗਰੀਬ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਉਸ ਦਾ ਵਿਆਹ ਨਸ਼ੇਬਾਜ਼ ਅਮਲੀ ਨਾਲ ਕਰ ਦਿੰਦੇ ਹਨ। ਜੋ ਸਾਰੀ ਕਮਾਈ ਨਸ਼ੇ ਵਿੱਚ ਹੀ ਉਡਾਉਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਜ਼ਿਆਦਾ ਨਸ਼ੇ ਕਰਨ ਕਰਕੇ ਉਸਦੀ ਮੌਤ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਉਸਦਾ 'ਰਿਸ਼ਤੇ' ਨਾਟਕ ਛੋਟੀ ਕਿਰਸਾਨੀ ਦੇ ਆਰਥਿਕ ਸੰਕਟ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰਨ ਦੇ ਆਹਰ ਵਿੱਚ ਹੈ। ਇਸ ਵਿੱਚ ਬੰਤਾ ਸਿੰਘ ਆਪਣੇ ਵੱਡੇ ਪੁੱਤਰ ਪੀਤੇ ਨੂੰ ਜ਼ਮੀਨ ਗਹਿਣੇ ਰੱਖ ਕੇ ਵਿਦੇਸ਼ ਭੇਜਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਕਿ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਆਰਥਿਕ ਹਾਲਤ ਸੁਧਰ ਸਕੇ। ਪਰੰਤੂ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਨਿਰਾਸ਼ਤਾ ਉਸ ਸਮੇਂ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਜਦੋਂ ਲੰਬੇ ਅਰਸੇ ਬਾਅਦ ਵਿਦੇਸ਼ੋਂ ਪਰਤਿਆ ਪੀਤਾ ਘਰ ਵਿੱਚੋਂ ਆਪਣਾ ਹਿੱਸਾ ਮੰਗਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਖੂਨ ਦੇ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਨਾਲੋਂ ਸਮਾਜਿਕ ਰਿਸ਼ਤੇ ਗੂੜ੍ਹੇ ਹੁੰਦੇ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦੇ ਹਨ ਜਦੋਂ ਘਰ ਦੀ ਨੂੰਹ ਮਨਿੰਦਰ ਸਾਰਾ ਕਰਜ਼ਾ ਲਾਹੁਣ ਦੀ ਜ਼ਿੰਮੇਵਾਰੀ ਆਪਣੇ ਸਿਰ ਚੁੱਕਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਸੁੰਦਰ ਬਾਣੀਆ ਵਹੀ ਪਾੜ ਕੇ ਸੁੱਟ ਦਿੰਦਾ ਹੈ।

"ਸੁੰਦਰ ਬਾਣੀਆ - ਕਿਸ ਮੰਗੀਐ ਤੁਹਾਥੋਂ ਪੈਸਾ? ਤੁਸੀਂ ਸਮਝਦੇ ਹੋ ਮੈਂ ਪੈਸਿਆਂ ਦਾ ਪੀਰ ਆ ? ਮੈਨੂੰ ਪੈਸਾ ਨਹੀਂ ਤੁਹਾਡਾ ਸਾਥ ਚਾਹੀਦੈ। ਤੁਸੀਂ ਮੇਰੇ ਆਪਣੇ ਹੋ। ਮੈਂ ਤੁਹਾਨੂੰ ਸਾਲਾਂ ਤੋਂ ਜਾਣਦੈ। ਤੁਹਾਡੇ ਨਾਲ ਮੇਰੀ ਸਾਂਝ ਹੈ। ਦੁੱਖਾਂ ਦੀ ਸਾਂਝ, ਸੁੱਖਾਂ ਦੀ ਸਾਂਝ, ਮੈਂ ਇਹ ਸਾਂਝ ਨਹੀਂ ਟੁੱਟਣ ਦੇਵਾਂਗਾ"[5]

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਇਹ ਨਾਟਕ ਦੋ ਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀ ਕਦਰ-ਪ੍ਰਣਾਲੀ ਉੱਪਰ ਵੀ ਝਾਤ ਪਵਾਉਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਸਾਡੇ ਮੁਲਕ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੀ ਅਹਿਮੀਅਤ ਨੂੰ ਵੀ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦਾ ਹੈ। 'ਉਡਾਰੀ' ਨਾਟਕ ਰਾਹੀਂ ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਮਨੁੱਖੀ

ਜੀਵਨ ਦੀਆਂ ਗੁੰਝਲਾਂ ਨੂੰ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨਕ ਪਰਤਾਂ ਰਾਹੀਂ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਨਾਟਕ ਦੇ ਪਾਤਰ ਜੀਵਨ ਦੇ ਬੰਧਨਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੋ ਕੇ ਖੁੱਲ੍ਹੇ ਅਸਮਾਨ ਵਿੱਚ ਉਡਾਰੀਆਂ ਲਾਉਣਾ ਚਾਹੁੰਦੇ ਹਨ ਪਰ ਸਮਾਜ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਇਸ ਗੱਲ ਦੀ ਪ੍ਰਵਾਨਗੀ ਨਹੀਂ ਦਿੰਦਾ, ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਦੇ ਝਮੇਲੇ ਨੂੰ ਭੋਗਣਾ ਪੈਂਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਇਸ ਵਿੱਚੋਂ ਨਿਕਲਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਤਾਂ ਕਰਦੇ ਹਨ ਪਰ ਲੰਮੀਆਂ ਉਡਾਰੀਆਂ ਮਾਰਨ ਦੇ ਅਸਮਰੱਥ ਹੁੰਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਛੋਟੀਆਂ-ਛੋਟੀਆਂ ਯਾਦਾਂ ਤੇ ਸੁਪਨਿਆਂ ਵਿੱਚ ਤੈਰਦੇ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ। 'ਭਬੱਕਾ' ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਨੇ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੀਆਂ ਗੁੰਝਲਾਂ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦਾ ਨਾਟਕ 'ਅੱਜ ਦੀ ਸਾਹਿਬਾ' ਮਿਰਜ਼ਾ ਸਾਹਿਬਾਂ ਦੇ ਕਿੱਸੇ ਨੂੰ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਲਿਖਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ 'ਅੱਜ ਦੀ ਸਾਹਿਬਾਂ' ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਸਾਭਿਆਚਾਰਕ ਪ੍ਰਸੰਗ ਦਾ ਵਿਸਥਾਰ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਮੁੱਖ ਟਕਰਾਅ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਅਤੇ ਆਧੁਨਿਕ ਕੀਮਤਾਂ ਦਾ ਹੈ। ਸਭਿਆਚਾਰਿਕ ਸੰਕਟ ਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਟਕਰਾਅ ਵਿੱਚ ਇਕ ਧਿਰ ਜਾਗੀਰਦਾਰੀ ਕੀਮਤਾਂ ਨਾਲ ਬੱਝੀ ਹੋਈ ਹੈ ਅਤੇ ਦੂਸਰੀ ਇਸ ਤੋਂ ਬਾਗੀ ਹੋਣਾ ਲੋਚਦੀ ਹੈ।

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਅਜੋਕੇ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਪੈਦਾ ਹੋਈਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਨੂੰ ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਨੇ ਆਪਣੇ ਨਾਟਕਾਂ ਵਿੱਚ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਵਿਸ਼ੇ ਵਜੋਂ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਦੇ ਘਿਣਾਉਣੇ ਸੱਚ ਨੂੰ ਪਾਠਕਾਂ/ਦਰਸ਼ਕਾਂ ਸਾਹਮਣੇ ਬਿਆਨ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦੇ ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਵੇਸ਼ ਕਰਨ ਨਾਲ ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਵਿਸ਼ੇ ਦੇ ਪੱਖ ਤੋਂ ਵਿਸ਼ਾਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਦੇ ਨਾਟਕਾਂ ਦੇ ਵਿੱਚ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨਿਕ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ, ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੀ ਟੁੱਟ-ਭੱਜ ਅਤੇ ਵਿਆਹ ਬਾਹਰੇ ਸੰਬੰਧਾਂ ਕਾਰਨ ਪੈਦਾ ਹੋਈਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਨੂੰ ਨਵੇਂ ਜਾਵੀਏ ਤੋਂ ਵੇਖਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕੀਤੀ ਹੈ। ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੇ ਨਵੇਂ ਸਮੀਕਰਨ ਵਿੱਚ ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦਾ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਹਾਸਿਲ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ –

1. ਡਾ. ਰਤਨ ਸਿੰਘ ਜੱਗੀ, ਸਾਹਿਤ ਕੋਸ਼(ਪਰਿਭਾਸ਼ਿਕ ਸ਼ਬਦਾਵਾਲੀ), ਪੰਨਾ-514
2. ਡਾ. ਰਜਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ, ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਨਵੀਨ ਇਤਿਹਾਸ (ਆਦਿ ਕਾਲ ਤੋਂ ਸਮਕਾਲ ਤੱਕ) ਪੰਨਾ-578
3. ਸ਼ਤੀਸ਼ ਕੁਮਾਰ ਵਰਮਾ, ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ, ਪੰਨਾ-158
4. ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ, ਘਰਲੀ, ਪੰਨੇ 42-43
5. ਉਹੀ, ਰਿਸ਼ਤੇ, ਪੰਨਾ-50

ਮੋਬਾਇਨ ਨੰ. 94642-12113

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 63-67
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਦਾ ਮਹੱਤਵ

ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ ਬਲਵਿੰਦਰ ਕੌਰ
ਸਹਾਇਕ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ
ਡੀ ਏ ਵੀ ਕਾਲਜ ਬਠਿੰਡਾ

ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਕਿਸੇ ਵੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਇਤਿਹਾਸ ਕੌਮ ਦੀ ਪਛਾਣ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਭਾਸ਼ਾ ਕਿਸੇ ਵੀ ਕੌਮ ਦੇ ਸੰਚਾਰ ਦਾ ਸਾਧਨ ਹੈ ਜਿਸ ਰਾਹੀਂ ਅਸੀਂ ਆਪਣੇ ਵਿਚਾਰ ਵਿਅਕਤ ਕਰਦੇ ਹਾਂ, ਇੱਕ ਦੂਜੇ ਨੂੰ ਸਮਝਦੇ ਹਾਂ। ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਦੀ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਪੰਜਾਬੀ ਹੈ। ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਭਾਰਤ ਦੇ ਮੁੱਖ ਬੋਲੀਆਂ ਵਿੱਚ ਵੀ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹੈ ਅਤੇ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਰਾਜ ਭਾਸ਼ਾ ਵੀ ਹੈ। ਹਰ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸ਼ਖਸ਼ੀਅਤ ' ਤੇ ਉਸ ਦੀ ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਦਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਹੋਣਾ ਵੀ ਸੁਭਾਵਿਕ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਭਾਵਾਂ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਜਿਨਾਂ ਖੁੱਲ ਕੇ ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਵਿੱਚ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਉਨਾਂ ਕਿਸੇ ਹੋਰ ਬੋਲੀ ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ। ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਸਾਨੂੰ ਵਿਰਸੇ ਵਿੱਚ ਮਿਲਿਆ ਅਨਮੋਲ ਖਜ਼ਾਨਾ ਹੈ। ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦਾ ਨਿੱਘ ,ਮਿਠਾਸ, ਆਪਣਾਪਨ, ਸਾਦਗੀ,ਸਪਸ਼ਟਤਾ ਵਰਗੇ ਗੁਣਾ ਕਰਕੇ ਹੀ ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਪੰਜਾਬੀ ਨੇ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਨੂੰ ਵੱਖਰੀ ਪਹਿਚਾਣ ਦਿੱਤੀ ਹੈ ਪਰ ਪੰਜਾਬੀ ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਬੇਸ਼ਕ ਰਾਜ ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਦਰਜਾ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰ ਚੁੱਕੀ ਹੈ ਪਰ ਆਪਣੇ ਬੱਚਿਆਂ ਪਾਸੋਂ ਉਹ ਮਾਣ ਪ੍ਰਾਪਤ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕੀ ਜਿਸ ਦੀ ਉਹ ਹੱਕਦਾਰ ਹੈ।

ਭਾਸ਼ਾ ਸਭਿਆਚਾਰ ਅਤੇ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਆਪਸ ਵਿੱਚ ਗਹਿਰਾ ਰਿਸ਼ਤਾ ਹੈ। ਇਕ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਦੂਜੇ ਤੇ ਹੋਂਦ ਸੰਭਵ ਨਹੀਂ। ਹਰੇਕ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚੋਂ ਹੀ ਉਸਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਭਾਸ਼ਾ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੀ ਰੀੜ ਦੀ ਹੱਡੀ ਹੈ । ਕਿਸੇ ਵੀ ਕੌਮ ਦੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੀ ਨੀਂਹ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਮੰਨੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਉਵੇਂ ਹੀ ਪੰਜਾਬੀ ਬੋਲੀ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਵਿਰਸੇ ਨਾਲ ਜੋੜ ਕੇ ਰੱਖਦੀ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਕਰੋੜਾਂ ਬੱਚਿਆਂ ਦੀ ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਆਪਣੇ ਹੱਕਾਂ ਤੋਂ ਵੀ ਵਾਂਝੀ ਹੈ। ਆਤਮਾ ਸਿੰਘ ਚਿੱਟੀ ਦੇ ਸ਼ਬਦਾਂ ਵਿੱਚ," ਹਰ ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਹੋਰ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਪੜਨੀਆਂ ਵੀ ਜਰੂਰੀ ਹਨ ਪਰ ਪੰਜਾਬੀ ਬੋਲੀ ਨੂੰ ਹੇਠਾਂ ਲਾ ਕੇ ਨਹੀਂ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਮਾਧਿਅਮ ਵਾਲੇ ਸਕੂਲ ਖੁੱਲ੍ਹਣ ਨਾਲ ਸਾਡੇ ਪੰਜਾਬੀ ਬੱਚੇ ਆਪਣੀ ਧਰਤੀ, ਆਪਣੀ ਪਛਾਣ, ਆਪਣੇ ਮਿੱਟੀ, ਆਪਣੀ ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਪੰਜਾਬੀ ਤੋਂ ਹੌਲੀ ਹੌਲੀ ਦੂਰ ਹੁੰਦੇ ਜਾ ਰਹੇ ਹਨ।" [1]

ਅਜੋਕੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਆਪਣੇ ਰਾਜ ਵਿੱਚ ਅਨੇਕਾਂ ਚੁਣੌਤੀਆਂ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰ ਰਹੀ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਅੱਜ ਤੱਕ ਕੋਈ ਵੀ ਅਮਲੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੀਤੀ ਜਾਂ ਸਿੱਖਿਆ ਨੀਤੀ ਨਹੀਂ ਅਪਨਾਈ ਗਈ ਜਿਸ ਨਾਲ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਪ੍ਰਫੁਲਿਤ ਹੋਵੇ ਇਸ ਲਈ ਪੰਜਾਬੀ ਰਾਜ ਭਾਸ਼ਾ ਹੋ ਕੇ ਵੀ ਬੇਗਾਨੀ ਬਣਦੀ ਜਾ ਰਹੀ ਹੈ।

ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਜੇਕਰ ਨਿਘਾਰ ਵੱਲ ਰੁਖ ਕਰਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਉਸਦੇ ਲਈ ਅਸੀਂ ਵੀ ਜਿੰਮੇਵਾਰ ਹਾਂ ਪਿੰਡਾਂ ਸ਼ਹਿਰਾਂ ਵਿੱਚ ਪਬਲਿਕ ਸਕੂਲ ਕਾਨਵੈਂਟ ਸਕੂਲ ਖੁੱਲ੍ਹ ਗਏ ਹਨ ਜਿੱਥੇ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਦੀ ਪੜ੍ਹਾਈ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੈ ਹੁਣ ਪੰਜਾਬੀ ਬੱਚੇ ਕਾਨਵੈਂਟ ਸਕੂਲਾਂ ਵਿਚ ਪੜ੍ਹਦੇ ਹਨ, ਜਿੱਥੇ ਮਾਂ ਬਾਪ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਬੱਚੇ ਨੂੰ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਘੋਟ ਕੇ ਪਿਆਈ ਜਾਵੇ ਇਸ ਲਈ ਉਹ ਲੱਖਾਂ ਦੀ ਰਕਮ ਸਕੂਲ ਨੂੰ ਦੇਣ ਤੋਂ ਵੀ ਗੁਰੇਜ਼ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ ਕਿ ਕਿਸੇ ਵੱਡੇ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਸਕੂਲ ਵਿੱਚ ਬੱਚੇ ਤਾ ਦਾਖਲਾ ਹੋ ਸਕੇ। ਘਰ ਵਿੱਚ ਵੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਜਾਰੀ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ ਜੇ ਮਾਂ ਬਾਪ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਨਹੀਂ ਜਾਣਦੇ ਤਾਂ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ, ਹਿੰਦੀ ਤੇ ਪੰਜਾਬੀ ਦਾ ਮਿਲਗੋਭਾ ਕਰਦੇ ਹਨ ।ਕਿਸੇ ਵੀ ਤਰੀਕੇ ਬੱਚੇ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਤੋਂ ਦੂਰ ਰੱਖਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਪਰ ਘਰ ਵਿੱਚ ਬੱਚੇ ਨਾਲ ਪੰਜਾਬੀ ਬੋਲੀ ਵਿੱਚ ਗੱਲ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ। ਫਿਰ ਅਸੀਂ ਕਿਵੇਂ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਅਸੀਂ ਪੰਜਾਬੀ ਹਾਂ ਅਸੀਂ ਤਾਂ.ਖੁਦ ਆਪਣੇ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਤੋਂ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਦੂਰ ਕਰ ਰਹੇ ਹਾਂ। ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਭਾਸ਼ਾ ਸਿੱਖਦੇ ਬੱਚੇ ਵੱਡੇ ਹੋ ਕੇ ਮਾਂ ਬਾਪ ਨਾਲ ਵਿਵਹਾਰ ਵੀ ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਬੱਚਿਆਂ ਵਾਲਾ ਹੀ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਆਪਣੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਛੱਡ ਕੇ ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਪਹਿਚਾਣ ਬਣਾਉਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਪ੍ਰਤੀ ਬੇਰੁਖਾ ਰਵਈਆ ਦੂਰ ਕਰਨ ਲਈ ਇੱਕ ਪੰਜਾਬੀ ਫਿਲਮ ਵੀ ਬਣਾਈ ਗਈ ਹੈ "ਊੜਾ ਐੜਾ" । ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਅਮੀਰ ਮਾਂ ਬਾਪ ਆਪਣੇ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਵੱਡੇ ਕਾਨਵੈਂਟ ਸਕੂਲ ਵਿੱਚ ਪੜਾਉਂਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਤੋਂ ਦੂਰ ਰੱਖਦੇ ਹਨ । ਮੁੱਖ ਕਿਰਦਾਰ ਮਾਂ ਬਾਪ ਐਥੇ ਹੋ ਕੇ ਉਸ ਸਕੂਲ ਵਿੱਚ ਬੱਚੇ ਦਾ ਦਾਖਲਾ ਕਰਵਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਉਸ ਬੱਚੇ ਦਾ ਪੰਜਾਬੀ ਬੋਲਣਾ ਬਾਕੀ ਬੱਚਿਆਂ ਤੇ ਜ਼ੋਰਦਾਰ ਅਸਰ ਕਰਦਾ ਹੈ ਜੋ ਬਾਕੀ ਬੱਚਿਆਂ ਦੇ ਮਾਂ ਬਾਪ ਨੂੰ ਚੰਗਾ ਨਹੀਂ ਲੱਗਦਾ ਉਸ ਬੱਚੇ ਨੂੰ ਸਕੂਲ ਵਿੱਚੋਂ ਕੱਢਣ ਦੀ ਅਪੀਲ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਪੰਜਾਬੀ ਸਿੱਖਣ ਲਈ ਇੰਨੀ ਫੀਸ ਨਹੀਂ ਭਰਦੇ ਇਸ ਫਿਲਮ ਵਿੱਚ ਲਿਖਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਜੇਕਰ ਬੱਚੇ ਪੰਜਾਬੀ ਨੂੰ ਨਫਰਤ ਕਰਦੇ ਜਾਂ ਪੰਜਾਬੀ ਬੋਲਣ ਵਿੱਚ ਸ਼ਰਮ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰਦੇ ਹਨ ਤਾਂ ਇਸ ਲਈ ਮਾਵਾਂ ਜਿੰਮੇਵਾਰ ਹਨ ਬੱਚੇ ਨੂੰ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਨਾਲ ਜੋੜਨਾ ਸਾਹਿਤ ਪੜ੍ਹਨ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਸਾਡੇ ਹੱਥ ਵਿੱਚ ਹੀ ਹੈ।

ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਫੁੱਲਿਤ ਕਰਨ ਲਈ ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਅਧਿਆਪਨ ਭਾਸ਼ਾ ਬਾਰੇ ਅਤੇ ਭਾਸ਼ਾ ਰਾਹੀਂ ਹੀ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਬੱਚੇ ਨੂੰ ਘਰਦਿਆਂ ਤੋਂ ਸੁਤੇ ਸਿੱਧ ਹੀ ਮਿਲ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹ ਆਪਣੇ ਸਮਾਜ ਪਰਿਵਾਰ ਆਲੇ ਦੁਆਲੇ ਰਾਬਤਾ ਕਾਇਮ ਕਰਨ ਲਈ ਜੇ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਵਰਤਦਾ ਹੈ ਨਿਪੁੰਨ ਵੀ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।

ਪਰ ਜਦੋਂ ਬੱਚਾ ਕਾਨਵੈਂਟ ਸਕੂਲ ਪੜ੍ਹਨ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਮੁਢਲੀਆਂ ਜਮਾਤਾਂ ਵਿੱਚ ਦਿੱਤੀ ਸਿੱਖਿਆ ਕਿਸੇ ਹੋਰ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਮਗਰੋਂ ਜਦੋਂ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਸਿਖਾਈ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਉਹ ਸਿੱਖ ਤਾਂ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਪਰ ਜਿਹੜੀ ਸਾਂਝ ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਲ ਬਣਨੀ ਚਾਹੀਦੀ ਸੀ ਉਹ ਨਹੀਂ ਬਣਦੀ।ਬੱਚੇ ਦਾ ਮਨ ਕੋਰਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਉਸ ਉਪਰ ਜੋ ਉਕਰਿਆ ਜਾਵੇ ਓਹੀ ਛਪ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਬੱਚੇ ਨੂੰ ਇੱਕ ਵਾਰ ਸੇਬ ਦਿਖਾ ਕੇ ਉਸਨੂੰ ਐਪਲ ਕਰਕੇ ਸਿਖਾਇਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਉਹ ਐਪਲ ਹੀ ਸਿੱਖਦਾ ਹੈ ਸੇਬ ਨਹੀਂ।ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕੇਲੇ ਨੂੰ ਬਨਾਨਾ ਹੀ ਸਿੱਖਦਾ ਹੈ। ਜੇਕਰ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਜਿਹੜਾ ਸਮਾਂ ਸਕੂਲਾਂ ਵਿੱਚ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਨੂੰ ਦਿੱਤਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ਉਹ ਪੰਜਾਬੀ ਦੇ ਹਿੱਸੇ ਵਿੱਚੋਂ ਹੀ ਦਿੱਤਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਵਜੋਂ ਪੰਜਾਬੀ ਅਧਿਆਪਨ ਲਈ ਕੋਈ ਸਪਸ਼ਟ ਨੀਤੀ ਲਾਗੂ ਹੋਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ।

" ਗਿਆਨ ਯੋਗ ਜਿਸ ਦਾ ਗਠਨ ਭਾਰਤ ਸਰਕਾਰ ਨੇ ਕੀਤਾ ਸੀ ਉਸ ਦੀ ਸਿਫਾਰਿਸ਼ ਸੀ ਕਿ ਭਾਰਤ ਦੇ ਵਿੱਚ ਪਹਿਲੀ ਜਮਾਤ ਤੋਂ ਹੀ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਪੜ੍ਹਾਈ ਜਾਵੇਗੀ ਪਰ ਸਮੱਸਿਆ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਜੇਕਰ ਪਹਿਲੀ ਜਮਾਤ ਤੋਂ ਹੀ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਪੜ੍ਹਾਈ ਜਾਵੇਗੀ ਤਾਂ ਆਪਣੀ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਪੰਜਾਬੀ ਬੱਚੇ ਕਦੋਂ ਪੜਨਗੇ।"[2]

ਇਹ ਵੀ ਸਹੀ ਹੈ ਕਿ ਜਿਹੜੀ ਗੱਲ ਬੱਚਾ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਆਸਾਨੀ ਨਾਲ ਸਿੱਖ ਸਕਦਾ ਹੈ ਉਹ ਕਿਸੇ ਹੋਰ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ। 2003 ਵਿੱਚ ਯੂਨੈਸਕੋ ਨੇ ਜਾਰੀ ਕੀਤੇ ਪੱਤਰ ਸਿੱਖਿਆ ਬਾਰੇ ਸਥਿਤੀ ਇਹ ਕਿਹਾ ਗਿਆ ਸੀ ਕਿ" ਜਿਹੜੇ ਬੱਚੇ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਮਾਧਿਅਮ ਰਾਹੀਂ ਆਪਣੀ ਮੁਢਲੀ ਪੜ੍ਹਾਈ ਆਰੰਭ ਕਰਦੇ ਹਨ ਉਹ ਉਨਾਂ ਬੱਚਿਆਂ ਨਾਲੋਂ ਬੇਹਤਰ ਸਮਝ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਦੇ ਹਨ ਜੋ ਕਿਸੇ ਓਪਰੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਪੜ੍ਹਨਾ ਸ਼ੁਰੂ ਕਰਦੇ ਹਨ।"[3] ਅਜੋਕਾ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦਾ ਜਿਹੜਾ ਦੌਰ ਅੱਜਕੱਲ ਚੱਲ ਰਿਹਾ ਹੈ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਭਾਸ਼ਾ, ਪਹਿਰਾਵਾ, ਖਾਣ- ਪੀਣ ਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਕਿੰਨਾ ਕੁ ਸੰਭਵ ਹੈ ਇਸ ਦਾ ਅਨੁਮਾਨ ਸਹਿਜੇ ਹੀ ਲਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਇਹ ਸਪਸ਼ਟ ਹੈ ਕਿ ਕਿਸੇ ਬੋਲੀ ਦੀ ਹੋਂਦ ਉਸਨੂੰ ਬੋਲਣ ਵਾਲਿਆਂ ਦੇ ਸਿਰ 'ਤੇ ਹੀ ਕਾਇਮ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ। ਅਜੋਕੇ ਯੁੱਗ ਵਿੱਚ ਬੱਚੇ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੇ ਨਾਵਾਂ ਤੋਂ ਅਣਜਾਣ ਹਨ। ਸਾਡੀ ਮਾਤ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਸ਼ਬਦ ਭੂਆ, ਮਾਸੀ, ਚਾਚੀ, ਤਾਈ, ਫੁੱਫੜ,ਮਾਸੜ,ਤਾਇਆ,ਚਾਚਾ ਬਸ ਦੋ ਸ਼ਬਦਾਂ ਅੰਕਲ ਤੇ ਆਂਟੀ ਤੱਕ ਸਿਮਟ ਕੇ ਰਹਿ ਗਏ ਹਨ। ਬੱਚਿਆਂ ਲਈ ਭਣੋਈਆ, ਕੁੜਮ,ਨਣਾਨ ਸ਼ਬਦ ਓਪਰੇ ਬਣ ਗਏ ਹਨ। ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿੱਚ ਦੱਸਿਆ ਫੋਨ ਨੰਬਰ ਜਾਂ ਪੈਸਿਆਂ ਦੀ ਗਿਣਤੀ ਸਮਝ ਨਹੀਂ ਲੱਗਦੀ ਜੇਕਰ ਅਸੀਂ ਭਾਸ਼ਾ ਤੋਂ ਬੇਮੁਖ ਹੁੰਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਆਪਣੇ ਸਾਹਿਤ,ਸਭਿਆਚਾਰ, ਅਮੀਰ ਵਿਰਸੇ ਗੁਰਬਾਣੀ ਤੋਂ ਵੀ ਬੇਮੁਖ ਹੋ ਜਾਂਦੇ ਹਾਂ ਸਾਡੇ ਵਿਦਵਾਨ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਜਿਸ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਹਨ ਉਹ ਨਹੀਂ ਮਰ ਸਕਦੀ ਪਰ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਸਕੂਲਾਂ ਵਿੱਚ ਪੜ੍ਹਦੇ ਬੱਚੇ ਆਪਣੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਸ਼ਬਦਾਂ ਤੋਂ ਹੀ ਦੂਰ ਹਨ। ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਸਰਕਾਰ ਨੇ ਸਰਕਾਰੀ ਕੰਮ ਕਾਜ ਲਈ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਲਾਗੂ ਕਰੀ ਹੈ ਪ੍ਰੰਤੂ ਹੁਣ ਤੱਕ ਸਾਰੇ ਨੋਟਿਸ ,ਦਫਤਰੀ ਕੰਮ ਕਾਰਜ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਵਿੱਚ ਹੀ ਕੀਤੇ ਜਾਂਦੇ ਹਨ। ਅਸੀਂ ਇਸ ਗੱਲ ਤੋਂ ਵੀ ਇਨਕਾਰੀ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕਦੇ ਕਿ ਜਿਹੜੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਰੋਜ਼ਗਾਰ ਹਾਸਿਲ ਕਰਨਾ ਹੈ ਉਸ ਦਾ ਗਿਆਨ ਹੋਣਾ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੈ। ਅਸੀਂ ਜਿਸ ਦੇਸ਼ ਵਿੱਚ ਜਾ ਕੇ ਵਸੇਬਾ ਕਰਨਾ ਹੈ , ਰੋਜ਼ੀ ਕਮਾਉਣੀ ਹੈ ਉਸਦੀ ਭਾਸ਼ਾ ਸਿੱਖਣੀ ਜਰੂਰੀ ਹੈ ਪਰ ਇਹ ਕਿਉਂ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕਦਾ ਕਿ ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਲ ਵਪਾਰ ਹੋਵੇ ਇਥੇ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਪਹਿਲੇ ਨੰਬਰ ਤੇ ਹਿੰਦੀ ਦੂਜੇ ਨੰਬਰ ਤੇ ਪੰਜਾਬੀ ਅਖੀਰਲੇ ਨੰਬਰ ਤੇ ਕਿਉਂ ਬੋਲੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।

ਅਸਲ ਵਿੱਚ ਮਾਹੌਲ ਹੀ ਅਜਿਹਾ ਬਣਦਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ਕਿ ਕੇਵਲ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਹੀ ਉੱਚ ਸਾਹਿਤ ਸਿਰਜੇ ਜਾਣ ਦੀ ਸਮਰੱਥਾ ਹੈ, ਇਹ ਸਿਰਫ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਭਾਸ਼ਾ ਹੀ ਹੈ ਕਿ ਜਿਸ ਦੇ ਗਿਆਨ ਨਾਲ ਸਾਰੀ ਦੁਨੀਆ ਵਿੱਚ ਵਪਾਰ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਇਹ ਗਲਤ ਹੈ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਭਾਸ਼ਾ ਖੇਤਰੀ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਤੇ ਆਪਣਾ ਦਬਦਬਾ ਕਾਇਮ ਕਰਨ ਵਿੱਚ ਸਫਲ ਹੋ ਰਹੀ ਹੈ ਅਤੇ ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਵਪਾਰੀਕਰਨ ਉੱਪਰ ਕਾਬਜ਼ ਹੋ ਰਹੀ ਹੈ।"ਮੇਰਾ ਦਾਗਿਸਤਾਨ' ਕਿਤਾਬ ਵਿਚ ਰਸੂਲ ਹਮਜ਼ਾਤੋਵ ਲਿਖਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸਦੇ ਦੇਸ਼ ਵਿੱਚ ਜਦੋਂ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੀ ਬਦਦੁਆ ਦੇਣੀ ਹੋਵੇ ਤਾਂ ਅਕਸਰ ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਰੱਬ ਕਰੇ ਤੈਨੂੰ ਤੇਰੀ ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਭੁੱਲ ਜਾਵੇ।"[4] ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਉਸਦੇ ਬੱਚਿਆਂ ਦੀ ਜਰੂਰਤ ਹੈ ਜੋ ਕਿ ਉਸ ਨੂੰ ਉੱਚਾ ਚੁੱਕਣ ਲਈ ਉਪਰਾਲੇ ਕਰਨ। ਇਤਿਹਾਸ ਫ਼ਰੋਲਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਪਤਾ ਲੱਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਕਿਨ੍ਹਾਂ ਰਾਹਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਲੰਘਦਿਆਂ ਹੈ ਇਥੋਂ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚੀ ਹੈ, ਮਜ਼ਬੂਤ ਹੋਈ ਹੈ। ਲੋੜ ਹੈ ਵੇਲਾ ਸਾਂਭਣ ਦੀ। ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਪ੍ਰਤੀ ਕੋਈ ਸਪਸ਼ਟ ਨੀਤੀ ਬਣਨੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ। ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਮੁਢਲੀਆਂ ਜਮਾਤਾਂ ਤੋਂ ਹੀ ਪੰਜਾਬੀ ਪੜ੍ਹਾਈ ਜਾਵੇ। ਘਰਾਂ ਵਿੱਚ ਬੱਚਿਆਂ ਨਾਲ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿੱਚ ਗੱਲ ਕਰੀ ਜਾਵੇ ਵਿਦਿਆਰਥੀਆਂ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਰੋਜ਼ਗਾਰ ਮੁਹਈਆ ਕਰਾਇਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਜੋ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਮਨ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਪ੍ਰਤੀ ਮਾਣ ਪੈਦਾ ਕੀਤਾ

ਜਾ ਸਕੇ।ਸੂਚਨਾ,ਸੰਚਾਰ, ਕਾਰ ਵਿਹਾਰ, ਪ੍ਰਾਈਵੇਟ ਖੇਤਰਾਂ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਆਪਣੀ ਪਹਿਚਾਣ ਸਥਾਪਿਤ ਕੀਤੀ ਜਾਵੇ।

ਬੇਸ਼ਕ ਮੌਜੂਦਾ ਸਰਕਾਰ ਨੇ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਬਚਾਉਣ ਲਈ ਇਸ ਵੱਲ ਕਦਮ ਵਧਾਇਆ ਹੈ ਕਿ ਸਾਰੇ ਸਰਕਾਰੀ ਪ੍ਰਾਈਵੇਟ ਅਦਾਰਿਆਂ ਵਿੱਚ ਨਾਮ ਦੀਆਂ ਪਲੇਟਾਂ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਹੋਣ। ਸੜਕਾਂ ਤੇ ਬੋਰਡ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਲਿਖੇ। ਇਹ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਬਚਾਉਣ ਲਈ ਠੋਸ ਕਦਮ ਹੈ ਪਰ ਜੇਕਰ ਅਸੀਂ ਆਪ ਹੀ ਆਪਣੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਕਦਰ ਨਹੀਂ ਕਰਾਂਗੇ ਤਾਂ ਅਸੀਂ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਕਸੂਰਵਾਰ ਨਹੀਂ ਕਹਿ ਸਕਦੇ। ਜਿਵੇਂ ਮਤਰੇਈ ਮਾਂ ਮਤਰੇਈ ਹੀ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ ਹੈ ਸਕੀ ਨਹੀਂ ਬਣਦੀ ਠੀਕ ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਜਿਹੜਾ ਪਿਆਰ ਸਤਿਕਾਰ ਆਪਣੀ ਬੋਲੀ ਦੇ ਸਕਦੀ ਹੈ ਕੋਈ ਹੋਰ ਨਹੀਂ। ਇਸ ਲਈ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ ਕਿ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਬਚਾਉਣ ਲਈ ਆਪਣੀ ਰੋਜ਼ਮਰਾ ਦੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਵਿੱਚ,ਕਾਰ ਵਿਹਾਰ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬੀ ਬੋਲੀ ਨੂੰ ਸ਼ਾਮਲ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਜੋ ਆਪਣੇ ਮਹਾਨ ਵਿਰਸੇ ਤੋਂ ਆਪਣੇ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਜਾਣੂ ਕਰਵਾਇਆ ਜਾ ਸਕੇ। ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਗਾਇਕ ਸਤਿੰਦਰ ਸਰਤਾਜ ਦੇ ਇੱਕ ਗੀਤ ਦੀਆਂ ਤੁਕਾਂ ਵਿਚ ਬਿਲਕੁਲ ਠੀਕ ਕਿਹਾ ਹੈ ਕਿ

" ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਕੋਲ ਨੇ ਜ਼ੁਬਾਨਾਂ ਓਹੀ ਕਰਦੇ ਨੇ ਰਾਜ
ਤਾਂ ਹੀ ਗੀਤ ਲਿਖੇ ਜਾਣ ਤੇ ਤਾਂ ਹੀ ਗਾਊ ਸਰਤਾਜ
ਕਿਤੇ ਗੁਮ ਹੀ ਨਾ ਜਾਵੇ ਪਹਿਚਾਣ ਦੋਸਤੋ
ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਨੂੰ ਲੋੜੀਂਦਾ ਦੇਵੋ ਮਾਣ ਦੋਸਤੋ"[5]

ਜੇਕਰ ਅਸੀਂ ਕੰਪਿਊਟਰ ਤੇ ਕੰਮ ਕਰਦੇ, ਫੋਨ 'ਤੇ ਸੰਦੇਸ਼ ਭੇਜਣ ਸਮੇਂ,ਪੱਤਰ ਵਿਹਾਰ ਕਰਦੇ ਸਮੇਂ ਪੰਜਾਬੀ ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਕਰੀਏ ਅਤੇ ਦਫ਼ਤਰੀ ਕੰਮ ਕਾਜ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਯਕੀਨੀ ਬਣਾਉਣ ਲਈ ਨਿਯਮ ਬਣਾਏ ਜਾਣ ਤਾਂ ਪੰਜਾਬੀ ਬੋਲੀ ਨੂੰ ਇਸ ਦਾ ਮਾਣ ਸਤਿਕਾਰ ਦਿੱਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮਰਨ ਤੋਂ ਵੀ ਬਚਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਕੁਲਦੀਪ ਸਿੰਘ ਧੀਰ ਅਨੁਸਾਰ,"

ਸਾਂਭੋ ਆਪਣੇ ਚੰਨ ਤੇ ਤਾਰੇ ਜੀ ਸਦਕੇ
ਮੇਰਾ ਸੂਰਜ ਮੇਰੇ ਕੋਲ ਰਹਿਣ ਦਿਓ।
ਮਾਵਾਂ,ਮਾਸੀਆਂ,ਚਾਚੀਆਂ 'ਤੇ ਵੀ ਮਾਣ ਕਰੂੰ
ਆਪਣੀ ਮਾਂ ਨੂੰ ਮਾਂ ਤਾਂ ਪਹਿਲਾਂ ਕਹਿਣ ਦਿਓ।"[6]

ਅਸੀਂ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਮੁਲਕ ਵਿੱਚ ਬੇਗਾਨਾ ਹੋਣ ਤੋਂ ਬਚਾਉਣ ਲਈ ਸਾਨੂੰ ਮਿਲ ਕੇ ਹੰਭਲਾ ਮਾਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ, ਨਹੀਂ ਤਾਂ ਸਾਡੀ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਵੀ ਖ਼ਤਮ ਹੋਣ ਤੋਂ ਕੋਈ ਨਹੀਂ ਬਚਾ ਸਕਦਾ।

ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਪੰਜਾਬ ਟਾਈਮਜ਼ ਫਰਵਰੀ 23, 2022
2. ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਦਾ ਕੱਲ੍ਹ ਅੱਜ ਤੇ ਭਲਕ ਪੰਨਾ- 36
3. ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਰਤਮਾਨ ਅਤੇ ਭਵਿੱਖ ਸੰਪਾਦਕ ਡਾਕਟਰ ਸਰਬਜੀਤ ਸਿੰਘ ਪੰਨਾ- 9
4.ਓਹੀ ਪੰਨਾ-11
5. ਪੰਜਾਬ ਟਾਈਮਜ਼ ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਦਾ ਮਹੱਤਵ ਫਰਵਰੀ 23,2022

6. ਗੁਣਤਾਸ (ਗੁਣਾਂ ਦਾ ਖ਼ਜ਼ਾਨਾ)ਸੰਪਾਦਕ ਡਾਕਟਰ ਅਵੀਨਿੰਦਰ ਪਾਲ ਸਿੰਘ ਪੰਨਾ -99
7. ਗੁਣਤਾਸ(ਗੁਣਾਂ ਦਾ ਖ਼ਜ਼ਾਨਾ) ਸੰਪਾਦਕ ਡਾਕਟਰ ਅਵੀਨਿੰਦਰ ਪਾਲ ਸਿੰਘਪੰਨਾ- 98

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 68-71
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Gendered Encounters with Policing and the Reconstitution of State Accountability

Keerthi P R
Research Scholar,
Department of Political Science,
University College, Thiruvananthapuram, Kerala

Abstarct
This paper illustrates the case that women's interactions with law enforcement should be viewed as a crucial location for reconsidering state responsibility. The everyday experiences of women in India, where police institutions continue to play a crucial role in managing gendered violence, highlight the uneven and frequently discriminatory character of state response. The article uses a standpoint- oriented method to treat women's experiences as socially situated information that reveals the boundaries of formal accountability rather than as anecdotal evidence. It demonstrates that police is a gendered institution that makes the state visible as a protector, disciplinarian, mediator, or absent authority instead of being just a neutral location for law enforcement.
Keywords: Standpoint Theory, Violence Against Women, Women Police Stations, Gender Based Violence

Introduction

Institutional procedures including judicial review, administrative oversight,legislative scrutiny, and electoral sanction are frequently used to define state accountability. These frameworks are essential, but because they generally presume that all citizens interact with the state uniformly, these systems are unsatisfactory. However, in reality, social fragility, gender, caste, and class operate as mediators for access to governmental institutions. The state is frequently perceived by women, particularly in the context of law enforcement, as a concrete, everyday authority that determines whether a complaint is taken seriously, whether abuse is acknowledged, and whether protection is delivered (Khanikar, 2016).

The article puts forward the argument that women's gendered interactions with law enforcement provide light on India's more complex system of state accountability. For many women who experience pressure, threats, sexual harassment, or domestic abuse in both public and private environments, the police are their primary means of contact. Nevertheless, disbelief, pressure to compromise, moral judgment, and procedural delay often influence these interactions. Such patterns demonstrate that the presence of laws or specialized police forces alone cannot be used to gauge responsibility. The institution's legitimate accessibility also has to be taken into account to evaluate it.

Theoretical Lens

While it originates from the notion that social location impacts what may be perceived about power, a standpoint-oriented approach is essential. Because they reveal facets of state authority that are concealed from more detached institutional narratives, women's experiences in law enforcement are not incidental to the study of the state (Intemann, 2015). It is not necessary to romanticize victimization in order to begin with experiences of people on the periphery. Instead, it entails acknowledging that people in socially vulnerable situations who oppose coercive institutions often recognize the inconsistencies between official statements and actual behavior more explicitly than people who are shielded by institutional privilege. Standpoint theory holds that knowledge is shaped by social position and that marginalized groups, through their lived experience of power, can produce critical insight into institutions that is often inaccessible from dominant viewpoints (Harding, 2003).

This framework implies that women's objections, delays, refusals, and negotiations have epistemic significance when it comes to policing. They show how the state distributes credibility, how discretion is used to exert authority, and how legal rights are converted into conditional entitlements. As consequently, the viewpoint perspective changes the focus of analysis from the state as a formal structure to the state as a lived relationship (Rudy, 1999). This is particularly crucial in the Indian context since police interactions are frequently the pivotal point at which violence is either made actionable or normalized by inactivity.

Policing and Gender

In juxtaposition with the fact that men predominate in its ranks, policing is a gendered institution because its organizational culture and procedures are shaped by masculine presumptions about legitimacy, authority, and control. Inclusion by itself does not eradicate institutional hierarchy, according to research on women in law enforcement. Women cops frequently face cultural expectations that they represent compassion while men represent force, marginalization, and symbolic presence without legitimacy (Jassal, 2020). This is significant for accountability since the gender profile of the police has an impact on both internal workplace relationships and the way the organization addresses women citizens.

The realization that many women refrain from calling law enforcement because they fear stigma or harassment led to the establishment of women's help desks and All- Women Police stations in India. Women respond to institutional settings that lower the social and procedural costs of complaining, these institutions may strengthen reporting of gender based violence. But this nstitutional design is insufficient on its own (Cunningham & Ramshaw, 2019). While directing cases toward informal counseling or reconciliation rather than a strong judicial remedy, women police stations can mitigate access hurdles. The article's main thesis revolves around this challenge: accountability does not always follow from inclusion in the police process.

Women's Lived Experiences

In India, a number of persistent barriers influence how women interact with the police. Approaching the police can be detrimental to a woman's reputation, particularly in cases of sexual assault or domestic violence where marriage, social standing, and family honor are involved. Second, complaints are frequently assessed morally rather than legally via the lens of police discretion. Finally, the woman's claim to protection may be undermined by unofficial pressure to compromise, settle, or go where she belongs. These actions indicate that the state's response is conditioned by gendered presumptions about the kind of harm that require immediate intervention in lieu of being neutral.

An analytical justification of the significance of these patterns is provided by a standpoint approach, while women report assault, they are perpetuate the fundamental injustices that facilitated the violence occur, not just an individual's wound. As a result, their

experience of being misled or disbelieved serves as testimony of institutional failure. Because it demonstrates which voices are seen as genuine and authentic, the complaint procedure provides insight to the structure of governmental authority. In such a manner, women's experiences serve as a diagnostic of the state's accountability gap as well as a source of policy input.

Particularly illuminating is the data regarding Women Police Stations. Research indicates that the opening of these stations is linked to increase in reports of gender based violence, indicating that when institutional entrance cost decline, women are more inclined to seek assistance (Brown et al., 2020). However, this greater reporting should not be interpreted as an indication of better justice. It might also mean that conventional stations were unresponsive or unreachable for a prolonged time. Furthermore, accountability is only partially rebuilt because such stations might boost reporting while maintaining deeper coercive systems. Although it fails to constantly become more transformative, the institution eventually becomes more approachable.

Reconstituting Accountability

Three adaptations are required if accountability is to reconsidered from the standpoint perspective of women (Hardy, 2003). First, accessibility. A state is only formally accountable if it grants legal rights but makes exercising them socially expensive. The experiences of women demonstrate the accountability itself encompasses whether a police station is accessible, secure, and courteous. Second, credibility is a necessary component of responsibility. Reports of abuse by women are frequently viewed with mistrust or normalized, particularly when the violence occurs at home. A credible state is one that refrains from requiring women to continuously demonstrate that they have been harmed in order to obtain protection. In this regard, a substantive readiness to perceive gendered fragility as politically significant is more important than merely administrative procedure.

Furthermore, a solution must be part of accountability. The objective is to make sure that addressing has an impact, instead of just providing venues for women to express themselves. The state has not truly taken responsibility if complaints are turned into counseling sessions, unofficial mediation, or postponed processes that put women back in the dangerous environment. All it has done is rearrange its visibility. This is where a more comprehensive political understanding is provided by the Indian case. Women's experiences with law enforcement demonstrate that the state is answerable to both institutions above and below it. Women's lived experiences at police stations highlight the gap between official rights and practical protection. That distance is consequential because it reveals how state power is distributed unevenly across gendered social locations.

Conclusion

Gendered encounters with law enforcement actively redefine state accountability in contrast to merely reflecting it. Women's lived experiences of reporting abuse, negotiating police discretion, and seeking redress in India demonstrate that institutional presence and legal form alone are insufficient to fully capture culpability. Because women's experiences disclose the practical constraints of the state in ways that aggregate indicators cannot, they should be regarded as epistemically and politically authoritative, according to the standpoint oriented argument articulated in this respect.

The more significant consequence is that accountability needs to be viewed as a relationship involving remedy, acknowledgment, and responsiveness. The state's claim to safeguard women is undermined when they must deal with stigma, disbelief, and procedural deception. On the other hand, the potential for responsibility increases when institutional design reduces barriers and regards women's experiences as credible and dependable. Therefore, a political science of the state that begins with women's interactions with law

enforcement provides not only a gendered addition to current theory but also a more rigorous understanding of what it means for the state to answer to its citizens.

References

1. Brown, J., Fleming, J., & Silvestri, M. (2020). Policewomen's perception of occupational culture in the changing policing environment of England and Wales: A study in liminality. *The Police Journal: Theory, Practice and Principles, 94*(3).
2. Cunningham, E., & Ramshaw, P. (2019). Twenty-three women officers' experiences of policing in England: The same old story or a different story? *International Journal of Police Science & Management, 22*(1), 26–37. https://doi.org/10.1177/1461355719868490
3. Harding, S. (2003). *The feminist Standpoint theory reader: Intellectual and political controversies*. Routledge.
4. Intemann, K. (2015). Feminist Standpoint. In *Oxford University Press eBooks* (pp. 261–282). https://doi.org/10.1093/oxfordhb/9780199328581.013.14
5. Jassal, N. (2020). Gender law enforcement and access to justice: Evidence from All-women police stations in India. *American Political Science Review, 114*(4), 1035–1054.
6. Khanikar, S. (2016). Women police in the city of Delhi: gender hierarchies, 'Pariah femininities' and the politics of presence. *Studies in Indian Politics, 4*(2), 159–177. https://doi.org/10.1177/2321023016665517
7. Rudy, K. (1999). Revisiting Standpoint theory. *Theory & Event, 3*(3).

Email id: Keerthiputhiyedath@gmail.com
Ph: 8078713029

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 72-76
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

समकालीन प्रेम का समाजशास्त्र और काव्य-चेतना: 'पनसोखा है इन्द्रधनुष' के विशेष संदर्भ में

ब्लेस्सनराजू
शोधार्थी,
हिंदी विभाग, केरल विश्वविद्यालय

सार-संक्षिप्त:
मदन कश्यप जी समकालीन हिंदी कविता के एक अत्यंत सशक्त हस्ताक्षर हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं में यथार्थ और मानवीय संवेदना का अद्भुत संतुलन स्थापित किया है। उनकी पुस्तक 'पनसोखा है इन्द्रधनुष' के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि आज के समय में प्रेम सिर्फ ख्याली दुनिया की चीज़ न रहकर, आम आदमी के असली जीवन-संघर्षों और अभावों से जुड़ गया है। ये कविताएँ दिखावटी प्यार, पैसों के लालच (उपभोक्तावाद) और पुरुष-वर्चस्व जैसी पुरानी रूढ़िवादी सोच का कड़ा विरोध करती हैं। इनमें आधुनिक शहरी जीवन की भागदौड़ से पैदा हुए अकेलेपन और रिश्तों के बीच खत्म होती बातचीत (संवादहीनता) की समस्या को भी बहुत गहराई से दिखाया गया है। कवि ने समाज के उस पाखंडी चेहरे की भी तीखी आलोचना की है, जहाँ झूठी इज्जत के नाम पर 'ऑनर किलिंग' और 'मोरल पुलिसिंग' जैसी अमानवीय घटनाएँ होती हैं। कुल मिलाकर, उनकी कविताएँ प्रेम को केवल एक निजी भावना की सीमा से बाहर निकालकर, इसे समाज की सच्चाई और बदलाव के एक मजबूत हथियार के रूप में पेश करती हैं।

मुख्य शब्द:
समकालीन कविता, प्रेम का समाजशास्त्र, मदन कश्यप, पनसोखा है इन्द्रधनुष, सामाजिक यथार्थ, स्त्री-विमर्श, जेंडर-समानता, उपभोक्तावाद, अकेलापन, मोरल पुलिसिंग, ऑनर किलिंग।

प्रेम मानवीय संवेदना का वह सर्वाधिक सूक्ष्म, व्यापक और परिवर्तनकारी रूप है, जो व्यक्ति को 'स्व' (खुद) की संकीर्ण और स्वार्थी परिधि से निकालकर 'पर' (दूसरे) के साथ एकात्मकता स्थापित करने की प्रेरणा देता है। ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में गहराई से देखा जाए, तो प्रेम केवल एक ऐन्द्रिक या जैविक आकर्षण मात्र नहीं है; बल्कि यह मानवीय चेतना का एक उच्चतर सामाजिक और भावात्मक रूपांतरण है। प्रेम एक ऐसा ख़ूबसूरत, शाश्वत और अदम्य एहसास है, जो हर इंसान के दिल के किसी न किसी कोने में अनिवार्य रूप से बसा होता है। वस्तुतः, प्रेम ही वह सच्ची और आदिम मानवीयता है जो हमें अन्य प्राणियों से अलग कर एक संवेदनशील, रचनात्मक और सामाजिक मनुष्य बनाती है।

कला और साहित्य के उद्भव काल से ही प्रेम मानव-सृजन का एक मुख्य और केंद्रीय विषय रहा है। हिंदी आलोचना के शिखर पुरुष आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने प्रेम के मनोवैज्ञानिक और सामाजिक आधार को बहुत ही वैज्ञानिक ढंग से स्पष्ट करते हुए अपने प्रसिद्ध निबंध संग्रह 'चिंतामणि' में लिखा है:

"प्रेम वास्तव में 'राग' का ही पूर्ण विकसित रूप है। राग और द्वेष दोनों की स्थिति वासना के रूप में प्रत्येक प्राणी में होती है। वासनात्मक अवस्था में इन दोनों के विषय सामान्य रहते हैं। सामान्यतः सुख देनेवाली या चिरकाल से साथ रहनेवाली वस्तुओं के प्रति राग और दुःख देनेवाली वस्तुओं के प्रति द्वेष का बीज सबके हृदय क्षेत्र में ढंका रहता है। यही राग जब अंकुरित या व्यक्त होकर किसी व्यक्ति-विशेष की ओर पहले-पहल उन्मुख होता है, तब 'लुभाना' कहलाता है और जब उस विशेष में जाकर स्थिर हो जाता है, तब 'प्रेम' कहा जाता है। सीधी बात यह है कि वासनात्मक अवस्था से भावात्मक अवस्था में पहुँचा हुआ राग ही 'अनुराग' या प्रेम है।"[1]

हिंदी साहित्य के विस्तृत इतिहास का सूक्ष्म समाजशास्त्रीय अध्ययन करने पर यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि प्रत्येक कालखंड की बदलती सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों ने प्रेम की अभिव्यक्ति और उसकी परिभाषा को अपने-अपने ढंग से गहराई से प्रभावित और परिवर्तित किया है। आदिकालीन साहित्य में मुख्य रूप से सामंती परिवेश, दरबारी आश्रय और युद्धों के साये में श्रृंगार का चित्रण हुआ। इसके बाद, सामाजिक उथल-पुथल के दौर में भक्तिकालीन कवियों ने प्रेम के परिदृश्य को पूरी तरह से बदल दिया। उन्होंने लौकिक प्रेम को अलौकिक और आध्यात्मिक ऊँचाइयों तक पहुँचाकर उसे एक वृहद सामाजिक आंदोलन का रूप दे दिया। रीतिकाल में आकर प्रेम का यह उदात्त और विद्रोही रूप पुनः संकुचित हो गया। दरबारी संस्कृति, सामंती विलासिता और नारी को केवल भोग्या समझने की मानसिकता के प्रभाव में प्रेम केवल बाह्य प्रदर्शन, चमत्कार, अलंकरण और मांसल सौंदर्य के चित्रण तक सीमित रह गया। आधुनिक काल में प्रवेश करते ही, विशेषकर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समानांतर, छायावादी कवियों ने प्रेम को दरबारी घुटन से आज़ाद किया और उसे पुनः वैयक्तिक अनुभूति, प्रकृति-प्रेम और सूक्ष्मता प्रदान की। यहाँ प्रेम स्थूल देह-संसार से मुक्त होकर एक पवित्र भावधारा और मानवीय करुणा में रूपांतरित हो गया, जिसमें एक नए आज़ाद मनुष्य की परिकल्पना छिपी थी। छायावादोत्तर काल, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और विशेष रूप से आज की 'समकालीन कविता' तक आते-आते प्रेम की यह आधारभूमि अपनी कोरी काल्पनिक, रूमानी और सौंदर्यवादी सीमाओं को पूरी तरह से तोड़कर कठोर सामाजिक यथार्थ से जा टकराई है।

समकालीन हिंदी कविता के इसी यथार्थवादी और प्रगतिशील परिदृश्य में **मदन कश्यप** एक ऐसे सशक्त, जनवादी और विचारशील कवि के रूप में उभरते हैं, जो सामाजिक बदलाव, राजनीतिक सजगता और मानवीय संवेदना के अंतर्संबंधों की बेहद गहरी और समाजशास्त्रीय पड़ताल करते हैं। मदन कश्यप की कविताओं की सबसे बड़ी विशेषता और उनकी वैचारिक सफलता उनका अद्भुत संतुलन है—वे एक तरफ तो राजनीतिक उथल-पुथल, व्यवस्था की नाकामी, सांप्रदायिकता की आग, भ्रष्टाचार और शोषक वर्ग की चालाकियों पर हथौड़े की तरह कठोर प्रहार करते हैं, वहीं दूसरी तरफ वे मानवीय संबंधों की ऊष्मा, लोक-जीवन की सोंधी माटी और प्रेम के कोमल भावों का अत्यंत आत्मीयता से स्वागत भी करते हैं। उनके यहाँ प्रेम और प्रतिरोध एक-दूसरे के पूरक हैं।

उनका बहुचर्चित कविता संग्रह **'पनसोखा है इन्द्रधनुष'** समकालीन प्रेम, स्त्री-विमर्श और मानवीय संवेदना की एक बिल्कुल नई संरचना को हमारे सामने उद्घाटित करता है। इस संग्रह की प्रेम कविताएँ, प्रेम को किसी तिलिस्मी, जादुई या अवास्तविक दुनिया में ले जाने के बजाय, उसे हमारे रोज़मर्रा के जीवन, आम आदमी के दुःखों, आर्थिक तंगी, पसीने की गंध और सामाजिक विषमताओं के ठीक बीचोबीच खड़ा करती हैं। उन्होंने अपनी कविताओं के

माध्यम से प्रेम को एक देवत्व की काल्पनिक दुनिया से बाहर निकालकर, जीवन की कठोर वास्तविकताओं से परिचित कराने और उसे उसके व्यावहारिक रूप में समेटने का अत्यंत प्रामाणिक प्रयास किया है।

इस संग्रह की प्रतिनिधि कविता 'स्त्री-पुरुष' में कवि प्रेम को एक बिल्कुल भिन्न और प्रगतिशील स्त्रीवादी दृष्टि से व्याख्यायित करता है। उन्होंने अपने गहरे सामाजिक अनुभवों से प्यार का वर्णन किया है। इस कविता का सबसे महत्वपूर्ण वैचारिक बिंदु है— 'प्यार में अस्तित्वहीनता का विसर्जन' या 'प्यार में स्त्री-पुरुष की पूर्ण समानता'। सदियों से चले आ रहे पितृसत्तात्मक समाज में प्रेम अक्सर शक्ति के असंतुलन का शिकार हो जाता है, लेकिन इस कविता में स्त्री एक मूक प्रेमिका नहीं है; वह अपने प्रेमी से एक ऐसी शर्त रखती है जो सीधे तौर पर पुरुषवादी ढाँचे को चुनौती देती है:

"स्त्री जैसा कुछ भी / नहीं बचेगा है मेरे भीतर / तुम में भी जो मर्द जैसा कुछ बचा हो / तो उसे छोड़ दो / और करो प्यार"[2]

यह पंक्तियाँ बहुत स्पष्ट और दो-टूक लहज़े में यह घोषणा करती हैं कि जब तक प्रेम में 'स्त्री' होने की सामाजिक हीनता और 'पुरुष' होने का वर्चस्ववादी अहंकार बचा रहेगा, तब तक दो मनुष्यों के बीच सच्चा प्रेम संभव ही नहीं है। इस वैचारिक पृष्ठभूमि को पुष्ट करते हुए डॉ. एलाङ्ङ्खम विजयलक्ष्मी का यह कथन पूर्णतः सटीक जान पड़ता है:

"प्यार को अपराध या पाप मानकर कुछ उन्मादी लोगों द्वारा स्त्री को जीने के अधिकार से वंचित कर देना और शेष लोगों का चुप्पी साध लेना, किसी भी समाज के लिए प्रगतिशील भविष्य का संकेत नहीं कहा जा सकता। आज यह मानना ही होगा कि स्त्री की स्वाधीनता का अधिकार एक तथ्य ही नहीं है, बल्कि आधुनिक समाज को समाज होने की परिस्थितियाँ प्रदान करने के लिए अपरिहार्य आवश्यकता है।"[3]

कवि के अनुसार, जिस संबंध में बराबरी, सम्मान और आज़ादी न हो, वह प्रेम हो ही नहीं सकता। कवि यहाँ एक ऐसे प्रेम की वकालत करते हैं जो जेंडर-अहंकार से पूरी तरह मुक्त हो।

वर्तमान समय में वैश्वीकरण, मुक्त बाज़ारवाद और सिनेमा ने प्रेम का बाज़ारीकरण कर उसे एक कृत्रिम और चमकदार चेहरा दे दिया है। आज प्रेम को उपभोक्तावाद के एक ऐसे 'प्रोडक्ट' के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जहाँ केवल महँगे उपहार, ब्रांडेड वस्तुएँ, रेस्टोरेंट के बिल और विलासिता ही प्रेम का मापदंड बन गए हैं। मदन जी की कविता में प्रेम करने वाली स्त्री के पास महँगे कपड़े, ब्रांडेड जूते या कीमती मोबाइल फ़ोन नहीं हैं। वे पूंजीवादी पैमाने पर अमीर नहीं हैं, लेकिन मानवीय संवेदना और प्रेम के मामले में वे दुनिया के सबसे धनवान लोग हैं:

"मेरे साधारण कपड़े / किसी साधारण डिटर्जेंट से धुले थे / जूतों पर फैली थी सड़क की धूल / मैं पैदल चलकर गया था उसके पास / और उसने मुझे प्यार किया"[4]

मदन जी ने संग्रह की शीर्षक कविता 'पनसोखा है इन्द्रधनुष' में प्रेम की आत्मिक गहराइयों का वर्णन करने के साथ-साथ उसकी ऐन्द्रिक और प्राकृतिक भावनाओं को भी बड़ी ख़ूबसूरती से पिरोया है। प्रकृति और प्रेम का बहुत आदिम और जैविक संबंध रहा है। जैसे बारिश की बूँदें और सूरज की किरणें मिलकर आकाश में इन्द्रधनुष की जादुई रचना करती हैं, वैसे ही प्रेमियों के बीच परस्पर विश्वास और पूर्ण समर्पण से प्रेम का रंग गहरा होता है। प्रकृति में होने वाले स्वाभाविक बदलावों को प्रेमी हृदय की मनोवैज्ञानिक भाव-दशाओं से जोड़ते हुए कवि अत्यंत सूक्ष्मता से लिखता है:

"हम इन्द्रधनुष थे लेकिन पनसोखे नहीं / अपनी-अपनी देह के भीतर ढूँढ रहे थे अपनी-अपनी देह / बारिश की बूँद जितनी हमारे वदन पर थीं / उससे कहीं अधिक हमारी आत्मा में"[5]

यह कविता वास्तव में बारिश की एक आंतरिक और काव्यात्मक यात्रा है, क्योंकि कविता बारिश के साथ शुरू होती है और बारिश के साथ ही समाप्त होती है। जब बारिश अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचती है, तो प्रेमियों के बीच की संवेदना भी तीव्र हो उठती है। और जब बारिश मद्धिम पड़ती है, तो भावनाएँ भी एक शांत, संतुष्ट ठहराव पा लेती हैं। 'पनसोखा' (पानी सोखने वाला या इन्द्रधनुष का एक फीका, अधूरा रूप) न होकर पूरा इन्द्रधनुष होना, जीवन में प्रेम के सभी सतरंगी रंगों के साथ पूर्णता से खिलने का प्रबल प्रतीक है।

आधुनिक महानगरीय जीवन की विडंबनाओं में 'अकेलापन' एक बेहद जटिल और समाजशास्त्रीय समस्या बन चुका है। आज के समय में काम के दबाव और महानगरीय जीवन की अंधी भागदौड़ ने संबंधों के बीच संवाद में एक बड़ा अंतराल पैदा कर दिया है। आज हम तकनीक के माध्यम से 24 घंटे जुड़े हुए हैं, शारीरिक रूप से एक-दूसरे के साथ हैं, लेकिन पास होने के बावजूद मानसिक और आत्मिक रूप से एक-दूसरे से मीलों दूर हैं।

"मैं तुम्हें प्यार करता हूँ शायद इसलिए बेहद / कि तुम्हारा प्यार और बढ़ा देता है मेरा अकेलापन / कर देता है मुझे बेचैन / और यह सब अब शामिल है मेरी आदत में"[6]

कवि इस मनोवैज्ञानिक द्वंद्व को बहुत ही सटीकता से पकड़ता है। आज हमने प्रेम की वह सहज दीवानगी और गहराई खो दी है। आधुनिक रिश्तों की यह अघोषित संवादहीनता प्यार को सरल बनाने के बजाय और अधिक जटिल, दमघोंटू और तनावपूर्ण बना रही है।

मदन जी ने अपनी कविताओं में उन लोगों की पीड़ा को भी स्वर दिया है, जिन्होंने सामाजिक दबावों या परिस्थितियों के कारण अपना प्यार खो दिया है। वे लोग आज पछताते हैं और अपने अतीत की उन प्यारी यादों में लौटना भी चाहते हैं, लेकिन समय की निर्मम रफ़्तार में अब वह मुमकिन नहीं हो पाता। मदन जी कहते हैं:

"अपना तो स्मृतियों में लौटना भी कठिन होता जा रहा है / कितनी खुशनुमा यादें तुम्हारी / धीरे-धीरे पथराती जा रही हैं"[7]

मनुष्य हमेशा अपने अतीत की रूमानी यादों में जीना चाहता है, लेकिन जीवन की कठोर भागदौड़ और यथार्थ के थपेड़े उन यादों को मिटा देते हैं। अतीत के प्यार, खुशी, आनंद और शांति की यादें अब समय के साथ पत्थर की तरह निर्जीव 'जीवाश्म' बन गई हैं।

आज के समाज में दो युवा प्रेमियों को आपस में बात करने या एक साथ पार्क में समय बिताने के लिए भी समाज, परिवार और तंत्र से डरना पड़ता है। भारत के कई राज्यों में प्रेमी जोड़े 'मोरल पुलिसिंग' (नैतिक पहरेदारी) और सांप्रदायिक ताकतों के सीधे शिकार हो रहे हैं। समाज का एक बहुत बड़ा पाखंडी वर्ग प्यार को एक जघन्य अपराध मानता है। मदन जी की **'तेज़ रफ़्तार लोग'** शीर्षक कविता समाज के इस वीभत्स पाखंड का सबसे ज्वलंत दृष्टांत है:

"प्रेमियों को दुत्कारा जा रहा था / और बलात्कारियों के लिए गाया जा रहा था स्वागत गान"[8]

ये पंक्तियाँ हमारी उस खोखली व्यवस्था और मरी हुई अंतरात्मा का पर्दाफाश करती हैं, जो प्रेम करने वालों को सरेआम पीटती है और राजनीति तथा सत्ता के संरक्षण में बलात्कारियों या अपराधियों का बचाव करती है, उन्हें मालाएँ पहनाती है। 'संस्कृति की रक्षा' के नाम पर ये लोग प्रेम का हिंसक विरोध करते हैं।

आज प्यार करने वालों द्वारा सामने की जाने वाली सबसे भयानक और अमानवीय समस्या **'ऑनर किलिंग'** (सम्मान के नाम पर हत्या) है। इक्कीसवीं सदी के इस अंतरिक्ष और सूचना क्रांति के आधुनिक युग में भी भारत में जाति-व्यवस्था लगातार सख्त और जानलेवा होती जा रही है। इस संदर्भ में समाजशास्त्रीय रिपोर्ट का अवलोकन अत्यंत प्रासंगिक है:

"भारत की सामाजिक व्यवस्था जाति-आधारित पदानुक्रम पर आधारित रही है। यद्यपि शहरों में अंतर्जातीय विवाहों की संख्या बढ़ी है और सरकार भी ऐसे विवाहों को प्रोत्साहित करती है, फिर भी अनेक ग्रामीण क्षेत्रों में परंपरागत जातिगत मान्यताएँ आज भी प्रभावी हैं। गाँवों में खाप पंचायतें सामाजिक मामलों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इनके अपने नियम होते हैं और वे समान गोत्र अथवा जाति से बाहर होने वाले विवाहों का विरोध करती हैं। उनका मानना है कि परिवार या समुदाय की परंपराओं का उल्लंघन करने वाले, विशेषकर अंतर्जातीय या समान गोत्र विवाह करने वाले युवक-युवतियों की हत्या समुदाय के सम्मान की रक्षा के लिए उचित है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि भारत में सम्मान के नाम पर होने वाली हत्याओं के पीछे जाति व्यवस्था तथा उससे जुड़ी सामाजिक मान्यताएँ प्रमुख कारण हैं।"[9]

ये बर्बर हत्याएँ प्रायः समाज और परिवार की झूठी 'मूँछ' और खोखली प्रतिष्ठा के नाम पर की जाती हैं। समाज की इस भीषण और रक्तपिपासु सच्चाई को मदन कश्यप जी ने अपनी कविता में अत्यंत मार्मिक और व्यंग्यात्मक ढंग से व्यक्त किया है:

"घृणा के सौदागरों को लगा / इस तरह तो नहीं रुक सकता है प्यार / तब स्वाभिमान की पंचायत बुलाई / और सरेआम दोनों को फाँसी पर लटका दिया"[10]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मदन कश्यप जी ने 'पनसोखा है इन्द्रधनुष' के माध्यम से समकालीन सामाजिक जीवन में उभरते हिंसक तनावों, टूटते हुए मानवीय मूल्यों, रूढ़िवादी परंपराओं की क्रूरता और नव-पूंजीवादी आस्थाओं के बीच पिसते हुए यथार्थ जीवन का एक अत्यंत प्रामाणिक, साहसिक और सशक्त चित्रण किया है। चूँकि वे एक अत्यधिक संवेदनशील, मार्क्सवादी चेतना से संपन्न और समाज के प्रति प्रतिबद्ध कवि हैं, इसलिए उनके साहित्य में एक स्पष्ट वैचारिक गतिशीलता दिखाई देती है। मदन जी उन विरले समकालीन कवियों में से हैं जो व्यक्तिगत पीड़ा और समष्टिगत (सामूहिक) सामाजिक संवेदना दोनों को समान गहराई के साथ अंकित करते हैं। ये कविताएँ सहज प्रेम, बेबाक सौंदर्य तथा इन्द्रियानुभूति की अभिव्यक्ति तो करती ही हैं, साथ ही कवि ने प्रेम वर्णन में समूचे सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवेश को मिलाकर कविता को एक ऐतिहासिक और नई जीवंतता प्रदान की है।

सन्दर्भ

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, 'चिंतामणि- भाग 1', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ठ 232
2. मदन कश्यप, 'पनसोखा है इन्द्रधनुष', सेतु प्रकाशन, नई दिल्ली 2019, पृष्ठ 9
3. डॉ. एलाङ्ङ्खम विजयलक्ष्मी, 'समकालीन हिन्दी उपन्यास: नर-नारी सम्बन्धों का समीकरण', राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृष्ठ 87
4. मदन कश्यप, 'पनसोखा है इन्द्रधनुष', सेतु प्रकाशन, नई दिल्ली 2019, पृष्ठ 54
5. वही पृष्ठ. 22
6. वही पृष्ठ. 24
7. वही पृष्ठ. 27
8. वही पृष्ठ. 68
9. First International Conference of the South Asian Society of Criminology and Victimology (SASCV). Conference Proceedings. Jaipur, Rajasthan, 15–17 January 2011, p. 214
10. मदन कश्यप, 'पनसोखा है इन्द्रधनुष', सेतु प्रकाशन, नई दिल्ली 2019, पृष्ठ 74

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 77-79
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

यात्रा-साहित्य और जनपदीयता का अंतर्संबंध

अमित कुमार यादव
शोधार्थी,
काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी -221005

शोधसार :- यात्रा-साहित्य व जनपदीयता परस्पर से जुड़ी हुई अवधारणाएं हैं। यात्रा-साहित्य के लेखन मे जनपद तथा वहां की भौगोलिक व सांस्कृतिक पहचान का वर्णन समाहित रहता है। किसी स्थान विशेष की समुचित जानकारी प्राप्त करने हेतु दोनों अवधारणाओं की जरूरत होती है। जहां जनपदीयता स्थान विशेष की आंतरिक अंतर्वस्तु को दिखाती है, वहीं यात्रा-साहित्य वहां की बाह्य अंतर्वस्तु को; अर्थात् यात्रा-साहित्य में जीवंतता जनपदीयता के माध्यम से ही आती है।

मुख्य शब्द :- यात्रा-साहित्य, जनपदीयता,भूमि, जन, संस्कृति, भाषाई विविधता।

आलेख :- यात्राएँ मनुष्य को चेतनाशील और जीवन जीने के अनुकूल बनाती हैं तथा उसका साहित्य पीढीगत अनुभव प्रदान करता है। यात्रा-साहित्य में जब कोई यात्री किसी स्थान पर जाता है और वहाँ की संस्कृति व परिस्थिति को लेखबद्ध करता है तो इससे निर्मित साहित्य यात्रा-साहित्य कहलाता है। यात्रा-वृत्तांत में यात्रा का उद्देश्यपूर्ण होना प्रमुख शर्त है। "यात्रावृत्त अथवा यात्रावृत्तांत का तात्पर्य है किसी देश, प्रदेश, भूभाग अथवा स्थान आदि की की गयी यात्रा का वृत्तांत।"[1]

यात्रा-वृत्तांत में वस्तुपरकता ज्यादा होती है जिसके कारण सही और सटीक जानकारी आसानी से प्राप्त होती है। इससे साहित्य प्रमाणिक और संवेदनशील बना रहता है। यात्रा-साहित्य का रचनाकार सिर्फ मनोरंजन की दृष्टि से यात्रा नहीं करता है अपितु वह सम्बन्धित स्थल की सांस्कृतिक व भौगोलिक पहचान भी करवाता है। "साहित्यिक मनोवृत्ति के घुमक्कड़ को प्रकृति, स्थान, समाज, संस्कृति और इतिहास का अद्भुत आकर्षण अपनी ओर खींचता है। वह इन सब के वशीभूत हुआ-सा यात्रा पर चल पड़ता है। अन्य पर्यटक जहां से देखते हुए भी आंखे बंद करके चलते हैं, प्रकृति और उसके समूचे सौन्दर्य की पुकार को सुनकर भी अनसुना कर देते हैं। वहां साहित्यिक यायावरण मुक्त मनोवृत्ति के साथ रमा हुआ घूमता है। उसकी यात्रा स्वतः पूर्ण होती है।"[2] यात्राकार की इस प्रवृत्ति से साहित्य-अध्येताओं को नई-नई संस्कृतियों तथा अपने देश के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है। यात्रा साहित्य के लेखन में देश, काल व वातावरण का विशेष ध्यान रखा जाता है। इससे विमुख होकर साहित्य रचने से उसके कथावस्तु व उद्देश्य दोनों से विचलन हो जाता है। जिसका परिणाम साहित्य के मुख्य मर्म की समाप्ति के रूप में होता है।

जनपदीयता एक ऐसी अवधारणा है जो प्राचीनता और नवीनता दोनों को अपने अंदर समाहित किए हुए है। इसके अन्तर्गत मुख्यतः तीन तत्व शामिल हैं- भूमि, भूमि पर रहने वाले लोग तथा उनकी संस्कृति। वासुदेव शरण अग्रवाल लिखते हैं- "जनपदीय अध्ययन के तीन मुख्य द्वार हैं - पहला- भूमि व भूमि से सम्बन्धित वस्तुओं का अध्ययन। दूसरा- भूमि पर बसने वाले जन का अध्ययन। तीसरा- जन की संस्कृति या जीवन का अध्ययन। भूमि, जन और संस्कृति रूपी त्रिकोण के भीतर सारा जीवन समाचा हुआ है।"[3]

जनपदीयता के अंतर्गत ही जनपद व जनपदीय संस्कृति समाहित है। इसमें जहाँ एक तरफ भौगोलिक संरचना का अध्ययन किया जाता हैं वहीं दूसरी तरफ उस जनपद की सभ्यता, आचरण, बोली, खान-पान, रीति-रिवाज, त्यौहार, परम्परा, जीवन-शैली आदि का भी अध्ययन किया जाता है। चूंकि जनपदीय अध्ययन में आंचलिकता का महत्वपूर्ण योगदान होता है, इसलिए अंचल की भाषा, गीत, नाट्य रूप, संस्कृति आदि को इसमे समाहित किया जाता है। साहित्य में जनपदीय चिंतन का वर्णन काव्य और गद्य दोनो में हुआ है। नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु, केदारनाथ सिंह जैसे रचनाकारों ने इसे बखूबी वर्णित किया है। लेकिन 'अन्य गद्य विधा' में यात्रा-साहित्य ही ऐसी विधा है जो वस्तुनिष्ठ रूप से जनपद और उसकी संस्कृति को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करती है।

यात्रा-साहित्य और जनपदीयता में अंतर्संबंध उनके साहित्यिक रूपांतरण में दिखता है। जनपदीयता के सभी तत्व यात्रा-वृत्तांत में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं। किसी यात्रा-वृत्तांत की पूर्णता उसके बाह्य और आंतरिक भावों के सम्मिश्रण से ही होता है। बाह्य अंतर्वस्तु के तहत यात्री उस अंचल के बारे में ऊपर-ऊपर जानकारी प्रदान करता है, लेकिन उस स्थल के बारे में सम्पूर्णता से जानकारी प्राप्त करने के लिए उसके आंतरिक अंतर्वस्तु को जानना जरूरी होता है। अतः इस आंतरिक अंतर्वस्तु की जानकारी जनपदीय अध्ययन से ही होता है। यात्राकार के बाह्य भावों के प्रदर्शन में जब वहाँ के जन व संस्कृति का अपनत्व जुड़ता है तो एक संवेदनशील यात्रा-साहित्य का निर्माण होता है। अनिल यादव ने अपनी पुस्तक 'वह भी कोई देश है महराज' में पूर्वोत्तर की भौगोलिक संरचना के साथ-साथ वहाँ की जनपदीय चेतना से भी जुड़ाव प्रस्तुत किया है। "यहाँ की भूमि जितनी हरी है, लोगों की आँखें उतनी ही उदास हैं; फिर भी वे हँसते हैं, जैसे हर दिन जीवन के पक्ष में एक छोटी जीत हो।"[4] इससे उनकी कृति पूर्वोत्तर की जीवंत जनपदीय दस्तावेज बनकर उभरी है, जो बताती है कि जनपदीय अध्ययन का सबसे सटीक विश्लेषण साहित्य में यात्रा-साहित्य के माध्यम से किया जा सकता है।

जनपदीय अध्ययन के अंर्तगत आने वाली भाषाई विविधता, लोक कला, बोली, मौखिक साहित्य आदि को यात्रा-साहित्य के माध्यम से आसानी से प्रस्तुत किया जा सकता है। यात्रा-वृत्तांत उन बोलियों के लिए प्राणवायु की तरह कार्य करता है जो विलुप्त होने के कगार पर खड़ी हैं। अत: यह ऐतिहासिक परम्पराओं व सभ्यताओं को समेकित करने का सफल प्रयास करती है। यात्रा-साहित्य में किसी संस्कृति को अभिव्यक्त करने के लिए वहाँ की बोली व शैली में रचना करना ज्यादा उपयुक्त होता है। इससे उस भाषा या बोली की समृद्धि के साथ-साथ मानक हिन्दी भाषा में भी विस्तार दिखता है। “जनपदीय अध्ययन का विद्यार्थी तीर्थ-यात्री की तरह देहात में चला जाता है, उसके लिए चारों ओर शब्द और अर्थ के भंडार खुले मिलते हैं। नए-नए शब्दों से वह अपनी झोली भरकर लौटता ै।"[5] इन शब्दभंडारों से बोलियों का कोश बढ़ता है। बोलियाँ सिर्फ भाषा को ही समृद्ध नहीं करती है बल्कि ये अलग पड़े समाज को भी अस्तित्व में लाती हैं। जब यात्रा-वृत्तांत में जन बोली का प्रयोग किया जाता है तो वहाँ के जन को मुख्य धारा के साहित्य से लगाव महसूस होता है। "लोक की भाषा के माध्यम से ही उसके सुख-दुःख, आशा-अभिलाषा आदि के बारे में जाना जा सकता है। लोक में प्रचलित कहावतों, लोकोक्तियों, लोक-गाथाओं, लोक कथाओं आदि को इसी लोक-बोली से जीवन मिलता है। लोक-बोली अपने विस्तृत लोक-समाज को अभिव्यक्ति

देती है और लोक-संस्कृति का अभिन्न उपादान है।"[6] इसीलिए जन की भाषा को मुख्य पटल पर लाने के लिए यात्रा-वृत्तांत एक सही विधा है।

जनपदीयता में भूगोल का भी अध्ययन होता है। यात्रा साहित्य की विशेषता होती है कि वह नए स्थान के भूभाग के साथ सांस्कृतिक साम्यता स्थापित करने की कोशिश करती है। यह साम्यता 'विविधता में एकता' के सूत्र-वाक्य को साकार करती है। यात्रा-साहित्य की पुस्तक प्रत्येक पाठक तक भौगोलिक लगाव प्रदर्शित करती है। कृष्णनाथ ने अपनी पुस्तक 'स्पीति में बारिश' में लाहुल और स्पीति के भूगोल व संस्कृति को एक साथ जीवनशैली से जोड़कर प्रस्तुत किया है।

हाशिए के समाज या आदिवासियों की स्थितियों के बारे में बताने के लिए यात्रावृत्तांत एक सहज विधा है। इसमें भौगोलिक, सामाजिक व सांस्कृतिक रूप से अलग हुए लोगों की प्रत्यक्ष प्रस्तुति की जाती है और उनके 'जल-जंगल-जमीन' जैसे मुद्दों को प्रमुखता से बताया जाता है। लीलाधर मंडलोई ने अपनी पुस्तक 'कालापानी' में और हरिराम मीणा ने अपनी पुस्तक 'आदिवासी लोक की यात्राएं' में इसी सामाजिक-सांस्कृतिक व भौगोलिक अलगाव को दिखाने का सफल प्रयास किया है।

निष्कर्ष :- यात्रा-साहित्य व जनपदीय अध्ययन का घनिष्ठ सम्बन्ध है। दोनों की तात्विक विशेषताओं का सफल निरूपण एक साथ ही सम्भव है। इसीलिए जब जन, भूभाग व संस्कृति को समाहित कर यात्रा-वृत्तांत को लिखा जाता है तो यह साहित्य की एक सजीव विधा बन जाती है। भौगोलिकता को सांस्कृतिक पहचान से जोड़कर साहित्य को संवेदनशील बनाने का कार्य यात्रा-साहित्य करता है। संचरणशील व सौन्दर्यबोध युक्त यात्रा-वृत्तांत जनपदीय अध्ययन के साथ ही उपयुक्त साबित होता है।

सन्दर्भ

1. हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल (नव्यतर गद्य विधाएं),प्रो. हरिमोहन,हरियाणा साहित्य अकादमी,पंचकूला,2008, पृ.सं., 140
2. वही, पृ.सं., 142
3. वासुदेव शरण अग्रवाल रचना-संचयन, कपिला वात्स्यायन (सं.), साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2024, पृ.सं.,449
4. वह भी कोई देश है महाराज', अनिल यादव, 2012, पृ. 64
5. वासुदेव शरण अग्रवाल रचना-संचयन, कपिला वात्स्यायन (सं.), साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2024, पृ.सं.,998
6. हिमाचल प्रदेश का लोक-जीवन, कुलदीप सिंह, पृ.सं. 71-72, परमेश्वरी प्रकाशन, 2008

Email- amitrsjnu@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 80-83
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

उपेन्द्रनाथ अश्क -हिन्दी नाटक के यथार्थवादी स्वर

Dr.Amalakumary.B
Assistant Professor in Hindi ,
SVR NSS College, Vazhoor.

हिन्दी में जयशंकर प्रसाद के स्वच्छन्दतावादी नाट्य परंपरा के विरोध में समस्या नाटकों का जन्म हुआ | नॉर्वे के हेनरिक इब्सन के 'प्रॉब्लेम प्लेस' के प्रभाव में हिन्दी के लक्ष्मी नारायण मिश्र ने समस्या नाटकों का उदघाटन किया | यथार्थवादी दृष्टिकोण से समस्याओं का विश्लेषण करके बुद्धिवादी समाधान प्रस्तुत करना समस्या नाटकों की विशेषता हैं | मिश्र ने प्रेम और विवाह , सह शिक्षा , अकेली नारी की कुंठा, पारिवारिक समस्याएं आदि को प्रधानता देकर 'संन्यासी , आधी रात , सिंदूर की होली आदि कई नाटकों की रचना की | मिश्र के बाद हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ समस्या नाटककार उपेन्द्रनाथ अश्क है |

अश्क का रचनाकाल भारतीय समाज का संक्रांतिकाल था | देश में क्रांतिकारी परिवर्तन के अनुकूल परिस्थितियां थी | भारतीय जनता पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण करते रहे थे , जनता बाह्याडम्बरों में पागल हो गई थी | पाश्चात्य जीवन व्यवस्था अपनाने की कोशिश में भारतीय समाज में विभिन्न प्रकार की विषमताएं उत्पन्न हुई और साथ साथ कई समस्याएं भी | नई बौद्धिकता से प्रभावित मध्यवर्गीय समाज की समस्याओं को अश्क ने प्रमुखता दी | इस पर प्रकाश डालते हुए नन्द दुलारे वजपेई लिखते थे " मध्यवर्गीय सामाजिक जीवन की जितनी अंदरूनी और याथातथ्य जानकारी अश्क की कृतियों में व्यक्त हुई है अन्यत्र नहीं मिलती |"1 अश्क के समस्या नाटक ये हैं ' कैद , अलग अलग रास्ते, स्वर्ग की झलक , उड़ान , आँजो दीदी , भंवर' आदि |

उपेन्द्रनाथ अश्क स्वतंत्रता पूर्व के पहले नाटककार है जिन्होंने हिन्दी नाटक को रोमांस के कतघरे से निकालकर आधुनिक भावबोध से जोड़ा है | आधुनिक शिक्षा के प्रभाव के कारण मध्यवर्गीय जीवन में व्याप्त वैवाहिक विषमताओं को और दाम्पत्य जीवन की घुटन और यौन कुंठाओं का मनोवैज्ञानिक धरातल पर उन्होंने विवेचन किया है | उनके कथानक का केंद्र हमेशा मध्यवर्गीय या अभिजात परिवार एवं समाज थे | प्रेम और विवाह की समस्याओं पर लिखे गए अश्क के दो नाटकों का अध्ययन यहां प्रस्तुत हैं |

कैद

विवाह और प्रेम की समस्या पर लिखा गया अश्क का नाटक है 'कैद' | मध्यवर्गीय समाज के कुरूप शिखंजों में जकड़ी हुई सब तरह से विवश निरुपाय और पराजिता नारी अपराजिता की कथा है 'कैद' | अपराजिता याने अप्पी एक ऐसी नारी है जो विवाह के पहले उन्मुक्त हवा सी उड़ा करती थी | हंसते हंसते लोट पोट हो जाती थी और उसके गालों के गुलाब हर घड़ी कहिले रहते थे | अपराजिता अपनी मौसी का देवर दिलीप से प्रेम करती थी |

अप्पी की माँ को भी यह रिश्ता पसंद था | किन्तु बेकार दिलीप के साथ अप्पी की शादी करना उसकी ज़िंदगी बर्बाद करने की तरह है , ऐसा कहकर उसके मौसा ने इसका विरोध किया और उनकी शादी नहीं हुई |

अप्पी की बहन दिप्पो मर गई | उसके बाद उसके पति प्राणनाथ की गृहस्थी संभालने केलिए अप्पी उसकी दूसरी पत्नी बन जाती है | इस तरह वह अपनी आत्मा का मंजिल और अपने सपनों की देवता दिलीप से सदा केलिए दूए हो जाती है| अप्पी को उस सामाजिक व्यवस्था के आगे घुटने टेक देना पड़ती है जिसमें आर्थिक कारणों से पुरुष की अधिकार भावना के आगे नारी को पराजित होना पड़ता है | प्राणनाथ के साथ अखनूर में आठ बरस से अप्पी जी रही है | पारिवारिक बंधनों और सामाजिक रूढ़ियों में आबद्ध अप्पी चट्टानों पर सिर पटकती हुई ,पछाड़ें खाती , चनाब की जलधारा की तरह टूट टूट कर बिखर रही है | पेट दर्द , कमर दर्द या सिर दर्द कोई न कोई दर्द उसे हमेशा सताता है | उसके इस रोग का उपचार करने में प्राणनाथ असमर्थ है | बच्चों का देखभाल भी अप्पी ठीक से नहीं करती |

अप्पी हमेशा ऐसा अनुभव करती है कि वह एक लंबी यात्रा तय करके आई है और थक गई है | उसने कभी एक फिल्म देखी थी 'किंग कौंग' जिसमें एक गुरिला एक सुंदर लड़की को उठाकर ले गया था | अप्पी समझती है कि अपने छत पर भी ऐसा एक किंग कौंग है जो उसे अपने घर से उठा लाया है | अप्पी कहती है " फिल्म के उस लड़की को बंदर ने छोड़ दिया था लेकिन अप्पी आज भी कैदी है , न टूटनेवाली बेड़ियां उसके पाँवों में बांधती चली गई है |"2

प्राणनाथ अप्पी से बेहद प्यार करता है | अप्पी की हालत देखकर वह दुखी भी है | उसके मन में ऐसा एक विचार है कि वह अप्पी से शादी न करता तो वह उसे हमेशा हंसमुख देख सकता था | इसका दोषी वह खुद मानता है | इस विवाह से उसे भी खुशी नहीं मिलती ,इस प्रकार पति -पत्नी दोनों दुखी हैं |एक दिन अप्पी के घर में दिलीप के आने की खबर पाकर अप्पी सहसा खुश हो जाती है | घर की सफाई करती है , बच्चों को साफ सुथरा किया जाती है , घर सजाती है , रसोई में उत्साह से काम करने लगती है और प्रकृति सौन्दर्य का आस्वादन करने लगती है | मगर दिलीप के साथियों के वजह से वह अप्पी के घर में ठहरन छोड़ देता है तो अप्पी फिर से मायूस होने लगती है | कैद में पड़ी हुई अप्पी अपनी किस्मत पर रोती है |

उपेन्द्रनाथ अश्क ने इस नाटक में एक ऐसी स्त्री को प्रस्तुत किया है जिसके साथ विवाह ने क्रूर व्यंग्य किया है | अप्पी अपने सपनों का संसार बनाकर दिलीप को अपने हृदय पर बिठाती थी | उन्होंने मिलकर अपना स्वर्ग बनाने का प्राण भी लिए | मगर अपने सपनों को साकार बनाना मध्यवर्गीय नारी के वश की बात नहीं | अप्पी इस विवशता को व्यक्त करती है " हम गरीबों का क्या है, माता पिता ने जहां बैठा दिया जा बैठी
|"3 अप्पी की भलाई चाहनेवाला मौसाजी सोचता था कि दिलीप की कोई नौकरी नहीं , उसके साथ अप्पी की ज़िंदगी बर्बाद हो जाएगी |

आर्थिक कारणों से अप्पी का प्रेम असफल रहा | इसलिए उसे ज़िंदगी के साथ समझौता करना पड़ती है | अपनी परिस्थिति से उसके मन में कोई विद्रोह नहीं होता |स्वछँद विहरण करनेवाले बंदरों को देखते व्यक्त कभी कभी अप्पी अपनी कैद की अनुभूति महसूस करती है | 'कभी ऐसा लगता है कि शरीर की समस्त सिराओं में कुछ सुलगने-सा लगा है |"4 किन्तु अप्पी पारिवारिक एवं सामाजिक बंधनों से आबद्ध है | उसको लगती है कि वह निर्जीव है | अप्पी की स्थिति में मनुष्य या तो दार्शनिक बन सकता है अथवा पत्थर | मगर अप्पी मानती है कि पत्थर सबसे बड़ा दार्शनिक है | अप्पी जानती है कि उसके जीवन का अंधकार उसकी इच्छाओं , अभिलाषाओं , आकांक्षाओं, सपनों और स्मृतियों को निगल जायगा ,और वह सिर्फ लाश की भांति पड़ी रह जाएगी |

अप्पी अपने ज़िंदगी के साथ समझौता करने की चेष्टा तो अवश्य करती है , मगर वह असफल रह जाती है | वह प्राणनाथ की पत्नी है लेकिन जीवन संगिनी नहीं बन सकती | वह प्राणनाथ से वास्तविक प्रेम नहीं नहीं कर पाती |

दिलीप उससे पूछता है " अप्पी तुम प्रसन्न नहीं हो" तो उसने जवाब दिया – दुनिया में कौन संतुष्ट है , यदि दिलीप संतुष्ट नहीं है तो अप्पी की प्रसन्नता का सवाल क्यों | अपने घुटन में रहनेवाली अप्पी अप्पी अपने पति की प्रिया नहीं हो पाती | अपने जीवन की असफलता से उत्पन्न सारा द्वेष प्राणनाथ के मासूम बच्चों पर बरसती है | अप्पी बच्चों को प्यार करने में असमर्थ रह जाती है |

दिलीप के क्षणिक संयोग से अप्पी बदल जाती है तो बच्चों को प्यार करने का मन भी लगती है | नाटककार संकेत करता है कि यदि अप्पी का जीवन संतुलित होता याने उसका दाम्पत्य जीवन सुखी होता तो वे बच्चे प्यार से वंचित न रहते | अप्पी जिस कुंठा लेकर जी रही है , उसमें पड़ी हुई नारी परिवार के प्रति अपना दायित्व निर्वाह नहीं कर सकती | यह वास्तव में शादी की असफलता है | अपने प्यार और सपनों से वंचित अप्पी केलिए शादी एक कैद ही है |

अलग अलग रास्ते

विवाह और प्रेम की समस्याओं को लेकर लिखा गया अश्क का दूसरा नाटक है 'अलग अलग रास्ते'| मध्यवर्गीय नारी की सामाजिक प्रतिष्ठा संबंधी प्रश्नों को इस नाटक में उठाया है | लड़कियों के संबंध में ऐसी मान्यता है कि वह परिवार या समाज के हितानुसार जिए और अपने स्वाधिकार का निर्वाह न करे | लेकिन आधुनिक शिक्षित नारी परिवार की मिथ्या प्रतिष्ठा केलिए अपनी बर्बादी नहीं करना चाहती | अपने अधिकारों की रक्षा करने केलिए वह विद्रोह करती है | अपनी ज़िंदगी खुद जीने की शक्ति और क्षमता आधुनिक नारी में है |

इस नाटक की रानी आधुनिक नारी की प्रतिनिधि है | धन लोभ के कारण अपना त्याग करनेवाला पति त्रिलोक को वह नहीं चाहती | कार और मकान देकर पति को वापस दिलाने का पिता ताराचंद के उपदेश का तिरस्कार करनेवाली रानी स्वाभिमानी नारी है | पतिव्रता धर्म पर रानी कहती है " आज धर्म अमानवीय बन गया है | धर्म के नाम पर पुरुष नारी को दासी बनाए हैं |"5

प्रगतिशील नारी रानी अपने व्यक्तित्व के प्रति सजग रहती है | वह पुरुष से समानाधिकार चाहती है और पति का प्रेम और आदर चाहती है | त्रिलोक ने उसका अपमान किया , कभी भी उसका नारीत्व का सम्मान नहीं किया | प्राचीन संस्कार नारी को अपने अधिकारों से वंचित करता है , इसलिए नारी को अपना हक मांगने केलिए संघर्ष करना पड़ता है | रानी उच्च शिक्षित नहीं है , उसको प्रेरणा देनेवाला उसका भाई पूरन है | पूरन अश्क के आदर्शों का प्रतिनिधि पात्र है | वह मानता है कि दाम्पत्य जीवन में आपसी सहयोग और समझौता प्रमुख हु | स्त्री पुरुष की दासी नहीं साथी है , साथ निबाहने की जिम्मेदारी दोनों पर है |

हमारा समाज मिथ्या गर्व और अहंकार में पड़कर खोखला होता जा रहा है | नाटक में रानी के पिता ताराचंद अपने ब्राह्मणत्व पर गर्व करता है | उसका कहाँ है पति के विरुद्ध सोचना चंडाल का कर्म है , ब्राह्मण का नहीं | तारचनन्द अपने बेटियों को उपदेश देता है कि पति का अनुसरण करना उनका धर्म है | रानी की बहन राज पिता के उपदेश पर जीनेवाली है | राज का पति मदन जो है माँ बाप की जबरदस्ती से विवश होकर अपनी प्रेमिका को त्यागकर राज से शादी करता है | किन्तु वह राज को प्यार दे नहीं सकता तो वह अपनी प्रेमिका के पास वापस जाना चाहता है | मगर राज अपने पति और ससुराल को छोड़कर नहीं जाना चाहती | पति की सेवा करना वह अपना अधिकार समझती है | अग्नि को साक्षी करके जो विवाह सम्पन्न हुआ है उसका तिरस्कार करने में वह असमार्थ है |

नारी के दो विभिन्न रूप यहां प्रस्तुत है | रानी अपने स्त्रीत्व का अपमान करनेवाले पति को छोड़कर लौट आना चाहती है तो राज अपमानित होकर भी पति की दूसरी शादी के बाद भी उसके साथ रहना चाहती है | माता -पिता संतानों के इच्छा के विरुद्ध आर्थिक एवं सामाजिक प्रतिष्ठा पर ध्यान देकर उनका वैवाहिक संबंध पर निर्णय लेते हैं | अपनी अभिलाषाओं से वंचित स्त्री और पुरुष अनमेल विवाह की विषमताएं झेलते हैं | पूरन कहता है " व्याह तो आजकल अंधेरे में तीर मारने के बराबर है | निशाने पर लग गया तो ठीक , हाथ से निकला तीर तो वापस आता नहीं |"6

पूरन मानता है कि यदि पत्नी के होते हुए भी पति दूसरा विवाह कर सकता है तो स्त्री भी दूसरी शादी कर सकती है | वह पिता से कहता है कि राज की दूसरी शादी हो सकती है | वह राज की समस्या का बुद्धिवादी समाधान प्रस्तुत करता है | राज और पिता इसके अनुकूल नहीं है | मगर रानी पूरन के आदर्शों को मानकर अपने पैरों पर खड़े रहना चाहती है | लोभी पति को त्याग देने में कोई गलती नहीं है , यही रानी का मत है | पिता और रानी के विचारों से मेल न खाने के कारण पूरन और रानी अलग रास्ता चुनकर घर से निकाल जाते हैं | राज और रानी विरोधी संस्कारों के प्रतिनिधि हैं , इसलिए उनके रास्ते अलग अलग जरूर है |

अश्क के इन नाटकों का अध्ययन करके हम एक बात जरूर समझ सकते हैं कि घरवालों के मिथ्याभिमान और हठ ही ज्यादातर समस्याओं का कारण बनते हैं | माता -पिता अपनी इच्छाओं की पूर्ति संतानों से करना चाहते हैं | बेटा हो या बेटी उनके सपनों की वे उपेक्षा करते हैं , अनमेल विवाह के शिकार बनकर संतान जीवन भर यातनाएं झेलते हैं | धन , परिवार की प्रतिष्ठा आदि के सामने प्रेम और स्वाभिमान का कोई मूल्य नहीं होते |

उपेन्द्रनाथ अश्क के सभी नाटक रंगमंचीय सफलता से युक्त हैं| उनकी संवाद रचना चुस्त एवं स्वाभाविक है , और भाषा प्रौढ़ और परिष्कृत है | अश्क ने हिन्दी नाटक और रंगमंच को यथार्थ के साथ जोड़ा | उनके नाटकों के कथानक संक्षिप्त एवं साधारण थे और उसके प्रेक्षक यथार्थवादी थे | मध्य वर्गीय समाज की समस्याओं को एकदम बुद्धिवादी समाधान प्रस्तुत करने में वे सफल हुए | शादी और प्रेम जैसे विषयों को चुनकर वे लोकप्रिय बन गए |

संदर्भ सूची

1. नया साहित्य नए प्रश्न – नन्द दुलारे वाजपेयी
2. कैद और उड़ान – उपेन्द्र नाथ अश्क ,पृ सं 64
3. वहीं , पृ सं 66
4. वहीं , पृ सं 75, 76
5. अलग अलग रास्ते , उपेन्द्रनाथ अश्क , पृ सं 49
6. वहीं , पृ सं 53

संदर्भ ग्रंथ

1. कैद और उड़ान , उपेन्द्रनाथ अश्क
2. अलग अलग रास्ते , उपेन्द्रनाथ अश्क
3. हिन्दी नाटक उत्भव और विकास , डॉ दशरथ ओझा
4. आधुनिक हिन्दी नाटक , गोविंद चातक
5. नाटककार अश्क , जगदीश चंद्र माथुर

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 84-89
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ : ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਯੋਗਦਾਨ

ਅਵਤਾਰ ਸਿੰਘ,
ਖੋਜਾਰਥੀ,
ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪਟਿਆਲਾ

ਧਰਮ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਦਾ ਆਪਸ ਵਿੱਚ ਡੂੰਘਾ ਸੰਬੰਧ ਹੈ। ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਨੂੰ ਸੰਸਾਰ ਦੇ ਧਰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਵਿਲੱਖਣ ਸਥਾਨ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੈ। ਹਰੇਕ ਧਰਮ ਜਾਂ ਕੌਮ ਵਿੱਚ ਸਮੇਂ-ਸਮੇਂ ਪਰਉਪਕਾਰੀ ਪੁਰਸ਼ ਜਨਮ ਲੈਂਦੇ ਹਨ। ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿਚ ਵੀ ਭਗਤ, ਸੇਵਕ, ਸੂਰਮੇ, ਸ਼ਹੀਦ ਅਤੇ ਵਿਦਵਾਨਾਂ ਦਾ ਜਨਮ ਹੋਇਆ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਧਰਮ ਅਤੇ ਸਦਾਚਾਰ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਲਈ ਆਪਾ ਕੁਰਬਾਨ ਕਰਕੇ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੀ ਸੇਵਾ ਵਿੱਚ ਅਹਿਮ ਯੋਗਦਾਨ ਪਾਇਆ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਦੀਆਂ ਪ੍ਰਤੱਖ ਮਿਸਾਲਾਂ ਸਾਡੇ ਸਾਹਮਣੇ ਮੌਜੂਦ ਹਨ। ਅਜਿਹੀ ਹੀ ਇਕ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਹੈ, ਆਪ ਨੇ ਆਪਣਾ ਸਮੁੱਚਾ ਜੀਵਨ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਸਮਰਪਿਤ ਕੀਤਾ। ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚਲੇ ਸੇਵਾ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨੂੰ ਵਿਹਾਰਿਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਕਮਾ ਕੇ ਦਿਖਾਇਆ ਅਤੇ ਮਜ਼ਹਬ ਦੇ ਬੰਧਨ, ਜਾਤ-ਪਾਤ ਤੇ ਰੰਗ-ਨਸਲ ਦੇ ਭੇਦ-ਭਾਵ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਉੱਠ ਕੇ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੀ ਸੇਵਾ ਕੀਤੀ। ਇਹਨਾਂ ਦੀ ਸਿੱਖ ਸਾਹਿਤ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਵੱਡੀ ਦੇਣ ਹੈ। 21ਵੀਂ ਸਦੀ ਕੰਪਿਊਟਰ ਯੁੱਗ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਇਸ ਤਕਨੀਕ ਰਾਹੀਂ 'ਮਲਟੀਮੀਡੀਆ ਇਨਸਾਈਕਲੋਪੀਡੀਆ ਆਫ਼ ਸਿੱਖਇਜ਼ਮ'[1] ਤਿਆਰ ਕਰਕੇ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿੱਚ ਆਪਣਾ ਵਿਲੱਖਣ ਸਥਾਨ ਬਣਾਇਆ। ਕੈਨੇਡਾ ਦੇ ਵਸਨੀਕ ਹੋਣ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਵੀ ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਵਿਭਿੰਨ ਦੇਸ਼ਾਂ ਵਿਚ ਜਾ ਕੇ ਨਸ਼ੇ, ਵਿਭਚਾਰ, ਏਡਜ਼, ਭਰੂਣ-ਹੱਤਿਆ, ਔਰਤਾਂ 'ਤੇ ਹੁੰਦੇ ਅੱਤਿਆਚਾਰਾਂ ਆਦਿ ਤੋਂ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕੀਤਾ। ਆਪ ਕੋਸ਼ਕਾਰ, ਅਜਾਇਬ ਘਰ ਰਚੇਤਾ, ਸਮਾਜ-ਸੇਵੀ, ਖ਼ੋਜੀ, ਲੇਖਕ, ਵਕਤਾ, ਪ੍ਰੋਡਿਊਸਰ, ਨਿਸ਼ਾਨੇ-ਏ-ਸਿੱਖੀ[2] ਅਤੇ ਹੋਰ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀਆਂ ਸੰਸਥਾਵਾਂ ਦੇ ਸਲਾਹਕਾਰ ਸਨ।

ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਪਰਿਵਾਰ

ਨਾਨਕਾ ਪਿੰਡ ਜ਼ਿਲ੍ਹਾ ਹੁਸ਼ਿਆਰਪੁਰ ਵਿਚ ਪੈਂਦੇ ਡਗਾਣਾਂ ਕਲਾਂ ਵਿਖੇ 15 ਫਰਵਰੀ 1936[3] ਨੂੰ ਇਹਨਾਂ ਦਾ ਜਨਮ ਮਾਤਾ ਪ੍ਰੀਤਮ ਕੌਰ ਅਤੇ ਸ. ਨਗਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਦੇ ਘਰ ਹੋਇਆ। ਪਿੰਡ ਮਾਣਕਢੇਰੀ (ਜਲੰਧਰ ਤੋਂ ਪਠਾਨਕੋਟ ਜਾਂਦਿਆਂ, ਨੇੜੇ ਭੋਗਪੁਰ), ਜ਼ਿਲ੍ਹਾ ਹੁਸ਼ਿਆਰਪੁਰ ਇਹਨਾਂ ਦਾ ਜੱਦੀ ਪਿੰਡ ਸੀ। ਸਿੱਖੀ ਨੂੰ ਪਿਆਰ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਮਾਤਾ ਪ੍ਰੀਤਮ ਕੌਰ ਜੀ ਨੇ ਸਿੱਖਿਆ ਦਿੱਤੀ ਕਿ 'ਤੇਰੇ ਉੱਪਰ ਆਪਣੀ ਕੌਮ ਦੇ ਸ਼ਹੀਦਾਂ ਦਾ ਕਰਜ਼ ਹੈ'। ਮਾਤਾ ਜੀ ਦੀ ਇਸ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਨੂੰ ਸਦੀਵੀ ਤੌਰ 'ਤੇ ਧਾਰਨ ਕਰਕੇ ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਸਿੱਖ ਪੰਥ ਦੀ ਚੜ੍ਹਦੀ ਕਲਾ ਲਈ ਕਾਰਜ ਕੀਤੇ। ਇਕ ਬੇਹੱਦ ਸਧਾਰਨ ਪਰਿਵਾਰ ਵਿਚੋਂ ਉੱਠ ਕੇ ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਦਾ ਕੌਮਾਂਤਰੀ ਪੱਧਰ 'ਤੇ ਅਕਾਦਮਿਕ ਖੇਤਰ 'ਚ ਨਾਂ ਰੋਸ਼ਨ ਕਰਨ ਵਿੱਚ ਵੱਡੀ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਈ।

ਵਿੱਦਿਆ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਅਤੇ ਕਿੱਤਾ

ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਨੂੰ ਮੁਢਲੇ ਜੀਵਨ ਸਮੇਂ ਕਾਫੀ ਜੱਦੋ-ਜਹਿਦ ਕਰਨੀ ਪਈ। ਆਪ ਨੇ ਅਕਾਦਮਿਕ ਵਿੱਦਿਆ ਨੂੰ ਬਚਪਨ 'ਚ ਸਕੂਲੀ ਜੀਵਨ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਬੁਢੇਪੇ ਤੱਕ ਜਾਰੀ ਰੱਖਿਆ। ਅੱਤ ਦੀ ਗ਼ਰੀਬੀ ਵਿਚ ਰਹਿ ਕੇ ਪਿੰਡ ਮਾਣਕਢੇਰੀ ਦੇ ਪ੍ਰਾਇਮਰੀ ਸਕੂਲ ਤੋਂ ਮੁੱਢਲੀ ਵਿੱਦਿਆ ਆਰੰਭ ਕੀਤੀ। ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਮੈਟ੍ਰਿਕ ਖ਼ਾਲਸਾ ਸਕੂਲ ਪੱਜੋਦਿਉਤਾ ਸੂਸ ਤੋਂ ਪਾਸ ਕੀਤੀ ਅਤੇ ਆਰਥਿਕ ਤੰਗੀ ਕਰਕੇ ਘਰਦਿਆਂ ਨੇ ਪੜ੍ਹਾਈ ਛੁਡਵਾ ਦਿੱਤੀ। ਪਰ ਵਿੱਦਿਆ ਨਾਲ ਸਨੇਹ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਇਕ ਸਰਕਾਰੀ ਕਾਲਜ ਦੇ ਪ੍ਰਿੰਸੀਪਲ ਦੀ ਮਾਇਕ ਸਹਾਇਤਾ ਨਾਲ ਸਰਕਾਰੀ ਕਾਲਜ ਟਾਂਡਾ ਉੜਮੁੜ ਤੋਂ 1954 'ਚ ਐਫ.ਏ. ਕੀਤੀ। ਫਿਰ ਘਰ ਦੇ ਹਾਲਾਤਾਂ ਨੂੰ ਦੇਖਦਿਆਂ ਆਪ ਖ਼ਾਲਸਾ ਸਕੂਲ ਪੱਜੋਦਿਉਤਾ ਵਿਚ ਅਧਿਆਪਕ ਲੱਗ ਗਏ। 1957 ਵਿਚ ਆਪ ਰੇਲਵੇ ਵਿਭਾਗ ਵਿਚ ਕਲਰਕ ਭਰਤੀ ਹੋ ਕੇ ਨੌਕਰੀ ਕਰਨ ਲੱਗੇ। ਇਸ ਸਮੇਂ ਦੌਰਾਨ ਆਪ ਨੇ ਪੰਜਾਬ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ ਤੋਂ ਬੀ.ਏ.ਆਨਰਜ਼ (ਪੰਜਾਬੀ), ਐਮ.ਏ. ਇਤਿਹਾਸ ਅਤੇ ਨੌਕਰੀ ਤੋਂ ਇਕ ਸਾਲ ਛੁੱਟੀ ਲੈ ਕੇ 1970 ਵਿੱਚ ਬੀ.ਐੱਡ ਦੀ ਡਿਗਰੀ ਹਾਸਿਲ ਕੀਤੀ। ਸੰਨ 1971 ਵਿੱਚ ਐਕਸਾਈਜ਼ ਵਿਭਾਗ ਵਿੱਚ ਇੰਸਪੈਕਟਰ ਭਰਤੀ ਹੋ ਕੇ 23-24 ਸਾਲ ਨੌਕਰੀ ਕੀਤੀ। ਪੜ੍ਹਾਈ ਦਾ ਖਹਿੜਾ ਫਿਰ ਵੀ ਆਪ ਨੇ ਨਾ ਛੱਡਿਆ ਤੇ ਇਸ ਨੌਕਰੀ ਦੌਰਾਨ ਵੀ ਡਿਊਟੀ ਤੋਂ ਵਿਹਲੇ ਹੋ ਕੇ ਸ਼ਾਮ ਨੂੰ ਕਾਨੂੰਨ ਦੀ ਪੜ੍ਹਾਈ ਦੇ ਮਾਹਿਰ ਬਣਨ ਲਈ ਕਲਾਸਾਂ ਲਗਵਾਉਣ ਲੱਗੇ। ਰੱਬ ਦੀ ਮੇਹਰ ਤੇ ਆਪਣੀ ਸਖ਼ਤ ਮਿਹਨਤ ਸਦਕਾ ਇਹਨਾਂ ਨੇ 1982 ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਤੋਂ ਐਲ.ਐਲ.ਬੀ. ਦੀ ਡਿਗਰੀ ਹਾਸਿਲ ਕਰ ਲਈ।

ਪੰਜਾਬ ਤੋਂ ਕੈਨੇਡਾ

ਸੰਨ 1990 ਵਿੱਚ ਇਹ ਆਪਣੇ ਪਰਿਵਾਰ ਸਮੇਤ ਕੈਨੇਡਾ ਚਲੇ ਗਏ। ਵਿੱਦਿਆ ਦੀ ਲਗਨ ਮਨ ਵਿੱਚ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਸੁਚਾਰੂ ਬਣਾਉਣ ਸੰਬੰਧੀ ਇੱਥੇ ਵੀ ਇਹਨਾਂ ਨੇ 5 ਸਾਲ ਲਗਾਤਾਰ ਅਲੱਗ-ਅਲੱਗ ਵਿਸ਼ਿਆਂ 'ਤੇ ਕੋਰਸ ਕੀਤੇ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿਸ਼ਿਆਂ ਵਿਚ ਮੁਹਾਰਤ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰ ਕੇ ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਸਮਾਜ ਦੀ ਨਿਸ਼ਕਾਮ ਭਾਵਨਾ ਨਾਲ ਸੇਵਾ ਕੀਤੀ। ਸਮਾਜਿਕ ਵਿਸ਼ਿਆਂ ਦੇ ਅਧਿਐਨ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਧਰਮ ਦੀ ਪੜ੍ਹਾਈ ਨੂੰ ਵੀ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਦਾ ਆਧਾਰ ਬਣਾਇਆ। ਇਸੇ ਨੂੰ ਮੁੱਖ ਰੱਖਦਿਆਂ ਲਗਭਗ 67 ਸਾਲ ਦੀ ਉਮਰ 'ਚ ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਧਰਮ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰ ਨਾਲ

ਸੰਬੰਧਿਤ ਰਦਰਫੋਰਡ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਤੋਂ ਡਾ.ਨੋਇਲ ਕਿਊ ਕਿੰਗ[4] ਦੀ ਅਗਵਾਈ ਹੇਠ ਪੀ ਐੱਚ. ਡੀ.[5] ਦੀ ਡਿਗਰੀ ਹਾਸਿਲ ਕੀਤੀ।

ਸਿੱਖ ਸਾਹਿਤ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਦੇਣ

ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਦੇ ਜੀਵਨ ਦੇ ਮੁੱਢਲੇ ਦੌਰ ਵਿਚ ਮਾਂ ਦੁਆਰਾ ਦਿੱਤੀਆਂ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੀਆਂ ਜਿਹੜੀਆਂ ਸਿੱਖਿਆਵਾਂ ਦਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਪਿਆ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇਹਨਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਦੀ ਦਿਸ਼ਾ ਨਿਰਧਾਰਿਤ ਕਰਨੀ ਸ਼ੁਰੂ ਕਰ ਦਿੱਤੀ। ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਕੋਲੋਂ ਖ਼ਰਚ ਕਰਕੇ ਡੇਢ ਦਹਾਕਾ ਲਗਾ ਕੇ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਲਈ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾ ਕੰਪਿਊਟਰ ਤਕਨੀਕ ਰਾਹੀਂ 'ਮਲਟੀਮੀਡੀਆ ਇਨਸਾਈਕਲੋਪੀਡੀਆ ਆਫ਼ ਸਿੱਖਇਜ਼ਮ' ਤਿਆਰ ਕੀਤਾ। ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਨੂੰ ਦੂਸਰੇ ਧਰਮਾਂ ਦੇ ਲੋਕ ਵੀ ਜਾਣ ਸਕਣ ਇਸ ਲਈ ਮਲਟੀਮੀਡੀਆ ਤਕਨੀਕ ਰਾਹੀਂ ਸੱਤ (ਸੱਤਵਾਂ ਅਕਾਲ ਚਲਾਣੇ ਤੋਂ ਬਾਅਦ) ਵੱਖ-ਵੱਖ ਜਗ੍ਹਾ ਅਜਾਇਬ ਘਰ ਤਿਆਰ ਕਰਵਾਏ। ਅੱਠ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦੀ ਚਰਨਛੋਹ ਪ੍ਰਾਪਤ ਖਡੂਰ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਧਰਤੀ 'ਤੇ ਅੱਠ ਮੰਜ਼ਿਲਾਂ ਇਮਾਰਤ 'ਨਿਸ਼ਾਨੇ-ਏ-ਸਿੱਖੀ' ਨੂੰ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰਨ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਈ। ਖਡੂਰ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਧਰਤੀ 'ਤੇ ਗੁਰੂ ਅੰਗਦ ਸਾਹਿਬ ਦੇ 500 ਸਾਲਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਪੁਰਬ ਨੂੰ ਅੰਤਰਰਾਸ਼ਟਰੀ ਪੱਧਰ 'ਤੇ ਮਨਾਉਣ ਵਿੱਚ ਅਹਿਮ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਈ। ਕਾਨੂੰਨ ਦੇ ਮਾਹਿਰ ਹੋਣ ਨਾਤੇ ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਲਈ ਕਾਨੂੰਨੀ ਪੱਧਰ 'ਤੇ ਵਿਭਿੰਨ ਸੇਵਾਵਾਂ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤੀਆਂ। ਕਿਤਾਬਾਂ, ਅਖ਼ਬਾਰਾਂ ਦੀਆਂ ਲਿਖਤਾਂ ਅਤੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਗੁਰਦੁਆਰਿਆਂ, ਸਕੂਲਾਂ, ਕਾਲਜਾਂ, ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀਆਂ ਵਿਖੇ ਸੈਮੀਨਾਰਾਂ ਅਤੇ ਵਰਕਸ਼ਾਪਾਂ ਆਦਿ ਰਾਹੀਂ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਧਰਮ ਦੀਆਂ ਨੈਤਿਕ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਨਾਲ ਜੋੜਨ ਦਾ ਯਤਨ ਕੀਤਾ। ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਨੂੰ ਅਨੇਕਾਂ ਸਨਮਾਨ ਸਿੱਖ ਸੰਸਥਾਵਾਂ ਵੱਲੋਂ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤੇ ਗਏ।

2013 ਅਤੇ 2014 ਵਿੱਚ ਦੁਨੀਆ ਦੀਆਂ 100[6] ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਧ ਪ੍ਰਭਾਵਸ਼ਾਲੀ ਸਿੱਖ ਹਸਤੀਆਂ ਦੀ ਸੂਚੀ ਵਿਚ ਇਹਨਾਂ ਦਾ ਨਾਂ ਸ਼ਾਮਿਲ ਰਹਿ ਚੁੱਕਾ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਸ਼੍ਰੋਮਣੀ ਗੁਰਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਬੰਧਕ ਕਮੇਟੀ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਵੱਲੋਂ ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਦੇ ਜੀਵਨ ਭਰ ਦੇ ਕਾਰਜਾਂ ਨੂੰ ਮੁੱਖ ਰੱਖਦਿਆਂ 24 ਅਗਸਤ 2018[7] ਵਿੱਚ ਇਹਨਾਂ ਦੀ ਤਸਵੀਰ ਕੇਂਦਰੀ ਸਿੱਖ ਅਜਾਇਬ ਘਰ 'ਚ ਲਗਾਈ ਗਈ। ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਦੇ ਮੁੱਖ ਕਾਰਜ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਹਨ:

ਮਲਟੀਮੀਡੀਆ ਇਨਸਾਈਕਲੋਪੀਡੀਆ ਆਫ਼ ਸਿੱਖਇਜ਼ਮ

ਸਿੱਖੀ ਨੂੰ ਸਮਰਪਿਤ ਹੋ ਕੇ ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਨੇ ਕਿਤਾਬ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਇਨਸਾਈਕਲੋਪੀਡੀਆ ਲਿਖਣਾ ਸ਼ੁਰੂ ਕੀਤਾ, ਤਾਂ ਕਿ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦੁਆਰਾ ਸਥਾਪਿਤ ਕੀਤੇ ਸਿੱਖ ਫ਼ਲਸਫ਼ੇ ਤੇ ਸਿਧਾਂਤਾਂ ਦੀ ਜਾਣਕਾਰੀ ਆਉਣ ਵਾਲੀਆਂ ਪੀੜ੍ਹੀਆਂ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਾਈ ਜਾ ਸਕੇ। ਕਿਸੇ ਕੋਸ਼ ਨੂੰ ਲਿਖਣਾ ਆਪਣੇ-ਆਪ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਵੱਡਾ ਕੰਮ ਹੈ। ਇਸ ਉੱਪਰ ਡਾ. ਬੈਂਸ ਨੇ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਦਾ ਕੀਮਤੀ ਸਮਾਂ ਲਗਾਇਆ। ਕੈਨੇਡਾ ਵਿੱਚ ਕਿਸੇ ਪਰਿਵਾਰਕ ਪਾਰਟੀ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਗੋਰੇ ਵੱਲੋਂ ਇਹਨਾਂ ਨੂੰ ਪੁੱਛਿਆ ਕਿ ਤੁਸੀਂ ਕੰਮ ਕੀ ਕਰਦੇ ਹੋ? ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਦੱਸਿਆ ਕਿ ਮੈਂ ਇੱਕ ਕੋਸ਼ ਲਿਖ ਰਿਹਾ ਹਾਂ। ਉਸ ਗੋਰੇ ਨੇ ਵਿਅੰਗਾਤਮਿਕ ਤਰੀਕੇ ਨਾਲ ਕਿਹਾ ਕਿ 'ਕੋਸ਼ ਦਰੱਖਤਾਂ ਨੂੰ ਨਹੀਂ ਲੱਗਦੇ ਕੋਸ਼ ਖ਼ਤਮ ਹੋਣ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਤੁਸੀਂ ਖ਼ਤਮ ਹੋ ਜਾਵੋਗੇ।' ਉਸ ਗੋਰੇ ਨੇ ਕੋਸ਼ ਨੂੰ ਕੰਪਿਊਟਰ 'ਤੇ ਬਣਾਉਣ ਦੀ ਸਲਾਹ ਦਿੱਤੀ। ਉਸ ਨੇ ਆਪਣੇ ਕੋਲੋਂ ਡਾ. ਬੈਂਸ ਨੂੰ ਕੰਪਿਊਟਰ ਦਿੱਤਾ। ਉਸ ਦੀ ਸਲਾਹ ਮੰਨ ਕੇ ਮਲਟੀਮੀਡੀਆ ਦੀ ਤਕਨੀਕ ਸਿੱਖ ਕੇ ਆਪਣਾ ਕੀਮਤੀ ਸਰਮਾਇਆ ਖ਼ਰਚ ਕਰਕੇ ਲਗਭਗ ਡੇਢ ਦਹਾਕੇ ਦੀ ਸਖ਼ਤ ਮਿਹਨਤ ਸਦਕਾ ਇਹ 'ਮਲਟੀਮੀਡੀਆ ਇਨਸਾਈਕਲੋਪੀਡੀਆ ਆਫ਼

ਸਿੱਖਇਜ਼ਮ' ਤਿਆਰ ਕੀਤਾ। 1996 ਵਿਚ ਕੈਨੇਡਾ ਦੀ ਪਾਰਲੀਮੈਂਟ ਵਿੱਚ ਇਸ ਦਾ ਉਦਘਾਟਨ ਕੀਤਾ ਗਿਆ। ਸਿੱਖ ਜਗਤ ਦੇ ਅਕਾਦਮਿਕ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਇਹ ਵੱਡੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਸੀ। ਇਸ ਤਰੀਕੇ ਨਾਲ ਆਪ ਨੇ ਸਿੱਖ ਜਗਤ ਵਿੱਚ 'ਮਲਟੀਮੀਡੀਆ ਇਨਸਾਈਕਲੋਪੀਡੀਆ' ਦਾ ਮੁੱਢ ਬੰਨਿਆ। ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਦੁਆਰਾ ਤਿਆਰ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਕੋਸ਼ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ, ਪੰਜਾਬੀ ਤੇ ਹਿੰਦੀ ਵਿੱਚ ਹੈ। ਇਸ ਵਿੱਚ ਸਿੱਖ ਧਰਮ, ਗੁਰਬਾਣੀ, ਇਤਿਹਾਸ, ਸਭਿਆਚਾਰ ਅਤੇ ਵਿਰਸੇ ਬਾਰੇ ਜਾਣਕਾਰੀ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਹੈ। ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਸਮੇਤ 3600 ਵਿਸ਼ਿਆਂ 'ਤੇ ਜਾਣਕਾਰੀ ਇਸ ਇਨਸਾਈਕਲੋਪੀਡੀਆ ਵਿਚ ਮੌਜੂਦ ਹੈ। ਇਸ ਵਿੱਚ ਸਾਰਾ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਦਾ ਪਾਠ ਸੁਣਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਕੀਰਤਨ ਪ੍ਰੇਮੀ 31 ਰਾਗਾਂ ਵਿੱਚ ਆਡੀਓ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਕੀਰਤਨ ਸ਼੍ਰਵਣ ਕਰ ਸਕਦੇ ਹਨ। ਇਸ ਵਿਚ ਗੁਰਬਾਣੀ ਸਿਧਾਂਤ, ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸਿਕ, ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ, ਧਾਰਮਿਕ, ਅਧਿਆਤਮਿਕ, ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ ਅਤੇ ਵਿਹਾਰਕ ਪਹਿਲੂਆਂ ਨੂੰ ਸ਼ਾਮਲ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿਚ ਹੇਠਾਂ ਲਿਖੇ ਮੁੱਖ ਵਿਸ਼ਿਆਂ 'ਤੇ ਇੰਦਰਾਜ ਦਰਜ ਹਨ:-

ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਦਾ ਵਿਆਕਰਣ ਅਨੁਸਾਰ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਅਨੁਵਾਦ, ਗੁਰ-ਇਤਿਹਾਸ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਤੋਂ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਤੱਕ, ਬੰਦਾ ਸਿੰਘ ਬਹਾਦਰ, ਮਿਸਲਾਂ ਦਾ ਸਮਾਂ, ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦਾ ਸਮਾਂ, ਸਿੱਖ ਜ਼ਰਨੈਲਾਂ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ, ਐਨੀਮੇਸ਼ਨ ਤਕਨੀਕ ਰਾਹੀਂ ਸਿੱਖ ਘਟਨਾਵਾਂ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ, ਸ੍ਰੀ ਹਰਿਮੰਦਰ ਸਾਹਿਬ ਅਤੇ ਅਕਾਲ ਤਖ਼ਤ ਸਾਹਿਬ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ, ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਗੁਰਦੁਆਰਿਆਂ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਗ੍ਰਾਫਿਕਸ ਆਡੀਓ-ਵੀਡੀਓ ਨਾਲ, ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚਲੇ ਆਏ 31 ਰਾਗਾਂ ਵਿਚ ਸ਼ਬਦ ਕੀਰਤਨ, ਕਥਾ-ਕੀਰਤਨ, ਢਾਡੀ ਵਾਰਾਂ, ਸਿੱਖ ਸੰਕਲਪ ਅਤੇ ਫਿਲਾਸਫੀ ਹੋਰ ਲੇਖ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਵਿਸ਼ਵ ਸ਼ਾਂਤੀ ਲਈ ਸਿੱਖ ਸਿਧਾਂਤ, ਭਰਾਤਰੀਭਾਵ, ਸਰਬੱਤ ਦੇ ਭਲੇ, ਸਿੱਖ ਜੀਵਨ-ਜਾਂਚ, ਮਰਿਯਾਦਾ, ਸਿੱਖ ਨੈਤਕਿਤਾ, ਸਿੱਖ ਤਿਉਹਾਰ, ਸਿੱਖ ਸੰਸਥਾਵਾਂ, ਸਿੱਖ ਸਮਾਰੋਹ, ਸਿੱਖ ਮਾਨਸਿਕਤਾ, ਸਿੱਖ ਪਛਾਣ, ਸਿੱਖ ਵਿਰਾਸਤ, ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦਾ ਸਥਾਨ, ਅਜੋਕੇ ਸਿੱਖ ਪੰਥ ਦੇ ਹਾਲਾਤ, ਦੁਨੀਆਂ ਦੀਆਂ ਮਹਾਨ ਸਿੱਖ ਹਸਤੀਆਂ, ਸਿੱਖ ਨੌਜਵਾਨੀ ਨਸ਼ਿਆਂ ਦੇ ਸੰਦਰਭ ਆਦਿ ਮਹੱਤਵਪੂਰਣ ਵਿਸ਼ਿਆ 'ਤੇ ਇੰਦਰਾਜ ਦਰਜ ਹਨ।

ਮਲਟੀਮੀਡੀਆ ਅਜਾਇਬ ਘਰ

ਆਪ ਦੁਆਰਾ ਛੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਰਾਸ਼ਟਰੀ ਅਤੇ ਅੰਤਰਰਾਸ਼ਟਰੀ ਆਧੁਨਿਕ ਤਕਨੀਕ ਸਹਿਤ 'ਮਲਟੀਮੀਡੀਆ ਅਜਾਇਬ ਘਰ' ਸਥਾਪਿਤ ਕੀਤੇ ਗਏ। ਜਿਸ ਵਿੱਚ 400 ਘੰਟੇ ਤੋਂ ਵੱਧ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ, ਗੁਰਬਾਣੀ, ਸਭਿਆਚਾਰ ਅਤੇ ਵਿਰਸੇ ਸੰਬੰਧੀ ਸਮਗਰੀ ਉਪਲਬਧ ਹੈ। ਖਡੂਰ ਸਾਹਿਬ ਲੱਗੇ ਅਜਾਇਬ ਘਰ ਨੂੰ ਦੇਖ ਕੇ ਸਿੰਗਾਪੁਰ ਦੇ ਇਕ ਸਿੱਖ ਵਪਾਰੀ (ਠੁਕਰਾਲ ਪਰਿਵਾਰ) ਵੱਲੋਂ ਨਿਸ਼ਾਨੇ-ਏ-ਸਿੱਖੀ ਦੀ ਇਮਾਰਤ ਲਈ ਲਗਭਗ 2 ਕਰੋੜ ਰੁਪਏ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਪ੍ਰਚਾਰ-ਪ੍ਰਸਾਰ ਹਿੱਤ ਦਿੱਤੇ ਗਏ। ਇਹਨਾਂ ਛੇ ਸਥਾਨ 'ਤੇ ਇਹ ਮਲਟੀਮੀਡੀਆ ਅਜਾਇਬ ਘਰ ਤਿਆਰ ਕਰਾਏ ਗਏ ਹਨ:

1.ਖਡੂਰ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਜਾਬ,2004,
2.ਜਲੰਧਰ, ਪੰਜਾਬ,2008
3.ਮਿਸੀਗਾਗਾ, ਟੋਰਾਂਟੋ, ਕੈਨੇਡਾ 2010,
4.ਗਵਾਲੀਅਰ, ਮੱਧ ਪ੍ਰਦੇਸ਼,2010
5.ਸੁਲਤਾਨਪੁਰ ਲੋਧੀ, ਪੰਜਾਬ, 2012,
6. ਫਤਿਹਗੜ੍ਹ ਸਭਰਾ ,ਫ਼ਿਰੋਜਪੁਰ, ਪੰਜਾਬ 2015
7. ਗੁਰਦੁਆਰਾ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਰਬਾਰ ਦੁਬਈ 2018

ਸਮਾਜਿਕ ਯੋਗਦਾਨ

ਸਾਹਿਤਕ ਯੋਗਦਾਨ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਸਮਾਜਿਕ ਖੇਤਰ ਦੇ ਕਾਰਜਾਂ ਵਿਚ ਵੀ ਆਪ ਵੱਲੋਂ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਯੋਗਦਾਨ ਪਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਅਫ਼ਰੀਕਾ ਦੇ ਦੇਸ਼ਾਂ 'ਚ ਨਸ਼ਿਆਂ ਅਤੇ ਏਡਜ਼ ਵਰਗੀਆਂ ਬਿਮਾਰੀਆਂ ਤੇ ਅਧਿਐਨ ਕਰਨ ਗਏ ਤਾਂ ਨਸ਼ੇ, ਏਡਜ਼ , ਭਰੂਣ-ਹੱਤਿਆ, ਔਰਤਾਂ 'ਤੇ ਹੁੰਦੇ ਅੱਤਿਆਚਾਰਾਂ ਸੰਬੰਧੀ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਅੰਕੜੇ ਇਕੱਤਰ ਕੀਤੇ। ਮਜ਼ੂਬ ਦੀਆਂ ਦੀਵਾਰਾਂ ਨੂੰ ਤੋੜ ਕੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਦੇਸ਼ਾਂ ਦੇ ਸਕੂਲਾਂ, ਕਾਲਜਾਂ, ਹੋਰ ਵਿੱਦਿਅਕ ਅਦਾਰਿਆਂ, ਧਾਰਮਿਕ ਅਸਥਾਨਾਂ ਅਤੇ ਜੇਲ੍ਹਾਂ ਆਦਿ ਵਿੱਚ ਜਾ ਕੇ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਨੂੰ ਇਨ੍ਹਾਂ ਅਲਾਮਤਾਂ ਤੋਂ ਸੁਚੇਤ ਕੀਤਾ। ਹਜ਼ਾਰਾਂ ਨੌਜਵਾਨ ਲੜਕੇ-ਲੜਕੀਆਂ ਨੂੰ ਨਸ਼ੇ, ਵਿਭਚਾਰ ਵਰਗੀਆਂ ਬੁਰਾਈਆਂ ਤੋਂ ਬਚਾਇਆ। ਇਹਨਾਂ ਸਮਾਜਿਕ ਬੁਰਾਈਆਂ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਡਾ. ਬੈਂਸ ਅਖ਼ਬਾਰਾਂ, ਮੈਗਜ਼ੀਨਾਂ ਅਤੇ ਟੀ.ਵੀ. ਚੈਨਲਾਂ ਆਦਿ ਰਾਹੀਂ ਨਿਰੰਤਰ ਪ੍ਰਚਾਰ ਕਰਦੇ ਰਹਿੰਦੇ ਸਨ। ਯਾਦ ਫਾਊਂਡੇਸ਼ਨ ਦੀ ਇਸੇ ਕਾਰਜ ਲਈ ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਸਥਾਪਨਾ ਕੀਤੀ। ਇਸ ਖੇਤਰ ਵਿੱਚ ਕਈ ਸਾਲਾਂ ਦਾ ਤਜ਼ਰਬਾ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਇਹ ਅਲਾਮਤਾਂ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਦੇਸ਼ਾਂ ਵੱਲੋਂ ਜਿਵੇਂ ਕੈਨੇਡਾ, ਅਮਰੀਕਾ, ਭਾਰਤ ਆਦਿ ਵਿੱਚ ਚੱਲ ਰਹੀਆਂ ਮੁਹਿੰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਸਲਾਹਕਾਰ ਰਹੇ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਵਿਸ਼ਵ ਸ਼ਾਂਤੀ ਅਤੇ ਵਾਤਾਵਰਣ ਸੰਬੰਧੀ ਹੋਏ ਅਨੇਕਾਂ ਕਾਰਜਾਂ ਵਿਚ ਨਿਰੰਤਰ ਯਤਨਸ਼ੀਲ ਰਹੇ। ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਦੇ ਇਹਨਾਂ ਸਮਾਜਿਕ ਕਾਰਜਾਂ ਕਰਕੇ ਹੀ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਦੇਸ਼ਾਂ ਨੇ ਆਪ ਨੂੰ ਬਹੁਮੁੱਲੇ ਸਨਮਾਨਾਂ ਨਾਲ ਸਨਮਾਨਿਤ ਕੀਤਾ ਗਿਆ।

ਅਕਾਲ ਚਲਾਣਾ

ਕੁਦਰਤ ਦਾ ਅਟੱਲ ਨਿਯਮ ਹੈ ਕਿ ਜੋ ਜੀਵ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਉਸਨੂੰ ਆਪਣੀ ਸੰਸਾਰਿਕ ਯਾਤਰਾ ਪੂਰੀ ਕਰਕੇ ਇਸ ਜਗਤ ਵਿਚੋਂ ਰੁਕਸਤ ਵੀ ਹੋਣਾ ਪੈਂਦਾ ਹੈ ਪਰ ਕੁਝ ਲੋਕ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਖਾਸ ਕਾਰਜ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਜਿੰਨ੍ਹਾ ਦੀ ਦੇਣ ਉਨ੍ਹਾ ਨੂੰ ਯਾਦ ਕਰਨ ਲਈ ਬਾਰ-ਬਾਰ ਮਜਬੂਰ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ 3 ਨਵੰਬਰ 2016 ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਜਨਮ ਭੂਮੀ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਧਰਤੀ ਤੇ ਹਮੇਸ਼ਾ ਲਈ ਇਸ ਸੰਸਾਰ ਨੂੰ ਅਲਵਿਦਾ ਕਹਿ ਗਏ। ਇਹਨਾਂ ਦੀ ਆਤਮਿਕ ਸ਼ਾਤੀ ਲਈ ਰੱਖੇ ਗਏ ਪਾਠ ਦਾ ਭੋਗ 6 ਨਵੰਬਰ 2016[8] ਦਿਨ ਗੁਰਦੁਆਰਾ ਅਰਬਨ ਸਟੇਟ, ਵਿਖੇ ਪਿਆ। ਇਸ ਸ਼ਰਧਾਂਜਲੀ ਸਮਾਗਮ ਜਿਸ ਵਿਚ ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਲਈ ਫਖਰ ਵਾਲੀ ਗੱਲ ਹੈ ਕਿ ਕਨੇਡਾ ਦੇ ਪ੍ਰਧਾਨ ਮੰਤਰੀ ਜਸਟਿਨ ਟਰੂਡੋ ਵੱਲੋਂ ਅਤੇ ਕਨੇਡਾ ਸਰਕਾਰ ਦੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਉੱਚੇ ਆਹੁਦਿਆਂ 'ਤੇ ਬੈਠੇ ਨੁਮਾਇੰਦਿਆ ਵੱਲੋਂ ਸ਼ੋਕ ਸਮਾਚਾਰ ਭੇਜੇ ਗਏ। ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੀ ਸੰਸਥਾ, ਸ਼੍ਰੋਮਣੀ ਗੁਰਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਬੰਧਕ ਕਮੇਟੀ (ਸ੍ਰੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ), ਪਿੰਗਲਵਾੜਾ (ਸ੍ਰੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ) ਅਤੇ ਹੋਰ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਧਾਰਮਿਕ-ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਸ਼ਖਸੀਅਤਾਂ ਵੱਲੋਂ ਸ਼ਮੂਲੀਅਤ ਕੀਤੀ ਗਈ।

ਸਾਰੰਸ਼

ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਨੇ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਸਫਰ ਦੌਰਾਨ ਆਪ ਨੇ ਜੋ ਸਿਰੜ, ਮਿਹਨਤ ਅਤੇ ਆਪਣੀ ਮਾਂ ਦੀਆਂ ਸਿੱਖਿਆਵਾਂ 'ਤੇ ਚੱਲਦਿਆਂ ਸਮਾਜ ਅਤੇ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਲਈ ਜੋ ਕਾਰਜ ਕੀਤੇ। ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਉੱਪਰ ਇਹਨਾਂ ਦਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਪਿਆ। ਵਰਤਮਾਨ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਵੀ ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ ਦੇ ਕੀਤੇ ਕਾਰਜਾਂ ਤੋਂ ਸੇਧ ਲੈਣ ਦੀ ਜ਼ਰੂਰਤ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਕਾਲ ਦੌਰਾਨ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਪ੍ਰਚਾਰ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਪ੍ਰਤੀ ਜਾਗਰੂਕਤਾ ਪੈਦਾ

ਕਰਨ ਲਈ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਕਾਰਜ ਕੀਤੇ।ਵਰਤਮਾਨ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਸੰਸਾਰ ਇਹਨਾਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਨਾਲ ਜੂਝ ਰਿਹਾ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ

1. Bains, Raghbir Singh, Encyclopaedia of Sikhism, Macro Media Ltd, B.C., n.d. (CD).
2. www.nishan-e-sikhi.org
3. ਇੰਦਰਜੀਤ ਕੌਰ, 'ਇੱਕ ਸਿੱਖ ਦੇ ਜੀਵਨ ਦੀਆਂ ਵਿਲੱਖਣ ਪ੍ਰਾਪਤੀਆਂ ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ' , ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪਟਿਆਲਾ, 2010 ਐਮ.ਫਿਲ., ਥੀਸਸ (ਅਪ੍ਰਕਾਸ਼ਿਤ)
4. ਡਾ. ਨੋਇਲ ਕਿਊ ਕਿੰਗ ਦਾ ਜਨਮ 8 ਦਸੰਬਰ 1922 ਨੂੰ ਤਕਸ਼ਿਲਾ (ਪਾਕਿਸਤਾਨ) ਵਿਚ ਹੋਇਆ। ਡਾ. ਕਿੰਗ ਚੋਣਵੇਂ ਵਿਦਵਾਨਾਂ ਵਿਚੋਂ ਸਨ ਜਿੰਨ੍ਹਾ ਨੂੰ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਧਰਮਾਂ ਬਾਰੇ ਡੂੰਘੀ ਜਾਣਕਾਰੀ ਸੀ। ਜਾਣਕਾਰੀ ਸਰੋਤ www.nqking.wordpress.com
5. ਇੰਦਰਜੀਤ ਕੌਰ, 'ਇੱਕ ਸਿੱਖ ਦੇ ਜੀਵਨ ਦੀਆਂ ਵਿਲੱਖਣ ਪ੍ਰਾਪਤੀਆਂ ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ , ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪਟਿਆਲਾ, 2010 ਐਮ.ਫਿਲ., ਥੀਸਸ (ਅਪ੍ਰਕਾਸ਼ਿਤ)
6. www.thesikh100.com
7. ਅਜੀਤ (ਅਖਬਾਰ) -25 ਅਗਸਤ 2018; http://sgpc.net/ਕੇਂਦਰੀ-ਸਿੱਖ-ਅਜਾਇਬ -ਘਰ-ਵਿਖੇ-7/
8. ਪੰਜਾਬੀ ਟ੍ਰਿਬਿਊਨ - 4 ਨਵੰਬਰ 2016

avtarfgp87@gmail.com, 99144-33964

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 90-96
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारतीय ज्ञान परंपरा और मानव संसाधन प्रबंधन: एक वर्णनात्मक अध्ययन

प्रो. विरेंद्र मुवेल
सहायक प्राध्यापक,वाणिज्य,
वी.बी.के.एन. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा जिला बड़वानी(म. प्र.)

सार (Abstract)

भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की सबसे प्राचीन, समृद्ध एवं जीवनोपयोगी ज्ञान परंपराओं में से एक है। यह केवल आध्यात्मिक या धार्मिक चिंतन तक सीमित नहीं है, बल्कि शिक्षा, प्रशासन, नेतृत्व, नैतिकता, संगठन प्रबंधन, अर्थव्यवस्था तथा मानव संसाधन विकास जैसे क्षेत्रों में भी महत्वपूर्ण सिद्धांत प्रस्तुत करती है। मानव सभ्यता के क्रमिक विकास के साथ ही हमारे सांस्कृतिक धरोहर का भी विकास होता गया। जनसंख्या वृद्धि के साथ वस्तु विनिमय का स्थान मुद्रा विनिमय ने ले लिया। वस्तुओं का उत्पादन स्वयं के जीवन निर्वाह तक सीमित न होकर,अधिक उत्पादन का मुद्रा एवं धन अर्जित करना हो गया इस प्रकार व्यावसायिक संगठनों का क्रमिक विकास होने से बड़े व्यावसायिक संगठनों में उत्पाद के उत्पादन वितरण विपणन में मानवीय गतिविधियां बढ़ती गई। व्यावसायिक संगठनों में सुचारू रूप से व्यवसाय गतिविधियों को संचालन के लिए कर्मचारियों अधिकारियों की भर्ती नियुक्ति एवं प्रशिक्षण के लिए मानव संसाधन विभाग का सृजन हुआ। मानव संसाधन प्रबंधन (Human Resource Management-HRM) किसी भी संगठन की सफलता का प्रमुख आधार माना जाता है। इसका उद्देश्य योग्य मानव संसाधन की भर्ती, प्रशिक्षण, प्रेरणा, प्रदर्शन मूल्यांकन तथा संगठनात्मक विकास के माध्यम से संस्थान के लक्ष्यों को प्राप्त करना है। वर्तमान वैश्वीकरण, तकनीकी परिवर्तन एवं प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण में व्यावसायिक संगठनों के लिए केवल आर्थिक लाभ पर्याप्त नहीं है, बल्कि कर्मचारियों के समग्र विकास, नैतिक नेतृत्व, संगठनात्मक संस्कृति एवं सतत विकास पर भी विशेष ध्यान देना आवश्यक हो गया है। भारतीय ज्ञान परंपरा में वर्णित भगवद्गीता, वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, अर्थशास्त्र तथा योग दर्शन जैसे ग्रंथ मानव व्यवहार, नेतृत्व, कार्य संस्कृति, नैतिक निर्णय, अनुशासन, कर्तव्यपरायणता एवं लोककल्याण पर आधारित अनेक सिद्धांत प्रस्तुत करते हैं, जिन्हें आधुनिक मानव संसाधन प्रबंधन में प्रभावी रूप से अपनाया जा सकता है। इस शोध-पत्र का उद्देश्य भारतीय ज्ञान परंपरा के प्रमुख सिद्धांतों का अध्ययन करना तथा आधुनिक मानव संसाधन प्रबंधन में उनकी उपयोगिता एवं प्रासंगिकता का विश्लेषण करना है। अध्ययन वर्णनात्मक प्रकृति का है तथा द्वितीयक स्रोतों—जैसे पुस्तकों, शोध-पत्रों, सरकारी दस्तावेजों एवं प्रतिष्ठित जर्नलों—पर आधारित है।

मुख्य शब्द: भारतीय ज्ञान परंपरा, मानव संसाधन प्रबंधन, नेतृत्व, नैतिकता, संगठनात्मक संस्कृति, भगवद्गीता, अर्थशास्त्र।

प्रस्तावना

भारत प्राचीन काल से ही ज्ञान, संस्कृति और दर्शन का केंद्र रहा है। भारतीय ज्ञान परंपरा का विकास हजारों वर्षों में हुआ है, जिसमें वेद, उपनिषद, स्मृतियाँ, पुराण, बौद्ध एवं जैन साहित्य, योग दर्शन तथा कौटिल्य का अर्थशास्त्र जैसी महान कृतियाँ सम्मिलित हैं। इन ग्रंथों में केवल आध्यात्मिक या दार्शनिक विचार ही नहीं, बल्कि प्रशासन, नेतृत्व, संगठन, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, न्याय, नीति एवं मानव व्यवहार से संबंधित व्यावहारिक सिद्धांत भी समाहित हैं। 21वीं सदी में संगठनों के सामने तीव्र प्रतिस्पर्धा, तकनीकी नवाचार, कर्मचारियों की विविधता, मानसिक स्वास्थ्य, कार्य-जीवन संतुलन तथा नैतिक प्रशासन जैसी अनेक चुनौतियाँ हैं। इन चुनौतियों के समाधान के लिए केवल आधुनिक प्रबंधन सिद्धांत पर्याप्त नहीं हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित मूल्य-आधारित नेतृत्व, निष्काम कर्म, आत्म-अनुशासन, सहयोग, सत्यनिष्ठा एवं लोककल्याण जैसे सिद्धांत आधुनिक मानव संसाधन प्रबंधन को अधिक प्रभावी, मानवीय एवं टिकाऊ बना सकते हैं। आज अनेक भारतीय एवं बहुराष्ट्रीय संगठन कर्मचारी कल्याण, योग, ध्यान, भावनात्मक बुद्धिमत्ता (Emotional Intelligence), नैतिक नेतृत्व एवं मूल्य-आधारित प्रबंधन को अपने संगठनात्मक ढाँचे में शामिल कर रहे हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा केवल ऐतिहासिक धरोहर नहीं है, बल्कि आधुनिक प्रबंधन के लिए भी अत्यंत उपयोगी मार्गदर्शक है।

भारतीय ज्ञान परंपरा की अवधारणा

भारतीय ज्ञान परंपरा से अभिप्राय उस समग्र ज्ञान से है जिसका विकास भारत में प्राचीन काल से विभिन्न ऋषियों, मुनियों, आचार्यों एवं विद्वानों द्वारा किया गया। यह ज्ञान केवल धार्मिक नहीं बल्कि वैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक, प्रशासनिक एवं नैतिक पक्षों को भी समाहित करता है। भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल उद्देश्य मानव जीवन का सर्वांगीण विकास है। इसमें व्यक्ति, समाज एवं प्रकृति के बीच संतुलन स्थापित करने पर बल दिया गया है। आधुनिक संदर्भ में इसे "समग्र विकास का दर्शन" भी कहा जा सकता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा के प्रमुख स्रोत

भारतीय ज्ञान परंपरा अनेक ग्रंथों एवं दार्शनिक परंपराओं पर आधारित है। इनमें प्रमुख हैं—

वेद

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद भारतीय ज्ञान के सबसे प्राचीन स्रोत हैं। इनमें सामाजिक व्यवस्था, सहयोग, कर्तव्य, अनुशासन एवं सामूहिक विकास पर विशेष बल दिया गया है।

उपनिषद

उपनिषद आत्मज्ञान, आत्म-नियंत्रण, विवेक एवं नैतिक जीवन का संदेश देते हैं। इनमें नेतृत्व का आधार आत्मबोध एवं आत्मसंयम को माना गया है।

भगवद्गीता

भगवद्गीता आधुनिक प्रबंधन का महत्वपूर्ण आधार मानी जाती है। इसमें श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिए गए उपदेश आज भी नेतृत्व, निर्णय क्षमता, तनाव प्रबंधन, निष्काम कर्म, उत्तरदायित्व एवं नैतिक प्रशासन के लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं।

विशेष रूप से "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" का संदेश कार्य के प्रति समर्पण एवं परिणाम की चिंता से मुक्त होकर उत्कृष्ट प्रदर्शन करने की प्रेरणा देता है।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र

कौटिल्य ने प्रशासन, संगठन, नेतृत्व, मानव संसाधन चयन, प्रशिक्षण, पुरस्कार एवं दंड व्यवस्था पर विस्तृत विचार प्रस्तुत किए हैं। आधुनिक HRM में Performance Management एवं Talent Management की अवधारणाओं का आधार इनके विचारों से जुड़ता है।

रामायण एवं महाभारत

इन महाकाव्यों में आदर्श नेतृत्व, संगठनात्मक अनुशासन, नैतिक निर्णय, संकट प्रबंधन एवं टीम भावना के उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं।

भारतीय ज्ञान परंपरा के मूल सिद्धांत

भारतीय ज्ञान परंपरा निम्नलिखित मूल सिद्धांतों पर आधारित है—

- **निष्काम कर्म:-** कार्य को ईमानदारी एवं पूर्ण समर्पण के साथ करना, बिना व्यक्तिगत लाभ की अपेक्षा के।
- **धर्म:-** यहाँ धर्म का अर्थ कर्तव्य, नैतिकता एवं उत्तरदायित्व से है।
- **सत्य एवं पारदर्शिता:-**किसी भी संगठन में विश्वास एवं दीर्घकालीन सफलता के लिए सत्यनिष्ठा आवश्यक है।
- **आत्म-अनुशासन:-**एक सफल कर्मचारी एवं नेता के लिए आत्म-नियंत्रण अत्यंत आवश्यक है।
- **सहयोग:-** भारतीय संस्कृति सामूहिक कार्य एवं टीम भावना को महत्व देती है।
- **लोककल्याण:-**व्यक्ति के साथ-साथ समाज एवं संगठन के समग्र विकास पर बल दिया गया है।

मानव संसाधन प्रबंधन की अवधारणा

मानव संसाधन प्रबंधन किसी भी संगठन के सबसे महत्वपूर्ण संसाधन अर्थात् मानव शक्ति के प्रभावी प्रबंधन की प्रक्रिया है। इसका उद्देश्य संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के साथ-साथ कर्मचारियों के व्यक्तिगत एवं व्यावसायिक विकास को सुनिश्चित करना है। HRM केवल कर्मचारियों की भर्ती तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मानव संसाधन नियोजन, चयन, प्रशिक्षण, प्रेरणा, प्रदर्शन मूल्यांकन, वेतन एवं पारिश्रमिक, पदोन्नति, कर्मचारी कल्याण, औद्योगिक संबंध तथा संगठनात्मक विकास जैसी व्यापक गतिविधियों को समाहित करता है। आधुनिक प्रबंधन विचारकों के अनुसार किसी भी संगठन की सफलता उसकी मशीनों या पूँजी से अधिक उसके योग्य, प्रेरित एवं नैतिक कर्मचारियों पर निर्भर करती है। इसी कारण आज HRM को "Strategic Human Resource Management" के रूप में देखा जाता है, जिसमें मानव संसाधन को संगठन की प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति माना जाता है। भारतीय ज्ञान परंपरा भी मानव को सर्वोच्च स्थान देती है। इसमें मानव को केवल कार्य करने वाला संसाधन नहीं, बल्कि चेतन, नैतिक एवं सृजनशील शक्ति माना गया है। इसलिए भारतीय दृष्टिकोण आधुनिक HRM को अधिक मानवीय, नैतिक एवं मूल्य-आधारित स्वरूप प्रदान करता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा एवं मानव संसाधन प्रबंधन का अंतर्संबंध

भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक मानव संसाधन प्रबंधन के बीच गहरा संबंध है। भारतीय दर्शन में वर्णित अनेक सिद्धांत वर्तमान HRM के सिद्धांतों से मेल खाते हैं।

- **नेतृत्व (Leadership)** भारतीय ग्रंथों में नेतृत्व को केवल अधिकार प्राप्त करना नहीं, बल्कि सेवा, उत्तरदायित्व और आदर्श प्रस्तुत करने का माध्यम माना गया है। भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन के सारथी बनकर यह संदेश देते हैं कि श्रेष्ठ नेता वही है जो स्वयं उदाहरण प्रस्तुत करे तथा अपने सहयोगियों

को प्रेरित करे। आधुनिक HRM में भी Transformational Leadership, Servant Leadership तथा Ethical Leadership की अवधारणाएँ इसी सिद्धांत पर आधारित हैं।

- **निष्काम कर्म एवं कार्य प्रेरणा:-** गीता का निष्काम कर्म सिद्धांत आधुनिक कार्य संस्कृति के लिए अत्यंत उपयोगी है। निष्काम कर्म का अर्थ है— कर्तव्य का पूर्ण निष्ठा से पालन करना। कार्य के प्रति समर्पण व्यक्तिगत लाभ से ऊपर संगठन एवं समाज का हित सर्वोपरि होना। यदि कर्मचारी परिणाम की अनावश्यक चिंता छोड़कर गुणवत्तापूर्ण कार्य करें, तो संगठन की उत्पादकता एवं गुणवत्ता दोनों में वृद्धि होती है।
- **आत्म-अनुशासन** भारतीय ज्ञान परंपरा में आत्मसंयम एवं अनुशासन को सफलता का आधार माना गया है। महाकाव्य महाभारत में पांच पांडवों द्वारा सब कुछ खो देने के बाद भी संयम एवं अनुशासन, कार्य के प्रति प्रतिबद्धता एवं नैतिकता के बल पर स्वयं को पुनः स्थापित करना, आधुनिक व्यावसायिक प्रबंधन के लिए एक आदर्श प्रस्तुत करता है।
- **नैतिकता:-** भारतीय दर्शन में सत्य, ईमानदारी, न्याय एवं पारदर्शिता को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। आधुनिक HRM में भी Equal Opportunity, Fair Promotion Transparent Recruitmen, tEthical Performance Appraisal निहित है। भारतीय ज्ञान परंपरा इन सभी सिद्धांतों को हजारों वर्षों पूर्व स्थापित कर चुकी है।
- **टीम भावना एवं सहयोग:-** ऋग्वेद में सामूहिक कार्य एवं सहयोग का अत्यंत सुंदर संदेश दिया गया है— **"संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।"**

अर्थात्— "मिलकर चलो, मिलकर विचार करो तथा एक समान उद्देश्य लेकर कार्य करो।

आधुनिक संगठनों में Team Building, Collaboration तथा Cross Functional Teams इसी विचारधारा पर आधारित हैं।

मानव संसाधन प्रबंधन के प्रमुख कार्यों में भारतीय ज्ञान परंपरा की भूमिका

- **मानव संसाधन नियोजन** (Human Resource Planning) भारतीय ग्रंथों में प्रत्येक कार्य के पूर्व उचित योजना बनाने पर बल दिया गया है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में मानव संसाधनों की आवश्यकता का पूर्व आकलन करने की सलाह दी है। आज HR Planning का यही मूल सिद्धांत है।
- **भर्ती एवं चयन** (Recruitment & Selection) कौटिल्य के अनुसार किसी व्यक्ति की नियुक्ति उसके— ज्ञान, चरित्र, योग्यता, अनुभव, ईमानदारी के आधार पर होनी चाहिए। आधुनिक HRM भी Merit Based Recruitment को सर्वोत्तम मानता है।
- **प्रशिक्षण एवं विकास**:- रामायण, महाभारत में गुरुकुल/आश्रम व्यवस्था में गुरु द्वारा शिष्य को शिक्षण-प्रशिक्षण व्यवस्था में व्यक्तित्व विकास, नैतिक शिक्षा, नेतृत्व व्यवहार, जीवन कौशल पर भी समान रूप से बल दिया जाता था। आज Corporate Training भी इसी दिशा में विकसित हो रहा है।
- **प्रदर्शन मूल्यांकन** (Performance Appraisal) भारतीय ज्ञान परंपरा में किसी व्यक्ति का मूल्यांकन केवल परिणामों के आधार पर नहीं बल्कि— कार्य की गुणवत्ता, नैतिकता, अनुशासन, उत्तरदायित्व, समाज हित को ध्यान में रखकर किया जाता था। महाभारत में गुरु द्रोणाचार्य द्वारा अर्जुन एवं अन्य शिष्यों का शिक्षण पूर्ण होने के पश्चात परीक्षा लेना। आधुनिक HRM में Competency Based Performance Appraisal इसी अवधारणा का आधुनिक रूप है।

- **कर्मचारी प्रेरणा** (Employee Motivation) भारतीय दर्शन के अनुसार सबसे बड़ी प्रेरणा व्यक्ति के भीतर से आती है। गीता के अनुसार— आत्मविश्वास, कर्तव्य भावना, आत्म-संतोष, व्यक्ति को उत्कृष्ट कार्य करने के लिए प्रेरित करते हैं। आज इसे Intrinsic Motivation कहा जाता है।

आधुनिक संगठनों में भारतीय ज्ञान परंपरा का अनुप्रयोग

वर्तमान समय में अनेक भारतीय एवं अंतरराष्ट्रीय संस्थाएँ भारतीय ज्ञान परंपरा के सिद्धांतों को अपनाने लगी हैं। इनमें प्रमुख हैं—

- **योग एवं ध्यान:-** कर्मचारियों के तनाव को कम करने के लिए योग एवं ध्यान कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। इसके लाभ—मानसिक स्वास्थ्य, एकाग्रता, उत्पादकता, निर्णय क्षमता में वृद्धि।
- **मूल्य आधारित नेतृत्व:-** कई संगठन अपने नेतृत्व विकास कार्यक्रमों में गीता एवं भारतीय दर्शन के सिद्धांतों को सम्मिलित कर रहे हैं।
- **कर्मचारी कल्याण:-** भारतीय संस्कृति "सर्वे भवन्तु सुखिनः" के सिद्धांत पर आधारित है। इसी कारण Employee Well-being आधुनिक HRM का महत्वपूर्ण भाग बन गया है।
- **कार्य-जीवन संतुलन:-** योग दर्शन संतुलित जीवन पर बल देता है। आज Work-Life Balance HR नीति का प्रमुख उद्देश्य बन चुका है।
- **नैतिक कॉर्पोरेट संस्कृति:-** भारतीय ज्ञान परंपरा संगठन में—ईमानदारी, पारदर्शिता, सामाजिक उत्तरदायित्व, विश्वास जैसे मूल्यों को बढ़ावा देती है।

चुनौतियाँ

यद्यपि भारतीय ज्ञान परंपरा के सिद्धांत आधुनिक मानव संसाधन प्रबंधन के लिए अत्यंत उपयोगी हैं, तथापि इनके प्रभावी क्रियान्वयन में अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। जैसे:-

- **पाश्चात्य प्रबंधन मॉडल का प्रभुत्व:-** अधिकांश भारतीय संगठनों में प्रबंधन शिक्षा एवं मानव संसाधन नीतियाँ पाश्चात्य सिद्धांतों पर आधारित हैं। परिणामस्वरूप भारतीय ज्ञान परंपरा के सिद्धांतों का पर्याप्त उपयोग नहीं हो पाता।
- **जागरूकता का अभाव:-** प्रबंधन संस्थानों एवं उद्योगों में भारतीय ज्ञान परंपरा की व्यावहारिक उपयोगिता के प्रति पर्याप्त जागरूकता नहीं है। अधिकांश प्रबंधक इसे केवल धार्मिक या आध्यात्मिक विषय मानते हैं, जबकि इसका वास्तविक स्वरूप इससे कहीं अधिक व्यापक है।
- **वैश्वीकरण एवं प्रतिस्पर्धा:-** वैश्विक प्रतिस्पर्धा के कारण संगठन अल्पकालिक लाभ एवं उत्पादकता पर अधिक ध्यान देते हैं। इसके कारण नैतिक नेतृत्व, कर्मचारी कल्याण तथा मूल्य-आधारित प्रबंधन जैसे सिद्धांत अपेक्षित महत्व नहीं प्राप्त कर पाते उपेक्षा के शिकार होते हैं।
- **प्रशिक्षण की कमी:-** भारतीय ज्ञान परंपरा आधारित मानव संसाधन प्रबंधन के लिए विशेष प्रशिक्षण, कार्यशालाएँ एवं शैक्षणिक कार्यक्रमों का अभाव है। इससे इन सिद्धांतों का व्यवहारिक अनुप्रयोग सीमित रह जाता है।
- **सांस्कृतिक विविधता:-** बहुराष्ट्रीय संगठनों में विभिन्न देशों एवं संस्कृतियों के कर्मचारी कार्य करते हैं। ऐसी स्थिति में भारतीय ज्ञान परंपरा के सिद्धांतों को सभी कर्मचारियों के लिए समान रूप से लागू करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है।

सुझाव

- प्रबंधन शिक्षा में भारतीय ज्ञान परंपरा को अनिवार्य विषय के रूप में सम्मिलित किया जाए।
- कॉर्पोरेट संगठनों में भारतीय दर्शन आधारित नेतृत्व विकास कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।
- कर्मचारियों के लिए नियमित योग एवं ध्यान कार्यक्रम संचालित किए जाएँ।
- भर्ती एवं प्रदर्शन मूल्यांकन में नैतिकता एवं चरित्र को भी महत्व दिया जाए।
- संगठनात्मक संस्कृति में सत्य, पारदर्शिता एवं सहयोग को बढ़ावा दिया जाए।
- भारतीय ज्ञान परंपरा एवं आधुनिक प्रबंधन के समन्वय पर अधिक शोध किए जाएँ।
- विश्वविद्यालयों एवं उद्योगों के बीच सहयोग स्थापित कर भारतीय ज्ञान प्रणाली पर आधारित प्रशिक्षण कार्यक्रम विकसित किए जाएँ।
- हिंदी भाषा एवं साहित्य तथा अन्य स्थानीय भाषा एवं साहित्य में सामान्य शिक्षा एवं प्रबंधन संबंधी शिक्षा व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित किया जाए।

निष्कर्ष

भारतीय ज्ञान परंपरा केवल प्राचीन सांस्कृतिक विरासत नहीं है, बल्कि यह आधुनिक प्रबंधन विज्ञान के लिए भी अत्यंत उपयोगी एवं प्रासंगिक है। इसमें निहित नैतिकता, नेतृत्व, आत्म-अनुशासन, निष्काम कर्म, सहयोग, लोककल्याण तथा सतत विकास जैसे सिद्धांत आधुनिक मानव संसाधन प्रबंधन की चुनौतियों का प्रभावी समाधान प्रस्तुत करते हैं। आज जब संगठन केवल आर्थिक सफलता तक सीमित न रहकर सामाजिक उत्तरदायित्व, कर्मचारी संतुष्टि एवं दीर्घकालिक विकास पर बल दे रहे हैं, तब भारतीय ज्ञान परंपरा एक समग्र एवं संतुलित प्रबंधन दृष्टिकोण प्रदान करती है।

मानव संसाधन प्रबंधन में भारतीय ज्ञान परंपरा का समावेश न केवल संगठन की उत्पादकता एवं प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता को बढ़ाएगा, बल्कि कर्मचारियों के व्यक्तित्व विकास, नैतिक आचरण एवं सामाजिक उत्तरदायित्व को भी सुदृढ़ करेगा। अतः भविष्य में भारतीय ज्ञान प्रणाली एवं आधुनिक HRM के समन्वय पर व्यापक शोध एवं व्यावहारिक अनुप्रयोग की आवश्यकता है।

संदर्भ (References) –

1. R. Bhatiya "भारतीय ज्ञान परंपरा में व्यावसाययक नैयतकता" भारतीय ज्ञान परंपरा : विविध संदर्भ ISBN: 978-93-47336-57-7
2. Y.Yadav (2025) "The Influence of Vedas on Contemporary Management Practices and Theories"International Research Journal of Marketing & Economics ISSN (2349-0314)Issue 12,Vol. 12
3. A.kumari (2025) "भारतीय ज्ञान परंपरा और विश्व बौद्धः-एक समीक्षात्मक दृष्टिकोण" international Journal for Multidisciplinary Research(IJFMR) E-ISSN 2582-2610 Issue 5, Vol.7
4. A.Moudgil (2024) "Indian knowledge system and modern management" National Research Journal of Business Economics ISSN 2349-2015(P) Issue 2, Vol.11 PP 90-99
5. S.shakya (2024) "भारतीय ज्ञान परंपरा और वाणिज्य" Journal of emerging technologies and innovative research(JETIR) ISSN 2349-5162 Issue 3, Vol.11

6. Singh, P., & Sharma, R. (2022). "Indian Knowledge System and Modern Management." International Journal of Research and Analytical Reviews (IJRAR), ISSN: 2348-1269.
7. Gupta, C. B. (2021). Human Resource Management. Sultan Chand & Sons. ISBN: 978-9351611677.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 97-104
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

बढ़ते आर्थिक विकास का पर्यावरण पर प्रभाव: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. सुल्तान मोरे
सहायक प्राध्यापक,
पद्मश्री लेट कांताबेन त्यागी शासकीय महाविद्यालय, निवाली जिला बड़वानी (मध्यप्रदेश)

सार
आर्थिक विकास किसी भी राष्ट्र की समृद्धि, रोजगार सृजन तथा जीवन स्तर में सुधार का प्रमुख आधार है। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, आधारभूत संरचना का विस्तार तथा ऊर्जा की बढ़ती मांग ने विश्वभर में आर्थिक विकास को गति प्रदान की है। दूसरी ओर, यही विकास प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन, वनों की कटाई, जैव विविधता के ह्रास, वायु एवं जल प्रदूषण, ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन तथा जलवायु परिवर्तन जैसी गंभीर पर्यावरणीय चुनौतियों को भी जन्म देता है।
भारत विश्व की तीव्र गति से विकसित होती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। ऐसे में आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण के मध्य संतुलन स्थापित करना नीति-निर्माताओं के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हो गया है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य बढ़ते आर्थिक विकास के पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करना तथा सतत विकास (Sustainable Development) की दिशा में आवश्यक नीतिगत उपायों का अध्ययन करना है। यह अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध-पद्धति पर आधारित है तथा आधिकारिक द्वितीयक स्रोतों के आधार पर आर्थिक एवं पर्यावरणीय संकेतकों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द: आर्थिक विकास, पर्यावरण, सतत विकास, जलवायु परिवर्तन, कार्बन उत्सर्जन, जैव विविधता, प्रदूषण, हरित अर्थव्यवस्था।

1. भूमिका

आर्थिक विकास किसी भी राष्ट्र की प्रगति का प्रमुख सूचक माना जाता है। यह उत्पादन, आय, रोजगार, निवेश तथा आधारभूत संरचना के विस्तार के माध्यम से समाज के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का कार्य करता है। स्वतंत्रता के पश्चात भारत ने कृषि, उद्योग, सेवा क्षेत्र, परिवहन, संचार तथा सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। परिणामस्वरूप भारत आज विश्व की अग्रणी अर्थव्यवस्थाओं में स्थान प्राप्त कर चुका है।

किन्तु तीव्र आर्थिक विकास के साथ पर्यावरणीय चुनौतियाँ भी बढ़ी हैं। औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाले उत्सर्जन, वाहनों की संख्या में वृद्धि, ऊर्जा उत्पादन के लिए जीवाश्म ईंधनों का अत्यधिक उपयोग, वनों की कटाई तथा अनियोजित शहरीकरण ने वायु, जल एवं भूमि प्रदूषण को बढ़ावा दिया है। इसके साथ ही जैव विविधता में कमी, जल संकट, भूमि क्षरण तथा वैश्विक तापवृद्धि जैसी समस्याएँ भी गंभीर होती जा रही हैं।

आज आवश्यकता इस बात की है कि आर्थिक विकास को पर्यावरणीय संरक्षण के साथ समन्वित किया जाए, जिससे वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के हित भी सुरक्षित रह सकें। इसी अवधारणा को सतत विकास कहा जाता है।

2. साहित्य समीक्षा

आर्थिक विकास और पर्यावरण के संबंध पर अनेक राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय विद्वानों ने अध्ययन किया है।

ग्रॉसमैन एवं क्रूगर (1995) ने पर्यावरणीय कुज़नेट्स वक्र (Environmental Kuznets Curve) की अवधारणा प्रस्तुत करते हुए बताया कि आर्थिक विकास के प्रारंभिक चरण में प्रदूषण बढ़ता है, जबकि आय के उच्च स्तर पर पहुँचने के बाद पर्यावरणीय गुणवत्ता में सुधार की प्रवृत्ति दिखाई देती है।

स्टर्न (2004) ने आर्थिक विकास, ऊर्जा उपभोग और पर्यावरणीय क्षरण के बीच गहरे संबंध को स्पष्ट किया तथा विकासशील देशों में स्वच्छ प्रौद्योगिकी को अपनाने पर बल दिया।

IPCC की विभिन्न आकलन रिपोर्टों में यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है कि मानवजनित आर्थिक गतिविधियाँ वैश्विक तापवृद्धि का प्रमुख कारण हैं तथा ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी लाना अनिवार्य है।

भारत में विभिन्न शोधों में यह पाया गया है कि तीव्र औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण ने आर्थिक प्रगति को गति दी है, किन्तु इसके साथ पर्यावरणीय प्रदूषण एवं प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव भी बढ़ा है। इससे स्पष्ट होता है कि विकास और पर्यावरण के मध्य संतुलन स्थापित करना दीर्घकालिक आर्थिक समृद्धि के लिए आवश्यक है।

3. शोध की आवश्यकता

भारत वर्ष 2047 तक विकसित राष्ट्र बनने का लक्ष्य लेकर आगे बढ़ रहा है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए तीव्र आर्थिक विकास आवश्यक है, परन्तु यदि यह विकास पर्यावरणीय संतुलन की उपेक्षा करके होगा तो जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, जैव विविधता का ह्रास तथा प्राकृतिक संसाधनों की कमी जैसी समस्याएँ और अधिक गंभीर हो सकती हैं।

ऐसी परिस्थितियों में आर्थिक विकास एवं पर्यावरण संरक्षण के मध्य संतुलन का वैज्ञानिक अध्ययन नीति-निर्माताओं, शिक्षाविदों एवं शोधकर्ताओं के लिए अत्यंत आवश्यक है।

4. शोध के उद्देश्य

- आर्थिक विकास एवं पर्यावरण के पारस्परिक संबंध का अध्ययन करना।
- भारत में आर्थिक विकास के कारण उत्पन्न प्रमुख पर्यावरणीय समस्याओं का विश्लेषण करना।
- औद्योगिकीकरण, शहरीकरण एवं ऊर्जा उपभोग के पर्यावरणीय प्रभावों का मूल्यांकन करना।
- सतत विकास की दिशा में भारत सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों का अध्ययन करना।
- पर्यावरण संरक्षण एवं आर्थिक विकास के मध्य संतुलन स्थापित करने हेतु व्यवहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

5.परिकल्पना

H_0: आर्थिक विकास का पर्यावरणीय गुणवत्ता पर कोई महत्त्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ता।

H_1: बढ़ता आर्थिक विकास पर्यावरणीय गुणवत्ता पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालता है।

6. शोध पद्धति

यह अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध-पद्धति पर आधारित है। अध्ययन में द्वितीयक आँकड़ों का उपयोग किया जाएगा। आँकड़े भारत सरकार के पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB), राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (NSO), नीति आयोग, विश्व बैंक, संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) तथा अन्य आधिकारिक स्रोतों से प्राप्त किए जाएँगे।

7. भारत में आर्थिक विकास की प्रवृत्तियाँ (2020–2026) एवं पर्यावरण पर उनका प्रभाव

वर्ष 2020 से 2026 की अवधि भारत की अर्थव्यवस्था के लिए परिवर्तनकारी रही है। कोविड-19 महामारी के कारण आर्थिक गतिविधियों में आई गिरावट के बाद भारत ने तीव्र आर्थिक पुनरुद्धार का अनुभव किया। विनिर्माण, सेवा, अवसंरचना, डिजिटल अर्थव्यवस्था तथा ऊर्जा क्षेत्र में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। दूसरी ओर, इस विकास ने ऊर्जा की बढ़ती मांग, प्राकृतिक संसाधनों के दोहन तथा प्रदूषण जैसी पर्यावरणीय चुनौतियों को भी बढ़ाया। भारत में आर्थिक विकास की प्रवृत्तियाँ

तालिका 1

भारत के प्रमुख आर्थिक संकेतक (2020–2026)

वर्ष	**GDP वृद्धि (%) लगभग**	**प्रमुख विशेषता**
2020	-5.8	कोविड-19 महामारी का प्रभाव
2021	9.1	औद्योगिक एवं सेवा क्षेत्र में विस्तार
2022	7.2	आर्थिक पुनरुद्धार
2023	8.2	निवेश एवं निर्यात में वृद्धि
2024	8.2	मजबूत घरेलू मांग
2025	6–7	संतुलित विकास
2026	प्रक्षेपित	सतत विकास एवं हरित निवेश पर बल

उपर्युक्त तालिका क्रमांक एक अनुसार उपलब्ध प्रवृत्तियाँ दर्शाती हैं कि महामारी के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था ने तेज़ी से पुनरुद्धार किया। औद्योगिक उत्पादन, अवसंरचना विकास और शहरीकरण में वृद्धि ने आर्थिक गतिविधियों को गति दी, किंतु इसके साथ ऊर्जा खपत और संसाधनों पर दबाव भी बढ़ा।

7.1 आर्थिक विकास का वायु प्रदूषण पर प्रभाव

औद्योगिक विस्तार, ताप विद्युत संयंत्रों तथा वाहनों की बढ़ती संख्या के कारण महानगरों और औद्योगिक क्षेत्रों में वायु प्रदूषण एक गंभीर चुनौती बना हुआ है।

वायु प्रमुख प्रभाव:-

- सूक्ष्म कण (PM2.5 एवं PM10) की मात्रा में वृद्धि।
- श्वसन एवं हृदय रोगों में बढ़ोतरी।
- औद्योगिक क्षेत्रों में वायु गुणवत्ता में गिरावट।
- उत्पादकता एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव।

7.2 आर्थिक विकास का वायु प्रदूषण पर प्रभाव जल पर प्रभाव:-

आर्थिक गतिविधियों के विस्तार के साथ उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट तथा शहरी अपजल के कारण अनेक नदियाँ एवं जलस्रोत प्रभावित हुए हैं।

प्रमुख कारण

- औद्योगिक अपशिष्ट।
- रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग।
- शहरी सीवेज का अपर्याप्त शोधन।
- प्लास्टिक एवं ठोस अपशिष्ट का अनुचित निपटान।

7.3 आर्थिक विकास का वन एवं जैव विविधता पर प्रभाव:-

सड़क, रेल, औद्योगिक गलियारों तथा शहरी विस्तार के कारण भूमि उपयोग में परिवर्तन हुआ है। इसके परिणामस्वरूप अनेक क्षेत्रों में प्राकृतिक आवासों पर दबाव बढ़ा है।

मुख्य प्रभाव

- वन क्षेत्र पर दबाव।
- वन्यजीव आवासों का विखंडन।
- जैव विविधता में कमी।
- मानव–वन्यजीव संघर्ष में वृद्धि।

7.4 कार्बन उत्सर्जन एवं जलवायु परिवर्तन:-

ऊर्जा, परिवहन तथा औद्योगिक क्षेत्रों में जीवाश्म ईंधनों के उपयोग से ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन बढ़ता है, जो वैश्विक तापवृद्धि का प्रमुख कारण है।

तालिका 2

आर्थिक विकास एवं पर्यावरणीय प्रभाव

आर्थिक गतिविधि	**पर्यावरणीय प्रभाव**
औद्योगिकीकरण	वायु एवं जल प्रदूषण
शहरीकरण	भूमि उपयोग परिवर्तन, ठोस अपशिष्ट

परिवहन विस्तार	कार्बन उत्सर्जन, ध्वनि प्रदूषण
ऊर्जा उत्पादन	CO_2 उत्सर्जन
खनन	भूमि क्षरण एवं जैव विविधता पर प्रभाव
अवसंरचना विकास	प्राकृतिक आवासों में कमी

7.5 आर्थिक विकास एवं पर्यावरणीय संकेतकों के मध्य संबंध:-

सकल घरेलू उत्पाद (GDP), कार्बन उत्सर्जन, नवीकरणीय ऊर्जा, वनावरण तथा वायु गुणवत्ता जैसे प्रमुख संकेतकों के आधार पर आर्थिक विकास के पर्यावरणीय प्रभावों का मूल्यांकन को तालिका क्रमांक 3 से स्पष्ट समझ सकते हैं-

तालिका 3

आर्थिक विकास एवं पर्यावरणीय संकेतकों का तुलनात्मक विश्लेषण

संकेतक	**आर्थिक विकास का प्रभाव**	पर्यावरण पर परिणाम
औद्योगिकीकरण	उत्पादन एवं रोजगार में वृद्धि	वायु एवं जल प्रदूषण
शहरीकरण	आधारभूत संरचना का विस्तार	हरित क्षेत्र में कमी
ऊर्जा उपभोग	औद्योगिक विकास	कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि
परिवहन	व्यापार एवं संपर्क में वृद्धि	ध्वनि एवं वायु प्रदूषण
खनन	औद्योगिक कच्चा माल	भूमि क्षरण एवं जैव विविधता हानि

तालिका 4

पर्यावरणीय चुनौतियों का आर्थिक प्रभाव

पर्यावरणीय समस्या	**आर्थिक प्रभाव**
वायु प्रदूषण	स्वास्थ्य व्यय में वृद्धि, श्रम उत्पादकता में कमी
जल प्रदूषण	कृषि एवं मत्स्य उत्पादन प्रभावित
जलवायु परिवर्तन	प्राकृतिक आपदाओं से आर्थिक क्षति
भूमि क्षरण	कृषि उत्पादकता में कमी

वनों की कटाई	पारिस्थितिक सेवाओं का ह्रास

7.6 आर्थिक विकास एवं कार्बन उत्सर्जन

आर्थिक विकास के साथ ऊर्जा की मांग बढ़ती है। यदि ऊर्जा का प्रमुख स्रोत जीवाश्म ईंधन हो, तो कार्बन डाइऑक्साइड तथा अन्य ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन भी बढ़ता है। भारत में सौर, पवन और हरित हाइड्रोजन जैसी स्वच्छ ऊर्जा पहलों का विस्तार इस चुनौती को कम करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

तालिका 5

आर्थिक विकास एवं पर्यावरणीय प्रभाव का तुलनात्मक मूल्यांकन

क्षेत्र	**सकारात्मक प्रभाव**	**नकारात्मक प्रभाव**
उद्योग	रोजगार, उत्पादन	प्रदूषण
कृषि	खाद्य सुरक्षा	रासायनिक प्रदूषण
परिवहन	संपर्क एवं व्यापार	ईंधन खपत, उत्सर्जन
ऊर्जा	औद्योगिक वृद्धि	ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन
शहरीकरण	निवेश एवं सेवाएँ	अपशिष्ट एवं हरित क्षेत्र में कमी

उपर्युक्त तालिकाओं के विवेचन से स्पष्ट है कि आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण एक-दूसरे के विरोधी नहीं हैं। यदि विकास की प्रक्रिया स्वच्छ प्रौद्योगिकी, संसाधन दक्षता, प्रदूषण नियंत्रण, ऊर्जा संरक्षण और पर्यावरणीय नियमन के साथ आगे बढ़े, तो दोनों के बीच संतुलन स्थापित किया जा सकता है। विश्व स्तर पर "Green Growth" तथा "Circular Economy" जैसी अवधारणाएँ इसी संतुलन पर आधारित हैं। भारत भी हरित ऊर्जा, इलेक्ट्रिक वाहन, हरित हाइड्रोजन, जैव ईंधन तथा कार्बन उत्सर्जन में कमी लाने के लिए अनेक नीतियाँ लागू कर रहा है।

8.परिणाम (Findings)

अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित प्रमुख परिणाम परिलक्षित होते हैं—

- आर्थिक विकास एवं पर्यावरणीय गुणवत्ता के मध्य प्रत्यक्ष संबंध पाया गया।
- औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण पर्यावरणीय प्रदूषण के प्रमुख कारणों में शामिल हैं।
- स्वच्छ ऊर्जा एवं हरित प्रौद्योगिकी आर्थिक विकास को पर्यावरण-अनुकूल बना सकती हैं।
- प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग सतत विकास की अनिवार्य शर्त है।
- नीति निर्माण में आर्थिक एवं पर्यावरणीय संकेतकों का संयुक्त मूल्यांकन आवश्यक है।

9. नीतिगत सुझाव

- नवीकरणीय ऊर्जा में सार्वजनिक एवं निजी निवेश बढ़ाया जाए।
- उद्योगों में स्वच्छ प्रौद्योगिकी अपनाने हेतु प्रोत्साहन दिया जाए।

- कार्बन उत्सर्जन में कमी हेतु प्रभावी नियामक व्यवस्था विकसित की जाए।
- वृक्षारोपण एवं जैव विविधता संरक्षण कार्यक्रमों का विस्तार किया जाए।
- जल संरक्षण एवं वर्षा जल संचयन को अनिवार्य बनाया जाए।
- पर्यावरण शिक्षा एवं जन-जागरूकता कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया जाए।
- सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) के अनुरूप विकास परियोजनाओं का मूल्यांकन किया जाए।
- हरित वित्त (Green Finance) को प्रोत्साहित कर पर्यावरण-अनुकूल निवेश बढ़ाया जाए।

10. शोध की सीमाएँ:-

- अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित है।
- विश्लेषण राष्ट्रीय स्तर तक सीमित है; राज्यवार विस्तृत अध्ययन अलग निष्कर्ष दे सकता है।
- कुछ नवीन पर्यावरणीय आँकड़ों में समय-समय पर संशोधन संभव है।

11. निष्कर्ष (Conclusion)

आर्थिक विकास किसी भी राष्ट्र की समृद्धि एवं सामाजिक उन्नति का आधार है, परंतु यदि यह विकास प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित दोहन एवं पर्यावरणीय संतुलन की उपेक्षा के साथ होता है, तो इसके दीर्घकालिक दुष्परिणाम अत्यंत गंभीर हो सकते हैं। भारत ने पिछले कुछ वर्षों में तीव्र आर्थिक विकास, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण तथा आधारभूत संरचना के विकास में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। इसके परिणामस्वरूप रोजगार, आय, निवेश तथा उत्पादन में वृद्धि हुई है। दूसरी ओर वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, भूमि क्षरण, जैव विविधता में कमी, कार्बन उत्सर्जन तथा जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियाँ भी बढ़ी हैं।

शोध अध्ययन यह भी दर्शाता है कि आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण परस्पर विरोधी नहीं हैं। यदि विकास नीतियों में पर्यावरणीय उत्तरदायित्व, स्वच्छ ऊर्जा, हरित प्रौद्योगिकी, संसाधन दक्षता तथा सतत उत्पादन एवं उपभोग को प्राथमिकता दी जाए तो दोनों उद्देश्यों की प्राप्ति एक साथ संभव है।

भारत द्वारा नवीकरणीय ऊर्जा, हरित हाइड्रोजन, इलेक्ट्रिक वाहन, राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम तथा "मिशन लाइफ (LiFE)" जैसी पहलों के माध्यम से सतत विकास की दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रयास किए जा रहे हैं। इन पहलों को और अधिक प्रभावी बनाना समय की आवश्यकता है।

12. संदर्भ:-

1. Intergovernmental Panel on Climate Change. (2023). Climate Change 2023: Synthesis Report.
2. World Bank. (2025). India Development Update.
3. International Monetary Fund. (2025). World Economic Outlook.
4. United Nations Environment Programme. (2024). Emissions Gap Report.
5. Ministry of Environment, Forest and Climate Change. (2025). Annual Report.
6. Central Pollution Control Board. (2024). National Air Quality Report.
7. NITI Aayog. (2024). National Green Growth Strategy.
8. Ministry of Statistics and Programme Implementation. (2025). Statistical Year Book India.
9. Reserve Bank of India. (2025). Annual Report.
10. Ministry of New and Renewable Energy. (2025). Annual Report.
11. Stern, D. I. (2004). The Rise and Fall of the Environmental Kuznets Curve. World Development.

12. Grossman, G. M., & Krueger, A. B. (1995). Economic Growth and the Environment. Quarterly Journal of Economics.
13. United Nations. (2015). Transforming Our World: The 2030 Agenda for Sustainable Development.
14. OECD. (2024). Green Growth Indicators.
15. Food and Agriculture Organization. (2024). State of the World's Forests.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 105--107
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'दीवार में एक खिड़की रहती थी' : आम आदमी की रोज़मर्रा की ज़िंदगी का दस्तावेज़

अंजना प्रसाद . एस
शोधार्थी,
केरल विश्वविद्यालय, कार्यकट्टम कैंपस, तिरुवनन्तपुरम

समकालीन वरिष्ठ साहित्यकार विनोद कुमार शुक्ल का साहित्य अकादमी से पुरस्कृत प्रतिष्ठित उपन्यास है 'दीवार में एक खिड़की रहती थी'। इसमें कोई बड़ी घटना या संघर्ष नहीं है, केवल रोज़मर्रा का जीवन है। "विनोद कुमार शुक्ल के इस उपन्यास में कोई महान घटना, कोई विराट संघर्ष, कोई युगीन सत्य तथा कोई उद्देश्य या संदेश नहीं है, क्योंकि इसमें वह जीवन है, जो इस देश की वह ज़िंदगी है, जिसे अन्य उपयुक्त शब्द के अभाव में निम्न मध्यवर्गीय कहा जाता है।" (1)

प्रस्तुत उपन्यास में निम्न मध्यवर्गीय युवा दंपति रघुवर प्रसाद एवं उनकी पत्नी सोनसी की जीवनगाथा है। रघुवर प्रसाद एक निजी महाविद्यालय में गणित के अध्यापक हैं। उनका मासिक वेतन केवल आठ सौ रुपए था। रघुवर के माता-पिता एवं छोटा भाई वहाँ से पचास किलोमीटर दूर घरमपुरा में रहते हैं। घर की गृहस्थी रघुवर प्रसाद के इस कम वेतन में ही चलती है। उनके जीवन में अभाव है, लेकिन वे एक भावमय तरीके से इससे गुज़रते हैं। रघुवर प्रसाद एवं सोनसी एक किराये के मकान में रहते हैं। उनके कमरे की खिड़की के बाहर एक अलग दुनिया है, जहाँ पति-पत्नी अपनी अधूरी इच्छाओं को पूरा करते हैं। वहाँ प्रकृति के मनमोहक सौंदर्य का ऐसा रूप है, जो मन में आनंद भर देता है।

रघुवर प्रसाद का महाविद्यालय घर से आठ किलोमीटर की दूरी पर है। वहाँ जाने के लिए उनके पास दो ही विकल्प हैं—एक टेंपो, दूसरा ऑटो। टेंपो या ऑटो कभी न मिलने पर रघुवर को महाविद्यालय में आधे दिन की छुट्टी लेनी पड़ती है। हर रोज़ वह सड़क पर टेंपो का इंतज़ार करते रहते हैं। इस दौरान उनकी नज़र नियमित रूप से एक साधु एवं हाथी पर पड़ती है। रघुवर के मन में हाथी पर बैठकर महाविद्यालय जाने की इच्छा है। एक दिन साधु के कहने पर वह हाथी पर बैठकर महाविद्यालय जाते हैं। इसके बाद यह एक दिनचर्या बन जाती है। रघुवर के मन में महाविद्यालय जाने के लिए एक साइकिल खरीदने की इच्छा है, लेकिन आर्थिक संकट उन्हें इस इच्छा से पीछे खींचता है। यह रघुवर जैसे आम आदमी की इच्छा है कि वह एक साइकिल खरीदे, लेकिन इसे पूरा करने में भी वह असमर्थ है।

रघुवर प्रसाद एवं सोनसी के मन में सबके प्रति सम्मान एवं स्नेह है। अपने परिवारवालों के प्रति उनमें अदम्य आस्था है। रघुवर प्रसाद के माँ-बाप की तबीयत कुछ बिगड़ी हुई है। वह अपने पिता से उनके स्वास्थ्य के बारे में नहीं पूछते, क्योंकि यह सुनकर उन्हें घबराहट होने लगती है। रघुवर प्रसाद अपने कम वेतन में गृहस्थी की पूरी ज़िम्मेदारी निभाना चाहते हैं, लेकिन उनकी आर्थिक स्थिति मज़बूत नहीं है। "उसका वेतन अच्छा होता तो वह बताता कि एक पुत्र अपने पिता की किस तरह परवाह करता है। पिता की छोटी-छोटी अपेक्षाओं के सामने वह असहाय हो जाता था कि वह अच्छा पुत्र नहीं समझा जा रहा है।" (2) यहाँ रघुवर प्रसाद के जीवन-संघर्ष की सच्चाई का यथार्थ चित्रण है।

विनोद कुमार शुक्ल जी ने यहाँ दांपत्य जीवन की गर्माहट को बड़े सभ्य तरीके से प्रस्तुत किया है। इन पति-पत्नी के जीवन में प्रेम के अनेक अवसर हैं। रघुवर प्रसाद के जीवन में सोनसी का आगमन एक नई सुबह की तरह है। सोनसी के बिना उनका कोई अस्तित्व नहीं है। वे अपने सुखद क्षणों का भरपूर आनंद लेने के लिए खिड़की से कूदकर एक जादुई दुनिया में प्रवेश करते हैं। वहाँ नदी है, तालाब है, गोबर से लिपी पगडंडी है, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे और जंगल भी हैं। ये पति-पत्नी वहाँ तालाब में नहाते हैं, चाँदनी रात में चट्टानों पर लेट जाते हैं, पशु-पक्षियों से संवाद करते हैं तथा प्रकृति के साथ इस प्रकार घुल-मिलकर रहते हैं कि ऐसा लगता है मानो प्रकृति उनकी सहचरी हो। "इस उपन्यास में दांपत्य रूपी घर में पति (रघुवर प्रसाद) दरवाज़े की तरह है तो पत्नी (सोनसी) खिड़की की तरह। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं।" (3)

रघुवर प्रसाद एवं सोनसी सारे मानवीय गुणों से संपन्न पति-पत्नी हैं। आज के समाज में संबंधों का अभूतपूर्व विघटन हो रहा है। ऐसे जटिल समय में शुक्ल जी ने यहाँ संबंधों में छिपी मार्मिकता को दर्शाया है। रघुवर प्रसाद के आस-पड़ोस का व्यवहार हमें 'अतिथि देवो भव'—भारतीय संस्कृति के मूल मंत्र—की याद दिलाता है। जब रघुवर प्रसाद के पिता गाँव से आते हैं, तो उनका ख्याल अच्छी तरह से उनके पड़ोसी ही रखते हैं। इसके अलावा, जब सोनसी पहली बार रघुवर के यहाँ आती है, तो आस-पड़ोस के लोग उसका ढोल बजाकर, नाच-गान के साथ स्वागत करते हैं। यह उनके संबंधों की गहराई को व्यक्त करने का उत्तम उदाहरण है।

रोहिणी अग्रवाल कहते हैं कि 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' ऐसी ही कृति है, जो तुर्श आर्थिक अभावों से जूझते हुए इंसानों के बीच पलते-खिलते मनुष्यता के उस अनूपम संसार से हमारा गहरा परिचय कराती है, जो आज तक हमारे लिए नितांत अपरिचित था और अकल्पनीय भी।" (4)

रघुवर प्रसाद एवं सोनसी के जीवन की छोटी-छोटी बातें, जैसे रघुवर प्रसाद का महाविद्यालय जाना, सड़क पर साधु एवं हाथी से मिलना, सोनसी का खाना बनाना, ससुराल से सोनसी की आत्मीयता, पड़ोसियों से स्नेहिल संबंध, विभागाध्यक्ष के प्रति सम्मान की भावना, बूढ़ी अम्मा से प्यार, प्रकृति से उनका जुड़ाव, बीड़ी पीने वाले लड़के एवं उसके पिता से गहरे संबंध आदि, रोज़मर्रा की जानी-पहचानी ज़िंदगी का एक शांत एवं स्वस्थ वातावरण का प्रतिबिंबित हैं। आज की हलचल से इनका कोई लेना-देना नहीं है। यहाँ के रिश्ते बहुत गहरे हैं। शुक्ल जी ने यहाँ भारतीय परिवार की गरिमा एवं संस्कृति को साधारण से असाधारण बना दिया है। रघुवर प्रसाद एवं सोनसी के जीवन में साधन-सुविधाओं का अभाव है, लेकिन वे आपसी प्यार, आत्मीयता एवं संवेदनशीलता जैसे मूल्यों से संपन्न हैं। "उपन्यास इस बात पर बल देता है कि भौतिक साधनों की बहुतायत सुख की गारंटी नहीं है। वास्तविक सुख का मूलाधार है—परस्पर प्रेम, सद्भाव और उदात्त मानवीय चेतना।" (5)

पूरे उपन्यास में आम आदमी के साधारण जीवन के भीतर छिपी गहराई को मार्मिक ढंग से पाठकों के सामने शुक्ल जी प्रस्तुत करते हैं। उनके जीवन में दुख एवं अवसाद है, लेकिन वे किसी से शिकायत नहीं करते। यह उपन्यास हमें यह सिखाता है कि छोटी-छोटी चीज़ों में खुशी का अनुभव करना अत्यंत आवश्यक है। जीवन की मुसीबतों के सामने हमें उम्मीद एवं संवेदना को बनाए रखना चाहिए। यहाँ शुक्ल जी जीवन की उन चीज़ों को, जिन्हें हम अनदेखा कर देते हैं, बड़ी सहजता के साथ पाठकों के सामने रखते हैं। रोहिणी अग्रवाल जी कहते है कि "दीवार में एक खिड़की रहती थी' प्रपंचों, प्रलोभनों, तिकड़मों और षड़यंत्रों के बरक्स उस सहज, सरल, सादे, एकरेखीय जीवन की अनुरागभरी तस्वीरें प्रस्तुत करता है, जिन्हें आत्मसाक्षात्कार के विरल क्षणों में हम अपने जीवन का अभिन्न हिस्सा बना लेना चाहते हैं।" [6]

विनोद कुमार शुक्ल के प्रस्तुत उपन्यास निम्न मध्यवर्गीय परिवार में छिपे जीवन के सुख का हस्तक्षेप है। यहाँ लेखक आम लोगों के जीवन की सच्चाई का बहुत ही संवेदनशील चित्रण उजागर किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ

1. विनोद कुमार शुक्ल,' दीवार में एक खिड़की रहती थी ', वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली, पैपरबैक सातवाँ संस्करण – 2021, अनुकथन में , पृ. 168
2. वही , पृ. 30
3. योगेश तिवारी, विनोद कुमार शुक्ल खिड़की के अन्दर और बाहर, राधाहषण प्रकाशन , नई दिल्ली, पहला संस्करण 2013, पृ. 17
4 रोहिणी अग्रवाल, हिन्दी उपन्यास : समय से संवाद , आधार प्रकाशन , हिरियाणा, पैपरबैक संस्करण – 2016, पृ. 123
5 रामजी निवारी , रचना – मीमांसा, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण – 2017, पृ. 158
6 रोहिणी अग्रवाल, हिन्दी उपन्यास : समय से संवाद , आधार प्रकाशन ,हिरियाणा, पैपरबैक संस्करण – 2016, पृ. 132- 133

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 108-113
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

"असमिया लोक साहित्य: सामान्य परिचय एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष"

मालोती बांगठाई
सहायक प्रोफेसर, हिंदी
गोलाघाट वाणिज्य महाविद्यालय (स्वायत्त) गोलाघाट, असम -785621

शोध सार :
लोक साहित्य किसी भी समाज की सामूहिक चेतना, सांस्कृतिक स्मृति और जीवनानुभवों का सशक्त माध्यम होता है। यह साहित्य किसी एक व्यक्ति की रचना न होकर संपूर्ण लोक समुदाय की अनुभूतियों, परंपराओं, विश्वासों और सामाजिक अनुभवों से निर्मित होता है। भारतीय लोक साहित्य की विविध परंपराओं में असमिया लोक साहित्य का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह असम के सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और प्राकृतिक परिवेश का जीवंत दस्तावेज प्रस्तुत करता है।
प्रस्तुत शोध-पत्र में असमिया लोक साहित्य की अवधारणा, विकास-यात्रा, प्रमुख विशेषताओं और विविध विधाओं का अध्ययन किया गया है। असम की बहुजातीय और बहुसांस्कृतिक संरचना ने यहाँ के लोक साहित्य को विशिष्ट स्वर प्रदान किया है। लोकगीत, लोककथा, लोकगाथा, कहावत, पहेली, मंत्र और लोकनाट्य जैसी विधाओं में असम के सामान्य जनजीवन की संवेदनाएँ अभिव्यक्त हुई हैं।
असमिया लोक साहित्य में प्रकृति और मानव जीवन के संबंध, कृषि संस्कृति, सामाजिक संबंध, धार्मिक विश्वास तथा सामूहिक जीवन की अभिव्यक्ति विशेष रूप से दिखाई देती है। बिहू गीतों में असम की कृषि प्रधान संस्कृति, उत्सवधर्मिता और मानवीय भावनाओं का सुंदर चित्रण मिलता है। लोक साहित्य ने असम की सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।
आधुनिक युग में सामाजिक परिवर्तन और वैश्वीकरण के प्रभाव के कारण लोक परंपराओं के संरक्षण की आवश्यकता बढ़ गई है। इस शोध का उद्देश्य असमिया लोक साहित्य के महत्व को रेखांकित करते हुए उसकी सांस्कृतिक भूमिका और वर्तमान प्रासंगिकता को स्पष्ट करना है।
प्रमुख शब्द: असमिया लोक साहित्य, लोक संस्कृति, लोकगीत, बिहू, लोककथा, मौखिक परंपरा, असम।

1. प्रस्तावना

साहित्य समाज का दर्पण होता है। किसी भी समाज की वास्तविक पहचान उसके साहित्य, संस्कृति और परंपराओं में दिखाई देती है। लिखित साहित्य जहाँ शिक्षित वर्ग की वैचारिक और कलात्मक अभिव्यक्ति को प्रस्तुत करता है, वहीं लोक साहित्य समाज के सामान्य जन की अनुभूतियों, संघर्षों और जीवन मूल्यों को

अभिव्यक्त करता है। लोक साहित्य में जनसाधारण के जीवन की सहजता, सरलता और सामूहिक अनुभवों का चित्रण मिलता है।

लोक साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसका संबंध सीधे लोक जीवन से होता है। यह किसी विशेष लेखक या काल की सीमा में बंधा नहीं होता, बल्कि समय के साथ विकसित होता रहता है। लोक समाज अपनी आवश्यकताओं और अनुभवों के अनुसार इसमें परिवर्तन करता रहता है। इसलिए लोक साहित्य को किसी समाज की जीवित सांस्कृतिक परंपरा कहा जा सकता है।

असमिया लोक साहित्य भारतीय लोक साहित्य की समृद्ध परंपरा का एक महत्वपूर्ण भाग है। असम की भौगोलिक स्थिति, ब्रह्मपुत्र नदी का प्रभाव, प्राकृतिक विविधता, कृषि आधारित जीवन और विभिन्न जनजातीय समुदायों की परंपराओं ने असमिया लोक साहित्य को विशिष्ट पहचान प्रदान की है।

असमिया लोक साहित्य में लोक जीवन की वास्तविक तस्वीर दिखाई देती है। यहाँ के लोकगीतों में प्रेम, विरह, प्रकृति और सामाजिक संबंधों की अभिव्यक्ति है; लोककथाओं में नैतिक मूल्य और जीवन अनुभव हैं; वहीं लोकगाथाओं में इतिहास और सामूहिक स्मृति सुरक्षित है।

2. असमिया लोक साहित्य की अवधारणा

'लोक' शब्द का अर्थ सामान्य जनता या समुदाय से है। लोक साहित्य वह साहित्य है जिसकी रचना जनता द्वारा होती है और जिसका संरक्षण भी जनता द्वारा किया जाता है। यह साहित्य किसी व्यक्तिगत प्रतिभा की अपेक्षा सामूहिक अनुभवों की अभिव्यक्ति होता है।

असमिया लोक साहित्य मुख्य रूप से मौखिक परंपरा पर आधारित रहा है। गाँवों, समुदायों और सामाजिक अवसरों पर गाए जाने वाले गीत, सुनाई जाने वाली कथाएँ और प्रस्तुत किए जाने वाले नाट्य रूप लोक साहित्य के प्रमुख माध्यम रहे हैं।

लोक साहित्य में समाज के विश्वास, रीति-रिवाज, जीवन पद्धति और सांस्कृतिक मूल्य सुरक्षित रहते हैं। इस दृष्टि से असमिया लोक साहित्य केवल साहित्यिक सामग्री नहीं बल्कि असम के सामाजिक इतिहास का महत्वपूर्ण स्रोत भी है।

3. असम का सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश

असम पूर्वोत्तर भारत का एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक क्षेत्र है। यहाँ विभिन्न जातीय समूहों और जनजातीय समुदायों ने मिलकर एक विविध सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण किया है। इस विविधता का प्रभाव असमिया लोक साहित्य पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

असम का जीवन प्रकृति से अत्यंत निकट रहा है। ब्रह्मपुत्र नदी यहाँ के सामाजिक और आर्थिक जीवन का प्रमुख आधार रही है। नदी, वन, कृषि और ऋतु परिवर्तन ने लोक जीवन को प्रभावित किया है। यही कारण है कि असमिया लोक साहित्य में प्रकृति का व्यापक चित्रण मिलता है।

कृषि प्रधान समाज होने के कारण खेती, वर्षा, फसल और ऋतु आधारित उत्सवों का वर्णन लोकगीतों में प्रमुखता से मिलता है। बिहू जैसे पर्व केवल धार्मिक आयोजन नहीं बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के माध्यम हैं।

4. असमिया लोक साहित्य का विकास

असमिया लोक साहित्य का विकास असम के सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के साथ जुड़ा हुआ है। प्राचीन काल से ही असम के ग्रामीण समुदायों में गीतों, कथाओं और परंपराओं के माध्यम से जीवनानुभवों की

अभिव्यक्ति होती रही है। लिखित साहित्य के विकास से पहले लोक साहित्य ही समाज की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम था।

असमिया लोक साहित्य के विकास में यहाँ की विभिन्न जनजातीय परंपराओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। बोडो, मिसिंग, कार्बी, राभा आदि समुदायों की लोक परंपराओं ने असम के लोक साहित्य को बहुरंगी बनाया। इन समुदायों के लोकगीतों, अनुष्ठानों और कथाओं में प्रकृति, सामुदायिक जीवन और सामाजिक विश्वासों की गहरी अभिव्यक्ति मिलती है।

मध्यकाल में वैष्णव आंदोलन के प्रभाव ने असमिया लोक संस्कृति को नई दिशा प्रदान की। श्रीमंत शंकरदेव ने भक्ति आंदोलन के माध्यम से धार्मिक और सांस्कृतिक चेतना का विकास किया। उनके द्वारा विकसित अंकिया नाट और भक्ति परंपरा ने लोक अभिव्यक्ति को व्यापक आधार दिया। इससे असमिया समाज में साहित्य और संस्कृति का नया रूप विकसित हुआ।

आधुनिक काल में लोक साहित्य के संग्रह, संपादन और अध्ययन की प्रक्रिया आरंभ हुई। विद्वानों ने लोकगीतों, लोककथाओं और लोक परंपराओं को संकलित कर उन्हें साहित्यिक अध्ययन का विषय बनाया। इससे असमिया लोक साहित्य को अकादमिक पहचान प्राप्त हुई।

5. असमिया लोक साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ

(क) मौखिक परंपरा

असमिया लोक साहित्य की सबसे प्रमुख विशेषता इसकी मौखिक परंपरा है। लंबे समय तक यह साहित्य लिखित रूप में सुरक्षित नहीं था। लोग गीतों, कहानियों और लोककथाओं को याद करके अगली पीढ़ी तक पहुँचाते रहे।

मौखिक परंपरा के कारण लोक साहित्य में निरंतर परिवर्तन होता रहा। अलग-अलग क्षेत्रों में एक ही कथा या गीत के विभिन्न रूप मिलते हैं। यह इसकी जीवंतता का प्रमाण है।

(ख) सामूहिक रचनात्मकता

लोक साहित्य किसी एक व्यक्ति की निजी रचना नहीं माना जाता। इसमें पूरे समाज की भागीदारी होती है। लोक समुदाय अपने अनुभवों और भावनाओं के अनुसार इसमें परिवर्तन करता रहता है।

इसलिए लोक साहित्य में व्यक्तिगत अहं की अपेक्षा सामूहिक चेतना अधिक महत्वपूर्ण होती है।

(ग) सरल भाषा और सहज अभिव्यक्ति

असमिया लोक साहित्य की भाषा सरल, सहज और जनसामान्य के निकट है। इसमें कृत्रिमता का अभाव होता है। लोकगीतों और कथाओं में ऐसी भाषा का प्रयोग मिलता है जो सामान्य व्यक्ति के अनुभवों को सीधे व्यक्त करती है।

(घ) प्रकृति के साथ संबंध

असमिया लोक साहित्य में प्रकृति का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। नदी, वर्षा, वन, पशु-पक्षी और ऋतुएँ लोक जीवन का हिस्सा हैं। इसलिए लोक साहित्य में प्रकृति केवल पृष्ठभूमि नहीं बल्कि जीवन का सक्रिय भाग दिखाई देती है।

6. असमिया लोकगीत परंपरा

लोकगीत असमिया लोक साहित्य की सबसे समृद्ध विधाओं में से एक है। लोकगीतों में समाज के भावनात्मक और सांस्कृतिक जीवन की अभिव्यक्ति होती है। जन्म से लेकर मृत्यु तक जीवन के विभिन्न अवसरों पर गीत गाए जाते हैं।

असमिया लोकगीतों में प्रेम, विरह, सामाजिक संबंध, धार्मिक विश्वास और प्रकृति के प्रति संवेदना दिखाई देती है।

बिहू गीत

बिहू असम का प्रमुख सांस्कृतिक पर्व है और बिहू गीत असमिया लोक संस्कृति की पहचान माने जाते हैं। ये गीत मुख्य रूप से कृषि जीवन और ऋतु परिवर्तन से जुड़े हुए हैं।

बिहू गीतों में—

युवा मन की भावनाएँ

प्रेम और आकर्षण

प्रकृति सौंदर्य

कृषि जीवन

सामाजिक उल्लास

का सुंदर चित्रण मिलता है।

बिहू गीतों की भाषा सरल और भावपूर्ण होती है। इनमें असमिया समाज की जीवन दृष्टि और उत्सवधर्मिता स्पष्ट दिखाई देती है।

विवाह गीत

विवाह अवसरों पर गाए जाने वाले गीतों में पारिवारिक संबंधों और सामाजिक परंपराओं की अभिव्यक्ति मिलती है। इन गीतों में हास्य, भावुकता और पारिवारिक जीवन के चित्र दिखाई देते हैं।

लोरी गीत

माताएँ बच्चों को सुलाने के लिए जो गीत गाती हैं, वे लोक साहित्य की महत्वपूर्ण विधा हैं। इन गीतों में मातृत्व, स्नेह और भविष्य की कामना व्यक्त होती है।

7. असमिया लोककथाएँ

लोककथाएँ लोक साहित्य का महत्वपूर्ण अंग हैं। इनमें कल्पना और जीवन अनुभव का सुंदर समन्वय होता है। असमिया लोककथाओं में मनुष्य, पशु-पक्षी, देवी-देवता और अलौकिक तत्वों के माध्यम से सामाजिक संदेश प्रस्तुत किए जाते हैं।

लोककथाएँ केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं हैं, बल्कि वे समाज की नैतिक शिक्षा और सांस्कृतिक मूल्यों को सुरक्षित रखती हैं। इनमें सत्य, साहस, बुद्धिमत्ता और न्याय जैसे मूल्यों की स्थापना दिखाई देती है।

असमिया लोककथाओं में स्थानीय परिवेश का प्रभाव स्पष्ट होता है। नदी, जंगल और ग्रामीण जीवन इन कथाओं के प्रमुख आधार हैं।

8. लोकगाथाएँ और ऐतिहासिक चेतना

लोकगाथाएँ किसी समाज की सामूहिक स्मृति को सुरक्षित रखने का कार्य करती हैं। इनमें वीरता, संघर्ष और महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन मिलता है।

असमिया लोकगाथाओं में स्थानीय नायकों, सामाजिक संघर्षों और ऐतिहासिक अनुभवों का चित्रण मिलता है। ये गाथाएँ समाज को अपने अतीत से जोड़ने का कार्य करती हैं।

9. असमिया लोक साहित्य में स्त्री जीवन की अभिव्यक्ति

असमिया लोक साहित्य में स्त्री जीवन का चित्रण अत्यंत संवेदनशील और स्वाभाविक रूप में मिलता है। लोकगीतों, विवाह गीतों, लोरियों और अन्य लोक रचनाओं में स्त्री के भावनात्मक संसार, पारिवारिक जिम्मेदारियों और सामाजिक अनुभवों की अभिव्यक्ति दिखाई देती है।

विवाह गीतों में बेटी के विदा होने की पीड़ा, नए जीवन की आशाएँ और पारिवारिक संबंधों की भावनात्मकता व्यक्त होती है। इन गीतों में स्त्री केवल एक सामाजिक भूमिका निभाने वाली व्यक्ति नहीं है, बल्कि वह परिवार और संस्कृति की वाहक के रूप में प्रस्तुत होती है।

असमिया लोकगीतों में स्त्री के प्रेम, विरह और प्रतीक्षा की भावनाएँ भी विशेष रूप से व्यक्त हुई हैं। विशेषकर बिहू गीतों में युवतियों के मनोभाव, सौंदर्य-बोध और स्वतंत्र अभिव्यक्ति दिखाई देती है। इससे स्पष्ट होता है कि लोक साहित्य ने स्त्री के आंतरिक जीवन को अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान किया।

10. असमिया लोकनाट्य परंपरा

लोकनाट्य लोक साहित्य का प्रदर्शनात्मक रूप है जिसमें गीत, संगीत, अभिनय और कथा का समन्वय होता है। असम की लोकनाट्य परंपरा अत्यंत समृद्ध रही है।

असम में अंकिया नाट और भक्ति आधारित नाट्य परंपरा का विशेष महत्व है। इसमें धार्मिक कथाओं के माध्यम से सामाजिक और नैतिक संदेश प्रस्तुत किए जाते हैं।

लोकनाट्य ने अशिक्षित ग्रामीण समाज तक सांस्कृतिक और धार्मिक विचारों को पहुँचाने का कार्य किया। इसमें मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षा और सामाजिक चेतना का उद्देश्य भी निहित रहा है।

11. असमिया लोक साहित्य पर वैष्णव आंदोलन का प्रभाव

असम के सांस्कृतिक इतिहास में वैष्णव आंदोलन का महत्वपूर्ण स्थान है। इस आंदोलन ने साहित्य, संगीत, नाटक और सामाजिक जीवन को प्रभावित किया।

भक्ति आंदोलन ने लोक भाषा को महत्व दिया और धार्मिक विचारों को जनसामान्य तक पहुँचाया। इसके परिणामस्वरूप असमिया भाषा और साहित्य के विकास को गति मिली।

भक्ति साहित्य और लोक परंपरा के समन्वय ने असमिया संस्कृति को एक नई पहचान प्रदान की। लोक जीवन और आध्यात्मिक चेतना के बीच संबंध स्थापित हुआ।

12. असमिया लोक साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण चेतना

असमिया लोक साहित्य का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष प्रकृति के साथ उसका गहरा संबंध है। असम की भौगोलिक परिस्थितियों ने यहाँ के लोक जीवन को अत्यधिक प्रभावित किया है।

ब्रह्मपुत्र नदी, वर्षा, हरियाली और वन जीवन लोक रचनाओं में बार-बार दिखाई देते हैं। प्रकृति यहाँ केवल सौंदर्य का विषय नहीं बल्कि जीवन का आधार है।

लोक साहित्य में प्रकृति के प्रति सम्मान और सह-अस्तित्व की भावना दिखाई देती है। आधुनिक पर्यावरण संकट के समय में यह दृष्टि अत्यंत प्रासंगिक हो जाती है।

13. आधुनिक युग में असमिया लोक साहित्य की प्रासंगिकता

आधुनिक समय में विज्ञान, तकनीक और वैश्वीकरण के प्रभाव से लोक परंपराओं में परिवर्तन आया है। मौखिक परंपरा पर आधारित लोक साहित्य के सामने संरक्षण की चुनौती उपस्थित हुई है।

फिर भी असमिया लोक साहित्य का महत्व कम नहीं हुआ है। आज लोक साहित्य का अध्ययन संस्कृति, समाजशास्त्र, इतिहास और साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में किया जा रहा है।

लोक साहित्य आधुनिक समाज को अपनी जड़ों से जोड़ता है। यह सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखने और नई पीढ़ी को अपनी परंपराओं से परिचित कराने का माध्यम है।

लोक साहित्य का डिजिटल संग्रह, शोध और प्रकाशन इसके संरक्षण के महत्वपूर्ण उपाय हैं।

14. उपसंहार

असमिया लोक साहित्य असम की सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक चेतना का महत्वपूर्ण दस्तावेज है। इसमें असम के सामान्य जनजीवन, प्रकृति प्रेम, सामाजिक संबंधों, धार्मिक विश्वासों और सामूहिक अनुभवों की सशक्त अभिव्यक्ति मिलती है।

लोक साहित्य की विशेषता उसकी सहजता, मौखिक परंपरा और जनसामान्य से जुड़ाव में निहित है। असमिया लोकगीत, लोककथाएँ, लोकगाथाएँ और लोकनाट्य असम की सांस्कृतिक विविधता को संरक्षित रखते हैं।

वर्तमान समय में जब स्थानीय संस्कृतियाँ वैश्वीकरण के प्रभाव से बदल रही हैं, तब असमिया लोक साहित्य का संरक्षण और अध्ययन और भी आवश्यक हो गया है। यह साहित्य केवल अतीत की स्मृति नहीं बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए सांस्कृतिक मार्गदर्शक भी है।

अतः कहा जा सकता है कि असमिया लोक साहित्य भारतीय लोक परंपरा की अमूल्य धरोहर है, जो मानव जीवन, प्रकृति और संस्कृति के गहरे संबंधों को उजागर करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. शर्मा, सत्येंद्रनाथ — असमिया साहित्य का इतिहास।
2. बरुआ, हेमचंद्र — असमिया भाषा और साहित्य का इतिहास।
3. नेओग, महेश्वर — The Cultural Heritage of Assam।
4. दत्त, बीरेन्द्रनाथ — Folklore of Assam।
5. गोस्वामी, प्रफुल्लदत्त — Ballads and Tales of Assam।
6. देवी, लीलावती — Folklore of North-East India।
7. बरुआ, बी. के. — Cultural History of Assam।
8. सैकिया, नागेन — Studies on Assamese Literature।
9. भट्टाचार्य, प्रमोद चंद्र — असमिया लोक साहित्य।
10. बोरा, महेंद्र — असमिया साहित्य का विकास।
11. दत्ता, बिरेंद्रनाथ — The Folk Culture of Assam।
12. शर्मा, हेमंत कुमार — उत्तर-पूर्व भारत की लोक परंपराएँ।
13. Baruah, S. L. — A Comprehensive History of Assam।
14. Goswami, Indira — Studies in Assamese Culture।
15. Thakur, G. — Indian Folk Literature: Tradition and Culture।

फोन: 9954338539

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 114-121
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मलयज की डायरी: सृजन के विविध आयाम

डॉ० वागीश तिवारी
प्रयागराज

शोध सार:
डायरी साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात हम यह कह सकते हैं कि यह लेखक के स्वअनुभव , आत्मसंवाद , समयबोध और उसके रचनात्मक चिंतन का दस्तावेज होता है। यह साहित्यिक विधा के रूप में जल के समान दिखाई देता है जो अपने गुण के कारण विख्यात है कि जिस बर्तन या रंग में मिलता है उसी के समान दिखाई देने लगता है। डायरी अपने साथ में आलोचना , समीक्षा , यात्रा साहित्य , आत्मकथा, काव्य लगभग हर विधा लेकर चलती है। जैसे-जैसे मनुष्य जाति आधुनिकता की तरफ नवीन तकनीक के सहारे बढ़ती रही है वैसे-वैसे मनुष्य स्वयं में अकेला होता गया है। वह तमाम रिश्तों - नातों से घिरा होते हुए भी अकेलेपन का शिकार रहता है। पारिवारिक विघटन , बढ़ता शहरीकरण जैसी घटनाएं मनुष्य के अकेलेपन के शिकार का प्रमुख कारण रही है। मनुष्य को स्वयं से वार्ता करने के लिए डायरी एक माध्यम के रूप में नजर आया। जिसमें वह अपनी तमाम सामाजिक , सांस्कृतिक , राजनीतिक , व्यक्तिगत जीवन के एहसासो को तथा उस पर अपने विचारों को दर्ज करने लगा। मलयज एक साहित्यकार थे परंतु उनके द्वारा लिखी गई डायरी में जीवन के विविध आयामों पर उनकी सृजनात्मक दृष्टि की कलम से उनके व्यक्तिगत विचार एवं एहसासों की झलकियां है। उनके लिए डायरी लिखना केवल मन को हल्का करना नहीं था अपितु वह उसको अपने जीवन संघर्षों एवं सामाजिक गतिविधियों का एक दस्तावेज के रूप में प्रस्तुत करना चाहते थे।

बीज शब्द :
मलयज , डायरी , जीवन संघर्ष , अस्तित्व बोध , सृजन दृष्टि , विविध आयाम ,

मूल आलेख :

डायरी धीरे-धीरे ही सही पर वर्तमान में समृद्ध विधा के रूप में स्थापित हो चुकी है। यह ऐसी विधा है जो लेखक को बिना किसी कृत्रिमता के बिना किसी पर्दे के पाठक के सामने प्रस्तुत कर देती है।यह विधा लेखक के आईने के समान होती है तथा उसके व्यक्तित्व के सबसे नजदीक होती है। लेखक के दैनिक जीवन में कुछ घटनाएं ऐसी घटती हैं जो तो उसको हर्षित करती है या फिर अवसाद ग्रस्त। ऐसी घटनाओं को लेकर जब वह अपने विचार दैनंदिनी में दर्ज करता है तो वह एक जीवंत दस्तावेज बन जाता है। मलयज की डायरी के चार खंड हैं जो 3 जिल्दो में डॉक्टर नामवर सिंह के संपादन में प्रकाशित हुई है। मलयज डायरी को केवल तटस्थ दृष्टि से नहीं लिख रहे थे बल्कि वह उसे जीना चाहते थें।

मलयज जीवन को सृजन के लिए समर्पित कर दिए थे। डॉ. रामचंद्र तिवारी जी कहते है कि "मलयज जीवन की सार्थकता सृजन में देखते है , लिखना उनके लिए सांस लेने के समान है।"[1]

मलयज एक आलोचक एवं कवि थे परंतु उनकी डायरी का जब हम अध्ययन करते हैं तो पाते हैं कि उनकी डायरी केवल व्यक्तिगत भावनाओं को प्रदर्शित करने के लिए नहीं थी यह जीवन की अनेक पहलुओं को सुरक्षित किए हुए सामाजिक ,राजनीतिक , ऐतिहासिक , अस्तित्व को कई परतों में उजागर करती है। डायरी , लेखक के जिये गए जीवन को जीवंत बनाए रखती है। उसके द्वारा जो भी जीवन में लिए गए निर्णय है वह उसको टटोलने का छूट देती है। डायरी , लेखक का समय के प्रति प्रतिक्रिया है। मलयज अपने साहित्यिक जीवन के आरंभ से डायरी लिखते रहे है। वह डायरी में लेखक की उपस्थिति कैसे होनी चाहिए उस पर चर्चा करते है। वह उसको दहकता हुआ जंगल कहते है और कहते है कि "डायरी मेरे लिए दहकता हुआ जंगल हो, एक तटस्थ घोंसला नहीं जिसमें अपने पर घुसेड़ जब मैं चाहूँ चुपके पड़ा रहूँ, मेरे संघर्ष की प्रवक्ता हो यही मेरी सुरक्षा है- डायरी के कोरे पृष्ठों पर अंकित शब्दों में नहीं, उन पर जलती आग के बीच।"[2]

साहित्यकार का कार्य केवल आनंद प्रदान करना नहीं होता है बल्कि वह समाज में , देश में , विश्व में चल रहे राजनैतिक क्रियाकलापों पर भी अपनी दृष्टि बनाए रखता है। साहित्यकार समकालीन राजनीतिक क्रियाकलापो, सत्ता की नीतियों, सामाजिक अन्याय , शोषण तथा जनजीवन की समस्याओं को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त करता है। वह सत्ता का अंध समर्थक नहीं बल्कि उसका सजग समीक्षक होता है। मलयज ने अपनी डायरी में राजनीतिक जीवन को बखूबी प्रदर्शित किया है। वह सजग राजनीतिक समीक्षक के रूप में कहते हैं कि "नेहरू उन व्यक्तियों में से हैं जिन्होंने अपनी प्रतिभा से अपने को शक्तिशाली मिथ बना लिया है और उसमें कैद हो गए है। उनके प्रतीक आचरण चिंतन अब उसे मिथ द्वारा अनुशासित हो रहा है। किंतु किसी भी देश का जीवन मिथ को लेकर चाहे वह कितना भी शक्तिशाली क्यों ना हो अधिक दूर तक नहीं चल सकता। जीवन किसी भी मिथ से बड़ा है। एक समय था जब भारत अपने व्यक्तित्व के सबसे तेजवान रूप को इस मिथ द्वारा ही अभिव्यक्त कर सकता था किंतु अब वह मिथ खंडित हो चुका है नए परिवर्तनों के साथ चेतनाएं और अनुभूतियां आई हैं और नेहरू द्वारा निर्मित वर्ल्ड पिक्चर धुंधली पड गई है मोटे तौर पर ऐसा लग सकता है विज्ञान और संस्कृति के समन्वय की चेष्टा में नेहरू अभी भी देश की प्रतिनिधि माना है किंतु जो असंगतियां और अंतरविरोध नई अनुभूतियों के द्वारा देश के मानस में घुस आए हैं उनके सामने नेहरू पिछड़ गया है।"[3] वास्तव में किसी राष्ट्र का विकास किसी भी नेता या किसी व्यक्ति विशेष के छवि के आधार पर नहीं हो सकता। राष्ट्र का जीवन यथार्थ जनता की समस्याओं और बदलती परिस्थितियों पर आधारित होता है। मलयज का मानना है कि किसी भी युग और नेता का मूल्यांकन इतिहास की कसौटी पर होना चाहिए न कि केवल भावनात्मक श्रद्धा के आधार पर।

मलयज आमतौर पर शिक्षित शहरी मध्यवर्गीय मानसिकता के लेखक एवं आलोचक माने जाते हैं। मलयज की डायरी हमें उनकी रचनाओं से अलग उनके नए व्यक्तित्व एवं विचारों का दर्शन कराती है, जहां वह रूढ़िवादी सोच के साथ चल रही सत्ता को आईना दिखाते हैं, वहीं वह हाशिए पर रह रहे समाज की बात भी करते हैं। वह गरीबी और अमीरी के बीच अपने व्यक्तिगत विचार के माध्यम से अंतर बताते हुए कहते हैं कि- "गरीब स्वभावतः क्रान्तिकारी होता है क्योंकि भूखे पेट और एक लंगोटी के सिवा उसके पास कुछ नहीं होता। जो गरीब के साथ नहीं है, वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर अमीर के साथ है। अमीर बनने की चेष्टा गरीब के बृहत समूह से कटते जाने की चेष्टा है। अपने को बंद करने की चेष्टा है। एक व्यक्ति भी अपने निर्णय से अपने अमीर बनने के निर्णय से कई कई गरीब पैदा करता है। अमीर बनने की कोशिश जन-समूह का रास्ता छोड़कर अपनी अलग पगडंडी पर चलने लगना है। सबका, बहुसंख्यक का साथ

छोड़ देना, देश का साथ छोड़ देना है क्योंकि देश उन लोगों से बना है, जो ज्यादातर गरीब हैं, गरीबी की रेखा के नीचे जी रहे हैं। आज अमीर होना एक अराष्ट्रीय कर्म है।"[4]

मनुष्य का जीवन केवल सुख और उपलब्धियों से नहीं बना होता, बल्कि उसमें संघर्ष, अशांति, असफलता और मानसिक उलझन भी निरंतर उपस्थित रहती हैं। कई बार परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं कि व्यक्ति अपने भीतर उठ रहे द्वंद्व को किसी के साथ साझा नहीं कर पाता। वह बाहर से सामान्य दिखाई देता है, लेकिन भीतर ही भीतर चिंता, भय, अकेलेपन और असमंजस से जूझता रहता है। यही आंतरिक संघर्ष उसके व्यक्तित्व का एक मौन पक्ष बन जाता है। जीवन की अशांति केवल बाहरी परिस्थितियों से नहीं, बल्कि आत्मसंघर्ष, संबंधों की जटिलता, भविष्य की अनिश्चितता और अपने अस्तित्व के प्रश्नों से भी उत्पन्न होती है। इन क्षणों में व्यक्ति स्वयं ही अपना सहारा बनता है। वह अपने अनुभवों, स्मृतियों और आत्मसंवाद के माध्यम से समाधान खोजने का प्रयास करता है। मलयज भी ऐसी उलझनों और परिस्थितियों से गुजर रहे थे। मलयज के सृजन की खूबसूरती ही है कि वह जीवन के इस आयाम को अपनी डायरी में दर्ज किए है। वह लिखते 20 जनवरी 1951 को लिखते है कि -

"अशान्ति ! अशान्ति ! सर्वत्र यही गूँज रहा है मेरे मस्तिष्क में। न उठते शान्ति, 'न बैठते शान्ति, न बाहर शान्ति, न भीतर शान्ति मानो मेरे लिए शान्ति है ही नहीं। फिर कहाँ जाऊँ ? किधर जाऊँ? कुछ नहीं सूझता, कुछ भी समझ में नहीं आता। मेरी जीवन-नैया अशान्ति के समुद्र में हिचकोले पर हिचकोले खा रही है, दिल काँप रहा है। हे भगवन्! क्या मेरी नैया कभी पार न लगेगी, क्या यूँ ही जीवन में मेरी अशान्ति का डेरा रहेगा ? क्या मेरे जीवन की सांध्य वेला में आशा का उज्ज्वल प्रभात न होगा? क्या मेरी जीवन-तृष्णा में शान्ति की वर्षा होगी ? क्या मेरी जीवन-काल में आशा का दीपक न जगमगाएगा? क्या मेरी जीवन-वाटिका की सूनी क्यारी में आनन्द के पुष्प न खिलेंगे? हाय! कोई नहीं बोलता, कोई नहीं सुनता। अच्छा, न सुने कोई, मैं ही चुप हो जाता हूँ।"[5]

मनुष्य के जीवन की सबसे गहरी और कठिन अनुभूतियों में व्यक्तिगत पीड़ा तथा किसी प्रिय व्यक्ति को खोने का दुःख है। ऐसी पीड़ा को शब्दों में पूरी तरह व्यक्त करना संभव नहीं होता। बाहर से व्यक्ति सामान्य दिखाई देता है, लेकिन उसके भीतर स्मृतियों, रिक्तता और असहनीय दुःख का एक मौन संसार निरंतर सक्रिय रहता है। वह अपने आँसुओं को छिपाकर जीवन की सामान्य गति बनाए रखने का प्रयास करता है, किंतु भीतर ही भीतर टूटता और बिखरता रहता है। किसी करीबी के बिछड़ जाने के बाद व्यक्ति केवल उस व्यक्ति को ही नहीं खोता, बल्कि अपने जीवन का एक हिस्सा भी खो देता है। हर वस्तु, हर स्थान और हर स्मृति उसे उस अनुपस्थिति का अहसास कराती है। वह अनेक बार अपने मन में उस व्यक्ति से संवाद करता है, यादों को संजोकर जीता है और धीरे-धीरे उसी स्मृति के सहारे अपने जीवन को आगे बढ़ाने का प्रयास करता है। यह संघर्ष प्रायः मौन होता है, क्योंकि हर पीड़ा को शब्द नहीं मिलते और हर दुःख को साझा नहीं किया जा सकता। मलयज ऐसी पीड़ा से गुजर रहे थे जब उनकी बहन की मृत्यु हो जाती है उसके पश्चात वह अपने दुःखों को अपनी पीड़ा को वह डायरी के माध्यम से स्वयं से संवाद करते हुए लिखते है कि "हाय ! कौन जानता था कि मेरी प्यारी बहिन गुल्लू इतनी जल्दी हम सब से मुँह मोड़ लेगी, नाता तोड़ लेगी। हाय! किसे पता था कि वह हँसती खेलती गुड़िया इतनी जल्दी रूठ जाएगी हम सब से। हाय! कली खिलने भी न पाई कि क्रूर नियति ने उसे मसल डाला। हे भगवान !"[6]

मलयज के साहित्य की खूबी रही है कि उनके साहित्यामे दर्शन के माध्यम से पीड़ा , अस्तित्व की पहचान , जीवन की व्याख्या को व्याख्यायित किया गया है। वैसे भी साहित्य और दर्शन का संबंध अत्यंत घनिष्ठ है। दर्शन जीवन,

जगत, सत्य, आत्मा, ईश्वर, नैतिकता तथा मानव अस्तित्व के मूल प्रश्नों पर विचार करता है, जबकि साहित्य इन्हीं प्रश्नों को भाव, कल्पना और कलात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से प्रस्तुत करता है। इस प्रकार दर्शन जहाँ जीवन की बौद्धिक व्याख्या है, वहीं साहित्य उसी जीवन का संवेदनात्मक अनुभव है। साहित्य में दर्शन का उद्देश्य केवल सिद्धांत प्रस्तुत करना नहीं, बल्कि जीवन के गहरे सत्य का कलात्मक उद्घाटन करना है। मलयज की डायरी दैनंदिनी जीवन की घटनाओं के क्रम में उनके चिंतन को भी प्रकट करती है। जिसमें निजी अनुभवों,विश्वासों और आकांक्षाओं के प्रति एक दार्शनिक अंदाज भी दिखायी पड़ता है समाज,साहित्य,संस्कृति और राजनीति , व्यक्ति के अंतः से किस प्रकार गुजरती रहती है और इन सबसे संवाद करता हुआ वह अपने एकालाप में खुद को कहाँ स्थापित कर अथवा ढूढ़ रह होता है? डायरी लेखन में सारी चीजें समायोजित होकर सामने आती हैं। अपने से बात करना और साथ ही समाज के साथ संवाद की प्रक्रिया को जारी रखना एक चुनौती भरा काम होता है, जिससे हर साहित्यकार गुजरता है। संवाद और एकालाप की यह पद्धति मलयज की डायरी में भी दिखायी पड़ती है। सामान्य जीवन व्यवहार की साधारण बातों पर स्वयं से बात करते हैं तो कही दार्शनिक होकर जीवन और सत्य की जटिल शब्दावली के साथ उपदेशक नजर आते हैं वह मानव को परम सत्ता का अंश मानते है वह इस पर विचार करते हुए कहते है कि "मानव उस परम ब्रह्म का अंश है जिसकी शक्तियाँ अनन्त हैं और यही मानव में शक्ति का स्रोत है। बिना प्रेरणा के यह शक्ति प्रायः सुप्त रहती है, उसे जाग्रत करने के लिए साधना की आवश्यकता है। केवल बुद्धि की साधना अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए ही घातक है, हृदय की साधना में जीवन का कोई निश्चित आकार नहीं। दोनों के समन्वय में एक सद्गुरु का उतना ही महत्त्व है जितना बुद्धि और हृदय की सम्मिलित शक्ति-सत्ता का।"[7]

रचनाकार का एक अलग जीवन और समाज साहित्य के क्षेत्र में बन जाता है। यह उनके जीवन के हिस्से का एक प्रमुख पहलू बन जाता है। वहां का एक अलग ही दुनिया होता है। किसी भी रचनाकार का अपने समकालीन रचनाकारों के प्रति दृष्टिकोण एक जैसा नहीं होता। उसमें एक ओर श्रद्धा, सम्मान और प्रेरणा का भाव होता है, तो दूसरी ओर असहमति, आलोचना और वैचारिक विरोध भी दिखाई देता है। यह विरोध व्यक्तिगत नहीं, बल्कि साहित्यिक मूल्यों, रचना-दृष्टि और वैचारिक प्रतिबद्धताओं से जुड़ा होता है। एक सच्चा रचनाकार अपने समकालीनों की रचनात्मक उपलब्धियों का सम्मान करता है। वह उनसे सीखता है, उनके योगदान को स्वीकार करता है और साहित्यिक परंपरा को आगे बढ़ाने में उनकी भूमिका का मूल्यांकन करता है। साथ ही, यदि उसे साहित्य में कृत्रिमता, अवसरवाद, सतहीपन या वैचारिक समझौता दिखाई देता है, तो वह उसका निर्भीक विरोध भी करता है। कभी-कभी लेखक अपनी उपलब्धियों को पचा नहीं पाते है और वह जाने - अनजाने अपने समकालीन लेखकों से अनुचित व्यवहार भी कर देते है। मलयज की डायरी में भी समकालीन रचनाकारों के प्रति यही द्वंद्वात्मक दृष्टि परिलक्षित होती है। वे अनेक साहित्यकारों की सृजनात्मक क्षमता, ईमानदारी और वैचारिक गहराई का सम्मान करते हैं, किंतु साहित्य में व्याप्त दिखावे, बौद्धिक आडंबर, आत्मप्रशंसा और रचनात्मक असत्य के प्रति स्पष्ट असहमति भी व्यक्त करते हैं। वह कहते है कि "और अज्ञेय जी.. उनके निकट मुझे अपनी क्षुद्रता, अपने छोटेपन, बौनेपन का ही बोध हुआ है। उनका व्यक्तित्व छा कर आतंकित करता है और उससे घृणा, खीझ और नपुंसक क्रोध उपजता है, आत्मीय श्रद्धा नहीं उपजती। वे दूसरे के व्यक्तित्व को अपने बराबर उठाकर रखने की ओर ज़रा भी चेष्टा नहीं करते। यह उनके कलाकार का अहंगत संस्कार है उनकी शालीनता है हिमालय की बर्फ जो पिघलकर नीचे मैदानों की भूमि में नहीं मिलती चमक देती है, ठंडी चमक...

साही के पास प्रखर दृष्टि है और वह बहुत ईमानदार हैं, सच्चे और अपनी धारणाओं में एक कलाकार की-सी पवित्रता लिए हुए हैं जो मतवाद नहीं है, सिद्धान्त या सम्प्रदाय नहीं है, राजनीति का मानसिक उच्छिष्ट या चर्वित पदार्थ नहीं है, एक जागरूक व्यक्ति का अपना सत्य है, व्यक्ति-सत्य जिस पर उसने अपने जीवन के अनमोल क्षणों की बाजी लगाई है…"[8]

मलयज ने हिन्दी साहित्य को नई भाषा, नई अभिव्यक्ति और आत्मान्वेषी लेखन-दृष्टि प्रदान की। उनकी लेखकीय चेतना बाहरी घटनाओं से अधिक मनुष्य के अंतर्जगत, उसकी मानसिक जटिलताओं और अस्तित्वगत प्रश्नों पर केंद्रित रही। वे मूलतः अंतर्मुखी, संवेदनशील और आत्मविश्लेषी रचनाकार थे। मध्यवर्गीय परिवेश से आने के कारण उन्होंने मध्यवर्गीय जीवन की विडंबनाओं, आर्थिक अभावों, सामाजिक दबावों, पारिवारिक दायित्वों और मानसिक संघर्षों को अत्यंत प्रामाणिकता के साथ चित्रित किया है। उनकी रचनाओं में मध्यवर्ग केवल एक सामाजिक वर्ग नहीं, बल्कि आधुनिक मनुष्य की असुरक्षा, विवशता और संघर्षशील चेतना का प्रतीक बनकर उपस्थित होता है। मलयज का व्यक्तिगत जीवन अनेक कठिनाइयों से घिरा रहा। आर्थिक तंगी, अस्थिर जीवन-परिस्थितियाँ और निरंतर अस्वस्थ रहने के कारण उनका जीवन संघर्षमय बना रहा। धनाभाव और व्याधिग्रस्त शरीर उनके रचनात्मक जीवन में बार-बार बाधा उत्पन्न करते रहे, फिर भी उन्होंने साहित्य-साधना से कभी समझौता नहीं किया। इन प्रतिकूल परिस्थितियों ने उनके व्यक्तित्व में गहरी संवेदनशीलता, आत्मचिंतन और जीवन के प्रति गंभीर दृष्टि का विकास किया। इसी कारण उनकी डायरी में जीवन के भयावह, त्रासद और विडंबनापूर्ण पक्ष अत्यंत मार्मिक रूप में अंकित हुए हैं। वहाँ वे अपने दुःख, अकेलेपन, असुरक्षा, मृत्यु-बोध, मानसिक तनाव और अस्तित्वगत छटपटाहट को बिना किसी आडंबर के व्यक्त करते हैं। उनकी डायरी आत्मदया का आख्यान नहीं, बल्कि एक संवेदनशील रचनाकार के अंतर्मन का सच्चा दस्तावेज़ है, जिसमें निजी अनुभव व्यापक मानवीय अनुभव का रूप ग्रहण कर लेते हैं। इस दृष्टि से मलयज की डायरी केवल व्यक्तिगत जीवन-वृत्तांत नहीं, बल्कि आधुनिक मनुष्य के संघर्ष, संवेदना और आत्मबोध का एक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक दस्तावेज़ है। वह कहते है कि

"मेरे जीवन की प्याली तृष्णा-रस छलकाती थी विभ्रम की मदिरा पीने कामना मचल जाती थी
दुखमय सुख के कूजन में चिर प्यासा हृदय हमारा था ललक उठा कुछ सुनकर उन्मद गीतों की धारा
यौवन के मधु सौरभ का स्वर्णिम विहान कब देखा अनजान तिमिर में तो थी उलझन की विकृत रेखा
उषा की अरुणाई में कालिमा सघन संध्या की हँसना फिर रोना मन का है निर्मम क्रीड़ा जग की
उस अंधकार की छाया बढ़ती ज्यों धीरे-धीरे मन फूटफूटकर रोता"[9]

मलयज की डायरी में अस्तित्व-बोध एक केंद्रीय तत्त्व के रूप में उपस्थित है। उनकी डायरी केवल व्यक्तिगत अनुभवों का संकलन नहीं, बल्कि मनुष्य के अस्तित्व, उसकी पहचान, स्वतंत्रता, अकेलेपन, मृत्यु-बोध और जीवन के अर्थ की निरंतर खोज का दस्तावेज़ है। मलयज अपने बाह्य जीवन से अधिक अपने अंतर्जगत की यात्रा करते हैं और स्वयं से प्रश्न करते हैं कि मनुष्य होने का वास्तविक अर्थ क्या है। मलयज के यहाँ अस्तित्व-बोध का पहला आधार आत्मसंवाद है। वे अपनी सफलताओं और असफलताओं, आशाओं और निराशाओं, प्रेम और अकेलेपन का ईमानदारी से विश्लेषण करते हैं। उनकी डायरी में आत्मालोचन की प्रवृत्ति उन्हें अपने वास्तविक स्वरूप से परिचित कराती है। वे अपने भीतर की कमजोरियों को छिपाते नहीं, बल्कि उन्हें स्वीकार करते हुए आत्मबोध की दिशा में आगे बढ़ते हैं। दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष एकाकीपन है। मलयज के लिए अकेलापन केवल सामाजिक अलगाव नहीं, बल्कि आत्मचिंतन की

आवश्यक स्थिति है। इसी एकांत में वे स्वयं से संवाद करते हैं और जीवन के गहरे प्रश्नों से जूझते हैं। उनकी दृष्टि में मनुष्य को अपने अस्तित्व का अर्थ स्वयं खोजना पड़ता है; यह उत्तर बाहर नहीं, बल्कि अपने भीतर मिलता है। मलयज अपनी डायरी 1 जनवरी 1961 को दर्ज करते है कि "तुम दुनिया हो। जिसके कोई चेहरा नहीं होता, धुँधली, चटख और मद्धिम पृष्ठभूमि के बीच से झाँकता हुआ, अपने 'होने' के अहसास से चमकता हुआ चेहरा... तुम में वह व्यक्तित्व का विशिष्ट बोध नहीं है, जो तुम्हें इस घर की आत्मा से जोड़े तुम इस घर को कभी महसूस नहीं कर सकतीं, तुम दुनिया हो जिसके कोई चेहरा नहीं होता।"[10]

मनुष्य को एकांत की आवश्यकता है, क्योंकि वहीं आत्मबोध और सृजन संभव होता है। लेकिन एकांत तभी तक सार्थक है जब उसमें संवाद, संवेदना और अभिव्यक्ति की संभावना बनी रहे। जब एकांत सामाजिक और मानवीय संबंधों से पूरी तरह कट जाता है, तब वह मानसिक अव्यवस्था और घुटन में बदल जाता है। एकांत का उद्देश्य संसार से पलायन नहीं, बल्कि स्वयं को पहचानकर पुनः संसार और सृजन से जुड़ना है। उनके लिए सच्चा एकांत वही है जो आत्मबोध, संवेदना और रचनात्मकता को जन्म दे, जबकि संवादहीन और अस्वीकारित एकांत व्यक्ति को 'Chaos' अर्थात् मानसिक अव्यवस्था और दमघोंटू पीड़ा की ओर ले जाता है। मलयज भी शायद ऐसी परिस्थिति से गुजरे थे, वह अपने अनुभव को लिखते हुए कहते है कि "कभी-कभी ऐसा लगता है कि जब हमारे व्यक्तिगत एकांत में कोई हिस्सा बांटने नहीं आता या उसमें हिस्सा बंटाकर उस एकांत की सहमत नहीं देता-उसे स्वीकृति नहीं देता तब वह एकांत फिर एकांत फिर एकांत नहीं रहने पाता स्वयं। अपने सामने भी। वरन एक Chaos छोर बन जाता है। एक उथल-पुथल और अव्यवस्थित क्रम एक विचित्र सी दम घोटक पीड़ा का बोध। एकांत को भोगने के लिए भी एक सीमा पर किसी विसर्जन की मांग होती है। पूर्ण एकांत क्या अनासक्ति है? मरण की अवस्था? बोध में अर्थवान बना रहकर चिपटा हुआ एकांत जिसमें सृजन की समाहित होता है। इस अनासक्ति स्थिर जड़ अवस्था से भिन्न होता है।"[11]

मलयज की डायरी उनके संपूर्ण रचनात्मक व्यक्तित्व का विश्वसनीय दस्तावेज़ है। इसमें दर्ज प्रत्येक शब्द उनकी संवेदनशील चेतना, सृजनात्मक ऊर्जा और आत्मान्वेषी दृष्टि का परिचायक है। उनके लेखन की वास्तविक शक्ति उनके भीतर निरंतर चलने वाले मानसिक और वैचारिक द्वंद्व से उत्पन्न होती है। यही आंतरिक संघर्ष उनकी रचनात्मकता को गहराई और मौलिकता प्रदान करता है। डायरी का प्रत्येक पृष्ठ उनके मनोभावों, आत्मसंवादों और जीवनानुभवों का सहज एवं निष्कपट उद्घाटन करता है, जहाँ वे किसी प्रकार के दिखावे या कृत्रिमता का सहारा नहीं लेते। मलयज का व्यक्तित्व अत्यंत संवेदनशील, आत्मनिष्ठ और ईमानदार था। उन्होंने अपने जीवन के सुख-दुःख, आशा-निराशा, उत्साह-विषाद तथा मानसिक बेचैनी को बिना किसी आडंबर के शब्दों में रूपायित किया। उनकी लेखकीय प्रतिबद्धता बाहरी प्रतिष्ठा, प्रसिद्धि या सम्मान प्राप्त करने से अधिक रचना की प्रामाणिकता के प्रति थी। वे अपने लेखन को आत्माभिव्यक्ति और आत्मसाक्षात्कार का माध्यम मानते थे, इसलिए उनके विचार और उनकी अभिव्यक्ति में कहीं भी कृत्रिम अंतर दिखाई नहीं देता। मलयज की डायरी के विषय में अशोक वाजपेयी अपनी पुस्तक 'कभी कभार' में कहते है कि "32 वर्षों के दौरान लिखी गई मलयज की डायरी रचना और आलोचना आत्मीय स्मृति और अन्तरंग चिन्तन का, अपने आसपास समय और समाज में, हिंदी संसार में और स्वयं मलयज की दुनिया में जो घट रहा था उसका बेचैन, कभी-कभी निस्संग और निर्मम, अक्सर चिन्तायुक्त बऔर उद्वेलित, धीरज और समझ का, सहानुभूति और कुशाग्रता का भावप्रवण, विचारोतेजक और कई तरह की चुनौतियाँ देने वाला लेखा-जोखा है। हिंदी में शायद ही इतनी लम्बी डायरी किसी लेखक

ने लिखी हो. इसमें संदेह नहीं कि डायरी स्वयं मलयज को समझने के बलावा हिंदी साहित्य और समाज को गहराई से जानने-समझने में, विशेषतः पांचवे से सातवें दशक की अवधि के सिलसिले में, एक अनिवार्य संदर्भ ग्रंथ है।"[12]

मलयज की डायरी की भाषा हिन्दी डायरी-साहित्य की सबसे विशिष्ट उपलब्धियों में गिनी जाती है। उनकी भाषा केवल घटनाओं का विवरण प्रस्तुत नहीं करती, बल्कि लेखक के अंतर्मन, संवेदना, वैचारिक संघर्ष और सृजनात्मक चेतना को भी अभिव्यक्त करती है। यही कारण है कि उनकी डायरी की भाषा साहित्यिक, कलात्मक और चिंतनप्रधान स्वरूप ग्रहण कर लेती है। मलयज की भाषा की पहली विशेषता उसकी संवेदनात्मक गहनता है। वे अपने अकेलेपन, आत्मसंघर्ष, रचनात्मक बेचैनी, प्रेम, पीड़ा और जीवनानुभवों को अत्यंत मार्मिक और सहज ढंग से व्यक्त करते हैं। उनकी भाषा में भावुकता नहीं, बल्कि अनुभूति की प्रामाणिकता और आत्मान्वेषण की गंभीरता दिखाई देती है। दूसरी प्रमुख विशेषता काव्यात्मकता है। मलयज मूलतः कवि थे, इसलिए उनकी डायरी की भाषा में बिंब, प्रतीक, रूपक और लयात्मकता का स्वाभाविक समावेश मिलता है। अनेक स्थानों पर उनकी गद्य-भाषा कविता का सौंदर्य ग्रहण कर लेती है, जिससे साधारण अनुभव भी कलात्मक अभिव्यक्ति बन जाते हैं। मलयज ने कही-कही अपने विचारों को प्रदर्शित करने के लिए काव्य का सहारा लिया है। वह शौकिया चित्रकार भी थे। उन्होंने अपनी डायरी में बीच-बीच में चित्रकला का भी नमूना पेश किया है।

निष्कर्ष :

मलयज की डायरी का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि यह केवल व्यक्तिगत जीवन-वृत्तांत नहीं, बल्कि सृजन-प्रक्रिया, आत्मसंघर्ष, साहित्यिक चेतना और समकालीन सामाजिक-राजनीतिक यथार्थ का एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है। उनकी डायरी में व्यक्ति और समाज, निजी अनुभव और सार्वजनिक सरोकार, संवेदना और वैचारिकता, तथा जीवन और साहित्य के बीच गहरा अंतर्संबंध दिखाई देता है। मलयज अपने आत्मानुभवों को इस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं कि वे व्यापक मानवीय अनुभव का रूप ग्रहण कर लेते हैं। इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मलयज की सृजनात्मकता अनेक आयामों में विकसित होती है। आत्मान्वेषण, रचनात्मक प्रक्रिया, साहित्यिक आलोचना, समकालीन साहित्यिक विमर्श, राजनीतिक चेतना, सांस्कृतिक दृष्टि तथा अस्तित्व-बोध। उनकी डायरी में रचना के जन्म, लेखक की मानसिक अवस्थाओं, सृजनात्मक दुविधाओं और साहित्यिक मूल्यों पर गंभीर चिंतन मिलता है। यही कारण है कि उनकी डायरी हिन्दी डायरी-साहित्य को केवल आत्मकथात्मक विधा तक सीमित नहीं रहने देती, बल्कि उसे वैचारिक और आलोचनात्मक गद्य की ऊँचाइयों तक पहुँचाती है।

सन्दर्भ:

1. रामचंद्र तिवारी , हिन्दी का गद्य साहित्य , विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी , 2024 , पृष्ठ - 639
2. दयानिधि मिश्र , हिन्दी का कथेतर गद्य , वाणी प्रकाशन , 2020
3. सं. नामवर सिंह , मलयज की डायरी , वाणी प्रकाशन , 2000 , पृष्ठ - 116
4. वही , पृष्ठ - 96
5. वही , पृष्ठ - 18
6. वहीं , पृष्ठ -26
7. वही , पृष्ठ - 36
8. वही , पृष्ठ - 606
9. वही , पृष्ठ - 53

10. सं. नामवर सिंह , मलयज की डायरी, भाग - 2 , वाणी प्रकाशन , 2000 , पृष्ठ -1
11. सं. नामवर सिंह , मलयज की डायरी , वाणी प्रकाशन , 2000 , पृष्ठ - 66
12. Hindisamay.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 122-126
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कण्वाश्रम का ऐतिहासिक भौगोलिक विश्लेषण

डॉ0 चन्द्रप्रभा कण्डवाल
असिस्टेंट प्रोफेसर (भूगोल विभाग),
रा0 स्नातकोत्तर महाविद्यालय कोटद्वार पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

प्रस्तावना–

उत्तराखण्ड की पावन भूमि सदा से ही ऋषि–मुनियों तपस्वियों की साधनास्थली रही है। यहाँ की प्रत्येक नदी, पर्वत वन और धाम किसी न किसी धार्मिक सांस्कृतिक अथवा ऐतिहासिक विरासत को समेटे हुए है। इन्हीं में से एक से पवित्र स्थल कण्वाश्रम है जो उत्तराखण्ड राज्य के पौड़ी गढ़वाल जनपद के अन्तर्गत कोटद्वार क्षेत्र में स्थित है। यह स्थान धार्मिक, पौराणिक ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।



कण्वऋषि

कण्वाश्रम की पहचान प्रमुख वैदिक गुरूकुल एवं तपोभूमि के रूप में होती है। इस स्थान पर महर्षि कण्व ने अपना आश्रम स्थापित किया था। यहां पर शकुन्तला का पालन–पोषण हुआ और चक्रवर्ती सम्राट भरत का जन्म हुआ, जिनके नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा।



सिंह के दांत गिनते हुए सम्राट भरत

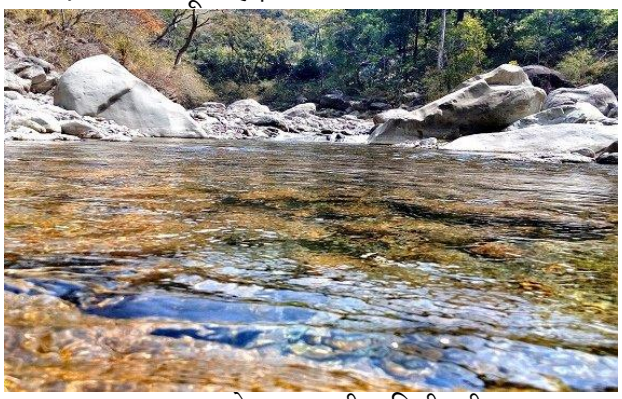
उद्देश्य–

इस शोध का मुख्य उद्देश्य कण्वाश्रम की ऐतिहासिक और पौराणिक भौगोलिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना है।

अध्ययन का विधि तंत्र–

इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीय स्रोतों के माध्यम से जानकारी एकत्रित की गई है। प्राथमिक स्रोतों में क्षेत्रीय भ्रमण स्थानियों, निवासियों एवं द्वितीय स्रोतों, ग्रन्थों, शोध पत्र–पत्रिकायें, इतिहासकारों की कृतियाँ, पौराणिक ग्रंथ जैसे महाभारत पुराण कालिदास की रचनाएँ आदि का प्रयोग किया गया।

कण्वाश्रम भौगोलिक दृष्टि से शिवालिक पर्वत श्रृंखला के अन्तर्गत स्थित है। यहां की धरातलीय बनावट पहाड़ी समतल और उपजाऊ है। कण्वाश्रम कोटद्वार नगर क्षेत्र से 12 कि0मी0 की दूरी पर स्थित है। जहां कण्व नदी (मालिनी) बहती है। इस क्षेत्र का अधिकांश भू–भाग वनाच्छादित है। जंगल से घिरा यह क्षेत्र प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण है।



कण्वाश्रम के पास बहती मालिनी नदी

इस क्षेत्र में बलुई दोमट और पथरीली है। यहां विभिन्न प्रकार की औषधीय एवं वनस्पतियाँ पायी जाती हैं जो इस क्षेत्र में जैव विविधता की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।



दुष्यंत एवं शकुंतला – कण्वाश्रम

भारतीय इतिहास और पौराणिक साहित्य में कण्वाश्रम का विशेष महत्व है। महर्षि कण्व के आश्रम में राजा दुष्यन्त की पत्नि शकुन्तला का पालन–पोषण हुआ। यहीं पर भरत का जन्म हुआ है। कालिदास के अभिज्ञान शकुन्लतम् नाटक में इस स्थल का विस्तृत उल्लेख मिलता है। आज भी यहां गुफा स्थित है, जिसे कण्व ऋषि की तपोभूमि माना जाता है। इस गुफा में आज भी धार्मिक अनुष्ठान होते हैं।

यह आश्रम एक विस्तृत वन प्रदेश में स्थित है जहां शन्ति तपस्या और अध्ययन का वातावरण था। यहां पर गुरूकुल प्रणाली के अन्तर्गत शिक्षा दी जाती थी। गुरू और शिष्य एक साथ रहते थे। यह प्रणाली भारत की पारम्परिक शिक्षा व्यवस्था की रीढ़ मानी जाती थी। यह आश्रम महाभारत, रामायण, वेद, पुराण तथा कालिदास की रचनाओं में उल्लेखित है।

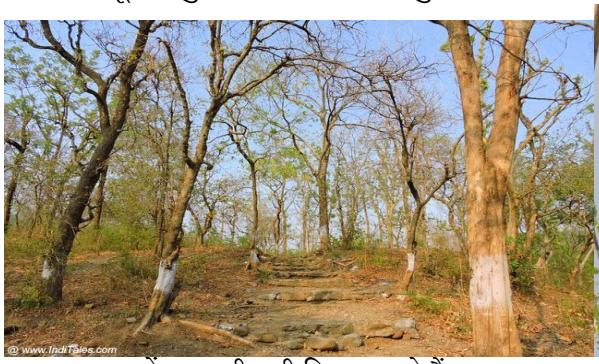




विशेषतः अभिज्ञान शकुन्तलम् नामक नाटक में कालिदास ने जिस कण्वाश्रम का उल्लेख किया है।

पौड़ी गढ़वाल जनपद में स्थित है। यह स्थल कोटद्वार नगर से लगभग 1–4 कि0मी0 की दूरी पर मालिनी नदी के किनारे बसा हुआ है। यह क्षेत्र शिवालिक पर्वतमाला की तलहटी में आता है और हरित वातावरण, ऊँचाई नीचाई वाले पर्वतीय धरातल और घने जंगलों से घिरा हुआ है। यहां पर छोटे–छोटे जलप्रपात और प्राकृतिक जलधाराएँ भी है जो इसकी भौगोलिक सुन्दरता को बढ़ाती है।

कण्वाश्रम का क्षेत्रफल लगभग 3 वर्ग कि0मी0 तक फैला है। इसका विस्तार मालिनी नदी के दोनों किनारों तक है। घास की विभिन्न प्रजातियाँ, झाड़ियाँ एवं बेल यहाँ की पारिस्थितिकी को संतुलित बनाए रखती है। आसपास फलदार वृक्ष एवं औषधीय पौधे भी पाये जाते हैं। वनों में हिरण, चीतल, बन्दर, लंगूर, तेदुएं एवं हाथियों के झुण्ड नदी के समीप देखे जा सकते हैं।


कण्वाश्रम में आज भी पक्षी विहरण करते हैं


कण्वाश्रम के आस पास वन मार्ग

पर्यटन की सम्भावनाएँ–

यह क्षेत्र पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित हो रहा है। यहाँ धार्मिक पर्यटन प्राकृतिक पर्यटन और सांस्कृतिक पर्यटन की अपार सम्भावनाएं मौजूद है। इसका मुख्य कारण इसकी पौराणिक महत्व नैसर्गिक सौंदर्य है। पर्यटन की दृष्टि से–जैसे ऋषि कण्व की तपोभूमि शकुन्तला की जन्मस्थली मालिनी नदी, प्राचीन गुफाएँ प्राकृतिक जलप्रपात और वन क्षेत्र आदि हैं।

उत्तराखण्ड सरकार और पर्यटन विभाग द्वारा भी इस क्षेत्र को धार्मिक पर्यटन के केन्द्र के रूप में विकसित करने की योजनाएं चलाई गयी है। कुछ प्रयास जैसे सड़क निर्माण गेस्ट हाउस सूचना पट्ट आदि पहले ही किए जा चुके हैं।

यहाँ पर हर वर्ष बसंत पंचमी में 3 दिन मेले का आयोजन स्थानीय मेला समिति द्वारा कराया जाता है जिसमें धार्मिक, सांस्कृतिक झलक, नृत्य, खानपान आदि में दिखाई देता हैं और कोटद्वार नगर क्षेत्र के अधिकांश संख्या में लोग यहां आते हैं।



वार्षिक बसंत पंचमी मेला – कण्वाश्रम

वर्तमान परिपेक्ष में देखा जाए तो कण्वाश्रम एक सीमित क्षेत्र में धार्मिक स्थल के रूप में विराजमान है। यहां प्रतिवर्ष हजारों श्रद्धालाओं पूजा–पाठ, यज्ञ और अन्य धार्मिक गतिविधियाँ होती रहती है।

यहां पर गुरूकुल पद्धति से अभी भी स्कूल चलायी जाती है जिसको की आधुनिक भीम के नाम से भी जानी जाती है। प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र एवं योग आदि का संचालन किया जाता है। आधुनिक भीम के नाम से प्रसिद्ध **योगीराज विश्वपाल सिंह जयंत** जी का संस्कृति गुरूकुल में देश–विदेश के लोग प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र में आते हैं तथा पूर्ण लाभ प्राप्त करते हैं।

हालांकि इसके पौराणिक और ऐतिहासिक महत्व को देखते हुए विकास तीव्रगति से नहीं हो पा रहा है। सरकार एवं स्थानीय प्रशासन एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं के अथक प्रयास से कुछ बुनियादी सुविधाएं विकसित हुई हैं। लेकिन यह प्रयास प्रर्याप्त नहीं है।

सुझाव–

शोध के दौरान प्राप्त निष्कर्षों और स्थल अध्ययन के आधार जैसे–पौराणिक गुफाओं तपोभूमाफियों और जलस्रोतों का संरक्षण मन्दिरों का जीर्णोदार किया जाए। ऐतिहासिक तथ्यों को प्रमाणिक रूप से प्रस्तुत करने के लिए सांस्कृतिक संग्रहालय (Heritage Museum) बनाया जाये, जिससे आगंतुकों को स्थल के बारे में पूर्ण जानकारी मिल सके। पर्यटकों के लिए गाइड सेवा और टूर पैकेज विकसित की सुविधा की जाय।

1. श्रद्धालुओं के लिए धर्मशाला प्रसाद वितरण केन्द्र, चिकित्सा केन्द्र जलस्नान सुविधाओं का निर्माण किया जाये। साथ ही साथ स्थानीय रोजगार के अवसर सृजित हेतु स्थायी नीतियां बनाई जाए।
2. विश्वविद्यालयों एवं शोध संस्थानों के सहयोग से क्षेत्र का पौराणिक–अध्यात्मिक शोध केन्द्र बनाया जाए।
3. कण्वाश्रम का डिजिटल प्रचार–वेबसाइट सोशल मीडिया डॉक्यूमेंट्री फिल्मस, पर्यटन मानचित्र आदि द्वारा हो।
4. समय–समय पर राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय महोत्सव मेले सांस्कृतिक आयोजन किया जाए।

निष्कर्ष–

कण्वाश्रम एक धार्मिक स्थल नहीं बल्कि यह संस्कृति, इतिहास, भौगोलिक और राष्ट्रीय चेतना का केन्द्र है। जिसमें भारतवर्ष की आत्मा एवं ऋषि परम्परा निहित है। आज के वैज्ञानिक युग में भी ऐसे स्थलों की महत्व बनी हुई है। जहां से आध्यात्मिक ऊर्जा, नैतिक मूल्यों पर्यावरण सन्तुलन प्ररेणा मिलती है एवं कण्वाश्रम के नाम पर कोटद्वार को वर्तमान समय में कण्वनगरी से जाना जाता है। सरकार स्वयंसेवी संस्था एवं स्थानीय जनप्रतिनिधियों के प्रयासों से कण्वाश्रम का भौगोलिक रूप से विकास किया जाये तो एक दिन विश्वपटल के मानचित्र पर कण्वाश्रम या कण्वनगरी प्रसिद्ध हो जायेगी।

संदर्भ सूची–

1. गढ़वाल का इतिहास– डॉ0 शिवप्रसाद डबराल (चारण)
2. उत्तराखण्ड की सांस्कृतिक धरोहरे–डा0 श्यामलाल उनियाल
3. उत्तराखण्ड के प्रमुख धार्मिक स्थल–रमेश चन्द्र थपलियाल
4. उत्तराखण्ड का भूगोल और सांस्कृतिक विरासत– डॉ0 बी0डी0 पांडे
5. भरत जन्मभूमि कण्वाश्रम– डॉ0 नन्दकिशोर पाण्डे ठौंडियाल 'अरूण'
6. कण्वाश्रम चक्रवर्ती सम्राट 'भरत' की जन्म, स्थली तथा भारतवर्ष की एक पौराणिक एवं एतिहासिक धरोहर– ले0 कमाण्डर धीरेन्द्र सिंह रावत

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 127-130
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पद्य साहित्य के अनुवाद की चुनौतियाँ

डॉ० रेणु देवी
सहायक प्राध्यापक(हिंदी विभागाध्यक्ष)
रानी धर्म कुमार राजकीय महाविद्यालय दल्लावाला,खानपुर, हरिद्वार (उत्तराखंड) पिनकोड- 247663

सार

साहित्य का अनुवाद करना बहुत कठिन कार्य है। अनुवाद करना अपने आप में एक जटिल प्रक्रिया है। जैसे प्राय: सुनने में आता है कि कोई भी काम कठिन तो हो सकता है लेकिन असंभव बिलकुल भी नहीं। इसी आधार पर हम कह सकते हैं कि साहित्य का अनुवाद किया तो जा सकता है लेकिन नामुमकिन नहीं है। विश्व स्तर पर काफी साहित्यानुवाद हुआ है। जो अनुवाद हो चुके हैं उनसे भी हम मुँह नहीं फेर सकते। साथ ही इस धारणा को भी हम स्वीकार नहीं कर सकते कि साहित्यानुवाद होना असंभव है। इतना अवश्य है कि जितने भी साहित्यानुवाद हुए हैं वो मूल पाठ का पूर्ण रूप से प्रतिरूप नहीं हो सकते। परंतु यदि हम ये कहें कि जो मूल साहित्य है और उसका जो अनुवाद किया जाता है ये दोनों एक ही हैं तो इसमें कोई बुराई नहीं होगी। साथ ही मूल पाठ व अनुवाद के मध्य जो अंतर है ये सवाल अंत समय तक जेहन में बना रहता है। एक मूल है तो दूसरा अनुवाद। हमें इस बात को ध्यान में रखना होगा कि मूल अनुवाद नहीं हो सकता और अनुवाद मूल नहीं हो सकता। इस तरह से यदि हम सोचेंगे तो साहित्यानुवाद करना सरल हो जाएगा। चाहे जो भी रचना हो उसका अनुवाद करना बहुत ही चुनौतीपूर्ण कार्य रहता है। लेकिन यहाँ पर हम साहित्यानुवाद की बात कर रहे हैं तो साहित्यानुवाद करना चुनौतीपूर्ण कार्य होता है क्योंकि साहित्य और अन्य रचनाओं में कुछ स्तर पर भिन्नता होती है। साहित्य अपने अंदर कुछ ऐसे तत्वों को संजोए रखता है जो अन्य रचनाओं में मिल पाना दुर्लभ है, और जिसे रूपांतरित करना अत्यधिक दुष्कर है। यदि साहित्य की गद्य और पद्य विधा पर हम गौर करें तो हम पाएँगे कि गद्य की अपेक्षा पद्य का अनुवाद करना कहीं ज्यादा चुनौतीपूर्ण कार्य होता है।"**कविता का अनुवाद बहुत बड़ी चुनौती है। यह दुष्कर कार्य माना जाता है, एक हद तक और असंभव भी है।"**[1]

इसके अंतर्गत कथ्य एवं अभिव्यक्ति दोनों का ही मिश्रण होता है। जिससे पाठक वर्ग प्रभावित होता है। कथ्य और अभिव्यक्ति दोनों एक दूसरे को पूरा करते हैं। परंतु जब बात अनुवाद करने की आती है तो उस समय हरेक भाषा में इस तरह का सामंजस्य स्थापित करना मुमकिन नहीं है, और एक तरह के प्रभाव को भी हम उत्पन्न नहीं कर सकते।

प्रस्तावना

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में **'अनुवाद'** शब्द प्रत्येक व्यक्ति परिचित है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि जब हम एक भाषा की बात को दूसरी भाषा में प्रकट करते हैं तो यह प्रक्रिया ही **'अनुवाद'** कहलाती है। अनुवाद को हम भाषिक क्रिया कह सकते हैं। भाषा में प्रतीकों का विशेष महत्व होता है। इसलिए भाषा में प्रतीकात्मक प्रबंध होता है। जिसका प्रयोजन होता है संप्रेषण। जब अनुवादक किसी भाषा का अनुवाद करता है तो उसके सम्मुख दो प्रतीक पद्धति होती है। उसके द्वारा एक प्रतीक पद्धति में प्रकट अर्थ को द्वितीय प्रतीक पद्धति में अभ्यंतर करने का प्रयास करता है।

सरल शब्दों में **'अनुवाद'** शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है एक भाषा के पाठ को दूसरी भाषा में ले जाना। सामान्य व व्यापक दोनों दृष्टियों से इसी को अनुवाद कहा जाता है। **'अनुवाद'** शब्द से अभिप्राय कही हुई बात को दोबारा कहना, पुनः कहने से है।

"आज के संदर्भ में और अनुवाद के अंग्रेजी पर्याय के समानांतर रखकर यदि इस शब्द को देखा जाए तो इसका अर्थ होगा एक भाषा में कह गए कथन को दूसरी भाषा में कहना। इसे भाषांतर भी कहा जाता है। अंग्रेजी के शब्द Translation की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के translation से हुई जिसका अर्थ होता है पर ले जाना। Translation शब्द trans तथा Ferre से मिलकर बना है। इस प्रकार Translation शब्द का भी अर्थ हुआ- एक भाषा के पाठ को दूसरी भाषा में ले जाना।"[2]

विभिन्न विद्वान कविता के अनुवाद को लेकर हमेशा ही अपने-अपने विचारों को प्रकट करते रहे हैं। यदि हम वर्तमान समय में देखें तो मैथ्यू अर्नाल्ड जो की ग्रीक रचनाकार होमर के अनुवादक रहे हैं उनका मानना था कि- **"अनुवादक को मूल के प्रति पूरी तरह से निष्ठावान होना चाहिए और कविता का अनुवाद करते समय कवि के पूरे मानस, उसकी सामाजिक- मानसिक स्थिति, उसकी शैली आदि को पूरी तरह से अनुवाद में उतार देना चाहिए।"[3]**

"वहीं उत्तर आधुनिक समय के अनुवाद चिंतक वेलफेयर कविता के अनुवाद के समय अपवर्तन अथवा rewriting की बात करते हैं और सुजित मुखर्जी नव सृजन यानी new writing की।"[4]

"वहीं एजरा पाउंड के अनुसार कविता अनुवाद में यदि उसका मूल उत्स भी बच जाए तो अनुवाद को सफल माना जाना चाहिए।"[5]

मैथ्यू अर्नाल्ड अपनी पुस्तक On Translating Homer में लिखते हैं- "Union of the translator with his original which alone can produce a good translation."[6]

अर्थात् अनुवादक का मूल रचना के साथ एकीकरण ही एक अच्छे अनुवाद को जन्म दे सकता है। इसको ही आधार मानकर मैथ्यू अर्नाल्ड ने होमर के अनुवादकों में आने वाले न्यूमैन, चैपमैन और पोप इन सभी की आलोचना की। कविता का अनुवाद करते समय कवि की निष्ठा, अनुवाद के महत्व और जब कविता का अनुवाद किया जा रहा है उस समय शैली कैसी है इन सभी बिंदुओं को ध्यान में रखकर अनुवाद किया जाता है। कविता का अनुवाद करते समय मूल कविता के तत्वों का कोई ना कोई भाग छुट ही जाता है। इस विषय में डॉ० प्रभाकर माचवे का मानना है कि- **"वस्तुत: काव्यानुवाद एक शीशी में भरे इत्र को दूसरी शीशी में डालने जैसा है। जिसमें कुछ ना कुछ इत्र हवा में अवश्य विलीन हो जाता है।"[7]** जो कुछ विलीन हो गया है इससे अलग भी कुछ भाग ऐसा जुड़ जाता है जो मूल से दूर-दूर तक संबंध नहीं होता। जब अनुवाद में नया भाग जोड़ता है तो उसके बाद वह मूल से अलग हो जाता है। अगर

हमें अनुवाद को सफल बनाना है तो सबसे पहले हमें मूल पाठ के विषय में अपनी समझ विकसित करनी होगी। जब अनुवादक अनुवाद करता है तो उसे समय उसे मूल पाठ के अर्थ के साथ-साथ मूल रचनाकार की विषय वस्तु के साथ भावों का सामंजस्य भी स्थापित करना होता है। जो उसमें अंतर्निहित संवेदना को हुबहू उसी रूप में महसूस करना होता है। ठीक उसी तरह से जैसे मूल रचनाकार ने उसे महसूस किया होगा अपनी संवेदना को दो तरह से विस्तारित करना तथा यह एक प्रकार का प्रवेश रचना के द्वारा ही संभव होता है। दूसरे की भावनाओं से जुड़ने के लिए उसे आत्म संयम की भावनाओं का भी सामना करना पड़ता है। यह बिलकुल भी संभव नहीं है कि दूसरी भाषा में किया गया अनुवाद शत प्रतिशत मूल की तरह ही हो। इसे अत्यधिक कठिन कार्य माना जाता है। जब साहित्यकार शब्दों का चयन करके साहित्य में लेकर आते हैं तो उन शब्दों का सामान्य अर्थ हतो होता ही है साथ ही वे अन्य अर्थ भी प्रकट करते हैं। ऐसी स्थिति में अनुवाद करते समय दूसरी भाषा में हुबहू वैसा ही शब्द मिलना अत्यधिक दुष्कर कार्य होता है।

"हर भाषा के हर शब्द का अपना अर्थ बिंब होता है जो सांस्कृतिक, भौगोलिक तथा सामाजिक पृष्ठभूमि से संबंध होता है। दूसरी भाषा का उसी का समानार्थी शब्द उस पृष्ठभूमि से युक्त ना होने के कारण वैसा अर्थ बिंब नहीं उभर सकता।"[8]

एक भाषा के छंद को हम दूसरी भाषा के छंद में हुबहू नहीं उतार सकते। क्योंकि यह एक बहुत ही चुनौतीपूर्ण कार्य है। यदि उतारने का प्रयास भी किया जाए तो उसे छंद के अंदर बहुत से परिवर्तन देखने को मिल जाएँगे। दूसरी तरह यदि देखें तो विभिन्न विद्वानों के माध्यम से एक ही साहित्य का अनुवाद करने पर अनुवाद में बहुत कुछ परिवर्तित हो जाता है। जब अनुवादक साहित्य का अनुवाद करता है तो उसका व्यक्तित्व भी उभर जाता है और यही कारण है कि अनुवाद में परिवर्तन होता है। जब भी कोई अनुवादक अनुवाद करते हैं समय जिन पलों को अनुवाद में समाहित करता है तो वो पल उसके स्वयं के होते हैं। ये बात सत्य है कि किसी भी रचनाकार के उसके सारे पलों को कोई अन्य अनुवादक न ही महसूस कर सकता है और ना ही जी सकता है, और फिर चाहे वो अनुवादक मूल रचनाकार से अत्यधिक महान ही क्यों ना हो।

मैथ्यू अर्नाल्ड का मानना है कि अनुवादक को कवि की शैली नाद, विषय, शिल्प इत्यादि सतह पर विश्वासी होना चाहिए। उसे समय फ़ैज़ अहमद की कविता की पंक्तियाँ भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय नारे के रूप में प्रयोग में लाई गई। इस तरह की कविता तुकबंदी और लय से युक्त होती है। जो इस तरह की कविताएँ होती है उनमें अनुवाद के दौरान कथ्य के साथ शिल्प का भी अत्यधिक महत्व होता है। आइए इस उदाहरण को देखते हैं-

"बोल कि लब आजाद हैं तेरे
बोल जबां अब तेरी है
तेरा सुतवां जिस्म है तेरा
बोल कि जां अब तक तेरी है(फ़ैज़ अहमद)

अनुवादक के अनुवाद में काव्य के साथ शिल्प को महत्व देते हुए कविता की लय और तुकांत वृत्ति दोनों का ध्यान रखा गया है।

Speak for your lips are free
Speak for your tongue is still yours
Your upright body belong to you

Speak, for your Soul is still yours."[9]

निष्कर्ष- साहित्य के अनुवाद को अत्यधिक कठिन चुनौतीपूर्ण कार्य माना जाता है। परंतु साहित्यानुवाद करना नामुमकिन हरगिज नहीं है। गद्य साहित्यानुवाद की अपेक्षा पद्य साहित्यानुवाद अधिक कठिन है। जो समस्याएँ कविता के अनुवाद में आती हैं वो समस्याएँ हर तरह के साहित्यानुवाद में देखने को नहीं मिलती। वैसे देखा जाए तो कविता को साहित्य की जटिलतम् विधा के रूप में लिया जाता है। साथ ही इसका अनुवाद भी इसी की तरह जटिल होता है। जो भी विद्वान कविता के अनुवाद को नामुमकिन बताते थे उन्होंने ही कविता का अनुवाद भरपूर मात्रा में किया और संसार का संसार की कविता से साक्षात् कराया। कोई भी रचनाकार हो वह अपनी बात को अच्छी तरह से केवल अपनी भाषा में ही व्यक्त कर सकता है। यदि उसकी मूल रचना को पढ़े तो अवश्य ही उसके उदार होने के एहसास को महसूस किया जा सकता है। जबकि अनुवाद में हम उसके मूल की जो अभिव्यक्ति होती है उसमें वह बात नहीं होती जो मूल रचना में होती है। अतः साहित्यानुवाद करना अत्यधिक कठिन और चुनौतियों से भरा कार्य तो है लेकिन ऐसी कठिनाइयाँ साहित्य की विभिन्न विधाओं में भी समान रूप से देखने को मिले ये भी तो अपेक्षित नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ० जितेंद्र वत्स, प्रयोजनमूलक हिंदी: सिद्धांत और प्रयुक्ति, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, संस्करण 2005, पृ.सं. 134
2. ममता खांडल, अनुवाद विज्ञान, जैन विश्व भारती संस्थान, लांडनू 34306 (राज.), नवीन संस्करण 2017, राजस्थान, पृ.सं. 02
3. ज्योति चावला, अनुवाद: संदर्भ और आयाम, इंदिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली 2020, पृ.सं.106
4. वही, पृ.सं.106
5. वही, पृ. सं.106
6. वही, पृ.सं.106
7. डॉ० सत्यदेव मिश्र, डॉ० रामाश्रय सविता, अनुवाद: समस्याएँ और समाधान, सुलभ प्रकाशन, लखनऊ, संस्करण 1999 पृ. सं. 10
8. डॉ० भोलानाथ तिवारी, अनुवाद विज्ञान, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1984, पृ.सं. 136
9. डॉ० ज्योति चावला, अनुवाद: सिद्धांत एवं प्रविधि, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 2020 पृ. सं. 107

ई-मेल-drenu1216@gmail.com

संपर्क सूत्र-9520605318

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 131-134
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

1084वें की माँ : एक किशोरवय बागी की क्रांति गाथा

डॉ. अंकित भोई
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी),
शासकीय नवीन महाविद्यालय, पिरदा, जिला–महासमुंद (छत्तीसगढ़)

1084वें की माँ उपन्यास का प्रकाशन वर्ष 1974 में हुआ है। मूलतः बंगाली भाषा में लिखित इस उपन्यास की लेखिका ज्ञानपीठ और रैमन मैगसेसे पुरस्कार विजेता महाश्वेता देवी हैं। वंचित और शोषित वर्ग के लिए आवाज उठाने वाली लेखिका महाश्वेता देवी ने सातवें दशक में उपजे असंतोष और उसके परिणाम को स्वर प्रदान किया है। इस उपन्यास का कथानक एक अभिजात्यवर्गी नवयुवक के जीवन संघर्ष और उसकी ममतामयी माँ की पीड़ा को व्यक्त करता है। यह उपन्यास कुल चार भागों (सुबह, दोपहर, शाम और रात) में विभाजित है।

उपन्यास का आरंभ पूर्वदीप्ति शैली में हुआ है। कथानायक व्रती की माँ सुजाता प्रसव पीड़ा से गुजर रही है, बेपरवाह पति की अनुपस्थिति में उसने स्वयं ही बच्चे की जान बचाने के लिए ऑपरेशन करवाने की स्वीकृति दी थी। वह 17 जनवरी की तारीख थी, जब तड़के व्रती इस दुनिया में आया था। यह दुर्योग ही था कि 17 जनवरी की तारीख को ही टेलीफोन से प्राप्त एक खबर ने सुजाता की पूरी दुनिया ही उजाड़ दी, वह खबर थी – उसके सबसे छोटे पुत्र व्रती की मृत्यु की।

दरअसल व्रती की मृत्यु पुलिस–नक्सली मुठभेड़ में हो गई थी। बंगाल की तत्कालीन परिस्थितियों में नक्सली होना अभिजात्यवादी तबके के लिए कलंक के समान था और व्रती का जन्म ऐसे ही एक उच्च शिक्षित अभिजात्यवादी परिवार में हुआ था। मुठभेड़ में हुई मृत्यु के पश्चात व्रती का शव कांटापुकूर के शवगृह में 1084वें क्रम पर रखा गया था और आश्चर्यजनक रूप से परिवार में उसकी मृत्यु की पीड़ा केवल उसकी माँ सुजाता को हुई थी। यही कारण है कि लेखिका ने इस उपन्यास का शीर्षक '1084वें की माँ' रखा है।

लेखिका महाश्वेता देवी ने पश्चिम बंगाल की तत्कालीन परिस्थितियों का वर्णन करते हुए सातवें दशक को 'मुक्ति–दशक' कहा है। वह संघर्ष का एक अद्भुत समय था जब बंगाल के संवेदनशील और कल्पनाशक्ति संपन्न सृजनशील प्रवृत्ति के युवा वामपंथ का मार्ग प्रशस्त कर रहे थे। ऐसे ही संघर्षपथ पर लड़ता हुआ व्रती पुलिस की गोली का शिकार हो गया था। माँ सुजाता व्रती का शव देखने जाती है। "वही चेहरा देखती है सुजाता झुककर! उंगलियाँ फेरे? 'व्रती! व्रती'! उसे पुकारकर चेहरे पर उंगलियाँ फेरे? लेकिन उंगलियों के स्पर्श के लिए एक इंच चमड़ी भी नहीं बची थी। सब कुचला हुआ मांस–पिंड! उसके बाद ही सुजाता चेहरा ढँक देती है। पीछे मुड़ती है। अंधे की तरह तुली से लिपट जाती है।"[1] लेखिका ने युवा पुत्र के मृत्यु की बेहद मार्मिक अभिव्यक्ति की है। व्रती की मृत्यु एवं सुजाता की पीड़ा से उसके परिवार के किसी भी सदस्य को कोई

सरोकार नहीं है। यह उपन्यास सातवें दशक में हुए वामपंथी उग्र आंदोलन एवं मानवीय मूल्यों के विघटन की महागाथा है।

लेखिका ने कथानायक व्रती के माध्यम से सातवें दशक में बंगाल के संवेदनशील और समर्पित युवा का चित्रण किया है। व्रती को बचपन से ही मृत्यु की कविता पसंद थी। उसकी माँ सुजाता के लिए उसकी मृत्यु की घटना अग्राह्य है, उसे अपना जीवन किसी दुःस्वप्न की भांति लग रहा है। पिता दिव्यनाथ और पुत्र व्रती में गहरा वार्ता अंतराल था। लेखिका ने व्रती के परिवार के माध्यम से तत्कालीन बंगाल के मध्यमवर्गीय परिवार का ताना–बाना बुना है, जिसके सदस्यों में परस्पर स्नेहभाव का सर्वथा अभाव है।

व्रती के जीवन की सबसे बड़ी विडंबना थी कि एक दोगले समाज में रहकर उसने कथनी और करनी को एक करने का दुस्साहस किया था। उसने मुक्ति के संघर्षपथ पर न केवल नारे लिखे बल्कि उसे अपने जीवन में भी उतारा। यही कारण था कि व्रती को भी मौत की सजा मिली। "छाती के बल जमीन पर रेंगनेवाले, हवा का बदलता हुआ रुख देखकर मत बदल देने वाले, सुविधावादी कलाकार, साहित्यिक बुद्धिजीवियों के इस समाज को जो लोग घृणित समझते हैं– उन सब लोगों की सजा निश्चित है – मौत!"[2] विद्रोह व्रती के खून में था, जिसने उसे हताहत लड़कों की सूची में 1084 वें क्रम की लाश बना दिया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नए–नवेले भारतीय लोकतंत्र में भारी असंतोष व्याप्त था। प्रस्तुत उपन्यास में पश्चिम बंगाल के ऐसे ही एक अव्यवस्थित कॉलोनी का वर्णन किया गया है। आबादी के बढ़ते हुए दबाव के प्रभाव से यह कॉलोनी कुकुरमुत्ता की तरह स्वयं ही उग आई थी। "इस इलाके से हमेशा विरोधी दल को ही वोट मिले हैं – शायद इसलिए सरकार ने यहाँ पक्की सड़क, स्वास्थ्य केंद्र, काफी संख्या में हैंड–पम्प, बस–रूट इन सबका कोई भी बंदोबस्त नहीं किया। इन बीस वर्ष में जो लोग हालात बदलने पर धनी हो गए, उन लोगों ने भी कुछ नहीं किया।"[3] स्पष्ट है कि तत्कालीन समाज में दो वर्गों के बीच की खाई बढ़ रही थी, ऐसे में असंतोष का बढ़ना स्वाभाविक था। दमनकारी शासन के खिलाफ उठ खड़े हुए प्रतिभाशाली युवा की आवाज को कुचल दिया गया था। दीवारों से क्रांतिकारी नारे गायब हो गए थे और किशोरवय युवाओं के हत्यारे चोला बदलकर निर्भीक होकर घूम रहे थे। ऐसे हालात में व्रती की माँ सुजाता पुत्रशोक का कारण तलाशने घर से निकल पड़ी थी।

इस उपन्यास के दूसरे खंड का शीर्षक 'दोपहर' है। सुजाता व्रती के मृत्यु पूर्व की घटनाओं को निकट से जानना चाहती है। इसके लिए वह व्रती के मित्र समु के घर जाती है। समु का परिवार घोर दरिद्री से पीड़ित है। उसकी माँ से व्रती की मृत्यु के ठीक पहले के पलों को सुनकर सुजाता भावुक हो जाती है। "सुजाता की पहली मुलाक़ात समु की माँ से तब हुई थी जब वह अपने बेटे के शव की पहचान करने गई थी और उसने इस गरीब महिला में एक तरह की आत्मीय आत्मा पाई थी, एक और माँ जो नुकसान को समझती थी। लेकिन उस भयावह रात के स्पष्ट विवरण और इस गरीब परिवार पर इसके बेहद विनाशकारी प्रभाव के सामने, उसे याद दिलाया जाता है कि उसकी सामाजिक स्थिति हमेशा एक बाधा रहेगी जिसे दूर नहीं किया जा सकता।"[4] परिवार की इकलौती कमाऊ सदस्य समु की बहन है जो अप्रत्यक्ष रूप से अपने भाई की मृत्यु के लिए व्रती को जिम्मेदार मानती है और अपने घर में सुजाता की उपस्थिति से खिन्न है।

तत्कालीन व्यवस्था में व्रती की रंचमात्र भी आस्था नहीं थी। वह व्यवस्था में परिवर्तन हेतु प्रतिबद्ध था। वह बालसंघ का प्रतिनिधि सदस्य था। उसके ही दल के किसी साथी के विश्वासघात के कारण ही उसकी मृत्यु हुई। जिस व्यवस्था के प्रति व्रती आस्थाहीन था, उसी व्यवस्था में नौकरी और सुरक्षा के लोभ में उसके साथियों ने उसके साथ छल किया। "एक विश्वास, एक आस्था ने उन लोगों को अंधा कर दिया था – उनकी समझ में यह नहीं आया था कि जिस व्यवस्था से उनकी लड़ाई है, वह व्यवस्था जन्मने से पहले ही कुछ को भ्रूणावस्था में ही जहरीला बना देती है। सब तरुणों को ही आदर्श की दीक्षा नहीं मिलती; सभी ऐसे नहीं हैं जो मौत से नहीं डरते, ये सब बातें व्रती जैसे लोग नहीं जानते थे।"[5] व्रती और उसके साथियों के लिए ऐसे लोगों पर विश्वास करना ही घातक सिद्ध हुआ।

कथानायक व्रती के माध्यम से लेखिका ने उस युवा का चरित्र उकेरा है जो उच्चकुल में जन्मा था मगर उसने विलासिता को त्यागकर संघर्ष के पथ पर कदम रखा था। उसे बंगाल की तत्कालीन व्यवस्था से घृणा

थी और इसे बदलने की प्रतिबद्धता से उसने बगावत का आलिंगन किया था। सुजाता ने भले ही व्रती को जन्म दिया था पर उसकी परवरिश तत्कालीन परिस्थितियों ने की थी। व्रती के साथ मारे गए उसके मित्र ही उसके आत्मीय थे, जिन्होंने मृत्यु तक उसका साथ नहीं छोड़ा। सुजाता ने अपने पुत्र के व्यक्तित्व के इस दूसरे पहलू को कभी नहीं देखा था। "लेकिन अपना मत, अपनी आस्था, अपना आदर्श लेकर व्रती ने अपना एक अलग अस्तित्व बनाया था। जिस भिन्न व्रती की सृष्टि उसने की थी वह व्रती माँ को चाहे कितना भी प्यार करे या माँ चाहे उसे कितना ही प्यार करे वह उसे पहचानती तक नहीं थी।"[6] समु की माँ से भेंट के बाद ही सुजाता ने पुत्र व्रती के जीवन के अनेक पहलुओं से परिचय प्राप्त किया। अभावग्रस्त जीवन जी रहे समु के परिवार से मिलकर और उसकी माँ से पुत्र की प्रशंसा सुनकर सुजाता भावुक हो गई।

इस उपन्यास के तृतीय खंड का शीर्षक 'शाम' है। इसमें सुजाता की भेंट व्रती की प्रेमिका नंदिनी से होती है। अंतर्मुखी व्रती की प्रेयसी नंदिनी से उन्हें और अनेक बातें पता चलीं। नंदिनी ने बताया कि कैसे व्रती के साथी अनिंद्य के विश्वासघात करने के कारण व्रती, समु और उनके दूसरे साथियों की हत्या हुई थी। इस घटना के बाद कमांडिंग ऑफिसर के निर्देशानुसार अन्य विरोधी युवाओं को भी बेरहमी से मारा गया था। उस समय प्रतिबंध अपने चरम पर था, कलकत्ता में स्थिति ऐसी थी कि कोई 20 वर्ष का युवा अपने मुहल्ले से दूसरे मुहल्ले में नहीं जा सकता था।

'1084 वें की माँ' उपन्यास के चतुर्थ और अंतिम अध्याय का शीर्षक है – 'रात'। सुजाता के स्मृतिलोक में व्रती का स्थायी वास था। मृत्यु के पहले व्रती ने अपने राष्ट्रीय छात्रवृत्ति का पैसा घर में देना शुरू किया था। व्रती उस घर में रहता था तो सिर्फ अपनी माँ सुजाता की खातिर। व्रती के जाने के बाद उस विघटित परिवार से सुजाता का भी मोहभंग हो गया था। उसके पति का अपनी ही मुँहबोली बहन से विवाहेतर संबंध था। आश्चर्यजनक रूप से उनकी पुत्री तुली यह सब जानते हुए भी अप्रत्यक्ष रूप से पिता का सहयोग करती थी। उसके मन में अपने बाबूजी के प्रति एक अद्‌भुत अधिकार भाव उत्पन्न हो गया था। उनके खानदान में पुरुष का विवाहेतर संबंध रखना मर्दानगी का प्रतीक था। दिव्यनाथ की पुत्री नीपा का भी अपने पति अमित के फुफेरे भाई बलाई के साथ नाजायज संबंध था और आश्चर्यजनक रूप से अमित को इससे कोई आपत्ति नहीं थी। तुली ने अपनी दादी से भी दादाजी के ऐसे ही रंगीनमिजाजी के कई किस्से सुने थे। लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास में पारिवारिक मूल्यों के विघटन और पतित होते मानवीय चरित्र को जमकर उधेड़ा है।

व्रती की मृत्यु के लिए जिम्मेदार अज्ञात लोगों के प्रति सुजाता क्षुब्ध हो जाती है। दुर्भाग्यजनक रूप से कलकत्ता के तरुणों की हत्या करने वाले कभी पहचाने न जा सके। सुजाता को सहसा नंदिनी की बात याद आती है। उसने कहा था – "वे लोग हजारों तरह के प्रलोभन देते हैं, नाखूनों में सुई चुभोते हैं, आंखों के सामने हजार वाट का बल्ब जलाते हैं, देह के गुप्त स्थानों में वीभत्स यातनाएँ पहुंचाते हैं। कितने–कितने अत्याचार करते हैं लेकिन फिर भी व्रती की तरह के लड़के झुकते नहीं ; आज भी नहीं झुकते जब जेल की कस्टडी से पुलिस की कस्टडी में रहते हैं। यानी जेल से फिर पुलिस की हिरासत में।"[7]

महाश्वेता देवी ने अपनी लेखनी सदियों से वंचित और शोषित वर्ग को समर्पित की है। "महाश्वेता अनवरत उन्हें खोजती रहती हैं जिनका कोई नाम नहीं है पर वो अन्याय और शोषण के विरुद्ध जेहाद छेड़ देते हैं। महाश्वेता ने 'हजार चौरासी की माँ' में नक्सल आंदोलन को माँ की नजर से देखा। नक्सल आंदोलन की वे साक्षी रही थीं। जनसंघर्षों ने उनके जीवन को भी परिवर्तित किया और लेखन को भी।"[8]

'1084वें की माँ' महाश्वेता देवी का एक कालजयी उपन्यास है। इसकी भाषा सरल, सुबोध और प्रवाहमयी है। यह लेखिका के लेखनशैली का ही प्रभाव है कि उपन्यास के पाठन के दौरान पाठक का ह्रदय कथानक के रौ में बहकर 20वीं सदी के छठवें दशक में चला जाता है और एक अभागी माँ सुजाता की पीड़ा से उसका तादात्म्य स्थापित हो जाता है।

संदर्भ–सूची

1. देवी, महाश्वेता. 1084वें की माँ. दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, बारहवाँ संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या 21

2. देवी, महाश्वेता. 1084वें की माँ. दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, बारहवाँ संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या 29
3. देवी, महाश्वेता. 1084वें की माँ. दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, बारहवाँ संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या 45
4. https://roughghosts.com/2022/09/05/a-chronicle-of-pain-mother-of-1084-by-mahasweta-devi/
5. देवी, महाश्वेता. 1084वें की माँ. दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, बारहवाँ संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या 51
6. देवी, महाश्वेता. 1084वें की माँ. दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, बारहवाँ संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या 69
7. देवी, महाश्वेता. 1084वें की माँ. दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, बारहवाँ संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या 115
8. चौबे, कृपाशंकर. महाश्वेता देवी का जीवन और साहित्य. hindisamay.com

ईमेल पता – ankitkumarbhoi@gmail.com
दूरभाष – 9685315484

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 135-142
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'मुड़-मुड़के देखता हूँ' (राजेन्द्र यादव) में प्रतिरोध

Breese k Rudhan
Research Scholar,
PG Department of Hindi and Research Center,
Government Art and Science College Kozhikodw.
Affiliated to University of Calicut. Kerala India.
Dr. Hema. G
Research Supervisor,
Associate Professsor(Rtd)
PG Department of Hindi and Research Center,
Government Art and Science College Calicut.

शोध सारांश

यह लेख आधुनिक हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य कथाकार, विचारक और यशस्वी संपादक राजेन्द्र यादव की आत्मकथात्मक कृति **'मुड़-मुड़के देखता हूँ'** के माध्यम से उनके बहुआयामी प्रतिरोधी स्वर, वैचारिक विच्छेदन और सामाजिक चेतना का गहन विश्लेषण करता है। परम्परागत रूप से हिन्दी आत्मकथा लेखन की परिपाटी आत्म-महिमामंडन, आत्म-श्लाघा और जीवन की त्रुटियों पर पर्दा डालने की प्रवृत्ति से ग्रस्त रही है। राजेन्द्र यादव ने इस स्थापित आवरण को छिन्न-भिन्न करते हुए 'स्व' के निर्मम विश्लेषण और सामाजिक जड़ताओं के वस्तुनिष्ठ विखंडन को अपनी आत्मकथा का मुख्य आधार बनाया है।

प्रस्तुत शोध का केंद्रीय उद्देश्य यह रेखांकित करना है कि राजेन्द्र यादव का प्रतिरोध केवल किसी तात्कालिक राजनीतिक सत्ता या व्यवस्था के विरोध तक सीमित नहीं है, बल्कि वह भारतीय समाज के गहरे सांस्कृतिक, पारिवारिक और वैचारिक धरातल पर क्रियाशील है। लेख में सविस्तार दर्शाया गया है कि कैसे यादव जी ने मध्यवर्गीय पाखंड, सामंती अवशेषों, पितृसत्तात्मक दमन, संस्थागत रूढ़ियों और मृत्यु से जुड़ी पाखंडी नैतिकता का अत्यंत कड़ा और तार्किक विरोध किया है। उनके साहित्यिक दर्शन में साहित्य 'यथास्थितिवाद' को भंग करने और चेतना में बेचैनी पैदा करने का एक अनिवार्य माध्यम है। वे अतीत के रूमानी मोह को प्रगति की राह में सबसे बड़ी बाधा मानते हैं और 'स्मृति-जीवी' होने के बजाय वर्तमान की विसंगतियों से सीधे टकराने का आह्वान करते हैं।

शोध का निष्कर्ष यह प्रतिपादित करता है कि राजेन्द्र यादव की प्रतिरोधी दृष्टि ने स्त्री, दलित और हाशिए के समाज की अस्मितामूलक चेतना को केंद्र में रखकर हिन्दी विमर्श को अधिक लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष और जवाबदेह बनाया है।

यह आत्मकथा व्यक्ति के निजी जीवन के झरोखे से संपूर्ण समाज की जड़ताओं के पुनर्मूल्यांकन की एक युगांतकारी साहित्यिक प्रेरणा है।

बीज शब्द: प्रतिरोध, सामाजिक यथार्थ, साहित्यिक चिंतन, आत्मकथा, वर्जनाएँ, यथास्थितिवाद, लोकतांत्रिक चेतना, आत्म-विच्छेदन, पितृसत्ता, अस्मिता विमर्श।

1. प्रस्तावना, साठोत्तरी साहित्यिक परिप्रेक्ष्य एवं विषय-प्रवेश

हिन्दी साहित्य के इतिहास में बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध, विशेषकर साठोत्तरी दौर, एक अत्यंत युगांतकारी और वैचारिक उथल-पुथल का साक्षी रहा है। यह वह समय था जब स्वतंत्रता के आरंभिक वर्षों का रूमानी मोहभंग पूरी तरह टूट चुका था और समाज में बेरोज़गारी, भ्रष्टाचार, सामंती जकड़न तथा लोकतान्त्रिक संस्थाओं के क्षरण से जनमानस में एक गहरा असंतोष व्याप्त था। इस दौर के वैचारिक और साहित्यिक परिदृश्य को बदलने वाले सबसे प्रखर सारथी और आधुनिकता के प्रवक्ता राजेन्द्र यादव थे। 'हंस' पत्रिका के पुनरुद्धार और संपादन के माध्यम से साहित्य के व्यापक लोकतंत्रीकरण की नींव रखने वाले तथा 'नई कहानी' आंदोलन के माध्यम से कथा-साहित्य को मध्यवर्गीय जीवन के वास्तविक आधुनिक बोध से जोड़ने वाले यादव जी की आत्मकथात्मक कृति **'मुड़-मुड़के देखता हूँ'** केवल एक व्यक्ति के जीवन की व्यक्तिगत यात्रा नहीं है। यह स्वतंत्र भारत के बदलते सामाजिक-सांस्कृतिक, वैचारिक और साहित्यिक परिदृश्य का एक जीवंत, धड़कता हुआ और निर्भीक दस्तावेज है।

परम्परागत रूप से आत्मकथा विधा को अक्सर लेखक के 'स्व-महिमामंडन' या एक ऐसे 'आदर्श नायक' के निर्माण के माध्यम से देखा जाता रहा है, जहाँ लेखक अपने जीवन की दुर्बलताओं, स्खलनों और त्रुटियों को छुपाकर समाज के सामने खुद को बेदाग प्रस्तुत करता है। हिन्दी आत्मकथा साहित्य में चाहे वह हरिवंश राय बच्चन की बहुप्रशंसित कृतियाँ हों या अन्य समकालीन लेखकों के प्रयास, उनमें कहीं न कहीं एक कलात्मक संतुलन और आत्म-रक्षा की प्रवृत्ति दिखाई देती है। परंतु, राजेन्द्र यादव की 'मुड़-मुड़के देखता हूँ' इस स्थापित परिपाटी और साहित्यिक अनुशासन के विरुद्ध एक उग्र और सचेत 'प्रतिरोध' के रूप में उभरती है। वे अपनी आत्मकथा में किसी नायक की तरह नहीं, बल्कि एक शल्य-चिकित्सक या एक सजग अन्वेषक की तरह प्रवेश करते हैं। उनका उद्देश्य स्वयं को महान सिद्ध करना नहीं, बल्कि 'स्व' के निर्मम विश्लेषण के बहाने उस समूचे समाज, परिवार और साहित्यिक बिरादरी के पाखंडों, वर्जनाओं और जड़ताओं का विच्छेदन करना है, जिन्हें अक्सर 'संस्कार' या 'मर्यादा' के नाम पर ढक दिया जाता है।

यह पुस्तक उन अनछुए और अंधेरे कोनों को उजागर करती है जहाँ व्यक्तिगत स्मृतियाँ व्यक्तिगत न रहकर एक सामूहिक और वैचारिक प्रतिरोध का रूप धारण कर लेती हैं। राजेन्द्र यादव ने जिस ईमानदारी, निर्भीकता और आत्म-क्रूरता का परिचय इस कृति में दिया है, वह उन्हें एक ऐसा रचनाकार सिद्ध करता है जो 'यथास्थितिवाद' को हर स्तर पर चुनौती देने का अपूर्व साहस रखता है। उनके लिए प्रतिरोध का अर्थ केवल राजनीतिक सत्ता का विरोध नहीं है, बल्कि उन सभी सूक्ष्म संस्कारों, धार्मिक अंधविश्वासों, पारिवारिक ढाँचों और परंपराओं का विरोध है जो मनुष्य की स्वतंत्र और विवेकशील चेतना को कुंद करती हैं। प्रस्तुत लेख का मुख्य उद्देश्य उनकी इस आत्मकथा के गहन पाठ के माध्यम से उन वैचारिक, सामाजिक और दार्शनिक धरातलों की व्यापक पड़ताल करना है, जहाँ साहित्य, जीवन और प्रतिरोध मिलकर एक नई लोकतांत्रिक चेतना का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

2. 'आत्म-श्लाघा' का भंजन: आत्मकथात्मक विधा का लोकतंत्रीकरण

आत्मकथा लेखन की सबसे बड़ी चुनौती 'आत्म-मोह' से मुक्त होना है। राजेन्द्र यादव इस बात से भली-भाँति परिचित थे कि मनुष्य अपने अतीत को याद करते समय अक्सर अपनी असफलताओं को भाग्य के मत्थे मढ़ देता है और अपनी सफलताओं को बढ़ा-चढ़ाकर पेश करता है। 'मुड़-मुड़के देखता हूँ' में यादव जी ने इस प्रवृत्ति पर पहला प्रहार किया है। वे अपने बचपन की हीनभावनाओं, शारीरिक कमियों, हकलाहट, यौन-कुंठाओं और व्यावहारिक जीवन की असफलताओं को बिना किसी संकोच के पाठक के सामने रख देते हैं।

इस संदर्भ में, प्रसिद्ध आलोचक डॉ. नामवर सिंह का एक कथन प्रासंगिक है, जिन्होंने रेखांकित किया था कि राजेन्द्र यादव ने हिन्दी आत्मकथा को ड्राइंग-रूम की संभ्रांत बातचीत से निकालकर फुटपाथ की नग्न सच्चाई और आत्म-स्वीकृति के धरातल पर ला खड़ा किया है। यह आत्म-विच्छेदन वास्तव में आत्मकथा विधा का लोकतंत्रीकरण है। जब लेखक स्वयं को एक साधारण, त्रुटिपूर्ण और संघर्षरत मनुष्य के रूप में पेश करता है, तो वह पाठक के ऊपर किसी नैतिक बड़प्पन का बोझ नहीं डालता। यादव जी का यह दृष्टिकोण दर्शाता है कि उनका प्रतिरोध सबसे पहले स्वयं के अहंकार और 'लेखकीय प्रभुत्व' के विरुद्ध था। वे मन्नू भंडारी के साथ अपने वैवाहिक जीवन के तनावों, अपनी आर्थिक विवशताओं और अपनी चारित्रिक सीमाओं को जिस बेबाकी से स्वीकार करते हैं, वह हिन्दी साहित्य में विरल है। यह क्रूर आत्म-ईमानदारी ही उनके सामाजिक प्रतिरोध को विश्वसनीयता और धार प्रदान करती है।

3. सामाजिक यथार्थ और बहुआयामी प्रतिरोध के धरातल

राजेन्द्र यादव का प्रतिरोध शून्य में नहीं उपजता, बल्कि उसकी जड़ें उस सामाजिक यथार्थ में धँसी हैं जो मध्यवर्गीय नैतिकता, सामंती सोच और झूठी सामाजिक प्रतिष्ठा पर टिकी है। उन्होंने आगरा के रूढ़िवादी वातावरण और बाद में दिल्ली जैसे महानगर के संक्रमणकालीन सामाजिक ढांचे को बहुत करीब से जिया था। उनके लिए सामाजिक यथार्थ कोई स्थिर या पूजनीय वस्तु नहीं थी, बल्कि निरंतर संघर्ष, टकराव और परिवर्तन का एक गतिशील क्षेत्र था।

राजेन्द्र यादव का बहुआयामी प्रतिरोध			
सामंती व पितृसत्तात्मक दमन	मध्यवर्गीय पाखंड व झूठी मर्यादा	महानगरीय उपभोक्तावाद एवं अजनबीपन	मृत्यु का दैवीकरण व पाखंडी नैतिकता

3.1 सामंती अवशेष, पितृसत्तात्मक संरचना और पारिवारिक दमन का विच्छेदन

यादव जी ने स्वतंत्रता के बाद के भारतीय समाज में बचे हुए सामंती अवशेषों और पितृसत्तात्मक ढांचे को बहुत गहराई से महसूस किया था। 'मुड़-मुड़के देखता हूँ' में पारिवारिक स्तर पर 'पिता' का जो चरित्र उभरता है, वह केवल एक व्यक्ति का चरित्र नहीं है, बल्कि वह उस दमनकारी पितृसत्तात्मक व्यवस्था का प्रतीक है जहाँ पिता का अनुशासन संतान की स्वतंत्रता और मौलिकता को कुचलने का औजार बन जाता है।

आगरा के पारिवारिक परिवेश का चित्रण करते हुए यादव जी दिखाते हैं कि कैसे घर के भीतर स्त्रियों की स्थिति और बच्चों की इच्छाओं को सामंती रौब के नीचे दबा दिया जाता था। पिता की निरंकुशता और परिवार की कृत्रिम सामाजिक प्रतिष्ठा को बनाए रखने के चक्कर में व्यक्ति की स्वाभाविक महत्वाकांक्षाएँ दम तोड़ देती हैं। यादव जी इस व्यवस्था का डटकर विरोध करते हैं। उनका यह घरेलू प्रतिरोध आगे चलकर उनके व्यापक सामाजिक और राजनीतिक प्रतिरोध का प्रस्थान बिंदु बनता है। वे यह स्थापित करते हैं कि जब तक परिवार के भीतर लोकतंत्र और स्वतंत्रता की बहाली नहीं होगी, तब तक एक समतामूलक और लोकतांत्रिक समाज की कल्पना करना बेमानी है।

3.2 मध्यवर्गीय पाखंड, मर्यादा का आवरण और संकीर्ण नैतिकता पर प्रहार

भारतीय मध्यवर्ग हमेशा से अपनी दुहरी नैतिकता के लिए जाना जाता रहा है। यह वर्ग बाहर से जितना सभ्य, संस्कारी और मर्यादित दिखने का ढोंग करता है, भीतर से उतना ही संकीर्ण, जातिवादी और पुरुषवादी मानसिकता से ग्रस्त होता है। राजेन्द्र यादव ने इस मध्यवर्गीय पाखंड की धज्जियाँ उड़ाई हैं। वे सामाजिक संस्थाओं—जैसे विवाह, जाति-व्यवस्था और पारिवारिक मर्यादाओं—के पीछे छिपे हुए शोषणकारी चरित्र को बेनकाब करते हैं।

अपनी आत्मकथा में मध्यवर्गीय संस्कारों की तीखी आलोचना करते हुए वे लिखते हैं:

"हमारे समाज में 'मर्यादा' और 'संस्कार' के नाम पर जो कुछ परोसा जाता है, वह अक्सर शोषण का ही एक सभ्य रूप होता है। मैंने हमेशा उन मर्यादाओं को संदिग्ध माना है जो मनुष्य की स्वतंत्रता का गला घोंटती हैं और उसे एक संकीर्ण सांचे में ढालने का प्रयास करती हैं।" (यादव, 2014, पृष्ठ - 42)

उनका यह प्रतिरोध उन वर्जनाओं के खिलाफ भी है जो सेक्स, प्रेम और मानवीय संबंधों के सहज विकास को अनैतिक घोषित करती हैं। यादव जी मानते हैं कि मध्यवर्ग ने अपनी झूठी सुरक्षा के लिए नैतिकता के जो पैमाने बनाए हैं, वे वास्तव में मानवीय चेतना को बंदी बनाने के कारागार हैं।

3.3 महानगरीय अजनबीपन, अकेलापन और उपभोक्तावादी संस्कृति के विरुद्ध प्रतिरोध

आत्मकथा का एक बड़ा हिस्सा आगरा से दिल्ली के विस्थापन और वहाँ के महानगरीय जीवन के अनुभवों को समेटे हुए है। दिल्ली जैसे महानगर में आकर लेखक को जिस अजनबीपन, अकेलेपन और अमानवीयता का सामना करना पड़ता है, वह आधुनिक महानगरीय यथार्थ का एक कड़वा हिस्सा है। यहाँ आकर यादव जी का प्रतिरोध उस 'उपभोक्तावादी संस्कृति' की तरफ मुड़ता है जो पूँजी के प्रभाव में आकर मनुष्य को केवल एक वस्तु या कमोडिटी में बदल देती है।

महानगरों में मानवीय संवेदनाओं का जो क्षरण हो रहा था और जिस तरह पारंपरिक सामूहिकता टूटकर स्वार्थपरक व्यक्तिवाद में बदल रही थी, यादव जी उसके प्रति एक बौद्धिक बेचैनी व्यक्त करते हैं। वे देखते हैं कि शहरों में धर्म, अध्यात्म और व्यावसायिकता का एक ऐसा गठजोड़ तैयार हो गया है जो मनुष्य को उसकी वास्तविक सामाजिक समस्याओं से विमुख कर देता है। उनका प्रतिरोध इस महानगरीय मायाजाल के विरुद्ध पाठक को सचेत करता है।

3.4 मृत्यु, दैवीकरण और पाखंडी पवित्रता के मिथक का तार्किक खंडन

भारतीय सांस्कृतिक और धार्मिक चेतना में मृत्यु को एक दैवीय आवरण पहना दिया जाता है। जैसे ही किसी व्यक्ति की मृत्यु होती है, समाज उसके जीवन के समस्त अपराधों, शोषणकारी प्रवृत्तियों और सामाजिक कुकृत्यों को भुलाकर उसे 'पुण्य आत्मा' या 'महान' घोषित कर देता है। राजेन्द्र यादव इस पारंपरिक 'यथास्थितिवाद' और वैचारिक ढोंग के सबसे प्रखर और उग्र विरोधी थे। उनका स्पष्ट मानना था कि सत्य का मूल्यांकन व्यक्ति के जीवित रहते और उसकी मृत्यु के बाद भी निष्पक्ष और तर्कसंगत होना चाहिए।

आत्मकथा की भूमिका में इस पाखंडी उदारता पर तीखा प्रहार करते हुए वे लिखते हैं:

"हिप्पोक्रेसी की भारतीय संस्कृति में मृत्यु ऐसा मूल्य है जो हर पाप और अपराध को धो-पोंछकर स्वच्छ निर्मित कर देता है। बड़ा से बड़ा हत्यारा, स्मगलर, राक्षस मरते ही 'महान आत्मा' हो जाता है। 'जो नहीं रहा उसके बारे में क्यों बुरा कहें' की उदार क्षमाशीलता हमारा अपना समाधि लेख भी तय कर देती है।" (यादव, 2014, भूमिका)

यह अंश सामाजिक यथार्थ के उस धरातल को छूता है जहाँ यादव जी का प्रतिरोध अत्यंत उग्र, तार्किक और दार्शनिक हो जाता है। वे मृत्यु के नाम पर फैलाए जाने वाले इस भावुकतावादी पाखंड को खारिज करते हैं क्योंकि यह समाज को अपराधियों और शोषकों का सही मूल्यांकन करने से रोकता है।

4. साहित्यिक चिंतन: यथास्थितिवाद को चुनौती और वैचारिक प्रतिबद्धता

राजेन्द्र यादव केवल एक आत्मकथाकार या कथाकार नहीं थे, बल्कि वे हिन्दी साहित्य के सबसे बड़े वैचारिक उत्प्रेरक थे। उनका साहित्यिक चिंतन 'साहित्य की सामाजिक प्रतिबद्धता' के सिद्धांत पर दृढ़ता से आधारित था। वे कला को 'कला के लिए' मानने वाले कलावादी दृष्टिकोण के घोर विरोधी थे। उनके लिए साहित्य केवल मनोरंजन, सौंदर्यशास्त्रीय विलास या मानसिक शांति का माध्यम नहीं था, बल्कि वह समाज की जड़ताओं पर प्रहार करने और उसे बदलने का एक धारदार हथियार था।

साहित्यकार की सामाजिक भूमिका और वैचारिक आधार

यादव जी के अनुसार, एक सच्चे लेखक का मूल धर्म सत्ता—चाहे वह राजनीतिक सत्ता हो, धार्मिक सत्ता हो या सामाजिक-सामंती सत्ता हो—के सामने हमेशा एक प्रतिरोधी स्वर बुलंद रखना है। वे साहित्य को समाज का 'सेफ्टी वाल्व' नहीं मानते थे जो जनता के गुस्से को दबा दे; बल्कि वे साहित्य को एक 'हथौड़ा' मानते थे जो रूढ़ियों को तोड़ने का काम करे।

अपनी साहित्यिक दृष्टि को स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं:

"मेरे लिए साहित्य का मतलब यथास्थिति का कहीं न कहीं प्रतिरोध करना है। यदि साहित्य समाज में बेचैनी पैदा नहीं करता, यदि वह पाठक को उसकी सुखद नींद से नहीं जगाता और उसे अपने समय की विसंगतियों से टकराने के लिए मजबूर नहीं करता, तो वह साहित्य केवल रद्दी का ढेर है।" (यादव, 2014, पृष्ठ - 110)

राजेन्द्र यादव के इस साहित्यिक और वैचारिक चिंतन की पृष्ठभूमि में मार्क्सवाद की वर्ग-चेतना, डॉ. राममनोहर लोहिया का सामाजिक न्याय का दर्शन और महात्मा ज्योतिराव फुले व बाबासाहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर की जाति-विरोधी, अस्मितामूलक चेतना का गहरा प्रभाव था। वे साहित्य को जनतंत्र, समता और धर्मनिरपेक्षता की कसौटी पर कसते थे। यही कारण है कि उन्होंने उन अभिजात्य और कलावादी लेखकों की तीखी आलोचना की जो अपनी रचनाओं में रहस्यवाद, अध्यात्म और अतीत के महिमामंडन की आड़ लेकर समकालीन सामाजिक ज्वलंत समस्याओं और यथार्थ से मुँह मोड़ लेते थे।

5. अतीत के प्रति दृष्टिकोण और स्मृति-मोह से मुक्ति का स्वर

अधिकांश आत्मकथाओं में एक अंतर्निहित कमजोरी पाई जाती है—अतीत का रोदन या अतीत का अति-रोमानी महिमामंडन। लेखक अक्सर अपने बीते दिनों को स्वर्ण-काल के रूप में चित्रित करते हैं और वर्तमान को निकृष्ट मानते हैं। परंतु, राजेन्द्र यादव ने अतीत के इस सम्मोहन और जकड़न को अपनी प्रगति के मार्ग में एक बड़ी बाधा स्वीकार किया है। उन्होंने अतीत को किसी सुरक्षित शरणस्थली या बोझ की तरह नहीं लिया, बल्कि उसे एक ऐसे कच्चे अनुभव की तरह देखा जिससे टकराकर, जिसका विश्लेषण करके ही एक बेहतर वर्तमान और भविष्य का निर्माण किया जा सकता है।

अतीत के प्रति अपनी इस क्रांतिकारी और लीक से हटकर सोच को अभिव्यक्त करते हुए वे भूमिका में लिखते हैं:

"अतीत मेरे लिए कभी भी पलायन या प्रस्थान की शरणस्थली नहीं रहा। 'वे दिन कितने सुन्दर थे काश, वही अतीत हमारा भविष्य भी होता'- की आकांक्षा व्यक्ति को स्मृति-जीवी और निठल्ला बनाती है।" (यादव, 2014, भूमिका)

यह विचार ही उनकी आत्मकथा को एक अभूतपूर्व क्रांतिकारी और प्रगतिशील मोड़ देता है। वे पुरानी स्मृतियों को केवल भावुक होकर याद नहीं करते, बल्कि एक कठोर वैज्ञानिक और तार्किक दृष्टि से उनका परीक्षण करते हैं। वे अतीत की उन सभी परंपराओं को मलबे की तरह फेंक देने के पक्षधर हैं जो आज के मनुष्य को आधुनिक, लोकतांत्रिक और स्वतंत्र होने से रोकती हैं।

6. हाशिए का समाज: स्त्री विमर्श, दलित चेतना और अस्मितावादी विमर्श का धरातल

राजेन्द्र यादव के प्रतिरोध का सबसे महत्वपूर्ण, ऐतिहासिक और दूरगामी आयाम 'स्त्री विमर्श' और 'दलित-आदिवासी-हाशिए के विमर्श' को हिन्दी साहित्य के केंद्र में स्थापित करना है। 'हंस' पत्रिका के माध्यम से उन्होंने जिस वैचारिक क्रांति को जन्म दिया, उसका मुख्य बीज उनकी अपनी आत्मकथात्मक अनुभूतियों, उनके व्यक्तिगत संघर्षों और उनके परिवेश की गहरी समझ में छिपा हुआ था।

हाशिए के समाज का पक्ष और अस्मिता विमर्श			
स्त्री विमर्श		**दलित व वंचित चेतना**	
पुरुष-प्रधान मानसिकता का विरोध	**स्त्री की देह व अस्मिता की मुक्ति**	जातिवादी वर्चस्व का विखंडन	साहित्यिक अभिजात्यवाद को चुनौती

स्त्री विमर्श और पुरुष-प्रधान मानसिकता को चुनौती

यादव जी ने पुरुष-प्रधान समाज की उस सामंती और संकीर्ण मानसिकता को सीधे चुनौती दी जो स्त्री को केवल पुरुष की संपत्ति, भोग्या, कुल की मर्यादा या दासी के रूप में देखती है। उन्होंने अपनी आत्मकथा में मन्नू भंडारी जैसी सशक्त रचनाकार के साथ अपने संबंधों के उतार-चढ़ाव को लिखते हुए भी उस पुरुष-अहंकार की शिनाख्त की है जो अनजाने में ही सही, एक आधुनिक पुरुष के भीतर भी मौजूद रहता है। उनके साहित्यिक चिंतन में स्त्री की मुक्ति का प्रश्न केवल आर्थिक आत्मनिर्भरता तक सीमित नहीं था, बल्कि वह स्त्री की मानसिक, शारीरिक और निर्णय लेने की पूर्ण स्वतंत्रता से जुड़ा हुआ था। उन्होंने स्त्री की देह और उसकी अस्मिता पर थोपे गए पारंपरिक पवित्रता के मानदंडों को सिरे से खारिज किया।

दलित, वंचित और हाशिए के समाज की चेतना का विस्तार

इसी प्रकार, दलित और वंचित समाज के प्रति उनका दृष्टिकोण केवल सहानुभूति का नहीं, बल्कि साझीदार और सह-योद्धा का था। वे मानते थे कि जब तक साहित्य में समाज के सबसे निचले पायदान पर खड़े व्यक्ति (हाशिए के समाज) को अपनी भाषा और अपने अनुभवों के साथ व्यक्त होने का अवसर नहीं मिलेगा, तब तक हिन्दी साहित्य का जनतांत्रीकरण अधूरा है। उन्होंने अपनी आत्मकथा और अपने संपादकीय लेखन के माध्यम से साहित्यिक अभिजात्यवाद को तोड़ा, जिसने सदियों से कुछ चुनिंदा सवर्ण अनुभवों को ही 'महान साहित्य' की संज्ञा दे रखी थी। यादव जी का प्रतिरोध इस साहित्यिक एकाधिकारवाद के खिलाफ एक सशक्त जनघोष था।

7. भाषा, शैली और प्रतिरोधी शिल्प की तकनीक

किसी भी आत्मकथा की सफलता केवल उसके कथ्य में नहीं, बल्कि उसकी भाषा और शिल्प की प्रामाणिकता में भी निहित होती है। राजेन्द्र यादव ने 'मुड़-मुड़के देखता हूँ' में जिस भाषा और शिल्प का प्रयोग किया है, वह उनके प्रतिरोधी स्वभाव के सर्वथा अनुकूल है। उनकी भाषा यहाँ अलंकृत, काव्यात्मक या छद्म-गंभीर नहीं है; बल्कि वह अत्यंत बेबाक, धारदार, विश्लेषणात्मक और कहीं-कहीं जानबूझकर गढ़ी गई अनगढ़ता से युक्त है। **लेखक स्वयं आत्मकथा की भूमिका में स्वीकार करते हैं कि यह स्मृति के सहारे गुजरे हुए को तरतीब देने वाली पारंपरिक शैली नहीं है, बल्कि यह "अधूरे होने की हीनता-ग्रंथि से मुक्त होने और स्वयं से निर्मम सवाल पूछने का एक साहसिक प्रयास है" (यादव, 2001, पृ. 5)।**

वे घटनाओं का क्रोनोलॉजिकल (कालानुक्रमिक) विवरण देने के बजाय स्मृतियों के वैचारिक संपादन की तकनीक का सहारा लेते हैं। आख्यान की यह तकनीक रैखिक न होकर गैर-रैखिक है, जहाँ एक स्मृति दूसरी स्मृति को जन्म देती है और लेखक तुरंत उस स्मृति का पोस्टमार्टम करने बैठ जाता है। **इस विशिष्ट आरेखीय और गैर-रैखिक शिल्प के विषय में समीक्षक डॉ. चव्हाण रेखांकित करते हैं कि यादव जी घटनाओं को केवल दोहराते नहीं, बल्कि स्मृतियों के टुकड़ों का वैचारिक संपादन करते हैं ताकि वे आज की सामाजिकता से जुड़ सकें (चव्हाण, 2013)।**

उनकी शैली में एक खास तरह का व्यंग्य और वक्रोक्ति है, जो पाठक को चमत्कृत नहीं करती, बल्कि उसे भीतर तक झकझोर देती है। **अपनी बात को पूरी प्रखरता से रखने के लिए उन्होंने भाषा की इसी धारदार तकनीक को चुना, क्योंकि उनका मानना था कि रचनात्मक ऊर्जा को बनाए रखने के लिए "वैचारिक स्वाधीनता और बार-बार नवीनीकरण की आवश्यकता होती है" (यादव, 2001, पृ. 11)।** भाषा का यह तेवर ही उनके शिल्प को भी एक प्रतिरोधी शिल्प बना देता है।

8. व्यापक निष्कर्ष एवं समकालीन प्रासंगिकता

राजेन्द्र यादव की आत्मकथात्मक कृति 'मुड़-मुड़के देखता हूँ' हिन्दी आत्मकथा साहित्य के इतिहास की एक अद्वितीय और युगांतकारी उपलब्धि है। यह कृति इस महत्वपूर्ण तथ्य की अकाट्य पुष्टि करती है कि आत्मकथा केवल बीते हुए कल का रोदन या स्मृतियों की जुगाली नहीं है, बल्कि वह आने वाले कल के लिए एक अत्यंत समृद्ध और वैचारिक खाद है। **समीक्षक डॉ. चव्हाण के अनुसार, यादव जी की यह रचना केवल उनकी व्यक्तिगत यात्रा नहीं है, बल्कि "वह अतीत के झरोखे से भविष्य के निर्माण की एक ऐसी वैचारिक खिड़की खोलती है" जो साहित्य को समाज से जोड़ती है (चव्हाण, 2013)।**

यादव जी का समूचा जीवन और उनका यह लेखन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि जब तक समाज में असमानता, सामंती जड़ता, जातिवाद, लैंगिक भेदभाव और अंधविश्वास मौजूद हैं, तब तक एक सच्चे लेखक और बौद्धिक का एकमात्र धर्म 'प्रतिरोध' ही होना चाहिए। **स्वयं राजेन्द्र यादव भी इस बात पर अडिग थे कि "रचनाकार का मुख्य कार्य सत्ता और रूढ़ियों के सामने असहज करने वाले सवाल खड़े करना है" (यादव, 2001, पृ. 11)।** उनकी यह पुस्तक पाठक को आत्म-मुग्धता और संकीर्णता के खोल से बाहर निकालकर उसे अपने समय और समाज के प्रति जवाबदेह बनाती है। **यही कारण है कि यह कृति अपने अंतिम निष्कर्ष में आत्म-प्रशंसा का खंडन करते हुए "एक निर्मम आत्म-आलोचना और युग-बोध का जीवंत साक्ष्य बनकर उभरती है" (यादव, 2001, पृ. 5)।**

निष्कर्षत:, राजेन्द्र यादव के लिए प्रतिरोध कोई क्षणिक आवेश, फैशन या तात्कालिक नारा नहीं था, बल्कि वह उनके जीवन का एक सुविचारित, जिया हुआ और अत्यंत गहरा जीवन-दर्शन था। उन्होंने जिस अपूर्व साहस के साथ अपनी व्यक्तिगत कमियों, कमजोरियों और समाज की विद्रूपताओं को एक साथ आमने-सामने खड़ा किया, वह महान कवि मुक्तिबोध की उस बेचैनी की याद दिलाता है जहाँ व्यक्ति स्वयं को लगातार 'रि-एग्जामिन' (पुनर्परीक्षण) करता है। उनका प्रतिरोध केवल बाहरी सत्ताओं से नहीं था, बल्कि स्वयं के भीतर छिपे उस 'रूढ़िवादी और पारंपरिक अंश' से भी था जो बदलाव से डरता है।

सामाजिक यथार्थ का ऐसा निर्भीक, पारदर्शी साक्षात्कार और साहित्यिक चिंतन की ऐसी अटूट, अडिग प्रतिबद्धता उन्हें हिन्दी साहित्य का एक ऐसा देदीप्यमान स्तंभ बनाती है, जिससे टकराकर ही आधुनिक और प्रगतिशील चेतना का मार्ग प्रशस्त होता है। आज के समकालीन समय में, जब बौद्धिक जगत में अक्सर एक अजीब सा मौन, अवसरवादिता या समझौतापरस्ती दिखाई देती है, राजेन्द्र यादव की यह प्रतिरोधी दृष्टि और उनकी यह बेबाक चेतना और अधिक प्रासंगिक तथा अनिवार्य हो गई है। यह आत्मकथा हमें गहराई से सिखाती है कि 'मुड़-मुड़कर देखना' केवल पीछे की ओर कदम बढ़ाना नहीं है, बल्कि पीछे छूट गई उन गलतियों, पाखंडों और ऐतिहासिक भूलों से सीखकर एक न्यायपूर्ण, समतामूलक और लोकतांत्रिक भविष्य की मजबूत नींव रखना है।

संदर्भ सूची (References)

1. गौतम, आर. (2012). *आधुनिक हिन्दी आत्मकथा का स्वरूप*. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन.
2. त्रिपाठी, ए. (2013). राजेन्द्र यादव जी की आत्मकथाः विश्वास व अविश्वास. *IJCRT Research Journal*, *1*(4), 12-18.
3. भारद्वाज, पी. (2014). *राजेन्द्र यादव से संवाद*. दिल्ली: शब्दांकन प्रकाशन.
4. यादव, आर. (2014). *मुड़-मुड़के देखता हूँ*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
5. सिंह, एन. (2015). *राजेन्द्र यादव और हिन्दी विमर्श*. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन.
6. यादव, आर. (2014). *मुड़-मुड़के देखता हूँ*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. **पृ. 5**
7. चव्हाण, एस. एल. (2013, 3 मई). *राजेंद्र यादव का आत्मकथ्यांश 'मुड़–मुड़के देखता हूँ...': वैचारिक पक्ष*. रचनाकार. https://www.rachanakar.org/2013/05/blog-post_3.html
8. यादव, आर. (2014). *मुड़-मुड़के देखता हूँ*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. **पृ. 11**

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 143-147
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

State Intervention in the Context of Forced Return: Nitaqat and Kerala's Policies on Migrant Reintegration

Risana CP
Research Scholar,
Department of Political Science,
University College, Thiruvananthapuram

Abstract
International migration has had a huge impact on Kerala's socioeconomic change, particularly thru migration to Gulf countries. However, migrant workers' reliance on destination-country labour markets exposes them to significant risks. Saudi Arabia's Nitaqat program, which was implemented as part of the country's Saudization policy, demonstrates how labour-market nationalization can have an impact on migrant-sending regions. The establishment of Nitaqat helped to return several Indian and Keralite migrant workers, notably those working in low- and semi-skilled occupations. This paper studies Nitaqat-induced return migration thru the lens of state intervention and migrant reintegration. It contends that Nitaqat elevated return migration from a personal household issue to a major public-policy challenge encompassing work, financial security, social protection, and economic rehabilitation. The article examines Kerala's institutional solutions via the Department of Non-Resident Keralites' Affairs (NORKA), NORKA ROOTS, and the NORKA Department Project for Returned Emigrants (NDPREM). It also contends that, while Kerala has established key mechanisms for migrant care and rehabilitation, the reintegration framework must become broader, differentiated, and employment-oriented.
Keywords: Nitaqat, forced return, return migration, Kerala, state intervention, migrant reintegration, saudization, NORKA

Introduction

International migration has been a hallmark of Kerala's modern socioeconomic progress. Since the 1970s, a substantial number of Keralites have traveled to the Gulf Cooperation Council (GCC) countries in quest of work and a better life. Migration has greatly boosted household income, consumption, education, housing, and investment in Kerala. Since 1998, the Center for Development Studies (CDS) has conducted a systematic study of emigration, return migration, and remittances from Kerala thru the Kerala Migration Survey. Seven rounds of the poll have yielded extensive data on migration patterns and their socioeconomic repercussions.

Despite these advantages, Gulf migration is characterized by transitory work and reliance on destination nations' labor and immigration rules. Migrants remain exposed to economic restructuring and policy developments outside the Kerala government's control.

Saudi Arabia's Nitaqat program is an excellent example. Nitaqat, which was introduced as part of the broader Saudization agenda, aimed to promote Saudi citizens' participation in private-sector work. While the program was largely intended to address Saudi Arabia's local labor-market difficulties, its ramifications also affected foreign workers, especially Keralites.

Changes linked with Nitaqat resulted in job uncertainty and the return of some migrant workers, notably low- and semi-skilled workers, to Kerala. According to research, northern Kerala, particularly Malappuram, Kozhikode, Kannur, and Kasaragod, is heavily impacted by Nitaqat-induced back migration.

This study investigates Nitaqat-induced return migration as a type of involuntary or constrained return and evaluates Kerala's policy response. It focuses on the state's changing role, from migrant protection overseas to reintegration upon return.

Nitaqat and Labor Market Nationalization

Nitaqat arose as part of Saudi Arabia's greater Saudization agenda, which aimed to enhance employment prospects for Saudi residents. The initiative established measures that incentivized or mandated private-sector employers to hire Saudi citizens.

Labor nationalization, according to Saudi Arabia, is a domestic policy response to unemployment, demographic challenges, and the dominance of expatriate labor in a number of areas. Policies aimed at benefiting citizens, on the other hand, can restrict job possibilities for foreigners.

This is a significant conflict in migration governance. The destination country has sovereign responsibility over its labor market, while the migrant-sending country is responsible for the social and economic implications. Kerala could not control the content of Nitaqat, but it was required to respond when its migrants were affected.

Nitaqat highlights how migration policy cannot be understood solely inside national borders. Labor market regulations in destination nations can have an impact on household income, local employment, and public policy in migrant-sending regions.

Nitaqat and involuntary return

Return migration has various forms. Some migrants return voluntarily after meeting their financial goals, while others return due to retirement, family circumstances, illness, or the end of employment contracts. In contrast, return following job loss or restricted immigration regulations is referred to as involuntary or constrained return.

Nitaqat-induced return falls mostly into this latter category. Migrants who anticipated to continue working in Saudi Arabia may encounter employment challenges and be forced to return earlier than planned.

Dinoop and Ambady's research of Saudi returnees from Kerala identified Nitaqat as a prominent factor driving back migration, with a specific focus on northern Kerala. Similarly, Yunus's 2025 research of Malappuram discovers that Nitaqat harmed low- and semi-skilled workers while also causing economic and social hardships for returnees and their families.

The implications of involuntary return go beyond the migrant. Families that rely on remittances may suddenly lose their main source of income. Returnees may also return without meeting their savings goals or with financial commitments incurred during migration.

Thus, the major policy issue is not just migrants' physical homecoming, but also their successful socioeconomic reintegration.

Return migration is a state policy issue.

The Nitaqat case indicates that return migration cannot be seen merely as a private household matter. When a big number of workers return unexpectedly, it has implications for employment, social security, income, entrepreneurship, and local economic development.

Kerala has responded with institutional procedures tailored specifically to foreign and repatriated migrants. The Department of Non-Resident Keralites' Affairs (NORKA) reflects the state's institutional commitment to addressing the needs of Keralites who live and work overseas, as well as those who return home.

NORKA ROOTS serves as a key implementation agency for migrant welfare and rehabilitation programs. The formation of these organizations marks a substantial shift in the role of the state. Instead of focusing just on supporting or protecting migration, the state has begun to recognize return and reintegration as different stages of the migratory process.

This institutional response is especially crucial because the Kerala economy has benefited greatly from migrant remittances. When migrants return involuntarily, the state faces the difficult task of assisting homes while also striving to utilize the human and financial capital gained during migration.

NDPREM and Economic Reintegration

One of Kerala's key reactions to return migration is the NORKA Department Project for Returned Emigrants (NDPREM). The initiative aims to encourage self-employment and economic rehabilitation among return migrants by providing institutional credit and financial assistance.

NDPREM is significant since it extends beyond short-term relief. It views return migrants as potential entrepreneurs and economic contributors, rather than as welfare recipients.

The approach mirrors the larger notion that return migration can create development opportunities. Returnees may have finances, overseas experience, job skills, or business knowledge. If these resources are properly supported, they can help to create jobs and stimulate the local economy.

However, entrepreneurship cannot be viewed as a universal solution. Many return migrants lack the necessary finances, business knowledge, and motivation to become entrepreneurs. A worker who has returned due to involuntary job loss may need wage employment rather than a business financing.

According to research on Kerala's reintegration framework, despite institutional initiatives, the state continues to struggle with completely integrating return migrants into the labor market. Parambengal and Kalam believe that while Kerala has taken concrete measures thru NORKA, there is still much need for improvement in returnee socioeconomic reintegration.

As a result, reintegration policies must mix entrepreneurship with job creation, skill development, and social protection.

Major Reintegration Challenges

The first big hurdle is securing job. Many returnees have skills earned in Gulf labor markets that may not be applicable to available positions in Kerala. Their international experience may so stay underutilized.

The second challenge is income reduction. Gulf job usually pays better wages than comparable employment in Kerala. As a result, household income and living standards may fall significantly.

Third, involuntary return can cause financial insecurity. Migrants may have insufficient savings since they returned before completing their intended duration of employment.

Fourth, there's the issue of skill transferability. Overseas occupational experience must be recognized and linked to domestic work chances.

Finally, there is a need to address the social aspect of integration. Returning from several years overseas necessitates adjusting to family connections, employment situations, and local social surroundings. These elements demand more attention in policy and research.

Strengthening Kerala's Reintegration Policy

The Nitaqat example highlights various areas where Kerala's migrant reintegration program should be improved.

First, Kerala requires a holistic return-migration policy that incorporates welfare, employment, social security, skill development, and entrepreneurship rather than depending on discrete programs.

Second, the state should create a systematically organized database of returnee talents. Returnees can connect with work prospects in Kerala by providing information about their occupation, experience, qualifications, and skills earned overseas.

Third, policies should be differentiated based on migrant characteristics. A highly skilled professional, a low-skilled worker, an older returnee, and a worker returning due to forced unemployment require varying levels of assistance.

Fourth, employment-focused programs should be strengthened. Entrepreneurship programs should be supplemented by job placement, vocational retraining, and skill recognition methods.

Fifth, Kerala should prioritize pre-return planning. Before returning, migrants facing job uncertainty abroad should be provided with information on financial management, work opportunities, and various government schemes.

Sixth, better cooperation between the Kerala administration, the Union government, and Indian diplomatic posts is required. Early information about destination-country labor rules might help migrants plan for potential changes.

Conclusion

Nitaqat is an interesting case study for analyzing the interaction between destination-country labor policy, return migration, and governmental intervention. Saudi Arabia's efforts to enhance employment prospects for its inhabitants have had an impact on migrant laborers from India and Kerala

For affected Keralite migrants, returning was not always a voluntary decision. Employment uncertainty and changes in the labor market contributed to an earlier-than-expected return. The consequent socioeconomic impacts impacted not only migrants, but also their households and communities.

Kerala has responded with NORKA, NORKA ROOTS, and programs like NDPREM. These programs represent a significant institutional change from migrant charity to economic rehabilitation and reintegration. Nonetheless, existing information suggests that policy provision continues to fall short of the actual needs of return migrants.

The main takeaway from the Nitaqat experience is that return migration should be recognized as a permanent component of migration governance. Before migrants return, the state should intervene to ensure their long-term economic and social reintegration.

Kerala's future migration policy must consequently shift from a reactive to a proactive framework that anticipates return, protects vulnerable migrants, and successfully leverages returnees' talents, finances, and experience. Nitaqat indicates that migration governance continues after migrants return home. Return, on the other hand, constitutes a new stage in the migratory cycle in which the state bears a significant duty for promoting dignity, security, and long-term reintegration.

References

- **Centre for Development Studies (CDS). (2018).** *Kerala Migration Survey 2018*. Thiruvananthapuram: Centre for Development Studies.

Kerala Migration Survey – CDS

- **Dinoop, K. K., & Ambady, K. G. (2020).** Impact of NITAQAT on migrant labour: A study of Saudi returnees of Kerala. *Strad Research*, *7*(7), 415–421. ResearchGate – Article page
- **Mary Sudha, P. (2023).** Return migration in the era of global uncertainty: Revisiting Kerala's Nitaqat repatriation as a policy framework for emerging repatriation threats. *Educational Administration: Theory and Practice*, *29*(4), 5696–5700. Article – Educational Administration: Theory and Practice
- **Parambengal, A., & Kalam, S. P. (2023).** An institutional framework for the socio-economic reintegration of return migrants: A Kerala experience. *Journal of Public Affairs*, *23*(3), e2855. Wiley Online Library – Article.
- **Yunus, C. (2025).** *Socio-economic impacts of Nitaqat in Kerala: A study in Malappuram district*. Department of Political Science, University of Calicut. University of Calicut Repository – Thesis.
- **Saudi Arabia, Ministry of Human Resources and Social Development. (n.d.).** *The Implementing Regulations of Labor Law and its Annexes*. Kingdom of Saudi Arabia. Saudi Ministry – Implementing Regulations of Labor Law.
- **Saudi Arabia, Ministry of Human Resources and Social Development. (2026).** *The Ministry of Human Resources and Social Development has mandated the electronic documentation of employment contracts through the Qiwa platform*. Saudi Ministry – Nitaqat and Qiwa
- **Government of Kerala. (n.d.).** *Department of Non-Resident Keralites' Affairs (NORKA).* Government of Kerala. Kerala Government – NORKA Department
- **NORKA ROOTS. (n.d.).** *NORKA Department Project for Returned Emigrants (NDPREM).* Government of Kerala. NORKA ROOTS – NDPREM

Email.risana.cp94@gmail.com
Mob 8943526677

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 148-152
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

सामाजिक नियमों के पुनर्मूल्यांकन का आग्रह
(काशीनाथ सिंह के उपन्यास 'महुआचरित' के संदर्भ में)

कमलेश कुमार मीना
असिस्टेंट प्रोफेसर
शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय सवाईमाधोपुर

सारांश
काशीनाथ सिंह द्वारा रचित उपन्यासों में 'महुआ चरित' महत्वपूर्ण स्थान रखता हैं। नारी में उभरते अस्मिता बोध को लेखक ने पूरी ईमानदारी के साथ दर्शाया है। परंपरा के प्रति विद्रोह की प्रवृत्ति तो मानव के मन के अंदर हमेशा से ही रही है, परंतु इनका अतिक्रमण कर पाना प्रत्येक मनुष्य के बस की बात नहीं है। स्त्री के हृदय में भी परंपरागत रूढ़ियों, बेबुनियादी नियमों का अतिक्रमण करने का ख्याल जन्म लेता है। देहासक्ति से विवाह तक की यात्रा में उपन्यास की नायिका महुआ की संवेदना एवं मनोदशाओं का यथार्थ चित्रण उपन्यास में किया गया है। स्त्री मनोविज्ञान की ऐसी सफल अभिव्यक्ति काशीनाथ सिंह की विशिष्ट प्रतिभा की परिचायक है। उपन्यास में लेखक ने स्त्री के मन में उत्पन्न बेवफाई, अकेलापन, घुटन, पीड़ा, उत्तेजना जैसी मनोदशाओं का प्रस्तुतीकरण हुआ हैं। महुआ की मन:स्थितियों के अंकन के माध्यम से लेखक सामाजिक व्यवस्था के पुनर्मूल्यांकन का आग्रह इस प्रकार से प्रस्तुत करता है, जो पाठकों एवं आलोचकों को सोचने को मजबूर करते हुए व्यवस्था को चुनौती देते हुए नए पन का सूत्रपात भी करता है।

बीज शब्द : परंपरा, पुनर्मूल्यांकन, सामाजिक, व्यवस्था, उत्तेजना, अस्मिता, अकेलापन, मनोदशा, पीड़ा।

प्रस्तावना:

विगत दशकों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं बौद्धिक परिप्रेक्ष्य में समुचित बदलाव आए हैं। नारी जीवन को लेकर अनेक रचनाकारों ने अपनी लेखनी को चलाया एवं उसके संघर्ष, स्त्री - पुरुष संबंध आदि विषयों पर प्रकाश डालने की चेष्टा की है। उन्होंने अपने स्वाभाविक वर्णन द्वारा इसमें अभूतपूर्व सफलता भी प्राप्त की है, ऐसे ही एक सफल साहित्यकार है काशीनाथ सिंह। जिन्होंने 'महुआचरित' उपन्यास के माध्यम से स्त्री की मनोदशा एवं सामाजिक नियमों के पुनर्मूल्यांकन का आग्रह बदलते परिपेक्ष के संबंध में सफलतापूर्वक किया हैं। स्त्री मनोविज्ञान की ऐसी सफल अभिव्यक्ति करने में काशीनाथ सिंह जी सफल भी हुए हैं।

आत्मकथात्मक शैली में रचित इस उपन्यास में अस्मिता बोध को प्रमुखता से उठाया गया है। उपन्यास की नायिका 'महुआ' की सघन व जटिल संवेदनाओं को बदलते परिप्रेक्ष्य में चित्रित किया गया है। आधुनिक सामाजिक परिदृश्य में एक शिक्षित एवं समर्थ नारी की विचारधारा, अंतर्द्वंद्व, स्वयं से किए गए प्रश्न, आत्म विश्लेषण पाठक के सामने कई प्रश्न खड़े कर देते हैं। देहासक्ति से विवाह तक की यात्रा में महुआ में उत्पन्न निराशा, बेबसी, अकेलापन, आत्मग्लानि, घुटन, संत्रास, पीड़ा जैसी मनोदशाओं का सहज एवं ग्राह्य भाषा में प्रस्तुतीकरण हुआ हैं। काशीनाथ सिंह नारी मनोविज्ञान के कितने गहरे जानकार है, इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण महुआचरित में दृष्टिगोचर होता है। महुआ के चरित्र-चित्रण में काशीनाथ सिंह ने यथार्थवादी दृष्टि रखते हुए निराशा, अकेलेपन में बेबसी जैसे भावों को शब्द दिए हैं। एक पुरुष साहित्यकार द्वारा नारी संवेदनाओं की ऐसी यथार्थ अभिव्यक्ति इस उपन्यास को दुर्लभ कृतियों की श्रेणी में स्थान दिलाती हैं।

स्त्रियों के वास्तविक अंतर्मन को उद्घाटित करते हुए काशीनाथ सिंह ने महुआ के मानसिक भावों को बड़ी कुशलता से अंकित किया है। समय पर विवाह न होने की कुंठा महुआ की कुंठित मनोदशा को दर्शाती है अपनी विवाहित सखियों के प्रति ईर्ष्या भावना एवं कुंठा महुआ के मन में घर कर जाती है- "मैं उन्हें सुनती रहती हूं और हां- हूं करती रहती हूं। मुझे उनसे जलन और ईर्ष्या होती, मन उदास और खिन्न हो उठता। बेचैनी बढ़ जाती।"1 दैहिक जिज्ञासाओं एवं इच्छाओं के फलस्वरूप महुआ एक विवाहित युवक साजिद के आकर्षण में बंध जाती है हर्षुल से विवाह के पश्चात भी मानसिक अंतर् जटिलताओं से घिरी रहती है। पति के द्वारा किए गए छल एवं उसकी दोहरी मान्यताओं के कारण महुआ में अस्तित्व बोध जागता है, और वह हर्षुल से रिश्ता तोड़ कर हमेशा के लिए चल पड़ती है और अंततः निर्भीक होकर उसका सामना करती है- "हर्षुल, मैंने तुमसे कभी नहीं पूछा कि पिछले तीन साल से ही नहीं, आज भी तुम वर्तिका बनर्जी के साथ क्या कर रहे हो? क्या कर रहे हो जानती हूं, लेकिन नहीं पूछूंगी, इतना याद रखना।"2 स्वाभिमान में नैतिकता के भावों से भरी महुआ के इन शब्दों के माध्यम से काशीनाथ सिंह समाज के दोहरे मापदंडों से असहमत स्त्री को चरितार्थ करते हैं। काशीनाथ सिंह स्वयं भी इस असमानता की निंदा करते है, तथा साहित्य में इस समस्या को उचित स्थान न देने पर अपना विचार भी रखते हैं- "पुरुष वर्चस्व सभी जगह है, जाने क्यों मुझे ऐसा लगता है कि लेखन ऐसा क्यों नहीं हो पा रहा है, न स्त्रियों न पुरुषों द्वारा। खुद स्त्री विमर्श करने वाले लोग अपनी बेटियों व स्त्रियों पर दोहरे मापदंड अपनाते हैं।"3

महुआचरित में 80 साल के स्वतंत्रता सेनानी का संयुक्त परिवार है, इसमें वृद्ध माता-पिता के अलावा एक बेटी और एक बेटा लेकिन बेटा-बेटी अपने-अपने पथ के पथिक। बेटी महुआ भी अपने कैरियर बनाने की चिंता में और बेटा सुशांत भी इसीलिए दोनों में से कोई भी पिता को सही पिता नहीं समझता। बकौल महुआ- "पापा की ये बातें (मानवीय व्यवहार से लेकर देश दुनिया की बातें) कभी बहुत अच्छी लगती थीं, लेकिन अब इनसे चिढ़ पैदा होती है। सारी जिंदगी तुम देश और दुनिया के ही बारे में सोचते रहे, कभी अपनी बेटी के बारे में भी सोचा? तुम्हें तो यह तक पता नहीं, कि तुम्हारी बेटी की उम्र क्या है? उन्तीस या तीस? तुम जिन सहेलियों के बारे में पूछते हो, उनमें से कितनी मां बन चुकीं, और कितनी पेट से हैं? तुम यह भी जानते हो, कि न दहेज दे सकते हो, न मैं वैसी शादी कर सकती हूं। फिर तुम खुलकर क्यों नहीं कहते, कि बेटी! तुम्हें जो करना हैं- करो, हम साथ है तुम्हारे।"4 इस उद्धरण से भी झलकता है, कि आज की स्त्री उन सामाजिक बंधनों और नियमों को तोड़ना चाहती है, जो समाज द्वारा बनाए गए थे। अधिकांश पिता तो पुत्री जन्म का मतलब ही उसका विवाह करना समझ रहे है, जब तक कि उसकी शादी नहीं हो जाती फिर उसके आगे की पढ़ाई लिखाई का भार उसके ससुराल वालों का समझने लगते हैं। महुआ के पिता की तरह नहीं चाहते कि बेटी भी बेटे की तरह अपने जीवन यापन लक्ष्य की तलाश कर ले अपनी एक खास पहचान बनाने का पत्र प्राप्त कर लें तब जिससे इच्छा हो सोच

समझकर अपनी गृहस्थी बसा ले जिससे इच्छा का मतलब! अपनी जाति बिरादरी और जनक जननी की विचार आलोक में उनकी उदारता आदि सद्गुणों के प्रमाण उनके पिता- माता और पुत्री मध्य हुए वार तंत्र से भी मिलता हैं- "ऐसा है बेटा की किताब, कॉपी, गाने, खिड़की यह सब तो हैं ही। कभी-कभी बाहर भी निकलना चाहिए। अकेले न जाना हो, तो मम्मी को भी ले लो! और नहीं तो घर में ही ऊपर इतनी बड़ी छत है। काहे के लिए है? सिर्फ कपड़े सुखाने के लिए? समझ रही हो ना?"5 बस इसी से महुआ बाहर घूमने की बात समझ गई तभी तो बहाना बनाकर माता-पिता को उल्लू बना कर वह साजिद के साथ हैदराबाद तक की सैर कर आती है। और गर्भवती भी हो जाती है, यह भी नहीं सोचती कि साजिद कई बच्चों का बाप भी है और मुसलमान भी। बाद में उसी से विवाह करती है, जिसके प्रेम को विद्यार्थी जीवन में ही ठुकरा चुकी है। लेकिन विवाह पूर्व उसे अपने गर्भपात कराने की बात नहीं बताती है, लेकिन हर्षुल को पता चल जाता है। वह गर्भ में एक प्राण पिंड को लिए एकल परिवार जीने को विवश आगे बढ़ जाती है।

स्त्री की नई संवेदनाएं धर्म, समाज- संस्कृति एवं इस समूची व्यवस्था के पुनर्मूल्यांकन का आग्रह करती है। स्त्रियों के अनुभव भी पुरुष से भिन्न है। वह सभी सीमाओं में बंधनों का विरोध करती है परंतु अराजकता के पक्ष में भी नहीं रहती है हर्षुल का छल महुआ के सुखी जीवन में अराजकता का अनुभव कराता है तथा उसमें हर्षुल के प्रति मोहभंग के भाव उत्पन्न होते हैं। जो कभी- कभी क्रोध और घृणा का रुप ले लेते हैं इन पंक्तियों में ऐसी मनोदशा का बोध होता है- "मुझे लगता है कि अपने घिनौने, डरावने और कालिख पुते चेहरे के साथ जिस औरतों पर हर्षुल नाम का आदमी झुक रहा है वह और कोई नहीं मैं हूं।"6 यहां हम देखते हैं कि काशीनाथ सिंह की भाषा तल्ख हो गई है फिर भी इसमें नयी वैधता है यह प्रत्येक उस स्त्री के हृदय से उठ रहे आवेगो का सफल चित्रण है जिसे उसके पति ने छैला हो-" काशी नाथ जी की भाषा में तल्खी और रवानी का राज यह है कि वे समाज में गहरे उतरते हैं, वे भाषा गढ़ते नहीं जीवन से लेते हैं।"7 महुआ के चरित्र - चित्रण में काशीनाथ सिंह ने यथार्थवादी दृष्टि रखते हुए निराशा, अकेलेपन में बेबसी जैसे भावों को शब्द दिए हैं। उम्र के महत्वपूर्ण पड़ाव पर देहासक्ति से उत्पन्न निराशा महुआ को परेशान कर देती है और वह तनाव का शिकार हो जाती है- "डिप्रेशन में चली गई थी जैसे उस वक्त जब बाजार से गुजरती तो कनखियों से इधर-उधर देखने लगती कि लोग मुझे देख क्यों नहीं रहे हैं? कि कोई मेरी चाल पर कमेंट क्यों नहीं पास कर रहा हैं? कि उस बच्चे ने मुझे दीदी क्यों नहीं कहा? आंटी क्यों कहा?"8 समय के साथ-साथ स्त्री-पुरुष संबंधों में भी व्यापक परिवर्तन आया है। आज स्त्री और पुरुष दोनों ही संबंध बनाने - तोड़ने के लिए स्वतंत्र है चाहे वह विवाह पूर्व हो या विवाहेत्तर। विवाह पूर्व संबंधों को रोमांच का नाम दे दिया जाता है। यह दृष्टि नवीन परंतु सत्य है। साजिद के साथ संबंध बनाने को महुआ रोमांच का नाम देती है उसके अंदर डर, उत्तेजना, रोमांच, चिंता, जोखिम, विद्रोह जैसे सभी भाव उठते है, जिन्हें काशीनाथ सिंह ने इन पंक्तियों द्वारा स्पष्ट किया है-"और यह साजिद मेरा पड़ोंसी और दो बच्चों का बाप साजिद मेरा 'कोई' हुआ। और इसे मेरे मन ने स्वीकार किया तो इसलिए कि इसमें 'एडवेंचर' के साथ 'थ्रिल' भी शामिल था। और वह जीवन ही क्या जिसमें थ्रिल न हो।"9

आधुनिक समाज में स्त्रियां स्वतंत्र चिंतन के लिए स्वतंत्र है। स्त्रियों के प्रेम व आकर्षण भाव पर काशीनाथ सिंह ने महुआ के आत्मकथन से विचारात्मक प्रभाव डाला है। वह आदर्शवाद को स्वीकार करती है तथा दैहिक सुख पाने के लिए आकर्षण के भाव को प्रमुखता से अपनाती है-"मेरे लिए यह कोई साजिद था। वरना वह 'शिशिर' या 'शशांक' या 'शुभम' भी हो सकता था। शर्त बस यह थी कि किसी न किसी तरह से वह मुझे भी अच्छा लगना चाहिए था।"10 प्रेम के लिए परिपक्व कुदृष्टि अपनाते हुए शुष्क भावों से प्रेम की प्रतिष्ठा करती है-"दस साल में वसुधा भूमंडल हो जाती है और प्यार कूड़ेदान का कचरा। उसकी जगह डस्टबिन हो जाती है, दिल नहीं।"11

उपर्युक्त कुछ उद्धरणों को देखें तो महुआ की सोच तथाकथित सामाजिक नियमों की दृष्टि से किसी भी रूप में सभ्य या श्लील नहीं कही जा सकती। किंतु साहित्यकार का दायित्व है कि वह मनोभावों का वास्तविक चित्रण करें, सत्य को उद्घाटित करें, बिना यह देखें कि वह सभ्य है अथवा असभ्य, बस वह सत्य होना चाहिए।" काशीनाथ सिंह ने प्रचलित भाषा को तोड़ने का काम किया हैं। वह लोक जीवन की भाषा लेते हैं। श्लील- अश्लील भद्र- अभद्र पर ज्यादा सोच विचार नहीं करते।"12

परंपरा के प्रति विद्रोह की प्रवृत्ति तो मानव के मन के अंदर हमेशा से ही रही है, परंतु इनका अतिक्रमण कर पाना प्रत्येक मनुष्य के बस की बात नहीं है। स्त्री के हृदय में भी परंपरागत रूढ़ियों व मान्यताओं का अतिक्रमण करने का ख्याल जन्म लेता है, परंतु समाज के भय से वह बड़ा कदम नहीं उठा पाती है। इसी दमित भावना को काशीनाथ सिंह ने महुआ के भावों के माध्यम से वाणी दी हैं। विवाह पूर्व गर्भ ठहरने पर महुआ का मन उद्वेलित होकर कुछ क्षणों के लिए क्रांतिकारी विचारों से भर जाता है। वह जोश और उत्तेजना में कांपने लगती है-"इस समाज के सामने एक मिसाल पेश करूं और एक नए कबीर को जन्म दूं जिसका न कोई मजहब हो, ना जात, जो सिर्फ और सिर्फ मनुष्य हो?"13 परंतु यथार्थ की भयानक तस्वीर उसका मनोबल गिरा देती है, और वह निराश हो जाती है। गर्भ को समाप्त करने के पश्चात की आत्मग्लानि, दु:ख, व पीड़ा की व्याख्या मर्मान्तक रूप में काशीनाथ जी ने इन शब्दों में की है- "मैं किसी तरह उस से ध्यान हटाती तो एक मन कहता- नाचो, गाओ, खुशियां मनाओ कि बचा लिया अपना जीवन! बच गया तुम्हारा भविष्य! लेकिन तुरंत ही दूसरा मन कहता डरपोक! कायर!आ थू!"

काशीनाथ सिंह की भाषा शैली प्रेमचंद सरीखी है। अपने शब्दों के माध्यम से प्रस्तुतियों का सजीव चित्रण पाठकों के सम्मुख रख देते हैं। शब्दों का अधिक प्रयोग न करके थोड़े में ही सटीकता से अपनी बात रख देते हैं। यही मुंशी प्रेमचंद की विशेष विशेषता रही है, यह विशेषता काशीनाथ सिंह को विशिष्ट साहित्यकार के रूप में स्थापित करती है- "काशीनाथ सिंह की रचनाओं में हमें एक महत्वपूर्ण बात दिखाई देती है, वे व्यर्थ और अनावश्यक नहीं लिखते कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक बातें और विवरण दे देते हैं। उनकी भाषा जीवंत और संकेतात्मक है। उनके यहां कलाहीन सामाजिकता नहीं है। व्यवस्था का विरोध है किंतु उपदेश नहीं।"14

उद्देश्य कथन

काशीनाथ सिंह ने लघु उपन्यास महुआचरित में स्त्री संवेदना एवं सामाजिक व्यवस्था के पुनर्मूल्यांकन को प्रभावोत्पादक एवं व्यवहारिक भाषा शैली के माध्यम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया हैं। आज के रचनाकारों की रचनाओं में संवेदना तथा मनोभावों का ऐसा चित्र विरले ही मिलता है। किसी उत्कृष्ट रचना का निर्माण उसके पात्रों की संवेदना के कुशल चित्रण के आधार पर ही संभव हो पाता है इस शोध पत्र के माध्यम से काशीनाथ सिंह की इन्हीं लेखन विशेषताओं को विश्लेषण किया गया है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन के पश्चात कहा जा सकता है, कि महुआचरित उपन्यास में स्त्री अस्मिता एवं उसकी मनोदशा का काशीनाथ सिंह द्वारा स्वाभाविक एवं यथार्थ चित्रण किया गया है। सामाजिक नियमों के पुनर्मूल्यांकन का आग्रह भी लेखक ने सही ढंग से उठाया है। एवं पाठकों और आलोचकों के सामने एक प्रश्न खड़ा किया है। इन्हीं सभी से रचना को जीवंतता मिली है, बदलते हुए सामाजिक परिदृश्य में स्त्री की अनुभूति एवं संवेदनाएं के विविध पक्षों को प्रकट करना काशीनाथ सिंह का उद्देश्य है। महुआचरित उपन्यास के माध्यम से काशीनाथ सिंह ने स्त्री मनोदशाओं के विविध पक्षों को समझाने और विश्लेषण करने का प्रयास किया हैं। परंपरागत पुरुष प्रधान मानसिकता वाले समाज में स्त्री मनोविज्ञान

के गूढ़ रहस्यों को खोलते हुए, काशीनाथ सिंह ने स्त्री के अंतर्द्वंद्व, मनोभावों एवं मूल संवेदनाओं को भाषा के सांचे में बड़ी कुशलता से ढाला है। सामाजिक नियमों एवं मान्यताओं के पुनर्मूल्यांकन एवं स्थापन का कार्य भी इस उपन्यास के माध्यम से किया है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि लेखक अपने मंतव्य में पूरी तरह सफल रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. काशीनाथ सिंह : महुआचरित पृ.सं.- 11
2. काशीनाथ सिंह : महुआचरित पृ.सं.- 100
3. 3. 'मैं कहता आंखन देखी' : काशीनाथ सिंह का साक्षात्कार, प्रोफेसर रामकली सर्राफ द्वारा, वाङ्मय पत्रिका अलीगढ़, मई 2008 अंक
4. 'महुआचरित' काशीनाथ सिंह - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृ. सं. - 14
5. 'महुआचरित' काशीनाथ सिंह - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृ.सं. - 15
6. काशीनाथ सिंह : महुआचरित, पृ.सं. - 29
7. मनीष दुबे : संपादकीय, 'काशी पर कहन'
8. काशीनाथ सिंह : महुआचरित, पृ.सं. - 30
9. वही, पृ.सं. - 42
10. वही, पृ.सं. - 49
11. कमलाप्रसाद तथा संदीप लोटलीकर की बातचीत के अंश
12. काशीनाथ सिंह : महुआचरित पृ. सं.- 41
13. वही, पृ.सं. - 51
14. प्रो. कुंवरपाल सिंह : 'काशी के पास सच कहने का भी एक सलीका है' (कहन से)

मो. - 9571662727

E-mail - kkmahar04@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 153-157
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

"झारखण्ड के लोक संगीत के शैक्षिक उपयोग एवं विद्यार्थियों के सांस्कृतिक बोध के विकास का अध्ययन"

अजय सिंह
सहायक प्राध्यापक,
फातमा टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, दुबलिया, चंदवे, काँके, राँची

सारांश (Abstract):

शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करने का माध्यम नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति को समाज, संस्कृति, भाषा, परंपरा और जीवन-मूल्यों से जोड़ने का महत्वपूर्ण साधन है। भारत जैसे बहुभाषी एवं बहुसांस्कृतिक देश में शिक्षा को स्थानीय सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों से जोड़ना आवश्यक है। झारखण्ड विभिन्न जनजातीय एवं क्षेत्रीय समुदायों की समृद्ध भाषाई और सांस्कृतिक परंपराओं वाला राज्य है। नागपुरी, संथाली, मुंडारी, कुरुख, हो, खड़िया, कुरमाली, खोरठा एवं पंचपरगनिया आदि भाषाई समुदायों का लोक संगीत इसकी सांस्कृतिक पहचान का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसमें प्रकृति, कृषि, ऋतु, पर्व-त्योहार, सामाजिक संबंध, पारिवारिक जीवन, श्रम, प्रेम और सामुदायिक मूल्यों की अभिव्यक्ति होती है।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य झारखण्ड के लोक संगीत के शैक्षिक उपयोग तथा विद्यार्थियों के सांस्कृतिक बोध के विकास में इसकी भूमिका का अध्ययन करना है। यह अध्ययन सैद्धांतिक एवं साहित्य-आधारित प्रकृति का है। इसमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या संबंधी दस्तावेजों, UNESCO के दस्तावेजों तथा संगीत, लोक संस्कृति, मातृभाषा एवं कला-आधारित शिक्षा से संबंधित साहित्य का विषयगत विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि लोक संगीत को भाषा, पर्यावरण अध्ययन, सामाजिक विज्ञान, कला एवं मूल्य शिक्षा से जोड़ा जा सकता है। यह विद्यार्थियों में सांस्कृतिक पहचान, सामाजिक सहभागिता, भाषा-प्रेम तथा विविध संस्कृतियों के प्रति सम्मान विकसित करने में सहायक है। अतः लोक संगीत को विद्यालयी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में योजनाबद्ध शैक्षिक संसाधन के रूप में शामिल किया जाना चाहिए।

मुख्य शब्द: लोक संगीत, लोकगीत, सांस्कृतिक बोध, स्थानीय संस्कृति, सांस्कृतिक विरासत ।

प्रस्तावना:

शिक्षा मानव जीवन के विकास की सतत प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से व्यक्ति ज्ञान, कौशल, मूल्य और व्यवहार अर्जित करता है। शिक्षा और संस्कृति का संबंध अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि बालक परिवार एवं समुदाय के माध्यम से भाषा, लोककथाओं, लोकगीतों, परंपराओं और सामाजिक मूल्यों को सीखता है। स्थानीय संस्कृति

को विद्यालयी शिक्षा से जोड़ने से अधिगम अधिक अर्थपूर्ण एवं जीवन-संबंधी बनता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भारतीय भाषाओं, स्थानीय ज्ञान, कला और संस्कृति को शिक्षा से जोड़ने पर बल दिया है। झारखण्ड अपनी विविध जनजातीय एवं लोक-सांस्कृतिक परंपराओं के लिए प्रसिद्ध है। करमा, सरहुल, सोहराय और फगुआ जैसे पर्वों में लोकगीत एवं नृत्य महत्वपूर्ण हैं। लोकगीतों में प्रकृति, कृषि, श्रम, प्रेम और सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति होती है। प्रस्तुत शोधपत्र झारखण्ड के लोक संगीत के शैक्षिक उपयोग तथा विद्यार्थियों में सांस्कृतिक बोध के विकास में उसकी भूमिका का अध्ययन करता है।

अध्ययन की पृष्ठभूमि :

झारखण्ड की सांस्कृतिक पहचान उसके लोक जीवन और लोक संगीत से गहराई से जुड़ी है। यहाँ के जंगल, पहाड़, नदियाँ, कृषि और ऋतु चक्र ने सामाजिक जीवन को प्रभावित किया है, जिसकी अभिव्यक्ति लोकगीतों में मिलती है। नागपुरी, संथाली, मुंडारी, कुरुख, हो आदि भाषाओं के लोकगीत प्रकृति, प्रेम, सामाजिक जीवन, पर्व-त्योहार और सामुदायिक परंपराओं को व्यक्त करते हैं। लोक संगीत केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि सामुदायिक सहभागिता और सांस्कृतिक अनुभव का माध्यम है। यह परिवार और समुदाय के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होता रहा है। शिक्षा में इसका समावेश औपचारिक और अनौपचारिक ज्ञान के बीच सार्थक संबंध स्थापित कर सकता है।

समस्या का कथन :

प्रस्तुत शोध की समस्या निम्नलिखित रूप में निर्धारित की गई है - "झारखण्ड के लोक संगीत के शैक्षिक उपयोग एवं विद्यार्थियों के सांस्कृतिक बोध के विकास का अध्ययन।"

अध्ययन के उद्देश्य :

1. झारखण्ड के लोक संगीत की प्रकृति एवं प्रमुख विशेषताओं का अध्ययन करना।
2. विद्यालयी शिक्षा में झारखण्ड के लोक संगीत के शैक्षिक उपयोग की संभावनाओं का अध्ययन करना।
3. लोक संगीत के माध्यम से सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों के विकास की संभावनाओं का अध्यय करना।
4. विद्यालयी शिक्षा में लोक संगीत के समावेशन की प्रमुख चुनौतियों का अध्ययन करना।

शोध प्रश्न :

1. झारखण्ड के लोक संगीत की प्रमुख सांस्कृतिक विशेषताएँ क्या हैं?
2. झारखण्ड के लोक संगीत का विद्यालयी शिक्षण में किस प्रकार उपयोग किया जा सकता है?
3. लोक संगीत को भाषा, पर्यावरण अध्ययन, सामाजिक विज्ञान एवं कला शिक्षा से किस प्रकार जोड़ा जा सकता है?
4. विद्यालयी शिक्षा में लोक संगीत के समावेशन के सामने कौन-कौन सी चुनौतियाँ हैं?

संबंधित साहित्य की समीक्षा :

संगीत और शिक्षा के संबंध पर उपलब्ध साहित्य से स्पष्ट होता है कि संगीत केवल मनोरंजन या सौंदर्यात्मक अनुभव का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिगम का प्रभावी साधन भी है। कैम्पवेल (2004) के अनुसार बच्चों के संगीत अनुभव उनके सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश से प्रभावित होते हैं। ग्रीन(2008) ने विद्यार्थियों के अनौपचारिक संगीत अनुभवों को विद्यालयी शिक्षण से जोड़ने के महत्व पर बल दिया। ब्लाकिंग (1973) ने संगीत को मानव सामाजिक जीवन से जोड़ते हुए उसके सामाजिक-सांस्कृतिक अर्थों को समझने की आवश्यकता बताई। इस दृष्टि से लोक संगीत स्थानीय समाज, जीवन-पद्धति और संस्कृति को समझने में सहायक

हो सकता है। यूनेस्को(2003) ने लोक संगीत, मौखिक परंपराओं एवं प्रदर्शनकारी कलाओं को अमूर्त सांस्कृतिक विरासत का महत्वपूर्ण हिस्सा माना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी भारतीय भाषाओं, स्थानीय ज्ञान, कला एवं संस्कृति को शिक्षा से जोड़ने तथा अनुभवात्मक एवं बहुविषयी अधिगम को बढ़ावा देती है (भारत सरकार, 2020)।

शोध प्राविधि :

प्रस्तुत अध्ययन सैद्धांतिक एवं साहित्य-आधारित है। इसमें प्राथमिक आँकड़े या काल्पनिक सांख्यिकीय परिणाम शामिल नहीं हैं। अध्ययन हेतु राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या दस्तावेज, UNESCO सामग्री तथा संगीत, लोक संगीत, स्थानीय संस्कृति एवं भाषाओं संबंधी द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है।

साहित्य चयन :

साहित्य का चयन मुख्यतः निम्न विषयों के आधार पर किया गया-

लोक संगीत एवं संस्कृति, संगीत एवं शिक्षा, कला-आधारित शिक्षा, मातृभाषा एवं स्थानीय भाषा आधारित शिक्षा, सांस्कृतिक विरासत, झारखण्ड की लोक संस्कृति

झारखण्ड के लोक संगीत की प्रकृति :

झारखण्ड का लोक संगीत क्षेत्र की सामाजिक एवं सांस्कृतिक विविधता का प्रतिनिधित्व करता है। इसकी प्रकृति को निम्न बिंदुओं से समझा जाता है।

मौखिक परंपरा: लोक संगीत का एक बड़ा हिस्सा मौखिक परंपरा से आगे बढ़ा है। लोकगीतों का ज्ञान परिवार, समुदाय और सांस्कृतिक अवसरों के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचता रहा है।

सामुदायिक स्वरूप: लोक संगीत का स्वरूप प्रायः सामूहिक होता है। इसमें गायन, नृत्य और वाद्य संगीत के माध्यम से समुदाय के सदस्य सहभागिता करते हैं। इससे सामुदायिक एकता एवं सामाजिक जुड़ाव की भावना मजबूत होती है।

प्रकृति से संबंध: झारखण्ड के लोक जीवन में प्रकृति की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसलिए लोकगीतों में पेड़-पौधे, वर्षा, नदी, पहाड़, जंगल, कृषि और ऋतु परिवर्तन जैसे विषय दिखाई देते हैं।

पर्व एवं त्योहार: विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक अवसरों पर लोक संगीत का प्रयोग होता है। इससे संगीत और सामाजिक जीवन के बीच निकट संबंध स्थापित होता है।

लोक संगीत एवं सांस्कृतिक विरासत: सांस्कृतिक विरासत में गीत, संगीत, नृत्य, भाषाएँ और मौखिक परंपराएँ शामिल हैं। UNESCO (2003) इनके संरक्षण पर बल देता है। झारखण्ड के लोकगीतों में स्थानीय समाज की स्मृतियाँ, अनुभव और जीवन-मूल्य निहित हैं। विद्यार्थियों द्वारा लोकगीतों का संकलन, अर्थ-बोध और प्रस्तुतीकरण भाषा, कला, शोध तथा सांस्कृतिक शिक्षा के साथ-साथ सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण में सहायक है।

शिक्षा में झारखण्ड के लोक संगीत का उपयोग :

भाषा शिक्षण में उपयोग: भाषा सीखना केवल पाठ्यपुस्तक से नहीं, बल्कि सामाजिक प्रयोग से विकसित होता है। लोकगीत स्थानीय शब्दावली, मुहावरों, उच्चारण और अभिव्यक्ति के जीवंत माध्यम हैं। इनके द्वारा शब्द-अर्थ, वाक्य निर्माण, उच्चारण एवं मौखिक प्रस्तुति का अभ्यास कराया जा सकता है। बहुभाषी कक्षाओं में लोकगीत भाषाई पहचान और समावेशन को बढ़ावा देते हैं।

पर्यावरण शिक्षा में उपयोग: झारखण्ड के लोक संगीत में प्रकृति और पर्यावरण से जुड़े अनेक संदर्भ मिलते हैं। जंगल, पेड़, नदी, वर्षा, कृषि और ऋतु परिवर्तन जैसे विषयों के माध्यम से स्थानीय पर्यावरण की समझ विकसित की जा सकती है। इस प्रकार लोक संगीत पर्यावरण शिक्षा को स्थानीय अनुभव से जोड़ सकता है।

सामाजिक विज्ञान में उपयोग: लोकगीत किसी समुदाय के सामाजिक जीवन को समझने का स्रोत हो सकते हैं। परिवार, विवाह, कृषि, श्रम, समुदाय, पर्व और सामाजिक संबंधों से संबंधित गीत विद्यार्थियों को स्थानीय समाज की संरचना एवं परंपराओं को समझने में सहायता कर सकते हैं।

कला शिक्षा में उपयोग: लोक संगीत को गायन, नृत्य और वाद्ययंत्रों के साथ जोड़ा जा सकता है। इससे विद्यार्थियों को कला की बहुआयामी समझ मिल सकती है।

मूल्य शिक्षा में उपयोग: लोकगीतों में सहयोग, सामुदायिकता, प्रकृति के प्रति सम्मान, श्रम, पारिवारिक संबंध और सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे मूल्य दिखाई दे सकते हैं। इन्हें मूल्य शिक्षा से जोड़ा जा सकता है।

लोक संगीत एवं विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास: लोक संगीत का शैक्षिक उपयोग सांस्कृतिक बोध के अतिरिक्त विद्यार्थियों के अनेक विकासात्मक पक्षों को प्रभावित कर सकता है।

संज्ञानात्मक विकास: गीतों को याद करना, अर्थ समझना, शब्दों की पहचान करना और संगीत की लय को समझना विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को सक्रिय करता है।

भावात्मक विकास: संगीत भावनाओं को व्यक्त करने का सहज माध्यम है। गीतों के माध्यम से विद्यार्थी अपनी भावनाओं को पहचानना और व्यक्त करना सीख सकते हैं।

सामाजिक विकास: सामूहिक गायन और नृत्य में सहभागिता सहयोग, अनुशासन और समूह भावना को प्रोत्साहित कर सकती है।

रचनात्मक विकास: लोकगीतों के आधार पर नई पंक्तियाँ बनाना, स्थानीय विषय पर गीत तैयार करना, गीत के साथ चित्र बनाना अथवा संगीत प्रस्तुति तैयार करना रचनात्मकता को बढ़ावा दे सकता है।

लोक संगीत के समावेशन की चुनौतियाँ :

प्रमाणिक सामग्री का अभाव: मौखिक परंपरा में उपलब्ध अनेक लोकगीतों का व्यवस्थित दस्तावेजीकरण नहीं हुआ है।

शिक्षक प्रशिक्षण की कमी: सभी शिक्षक स्थानीय संगीत परंपराओं तथा उनके शैक्षिक उपयोग से परिचित नहीं होते।

समय एवं पाठ्यक्रम का दबाव: विद्यालयों में निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा करने के दबाव के कारण शिक्षक अतिरिक्त गतिविधियों के लिए पर्याप्त समय नहीं निकाल पाते।

सांस्कृतिक विविधता: एक ही विद्यालय में विभिन्न समुदायों के विद्यार्थी हो सकते हैं। इसलिए किसी एक संस्कृति को पूरे क्षेत्र की संस्कृति के रूप में प्रस्तुत करने से बचना आवश्यक है।

डिजिटल अभिलेखीकरण: लोक संगीत के व्यवस्थित डिजिटल संग्रह की आवश्यकता है, ताकि आने वाली पीढ़ियाँ इन परंपराओं तक पहुँच सकें।

अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष :

सैद्धांतिक एवं साहित्य-आधारित विश्लेषण से स्पष्ट है कि झारखण्ड का लोक संगीत महत्वपूर्ण सांस्कृतिक विरासत है, जो भाषा, परंपरा, सामाजिक जीवन और प्रकृति से जुड़ा है। इसके शैक्षिक उपयोग से विद्यार्थियों में संस्कृति, परंपराओं और सामुदायिक विरासत के प्रति जागरूकता विकसित होती है। विभिन्न समुदायों के लोक संगीत से सांस्कृतिक विविधता, सम्मान, सहिष्णुता और सामाजिक समरसता की भावना बढ़ती है। इसे पर्यावरण शिक्षा से जोड़कर स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों की समझ विकसित की जा सकती है। इसके प्रभावी उपयोग हेतु शिक्षक प्रशिक्षण और स्थानीय संदर्भ आधारित शिक्षण-सामग्री आवश्यक है।

सुझाव (Suggestions):

झारखण्ड के लोक संगीत को विद्यालयी शिक्षा में प्रभावी रूप से शामिल किया जाए। विद्यार्थियों को स्थानीय लोक कलाकारों के माध्यम से लोक परंपराओं से परिचित कराने हेतु कार्यशालाएँ आयोजित हों। लोकगीतों के संकलन, संरक्षण एवं दस्तावेजीकरण की परियोजनाएँ दी जाएँ। लोक संगीत को शिक्षण-अधिगम के संसाधन के रूप में उपयोग किया जाए। विभिन्न समुदायों की लोक परंपराओं को समान सम्मान मिले तथा विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों द्वारा लोक संगीत पर अधिक अनुभवजन्य एवं अंतर्विषयक शोध किए जाएँ।

निष्कर्ष (Conclusion):

झारखण्ड का लोक संगीत राज्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासत का महत्वपूर्ण अंग है। इसमें स्थानीय जीवन, प्रकृति, परंपराएँ, पर्व-त्योहार और सामाजिक मूल्य अभिव्यक्त होते हैं। अध्ययन से स्पष्ट है कि लोक संगीत शिक्षा में भाषा, पर्यावरण एवं सामाजिक विज्ञान के शिक्षण को प्रभावी बना सकता है। गायन, नृत्य एवं वाद्ययंत्र विद्यार्थियों में रचनात्मकता, सहभागिता और आत्मविश्वास विकसित करते हैं। यह विद्यार्थियों को अपनी सांस्कृतिक पहचान से जोड़ने तथा विविध समुदायों के प्रति सम्मान की भावना विकसित करने में सहायक है। अतः शिक्षा में झारखण्ड के लोक संगीत का समावेशन सांस्कृतिक संरक्षण एवं विद्यार्थियों के समग्र विकास के लिए उपयोगी है।

संदर्भ सूची :

Blacking, J. (1973). *मनुष्य कितना संगीतमय है* । यूनिवर्सिटी ऑफ वॉशिंगटन प्रेस।

Campbell, P. S. (2004). *विश्व स्तर पर संगीत शिक्षण: संगीत का अनुभव, संस्कृति की अभिव्यक्ति।* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

Green, L. (2008). *संगीत, अनौपचारिक अधिगम और विद्यालय: एक नई कक्षा शिक्षण पद्धति।* ऐशगेट।

भारत सरकार। (2020)। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020।* शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।

शिक्षा मंत्रालय। (2021)। *समझ के साथ पढ़ने और संख्यात्मकता में दक्षता के लिए राष्ट्रीय पहल (NIPUN भारत)।* भारत सरकार।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद। (2005)। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005।* एनसीईआरटी।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद। (2023)। *विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2023।* एनसीईआरटी।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 158-164
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

संजीव के 'धार' उपन्यास में आदिवासी जीवन का संघर्ष और संवेदना

डॉ० हेलन मेरी ए जे
अस्सिस्टेंट प्रोफेसर
हिंदी विभाग, सेंट आलबर्टस कॉलेज (स्वायत्त) एर्नाकुलम केरला

हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन, उनकी संस्कृति, संघर्ष और संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने वाले साहित्यकारों में संजीव का महत्वपूर्ण स्थान है। संजीव समकालीन हिंदी कथा साहित्य के ऐसे लेखक हैं, जिन्होंने समाज के हाशिए पर पड़े लोगों के जीवन को अपनी रचनाओं का केंद्र बनाया। उनकी रचनाओं में सामाजिक विषमता, शोषण, गरीबी, अन्याय और मानवीय संवेदनाओं का अत्यंत मार्मिक तथा यथार्थपरक चित्रण मिलता है। विशेष रूप से उनका उपन्यास 'धार' आदिवासी समाज के जीवन-संघर्ष, उनके अस्तित्व की लड़ाई तथा बदलते सामाजिक-आर्थिक परिवेश में उनकी पीड़ा को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास केवल एक समुदाय की कथा नहीं, बल्कि उस व्यापक सामाजिक यथार्थ का दस्तावेज है जिसमें विकास के नाम पर सबसे अधिक नुकसान वंचित वर्गों को उठाना पड़ता है।

आदिवासी समाज भारतीय संस्कृति का प्राचीन और महत्वपूर्ण हिस्सा है। वे प्रकृति के निकट रहकर सरल जीवन व्यतीत करते हैं तथा अपनी परंपराओं, लोकसंस्कृति, सामुदायिक मूल्यों और सामूहिक जीवन-शैली को सहेजकर रखते आए हैं। उनकी जीवन-दृष्टि में प्रकृति केवल संसाधन नहीं, बल्कि सहजीवन का आधार है। किंतु आधुनिक विकास, औद्योगीकरण, नगरीकरण और पूँजीवादी व्यवस्था के कारण आदिवासी समुदाय लगातार विस्थापन, शोषण और उपेक्षा का शिकार होता रहा है। उनकी जमीन, जंगल और जल पर बाहरी शक्तियों का कब्जा बढ़ता गया, जिससे उनका पारंपरिक जीवन-तंत्र टूटने लगा और उनका अस्तित्व संकट में पड़ गया। इस प्रक्रिया ने उन्हें केवल आर्थिक रूप से ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और मानसिक स्तर पर भी गहरे आघात पहुँचाए हैं।

संजीव ने 'धार' में इन्हीं आदिवासी समुदायों के संघर्ष और संवेदनाओं को अत्यंत यथार्थवादी दृष्टि से चित्रित किया है। उपन्यास केवल उनके दुःखों का वर्णन नहीं करता, बल्कि उनकी मानवीय भावनाओं, आत्मसम्मान, प्रतिरोध-चेतना और जीवन के प्रति उनके संघर्षशील दृष्टिकोण को भी उजागर करता है। इसमें आदिवासी जीवन की जटिलताओं, बाहरी हस्तक्षेप, सत्ता-शोषण और सामाजिक असमानताओं को गहराई से समझने का अवसर मिलता है। संजीव की भाषा, कथ्य और शिल्प इस उपन्यास को एक ऐसी रचना बनाते हैं जो पाठक को संवेदनशील भी बनाती है और सामाजिक यथार्थ के प्रति सजग भी।

'धार' आदिवासी जीवन के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक पक्षों को समझने का एक महत्वपूर्ण साहित्यिक दस्तावेज बन जाता है। यह उपन्यास आदिवासी समाज की पीड़ा को केवल अभिव्यक्त ही

नहीं करता, बल्कि उनके संघर्ष को सम्मान और गरिमा के साथ प्रस्तुत करता है। संजीव की यह रचना हमें यह सोचने के लिए बाध्य करती है कि विकास की वास्तविक परिभाषा क्या है और क्या वह तब तक सार्थक हो सकती है जब तक समाज के सबसे कमजोर वर्ग को उसका न्यायपूर्ण हिस्सा न मिले। इसलिए 'धार' न केवल एक उपन्यास है, बल्कि आदिवासी अस्मिता, प्रतिरोध और अस्तित्व की गहन साहित्यिक अभिव्यक्ति भी है।

नारी शोषण

'धार' उपन्यास की नायिका मैना है। वह संथाल जनजाति की है। वह अपने परिवार के साथ खदानों में काम करती रहती है। उनकी सारी जमीन छीनकरमहेन्दर बाबू उनमें तेजाब फैक्टरी का निर्माण करते है। इसलिए मैना फैक्टरी एवं उनके खिलाफ हो जाती है। वह आन्दोलन भी करती है। किन्तु महेन्दर बाबु उनका शोषण करने में लग जाते है। इसके बाद मैना खेतों में मजदूरी करने लगती है। उसी समय भी उनको अनेक लोगों का सामना करना पड़ता है। अंत में वह अपना जीवन चलाने के लिए कोयला बेचने का धंधा करने लगती है। उसी वक्त भी अनेक लोग उनको घूर घूरकर देखने लगते है। अनेक लोगों ने उनका जीना हराम कर दिया था। इनके बारे में संजीव जी लिखते है कि- "मन ही मन खींचती हुई वह इस दृश्यमें इसकदर खोई हुई थी कि अँधेरें में किसी मन चले ने उसके स्तन पर हाथ रख दिए। पहले कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। फिर एहसास के जगते ही वह शर्म और अपमान से गलकर पिचपिची हो गई। यह कोई पहला वाक्या न था। फोलक, मंगर ही नहीं जेलर से लेकर जाने कितने मर्दोंने यह हिमाकत की, पंडित सीताराम ने भी।"[1]

आदिवासी समाज में हमेशा महिलाओं का शोषण ही होता रहा है। क्योंकि उसने सबकुछ चुपचाप सह लेना सिख लिया है।

खान पान की समस्या

आदिवासी नगरीय संस्कृति से भिन्न है। वह जंगल, पहाड़, नदी, ढलाऊ क्षेत्र आदि जगहों पर निवास करते है। ज्यादातर आदिवासी जंगल में ही रहना पसंद करते है, क्योंकि प्रकृति की गोद में रहना उनको अच्छा लगता है। किन्तु वहाँ पर उनको सारी सुविधाएँ उपलब्ध होती नहीं है। उनके खान-पान की बात करे तो वह जंगल पर निर्भर है। जंगल में से मिलनेवाले फल, फूल, मांस आदि का वह उपयोग करते है। लेकिन उनसे जितनी मात्रा में प्रोटिन, विटामीन आदि मिलना चाहिए वह मिल पाता नहीं है। कई बार अनजाने में जहरीले फल खाने से उनकी तबियत बिगड़ जाती है। इतना ही नहीं मौत के घाट भी उतर जाते है।

आदिवासी जंगलों में खेती करते है, लेकिन उनकी खेती बारिश के मौसम में ही सम्भव है। उनके खेतों में मक्का, बाजरा, धान आदि की फसल देखने को मिलती है। इसके अलावा अन्य फसलें कम नजर आती है। खेती करके जो अनाज मिलता है, वह तो संजोकर रखते है। किन्तु जब अन्य वस्तुओं की जरूरत होती है तो सारा अनाज बेच दिया जाता है। बाद में उनको अनाज इकट्ठा करने के लिए भटकना पड़ता है या तो कड़ी मेहनत करनी पड़ती है। बाद में कड़ी मेहनत करते रहते है, लेकिन भरपेट भोजन मिलना मुश्किल हो जाता है।

आज भी हम देखते है कि आदिवासी अपने जीवन निर्वाह के लिए कितना संघर्ष कर रहा है। बावजूद भी उनको भरपेट भोजन मिलना कठिन हो गया है। उनका पूरा परिवार दिन-रात कड़ी मेहनत करता रहता है, फिर भी आसानी से खाना मिल रहा नहीं है। कभी-कभी भूखे पेट सोते नजर आते है। सुबह में जब खाना बनाया जाता है तो रात के वक्त उनके घर में चूल्हें भी जलते नहीं है। सुबह का बचा हुआ खाना शाम को खा लेते है। अगर कहीं पर काम नहीं मिलता है तो उनको खाने के लिए तड़पना पड़ता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जंगलों में निवास करने की वजह से एवं अन्य जगहों पर भी आदिवासियों को खाने के लिए संघर्ष करना पड़ता है।

'धार' उपन्यास में मैना का परिवार भी खाने के लिए संघर्ष करता रहता है। मैना को तीन बच्चें है, टिपका, लुत्तो और सितवा। उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। उनके बच्चे खाने के लिए तड़पते रहते है। फिर भी उनको भर पेट भोजन नसीब होता नहीं है। मैना की सारी जमीन महेन्दर बाबू छीन लेता है। अब अनाज कहाँ से आयेगा,

उसकी चिन्ता मैना को सताने लगती है। मैना एवं उनका पति मंगर दोनों कड़ी मेहनत करने लगते है, फिर भी परिवार का भरण-पोषण ठीक से हो पाता नहीं है। बाद में मैना कोयला खदानों से कोयला चुराकर लाती है और उनको बेचने के लिए बच्चों के साथ निकल पड़ती है। कोयला बेचकर जो पैसा मिलता है, उनसे बिस्कूट खरीदती है और बच्चों को खिलाती है। कभी-कभी दो-तीन दिन की सुखी रोटिया भी खाती रहती है। कहने का तात्पर्य यह है कि आदिवासी जीवन अनेक कठिनाईयों से भरा हुआ है। वह जगह-जगह पर काम करते रहते है। फिर भी उनको आसानी से खाना मिल रहा नहीं है।

स्वस्थ्य

'धार' उपन्यास में भी ऐसा ही माहौल देखने को मिलता है। इस उपन्यास में संथाल जनजाति का चित्रण किया गया है। उपन्यास की नायिका मैना अन्याय केखिलाफ आवाज उठाती है। एक तेजाब फैक्टरी के कारण संथाल जनजाति के समक्ष अनेक समस्याएँ बढ़ने लगती है। मैना अपने गाँववालों को बचाने की कोशिश करती है, किन्तु फैक्टरी में काम करनेवाले उनके ही समाज के लोग एवं उनका पिता मैना के खिलाफ हो जाते है। फिर भी मैना हार मानती नहीं है। इस तेजाब फैक्टरी के बारे में लेखक बताते है कि " आगे बढ़ते ही मंगर को किसी दमघोंटू गन्ध का एहसास हुआ। यार्ड की फ्लड लाइट उजाले के बावजूद गाँव पर काले काले साए मँडराते हुए नजर आ रहे थे। उसके बीच लालटेन और दिबरियों के जहाँ-तहाँ खिले फूल किसी खौफ में काँप से रहे थे। आगे छावनीनुमा कारखाना था जिससेनिकलता भूरा-भूरा धुआँ पूरे गाँव पर उड़ रहा था। जहाँ-तहाँ से खाँसने और उबकाइयों की आवाजें आ रही थी।"[2]

इस तेजाब फैक्टरी के कारण अनेक बिमारियाँ फैलने लगती है। मैना इस फैक्टरी को जहर का कारखाना कहती है। क्योंकि इसकी वजह से आस-पास का सारा पानी भी जहरीला बन गया था। इतना ही नहीं जमीन भी बंजर हो जाती है। ऐसे जहरीले पानी का उपयोग जब संथाल आदिवासी करने लगते है तो उनका स्वास्थ्य बिगड़ने लगता है। इसलिए मैना तेजाब फैक्टरी के खिलाफ आंदोलन करती है। किन्तु उनको सफलता मिलती नहीं है। कहने का तात्पर्य यह है कि तेजाब फैक्टरी की वजह से संथाल आदिवासी का जीवन तहस-नहस हो गया था। वह अनेक बिमारियों से ग्रस्त हो जाते है। क्योंकि दूषित एवं जहरीले पानी के कारण उनका स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन बिगड़ने लगा था।

आदिवासी ज्यादातर खदानों में काम करते रहते है। वहाँ पर खदान के मालिक उनके स्वास्थ्य के बारे में तनिक भी सोचते नहीं है। उनको तो केवल अपने ही स्वार्थ की लालसा होती है। आदिवासी खदानों में शरीर की परवाह किए बिना काम करते रहते है। वह काम करते समय खाना-पीना भी छोड देते है। इसलिए वह कमजोर होते जा रहे है। अंत में अनेक बिमारियों से वह ग्रस्त हो जाते है। कई बिमारियाँ तो ऐसी है जो परंपरागत देखने को मिलती है। वह पीढ़ी दर पीढ़ी चलती रहती है। इतना ही नहीं मरते दम तक उनका पीछा छोड़ती नहीं है।

पानी की समस्या

आदिवासी क्षेत्रों में पानी की समस्या देखने को मिलती है। आदिवासी अधिकतर जंगल या पहाडी इलाकों में पनपते नजर आते है। वहाँ पर उनको आसानी से पानी मिलता नहीं है। पथरीली जमीन में वैसे ही कम पानी होता है। इसलिए उनको पानी लेने के लिए दूर-दूर जाना पड़ता है। गुजरात में आज भी ऐसे आदिवासी गाँव है, जिन्हें पानी के लिए संघर्ष करना पड़ता है। पंचमहाल, दाहोद, जालोद आदि इलाकों में ज्यादातर आदिवासी ही है। वह पानी के लिए भटकते नजर आते है। कितने ही किलोमीटर तक उनको पानी लेने के लिए जाना पड़ता है। कई बार तो अन्य लोग उन्हें पानी देने से इन्कार भी कर देते है। इसलिए उनको जहाँ से भी पानी मिलता है, वह संग्रह करके रखते है और कई दिनों तक उस पानी का उपयोग करते है। 'धार' उपन्यास में मैना भी पानी के लिए संघर्ष करती नजर आती है। जब उनको पानी नहीं मिलता है तो तेजाब फैक्टरी की पाइपलाइन तोड़ देती है।

गरीबी की समस्या

आदिवासियों का जीवन संघर्षमय बन गया है। आज उनको प्राथमिक सुविधाएँ भी उपलब्ध हो रही नहीं है। वह अपनी सुविधाओं के लिए तरसता नजर आता है। अपना जीवन निर्वाह करने के लिए वह इधर-उधर भटक रहा है। उनकी स्थिति दिन-प्रतिदिन दयनीय होती जा रही है। इसलिए वह गरीबी का शिकार बन गया है। उनको भर पेट भोजन के लिए भी संघर्ष करना पड़ रहा है। आदिवासियों के पास रहने के लिए न अच्छा घर है और न ही खेती के लिए जमीन बची है। उसी कारण अभावों में ही उनको जीवन जीना पड़ता है। अपनी आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण अनेक समस्याओं का शिकार बनते जा रहे है। गरीबी के कारण उनका विकास होता नहीं है। वह प्रगति भी कर सकते नहीं है। इतना ही नहीं गरीबी की वजह से पोशाक, आभूषण, खान-पान, शिक्षा आदि भी मिलना मुश्किल बन गया है। गरीबी आदिवासी जीवन में बाधा बनकर आती है। उसी कारण उनके समाज या परिवार में बदलाव नजर आता नहीं है। उनके बच्चों की भी परवरिश ठीक से हो पाती नहीं है। हम जानते है कि उनके बच्चें कुपोषण से पीड़ित है, शिक्षा से वंचित, नये कपड़ों से दूर आदि। यह सब गरीबी के कारण ही होता है। बाद में उनके बच्चें भी उनकी ही तरह मजदूरी करने के लिए विवश हो जाते है।

'धार' उपन्यास की नायिका मैना भी अभावों में अपना जीवन व्यतित करती है। वह सुबह से लेकर शाम तक मजदूरी करती रहती है। कड़ी मेहनत करने के बावजूद भी उनके परिवार में परिवर्तन आता नहीं है। वह दिन-प्रतिदिन गरीबी का शिकार बनती जाती है। जब वह खेत या खदानों में काम निपटाकर घर आती है तो उनको खाना भी ठीक से मिलता नहीं है। उनके घर में अनाज भी नहीं था। उनके पास भी थोड़ी जमीन थी, किन्तु महेन्दर बाबू ने छल-कपट करके छीन ली थी। अब मजदूरी के आलावा दूसरा रास्ता उनके पास नहीं था। काम करके जो पैसामिलता था, उनसे ही खाना बनता था। अगर पैसा नहीं मिलता तो उनके घर में चूल्हा भी जलता नहीं था। बाद में वह बासी खाना भी खाती रहती थी।

मैना को खाने के लिए भी संघर्ष करना पड़ता है। शाम को खाती है तो सुबह की चिन्ता उनको होने लगती है। गरीबी के कारण अनाज का संग्रह भी वह कर सकती नहीं है। इतना ही नहीं अब तो उनका परिवार भी बढ़ गया था। उनके तीन बच्चें, मैना और उनका पति मंगर। मैना अपने बच्चों के भविष्य के बारे में भी सोचती नहीं है। वह अपने बच्चों को शिक्षा से दूर रखती है। बाद में अपने ही काम में उनको जोड़ देती है। उनके छोटे-छोटे बच्चें मजदूरी करने लगते है। क्योंकि परिवार का भरण-पोषण ठीक से हो पाता नहीं था। बाद में मैना अपने बच्चों के साथ खदान में काम करने लगती है। फिर भी उनके परिवार में बदलाव आता नहीं है। वह अपना जीवन चलाने के लिए खदानों से कोयला चुराकर लाती है। उनको इस काम के लिए कितनी ही समस्याओं से गुजरना पड़ता है। क्योंकि कोयला चुराने की बात खदान मालिक को पता चल जाती है। मैना अपने परिवार के साथ कोयला बेचने के लिए निकल पड़ती है। वह अपने परिवार के लिए कुछ भी काम करने के लिए तैयार हो जाती है। अब कोयला बेचना उनका काम बन गया था।

कई बार कोयला बिकता नहीं है तो उनको चिन्ता सताने लगती है। क्योंकि खाना उनको आसानी से मिलता नहीं था। कभी-कभी उनके बच्चों को भुखा ही सोना पड़ता था। इनकी ऐसी हालत का चित्रण करते हुए लेखक बताते है कि- "सस्ता और इफरात ढूँढने के क्रम में वे कई दुकानों से भिखमंगों की तरह दुरदुराए गए। शाम हो गई, तब जाकर भर पाए उनके थैले, आटा, मोटा और थोडा महीन चावल के अलग-अलग पैकेट, सस्ती किस्म की दाल, नमक, मसाला, बची-खुची आधी सड़ी सब्जियाँ।"[3]

मैना संथाल जनजाति की थी। केवल मैना की ही ऐसी हालत नहीं थी, बल्कि समस्त संथालों की दयनीय स्थिति थी। वह अपने जीवन निर्वाह करने के लिए अनेक काम करते रहते है। फिर भी उनको आसानी से सुविधाएँ उपलब्ध होसकती नहीं है। संथाल जनजाति के लोग ज्यादातर खदानों में ही काम करते थे,

लेकिन सेठ-साहूकार, दलाल, ठेकेदार, जमींदार आदि उनको अपना शिकार बनादेते है। बाद में उनका शोषण करने में लग जाते है। इसलिए उनकी आर्थिक स्थितिमें बदलाव आता नहीं है।

श्रम शोषण

आदिवासी जंगल में ही पनपते नजर आते है। किन्तु वहाँ पर उनको आसानी से सब कुछ मिलता नहीं है। कितने ही संघर्षो से उनको गुजरना पड़ता है। ज्यादातर आदिवासियों के पास खुद की जमीन नहीं है। इसलिए भरण-पोषण कैसा होगा, उसकी चिंता उनको सताने लगती है। उसी कारण वह मजदूरी करने के लिए तैयार हो जाते है। वह अनेक जगहों पर काम खोजने के लिए भटकते रहते है। सेठ-साहूकार, दलाल, जमींदार, ठेकेदार आदि के पास भी काम माँगते रहते है। उनकी दयनीय स्थिति देखकर उनको काम देने के लिए तैयार भी हो जाते है।

क्योंकि वह लोग उनका शोषण करना चाहते है। आदिवासी सत्ताधारी लोगों के वहाँ काम करता नजर आता है। वह कड़ी मेहनत करने से पीछे हटता नहीं है। लेकिन उनका शोषण ही किया जाता है। कम पैसे देकर उनके साथ अन्याय किया जाता है। आदिवासी किसी के खिलाफ आवाज उठाते नहीं है। वह चुपचाप सबकुछ सह लेते है। इसलिए ही उनका शोषण हो रहा है। वह काम के कम पैसे लेकर अपने आपको धन्य मानता है।

उपन्यास में भी श्रम शोषण का वर्णन मिलता है। इस उपन्यास मेंसंथाल जनजाति का चित्रण किया गया है। संथाल लोग कोयला खदानों में काम करते रहते है। उनका पूरा समुदाय कड़ी मेहनत करता रहता है। क्योंकि वह अनेक समस्याओं से ग्रस्त थे। अपने जीवन में बदलाव लाना चाहते है। इसलिए वह कुछ भी काम करने के लिए तैयार हो जाते है। उपन्यास की नायिका मैना है। मैना की जमीन छीनकर महेन्दर बाबू उनमें तेजाब फैक्टरी बनाता है। बाद में संथाल लोग उनकी फैक्टरी में काम करने के लिए तैयार हो जाते है। तेजाब फैक्टरी में काम करना आसान नहीं था। कितनी ही समस्याओं से गुजरना पड़ता था। फिर भी संथाल आदिवासी इसमें काम करने के लिए तैयार हो जाते है। किन्तु उनके साथ अन्याय किया जाता था। महेन्दर बाबू इनके पास कड़ी मेहनत करवाते रहते है।संथाल आदिवासी जब परिश्रम का पैसा माँगते है तो वह उनके साथ छल-कपट करता है। इसलिए उपन्यास का एक पात्र कहता है कि- "चार-चार महीना का तनखाह रोक के रखा, पूरा बाँसगडा में जहर घोल दिया, सबको लँघडा, लूला, अपाहिज और रोगी बना दिया।"[4]

तेजाब फैक्टरी में काम करनेवाले मजदूरों के साथ अन्याय होता है। मजदूर भी सबकुछ चुपचाप सह लेते है। क्योंकि विवशता के कारण उनका मुँह बन्द हो गया था। अगर वह फैक्टरी के खिलाफ आंदोलन करते तो उनको निकाल दिया जाता। इससे उनके परिवार में चूल्हा भी नहीं जल सकता। उसी कारण वह महेन्दर बाबू के बारे में गलत बोलते नहीं थे। महेन्दर बाबू भी मौका पाकर उनका शोषणकरने में लग जाता था। आज भी हम देखते है कि आदिवासी अलग-अलग जगहों पर काम करते नजर आते है। वह अपने परिवार का भरण-पोषण करने के लिए कड़ी मेहनत करते रहते है। लेकिन अन्य लोग उनका भला चाहते नहीं है। सत्ताधारी लोग ऐशो-आराम की जिन्दगी जीते है। उनके पास अधिक धन-संपत्ति होती है। फिर भी आदिवासीओं के साथ अन्याय करते है। कहने का तात्पर्य यह है कि अपनी अज्ञानता एवं गरीबी के कारण आदिवासी दिन-रात परिश्रम करते रहते है। किन्तु उसका लाभअन्य लोगों को होता है। आदिवासी की स्थिति वैसी की वैसी ही रहती है।

अन्याय एवं शोषण की समस्या

आदिवासियों के साथ पहले से ही अन्याय होता आ रहा है। अन्याय एवं शोषण उनके समाज की आम बात हो गई है। अनेक लोग उनके साथ अन्याय करते रहते है। वह जब भी चाहते है तब उनके साथ अन्याय एवं शोषण कर सकते है। इसलिए उनके जीवन में परिवर्तन नजर आता नहीं है। सत्ताधारी लोग, नेता, मंत्री, पुलिस, पटवारी, ग्राम सेवक, सेठ-साहूकार, दलाल, जमींदार, ठेकेदार, उद्योगपति आदि आदिवासियों के साथ अन्याय करते नजर आते है। आदिवासी ऐसे लोगों से मुक्ति पाना चाहते है, किन्तु यह लोग उनका मरते दम तक पीछा छोड़ते नहीं है। 'संजीव' कृत 'धार' उपन्यास में भी अन्याय एवं शोषण का चित्रण मिलता है। इस उपन्यास की नायिका मैना है। मैना के पिता का नाम टेंगर था। वह अधिक धार्मिक व्यक्ति था। यह बात जब महेन्दर बाबू जानते है तो उनके साथ अन्याय करता है। महेन्दर बाबू टेंगर को अपनी बातों में फँसा देता है। उनकी सारी जमीन छीनकर तेजाब फैक्टरी के

मालिक को सौंप देता है। इसलिए मैना अपनी जमीन के लिए महेन्दर बाबू के खिलाफ हो जाती है। लेकिन उनका वश चलता नहीं है। मैना अंततक संघर्ष करती रहती है, फिर भी उनको सफलता मिलती नहीं है। क्योंकि महेन्दरबाबू नेताओं एवं सरकारी लोगों से मिला हुआ था। इस उपन्यास में बेरमो, गोमिया, भुरकुंडा, पतरातू, बरकाकाना, मिहिजाम, जसीडीह, गोड्डा आदि कारखानों का चित्रण मिलता है। इसमें संथाल जनजाति के लोग कड़ी मेहनत करते रहते है। फिर भी उनके साथ अन्याय एवं शोषण होता रहता है। इसके बारे में लेखक बताते है कि- "दूर-दूर के ठेकेदार आते है, इन्हें सस्ती मजदूरी पर काम के लिए ढोर-डाँगरों की तरह हाँक ले जाते है।"[5]

आदिवासी अनेक कारखानों एवं खदान में काम करते रहते हैं। अपने भरण-पोषण के लिए वह परिश्रम करते रहते हैं। लेकिन अन्य लोग उनका शोषण करने में लग जाते है। सत्ताधारी लोग उनको पशु ही समझते है। इसलिए वह चाहे इतना शोषण कर सकते है। आदिवासी अपनी अज्ञानता के कारण सब कुछ सहता रहता है। क्योंकि मजबूरी ने उनका मुँह बन्द कर दिया है। वह तेज बारिश या कड़ी धूप में यंत्र की भाँति काम करता रहता है। कभी-कभी अनेक बिमारियों से ग्रस्त होने के बावजूद भी मजदूरी करते रहते है, फिर भी उनके साथ अन्याय होता है। कम पैसे देकर उनके साथ छल-कपट किया जाता है।

राजनैतिक समस्या

आदिवासी राजनैतिक समस्या का शिकार बने हुए है। वह गरीबी, अभाव, दुःख, दर्द आदि में अपना जीवन यापन करते है। न तो उनके पास जोतने के लिए जमीन बची है और न तो रहने के लिए घर। फिर भी लोग उनका शोषण करना छोड़ते नहीं है। सेठ-साहूकार, ठेकेदार, जमींदार, दलाल, सरकारी लोग आदि तो उनका शोषण करते रहते है। किन्तु उनके साथ-साथ सरकार एवं नेता लोग भीउनके साथ अन्याय कर रहे है। राजनेता का कर्तव्य होता है कि जनता की सेवा करना एवं प्रगति करने का अवसर प्रदान कराना। लेकिन लोगों की सेवा करने की बजाय वह गरीब लोगों का शोषण करते रहते है। आदिवासी अज्ञानता एवं अंधविश्वास की जंजीरों से जकड़े हुए है। इसलिए नेता लोग उनकी मानसिकता को पहचान गये है। वह मौका पाकर उनके साथ छल-कपट करने लगते है। वह अपने स्वार्थ और लाभ के लिए आदिवासियों को उल्लू बनाते रहते है। आदिवासी भी अपनी अज्ञानता के कारण उनकी बातों में आ जाते है और अपना जीवन समस्याओं से ग्रस्त कर देते है।

'धार' उपन्यास में भी राजनीतिक समस्या का चित्रण मिलता है। उपन्यास की नायिका मैना है। मैना अपने संथाल जाति के लोगों में परिवर्तन लाना चाहती है। संथाल जनजाति अनेक समस्याओं से ग्रस्त है। उनको खाने के लिए भी संघर्ष करना पड़ता है। मैना अपनी जाति की ऐसी हालत देखकर दुःखी हो जातीहै। वह संघर्ष करके 'जन खदान' का निर्माण करती है। जन खदान के आसपास स्कूल, अस्पताल, शिशु-विहार आदि भी बनाती है। लेकिन नेता लोग यह बात जानते है तो उनको जलन होने लगती है। इसलिए सांसद लोग जन खदान का मुआयना करने के लिए आ जाते है। जन-खदान में संथाल जनजाति के लोग कड़ी मेहनत करते रहते है। उनको देखकर सांसद षड़यंत्र बनाने लगते है। इतना ही नहीं उनको धमकाने भी लगते है। वह संथालों को कहते है कि जन-खदान निर्माण के लिए आपको परमिशन किसने दी थी, संथाल लोग ऐसा सुनकर चकित हो जाते है। बाद में सांसद खदान मालिक को मिलना चाहते है, किन्तु मैना उस समय वहाँ होती नहीं है। क्योंकि मैना का संघर्ष और मेहनत के कारण ही खदान का निर्माण हुआ था। इसलिए मैना ही खदान की मालकिन थी। बाद में सांसद महेन्दर बाबू की खदान का मुआयना करने के लिए चले जाते है।

सांसद महेन्दर बाबू की खदान देखने के लिए आ जाते है। महेन्दर बाबू तो पहले से ही सरकार एवं नेताओं से मिला हुआ था। वह सांसदों को देखकर खुश हो जाता है। क्योंकि उनको तो अब अधिक लाभ मिलनेवाला था। सांसद उनके सामने एक शब्द भी बोलते नहीं है। महेन्दर बाबू ने उनके स्वागत के लिए सब कुछ तैयार रखा था। वह हर सांसद को दस हजार रूपये, एक गाड़ी, एक कालगर्ल देकर अलग-अलग बँगलों में भेज देता है। इनके ऐसे काम से सांसद खुश हो जाते है। वह भी उनके खिलाफ कुछ भी कार्यवाही करते नहीं है। क्योंकि वह जो चाहते थे, ऐसा

काम हो गया था। वह महेन्दर बाबू की प्रशंसा करके जनखदान में वापस आ जाते है। लेकिन जनखदान से उनको एक पैसा भी मिलता नहीं है। मैना को अब चिन्ता सताने लगती है। क्योंकि सांसद लोग कुछ भी करके जनखदान को नष्ट करना चाहते है। यह जनखदान आदिवासियों के परिश्रम का फल था। उसी कारण उनको तहस-नहस करना चाहते है। इसलिए शर्मा जी सरकार के बारे में कहता है कि-"सरकार ने आज तक हमें साफ-साफ स्वीकार नहीं किया उसकी स्वीकृति के बिना तो यह हमें सीधे-सीधे कोयला चोरों के दल में ढेलने जैसा हो गया।"[6]

उपर्युक्त कथन से पता चलता है कि सरकार आदिवासियों के बारे में कैसा सोचती है। मैना एवं उनके लोगों ने कड़ी मेहनत करके जनखदान का निर्माण किया था। अपनी आर्थिक स्थिति में बदलाव लाने के लिए संथाल लोग संघर्ष करते रहते है। किन्तु नेता लोग जन खदान पर अपना हक जमाना चाहते है। वह अपने लाभके लिए संथालों को परेशान करते रहते है। सरकार को इनसे कुछ भी लाभ होता नहीं है। उसी कारण जनखदान को नष्ट करने के लिए षडयंत्र रचा जाता है। मैना को इस बात की जानकारी भी हो जाती है। किन्तु उनका वश चलता नहीं है।

सरकार आदिवासियों के विकास के लिए एक भी काम करती नहीं है। विकास केवल कागजों तक ही सीमित रहता है। हर साल नई नई योजनाएँ आदिवासियों के लिए पेश की जाती है। किन्तु उसका लाभ अन्य लोगों को होता है। आदिवासी अपने लाभ के लिए सरकारी दफ्तरों में भटकते रहते है। सरकार के आगे गिड़गिड़ाते रहते है। लेकिन उनकी दर्द कहानी सुननेवाला कोई भी होता नहीं है। आदिवासियों की बातें उनको फिजुल लगती है। उनका शोषण करना उनको अच्छा लगता है, बल्कि उनको न्याय दिलाने की बात आती है तो मुकर जाते है। कहने का तात्पर्य यह है कि सरकार एवं नेता भी जनजातियों के भविष्य के बारे में सोचते नहीं है। उनको आवास, वस्त्र, खान-पान, शिक्षा, नौकरी आदि उपलब्ध करवाते नहीं है। उनके इलाकों में स्कूल या कॉलेज का निर्माण भी करते नहीं है। केवल अपने लाभ के खातिर खदान, कारखाने, बाँध आदि बनाते रहते है। ताकि उनको ज्यादा लाभ मिल सके।

निष्कर्ष

संजीव का 'धार' उपन्यास यह स्पष्ट करता है कि आदिवासी जीवन का संघर्ष केवल आर्थिक या सामाजिक समस्याओं तक सीमित नहीं है, बल्कि यह उनके अस्तित्व, पहचान और सांस्कृतिक विरासत की रक्षा का भी संघर्ष है। उपन्यास में विकास के नाम पर होने वाले विस्थापन, पूँजीवादी शोषण तथा प्रशासनिक उपेक्षा के दुष्परिणामों को प्रभावशाली ढंग से उजागर किया गया है। साथ ही, आदिवासी समाज की सामूहिक चेतना, आत्मसम्मान और प्रतिरोध की भावना को भी लेखक ने सशक्त रूप में प्रस्तुत किया है।

यह कृति पाठकों को यह सोचने के लिए प्रेरित करती है कि किसी भी समाज का वास्तविक विकास तभी संभव है, जब उसमें हाशिए पर खड़े समुदायों के अधिकारों, संस्कृति और मानवीय गरिमा का सम्मान किया जाए। इस प्रकार 'धार' केवल आदिवासी जीवन का चित्रण नहीं करता, बल्कि समकालीन भारतीय समाज की अनेक विसंगतियों पर गंभीर प्रश्न भी उठाता है और न्यायपूर्ण तथा समतामूलक समाज की आवश्यकता को रेखांकित करता है। यही इसकी साहित्यिक और सामाजिक प्रासंगिकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. संजीव - धार -राजकमल प्रकाशन -पृ-110
2. वहीं- 92
3. वहीं-85
4. वहीं-58
5. वहीं-36
6. वहीं-64

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 165-168
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

आधुनिक हिंदी प्रबंधकाव्य: ह्रास और रूपांतरण

फरहीन
शोधार्थी (हिंदी विभाग),
एमबीपीजी कॉलेज हल्द्वानी कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

शोधसार- प्रबंधकाव्य साहित्य की प्राचीन विधा है। लौकिक संस्कृत में साहित्य लेखन के आरंभ में सर्वप्रथम महाकवि वाल्मीकि द्वारा जिस काव्य की रचना की गई वह प्रबंधकाव्य का प्रमुख रूप महाकाव्य था। हिंदी साहित्य में आदिकाल की प्रथम रचना महाकवि चंदबदाई कृत 'पृथ्वीराजरासों' का प्रबंधरूप भी महाकाव्य ही था। आदिकाल से आधुनिक काल तक प्रबंधकाव्य लेखन की यह परंपरा चलती रही, हालांकि समय के साथ अनेक कारणों से इस परंपरा में ह्रास भी होता रहा किन्तु यह परंपरा वर्तमान में भी विलुप्त नहीं हुई है। प्रस्तुत शोध-आलेख में आधुनिक हिंदी प्रबंधकाव्य लेखन के ह्रास के कारणों तथा उसके परिवर्तित स्वरूप का विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य आधुनिक हिंदी प्रबंधकाव्य का अध्ययन करना, उसके ह्रास के प्रमुख कारणों का विश्लेषण करना तथा उसके परिवर्तित स्वरूप का मूल्यांकन करना है।

बीज शब्द- प्रबंधकाव्य, महाकाव्य, आधुनिक काल, समकालीन काल, परंपरा, ह्रास,परिवर्तन।

मुख्य भाग- समग्रता में काव्य कहलाई जाने वाली विधा आतंरिक रूप से अनेक विविधता रखती है, जिस कारण उसके कई भेद किए गए हैं। बन्ध की दृष्टि से काव्य के दो भेद हैं- प्रबंध और मुक्तक। प्रबन्ध काव्य वह रचना है, जिसमें कोई छंदबद्ध कथा होती है। इसके छंद एक क्रमिक व्यवस्था के अंतर्गत बंधे रहते हैं, जिसमें किसी महान चरित्र की जीवन कथा काव्यात्मक रूप में सुन्दर ढंग से प्रस्तुत की जाती है। काव्यशास्त्र में प्रबंध काव्य के अनेक भेद मिलते हैं, किन्तु इसके प्रमुख भेद महाकाव्य और खण्डकाव्य माने जाते हैं। महाकाव्य में किसी महान चरित्र की आदि से अंत तक की जीवनकथा को अनेक सर्गों में छंदबद्ध किया जाता है, जबकि खंडकाव्य में जीवन के किसी विशेष खंड का सर्गबद्ध चित्रण होता है। 'पृथ्वीराजरासों', 'रामचरितमानस', 'पद्मावत', 'प्रियप्रवास', 'कामायनी', 'कुरुक्षेत्र' आदि के रूप में यात्रा करते हुए हिंदी प्रबंधकाव्य अपने रूप को भी परिवर्तित करता रहा।

हिंदी साहित्य का आदिकाल प्रबंधकाव्य की दृष्टि से समृद्ध था। अपभ्रंश में जैन कवियों, तथा डिंगल-पिंगल में चारणों द्वारा अनेक प्रबंधकाव्य लिखे गए। भक्तिकाल में सूफी काव्य और रामभक्ति काव्य धारा में प्रबंधकाव्य का अच्छा

विकास हुआ, किन्तु कृष्णभक्ति काव्य परंपरा में प्रबंधकाव्य का विकास नहीं हो पाया, वह फुटकल में ही कृष्णलीला करते रहे। आचार्य रामचंद्र शुक्ल इस ओर संकेत करते हुए अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में लिखते हैं कि **"श्रीकृष्ण का इतना चरित ही उन्होंने न लिया जो खंडकाव्य, महाकाव्य आदि के लिए पर्याप्त होता। राधाकृष्ण की प्रेमलीला ही सबने गायी।"**1 रीतिकाल में यह गति और अधोगामी हो गई।

आधुनिक काल में बदलती हुई परिस्थितियों के कारण प्रबंधकाव्य रचना की ओर कवियों का झुकाव और कम होने लगा, हालांकि द्विवेदी युग इसका अपवाद है। डॉ. गणपतिचंद्र गुप्त ने द्विवेदी युग को प्रबंधकाव्य का युग कहा है। द्विवेदी युगीन कवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत', 'यशोधरा', 'विष्णुप्रिया' जैसे अनेक पारंपरिक प्रबंधकाव्य लिखे। परवर्ती युग में प्रबंधकाव्य के स्वरूप में परिवर्तन आता रहा, प्रबंधकाव्य अब केवल आदर्श स्थापित करने के लिए नहीं बल्कि कवि की स्वानुभूति तथा युगधर्म की अभिव्यक्ति के लिए भी लिखे जाने लगे। इस प्रकार वे परंपरा से निकलकर आधुनिकता और तत्पश्चात् समकालीनता से जुड़ते गए; किन्तु उन्हें परंपरा से पूर्णतः मुक्त नहीं कहा जा सकता। समकालीन साहित्यकार रमाकान्त शर्मा उद्भ्रांत प्रबंधकाव्य के प्रमुख रूप महाकाव्य पर विचार करते हुए लिखते हैं कि **"मेरा मानना है कि नए युग का महाकाव्य पारंपरिक नहीं होगा, महाकाव्य के संपूर्ण शास्त्रीय लक्षणों से युक्त नहीं होगा; पर उसमें कुछ लक्षण तो मिलेंगे ही। साथ ही नये लक्षणों का अविष्कार भी करेगा।"**2

आधुनिक काल में प्रबंधकाव्य परंपरा के ह्रास के अनेक कारण हैं, किन्तु इसके ह्रास के प्रमुख दो कारण स्पष्ट परिलक्षित होते हैं; पहला- उपन्यास का आगमन और दूसरा प्रबंधकाव्य के रूप का समकालीनता के अनुकूल न होना। आधुनिक काल में गद्य के विकास और पश्चिमी प्रभाव से साहित्य की विधाओं और उसके स्वरूप में भी परिवर्तन हुआ। उपन्यास के आ जाने से व्यक्ति के जीवन को समग्रता में अभिव्यक्त करने के लिए विस्तृत पटल मिल गया। उपन्यास न केवल वैयक्तिक जीवन को पूर्णता में अभिव्यक्त करने का माध्यम बना बल्कि युग चेतना के अनुरूप आधुनिक मानव के जीवन का समुचित निर्वाह करने का माध्यम भी बना; जिस कारण साहित्यकारों को उपन्यास प्रबंधकाव्य का स्थानापन्न प्रतीत होने लगा और प्रबंध काव्य लेखन की ओर झुकाव कम होता गया। नरेश मेहता प्रबंधकाव्य के भेद महाकाव्य के सबंध में कहते हैं कि **"ऐसा लगता है कि पश्चिम से उपन्यास के आने से न केवल महाकाव्यों के लेखन पर अंकुश लगा, बल्कि संभव है कि यह भी सोचा जाने लगा हो कि महाकाव्यों का स्थान उपन्यास लेने जा रहा है।"**3

प्रबंधकाव्य अपनी विस्तृत कथात्मक संरचना और पौराणिक विषयवस्तु के कारण समकालीन जीवन की तीव्र गति, व्यक्तिवादी अभिव्यक्ति और खंडित यथार्थ की अभिव्यक्ति में अप्रासंगिक प्रतीत होने लगा था। परिणाम यह हुआ कि प्रबंधकाव्य के स्वरूप में परिवर्तन होने लगा। परिवर्तन के पदचिह्न जयशंकर प्रसाद कृत 'कामायनी' में स्पष्ट देखे जा सकते हैं। ध्यान देने योग्य है कि प्रसाद जैसे मँजे हुए और परंपरा के मर्मज्ञ साहित्यकार ने अपने महाकाव्य के लिए लगभग कथाहीनता वाले मनु के जलप्रलय के आख्यान को ही क्यों चुना, जबकि महाकाव्य के लिए घटनात्मक कथा आवश्यक है। संभवतः इसका कारण यह हो सकता है कि तत्कालीन युग में जिस प्रकार वैयक्तिक और सामाजिक यथार्थ में परिवर्तन हो रहा था पारंपरिक महाकाव्य उसे अभिव्यक्त करने में असमर्थ थे, इसलिए प्रसाद ने समय की नब्ज को पकड़ते हुए 'कामायनी' जैसा नवीन प्रयोग किया हो।

समकालीन युग में जिस प्रकार व्यक्ति और समाज बदल रहा है, उसमें महाकाव्य या प्रबंधकाव्य का पारंपरिक रूप उसका निर्वाह नहीं कर सकता। आज का मानव पारंपरिक आदर्शों और मूल्यों का निर्वहन नहीं करता, वे अनेक

दुर्बलताओं, विसंगतियों और विडम्बनाओं का पुंज है। उसके अंतर्द्वंद्व, मानसिक सत्य और जीवनदृष्टि को अभिव्यक्त करने के लिए प्रबंधकाव्य का पारंपरिक रूप अनुपयुक्त है। इस संबंध में डॉ. नगेन्द्र का मत उल्लेखनीय है- **"प्रबंधकाव्य रचना आज की सर्जक रुचि के अनुकूल नहीं पड़ती। यदि प्रबंधकाव्य लिखा ही जाए तो उसे शिल्प और भावबोध में आज के अनुकूल होना पड़ेगा। यानी वह स्थूल मांसल कथा, सम्पूर्ण व्यक्तित्व और विराट समय-प्रवाह की शृंखला में एकसूत्रित न होकर मनःसत्यों की सूक्ष्म रेखाओं, चिंतन के द्वन्द्वों, विघटित व्यक्तित्वों और क्षणानुभूतियों की प्रतीति को लेकर मुक्त साहचर्य के सूत्रों से अनुस्यूत होगा।"**4

डॉ. नगेन्द्र का मत यह स्पष्ट करता है कि समकालीन प्रबंधकाव्य का स्वरूप कैसा होना चाहिए। वह आज के मानव, उसके भावबोध और जीवन का प्रतिबिंब होना चाहिए। पारंपरिक प्रबंधकाव्य प्रायः पौराणिक होते हैं, उनका चरित्र परंपरा के अनुकूल होता है जो आज के मानव से सर्वथा भिन्न है। आज का सामाजिक यथार्थ पारंपरिक आदर्श चरित्रों से भिन्न है; इसलिए आधुनिक प्रबंधकाव्य का चरित्र-निर्माण भी परिवर्तित हुआ है। महाकाव्य के परिवर्तित रूप पर विचार करते हुए श्री नरेश मेहता ने इलाहबाद संग्रहालय में दिए गए अपने व्याख्यान में कहा था- **"पारंपरिक महाकाव्य लेखन अनिवार्यतः पौराणिक होते हैं और जिस प्रकार हमारी सोच और जीवन-शैली में परिवर्तन हो रहा है उसकी अभिव्यक्ति पारंपरिक आख्यानों के द्वारा संभव नहीं लगती।"**5

वर्तमान में पारंपरिक अर्थ में प्रबंधकाव्य चाहे वह महाप्रबंध हो या खंडप्रबंध नहीं लिखे जा रहे हैं, उनसे ऐसी अपेक्षा करना भी अप्रासंगिक है। यह माना जाना कि अब प्रबंधकाव्य नहीं लिखे जा सकते पारंपरिक प्रबंधरूप पर ही आधृत मान्यता है, जबकि सत्य यह है कि आज भी प्रबंधकाव्य लिखे जा रहे हैं, किन्तु वह अपने पारंपरिक रूप से सर्वथा भिन्न है। आज के प्रबंधकाव्यों का आधार व्यक्ति का आंतरिक जीवन है, इसी कारण यह प्रबंधकाव्य मनोवैज्ञानिक स्तर पर लिखे जा रहे हैं। इन प्रबंधकाव्यों में कथा पक्ष गौण एवं चरित्र का आंतरिक चित्रांकन मुख्य है। चरित्र की मनःस्थिति और उसका अंतर्द्वंद्व इन प्रबंधकाव्यों का प्रमुख उद्देश्य हैं। समकालीन साहित्यकार रमाकान्त शर्मा 'उद्भ्रांत' आज के महाकाव्य के रूप पर विचार करते हुए लिखते हैं कि **"जोर देकर कहना चाहूँगा कि व्यास और तुलसी जैसा सुदीर्घ जीवन, विराट अध्ययन, गहन चिंतन, सतत अभ्यास और सूक्ष्म चेतना रूपी परम आत्म में आस्था- मौजूद ही नहीं, आने वाले समय में भी असंभव है। व्यास और तुलसी और महानता के शिखर पर पहुँची मेधाओं और 'महाभारत' एवं 'श्रीरामचरितमानस' जैसे महाकाव्यों का पुनरागमन अब नहीं हो सकता और इसलिए महाकाव्य जैसी बड़ी व दुष्कर विधा को प्रसंग में लाते समय हमें बदले हुए युग में मनुष्य के समक्ष निरंतर उपस्थित होती बदली हुई चुनौतियों को ध्यान में रखकर ही इसकी परीक्षा करनी होगी।"**6

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रबंधकाव्य लेखन परंपरा में अनेक कारणों से ह्रास होता रहा, किन्तु यह परंपरा आज भी विलुप्त नहीं हुई है। वर्तमान में लिखे जा रहे प्रबंधकाव्यों में प्रयोगधर्मी कृतियों की संख्या अधिक दिखाई देती है। रमाकान्त शर्मा उद्भ्रांत कृत 'राधामाधव', 'अभिनव पांडव', 'त्रेता', रवींद्र शुक्ल 'रवि' कृत 'शत्रुघ्न चरित', महेश कुमार वर्मा 'अशांत' कृत 'श्रीकृष्णचरितामृत', आनंद कुमार सिंह कृत 'अथर्वा', संजीव कुमार कृत 'अश्मा', 'माधवी' इत्यादि वर्तमान कालीन प्रबंधकाव्य हैं, जिसमें 'राधामाधव', 'अभिनव पांडव', 'त्रेता', 'अश्मा', और 'अथर्वा', प्रयोगधर्मी प्रबंधकाव्य की श्रेणी में आते हैं, यह प्रबंधकाव्य अपने युगानुरूप भावबोध के धरातल पर लिखे गए हैं, जो कथ्य और शिल्प की दृष्टि से प्रबंधकाव्य के काव्यशास्त्रीय लक्षणों से भिन्न हैं। 'शत्रुघ्न चरित' और 'श्रीकृष्णचरितामृत' परंपरागत श्रेणी के प्रबंधकाव्य हैं। अंततः कहा जा सकता है कि आधुनिक काल में हिंदी प्रबंधकाव्य का ह्रास उसके

अस्तित्त्व का अंत नहीं, बल्कि उसकी बदलती हुई शैली है। समकालीन प्रबंधकाव्य पारंपरिक कथात्मकता के स्थान पर मनोवैज्ञानिक, वैचारिक एवं प्रतीकात्मक संरचना को अपनाकर अपनी प्रासंगिकता बनाए हुए हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. शुक्ल आचार्य रामचन्द्र, 'हिंदी साहित्य का इतिहास', पृ०सं०-127, प्रभात प्रकाशन आसफ अली रोड नई दिल्ली, संस्करण 2017
2. उद्भ्रांत रमाकान्त शर्मा, 'अभिनव पांडव', पृ०सं० -16, स्वराज प्रकाशन अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण: 2019
3. 'माध्यम' पत्रिका, अप्रैल-जून अंक-2001, पृ०सं०-17, संपादक- डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज
4. नगेन्द्र, 'हिंदी साहित्य का इतिहास', पृ०सं०- 621, नेशनल पब्लिशिंग हाउस अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली, सत्तावनवां संस्करण: 2017
5. 'माध्यम' पत्रिका, अप्रैल-जून अंक-2001, संपादक- डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र, पृ०सं०-13, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज।
6. उद्भ्रांत रमाकान्त शर्मा, 'अभिनव पांडव', पृ०सं०-13, स्वराज प्रकाशन अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण: 2019

मोबाइल नं.- 7088381706

ईमेल- fkmm95572@gmail.com

पता- लाइन नं. 19, हल्द्वानी

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 169-171
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

बारेला जनजाति में पलायन की प्रवृत्ति तथा उसके स्वरुप का अध्ययन (बड़वानी जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. परम सिंह बरडे
सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र)
वीर बलिदानी खाज्या नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेन्धवा, जिला बड़वानी (म.प्र.)

सरांश :–

प्रस्तुत शोध पत्र बड़वानी जिले के बारेला जनजाति में पलायन की प्रवृत्ति तथा उसके स्वरूप का अध्ययन अवलोकन विधि एवं चर्चा के आधार पर विष्लेषण किया गया है। जिसका प्रमुख उद्धेष्य बारेला समुदाय के प्रवास के कारणों का अध्ययन करना तथा आदिवासी प्रवास के प्रकार एवं स्वरूप का अध्ययन करना। पलायन करना मानव की प्रवृत्ति में हैं, परंतु आधुनिकीकरण के बढ़ते बारेला समुदाय के लोग भी पलायन कर रहे है। जिससे इन प्रवासित परिवारों की आर्थिक स्थिति और भी कमजोर होती जा रही है। और इन्हें भिन्न–भिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ रहा हैं।

शब्दकुंजी :–घुमंतू, पलायन, आवाजावी, इरादा, बारेला, आदिवासी, भूखमरी, निमाड।

प्रस्तावना :–

प्राचीनकाल से ही पलायन करना मानव की प्रवृति रही है। मानव स्थायी या अस्थायी रूप से एक स्थान से दूसरे स्थान आवागमन करते है। अधिकांषतः आवागमन लम्बी दूरी का ही होता है। वह अपने देश से दूसरे देश तक ही नही बल्कि आन्तरिक पलायन भी करते हैं क्योंकि अधिकतर लोग अपने देश मे रहना पसन्द करते हैं। मानव पलायन सम्पूर्ण विष्व में एक समान है। प्रवास एक व्यक्ति के रूप मे, परिवार, विशाल समूह के रूप मे होता है।

घरेलु पलायन या आतंरिक पलायन :– किसी एक देश के भीतर के लोगों का एक से दूसरे खण्ड मे आवाजावी होना घरेलु या आतंरिक पलायन कहलाता है।

अंतर्राष्ट्रीय पलायनः–लोगों का एक देश से दूसरे देश मे आवाजावी होना। घुमंतू लोगो को मानव पलायन नहीं माना जाता है, क्योंकि ये एक स्थान मे बसने का इरादा नहीं रखते। ये लोग मौसम के अनुसार एक स्थान से दूसरे स्थान जाते है। अल्पकालीन चालन जैसे; यात्रा, पर्यटन, तीर्थ या लघुकरण पलायन में समिलित नहीं किया जाता। जो लोग नए इलाके में पलायन करते है, उन्हें प्रव्रचक कहते है।

2011 वर्ल्ड बैंक के पलायन रिपोर्ट के मुताबिक 21.5 करोड़ से अधिक लोग अर्थात दुनिया की 3 प्रतिषत आबादी अपने जन्म स्थान के देश से बाहर रहते है।

भिलाला तथा बारेला दोनों ही सामान्यतः वर्ण संकर माने जाते हैं, सन् 1951 में भिलालों की संख्या 1,00,581 थी, जबकि बारेलों की संख्या अलग से नहीं दी गई है। सन् 1961 की जनगणना के अनुसार जिले में भील–भिलालों तथा बारेलों की कुल संख्या 3,99,116 थी। सन 1961 में भिलालों की संख्या पृथक् रूप से 1,41,997 थी, जबकि इसी काल में भीलों को संख्या 71,866 थी। सन् 1931 की जनगणना में बारेलों के संकेन्द्रण

के सम्बन्ध में यह टिप्पणी की गई है। यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि बारेले निमाड़ तक ही सीमित हैं, जिनमें से तीन–चौथाई व्यक्ति अकेले सेंधवा में रहते हैं। जो कि बड़वानी जिले की एक तहसील है।

जनजातियों के जीवन में प्रवास एक महत्वपूर्ण घटना है। आदिवासी वर्ग का सारा जीवन प्रवास में बीत जाता है, जिससे उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति कमजोर होती जाती है। उनकी व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन बहुत अस्थिर हो जाता है। जीवन यापन अधिक व्यवस्थित रूप से करने के लिये व्यवसाय की खोज में आदिवासी व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से अपने मूल स्थान से किसी दूसरे स्थान पर प्रवास करते हैं।

उद्धेष्य :–

1. बारेला समुदाय के प्रवास के कारणों का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण प्रवास के प्रकार एवं स्वरूप का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि :–

किसी भी शोध अध्ययन के लिए सर्वप्रथम विषय का चयन महत्वपूर्ण प्रसंग है, सामाजिक शोध एक जटिल कार्य है। अतः यह आवश्यक है कि योजनाबद्ध तरीके से निश्चित एवं वैज्ञानिक शोध विधि का सहारा लेते हुए अध्ययन कार्य पुरा किया जाए। योजनाबद्ध तरीके से काम करने पर अध्ययन की सफलता में संदेह नहीं रहता है। प्रस्तुत अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है।

अवलोकन, चर्चा एवं परिणाम :–

बड़वानी जिले की अधिकांष सीमा महाराष्ट्र राज्य के साथ लगी होने कारण प्रमुख रूप से इस क्षेत्र का आदिवासी समुदाय के लोग महाराष्ट्र में ही पलायन करते है। तथा रोजगार व मजदूरी के लिए अपने निवास स्थान को छोड़ कर महराष्ट्र व गुजरात के विभिन्न शहरों में जाकर अपना जीवन–यापन करते है।

1. बरेला समुदाय में प्रवास आर्थिक कारणों से होता है। 92 प्रतिशत परिवारों ने आर्थिक कारणों से प्रवास किया। प्रायः पुरूष के साथ महिलायें भी परिवार के साथ ही प्रवास करती है।

2. प्रवास 3 प्रकार का होता है। स्थाई, मौसमी और अस्थाई, स्थाई प्रवास वे 43 प्रतिशत लोग करते हैं जिनके पास घर खेती, वगैराह कुछ भी नहीं होता है। मौसमी प्रवास उन 53 प्रतिशत लोगों के द्वारा होता है जिनकी गांवों में कृषि है। परन्तु सिंचाई के साधनों के अभाव से वे एक फसल लेते हैं जिससे उनका गुजारा नहीं हो पाता है। इसलिए मजबूरी वश उन्हें प्रवास करना पड़ता है। कुछ लोग अस्थाई रूप से कभी कभी प्रवास करते हैं। इनका प्रतिशत सिर्फ 4 है।

3. प्रवासी परिवारों में 7 प्रतिशत परिवारों ने सपरिवार प्रवास किया। 23 प्रतिशत लोगों ने अकेले या किसी संबंधी के साथ प्रवास किया है। 18 से 35 वर्ष आयु समूह के लोग अधिक प्रयास करते है। जिससे उनके ऊपर आश्रित 0 से 11 वर्ष तक के बच्चे अधिक प्रभावित होते. है। जिससे उनके बच्चों को प्रवासकी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

सुझाव :–

1. आदिवासी विकास कार्यक्रमों को सख्ती से लागू किया जाना चाहिए।
2. कृषि की उन्नत तकनीकी बीज आदि के बारे में लोगों को जानकारी दी जानी चाहिए ताकि वे पैदावार बढ़ा सके। जिससे प्रवास को कम किया जा सके।
3. सिंचाई के साधन विकसित करना। जिससे वह एक से अधिक फसल का उत्पादन कर सकें। और प्रवास हतोत्साहित होगा।
4. शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। तथा षिक्षा के स्तर में सुधार हेतु नई आधुनिक तकनीक का प्रयोग किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष :–

निष्कर्षतः बारेला समुदाय अधिक व्यवस्थित रूप से अपना जीवन–यापन करने के लिये व्यवसाय एवं रोजगार की खोज में व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से अपने मूल स्थान से किसी दूसरे स्थान पर प्रवास करते हैं। प्रवास को जनसंख्या में परिवर्तन का तीसरा कारक कहा गया है। प्रथम दो कारक जन्म दर एवं मृत्यु दर है। आदिवासी समुदायों को अपने जमीन व मूल निवास स्थान से गहरा भावनात्मक संबंध रहता है इसलिये जनजातीय प्रवास सामान्य परिस्थितियों में नहीं होता। जनजातीय प्रवास प्रमुख रूप से विभिन्न प्राकृतिक विपदाएँ जैसे सामाजिक आर्थिक शोषण, भूखमरी, बीमारी, बाढ़, सूखाग्रस्त, ऋणग्रस्तता, व बैरोजगारी तथा अषिक्षा आदि। आदिवासी समुदाय को बाहर की ओर धकेलते हैं। तथा विभिन्न रोजगार

के अवसर आदिवासी समूह को अपनी ओर खींचते है। तथा अधिक मजदूरी की दर जिनके कारण बहुत से जनजातीय समुदाय प्रवासी बन जाते है।

संदर्भ सूची :–

1. जॉर्ज फिलिप द्वारा (1982), "बर्थ डेथ एण्ड मॉइग्रेषन इन हिमालयास", भारी पब्लिकेषन प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
2. प्रभाकर, एन. आर. (1985), "इनटरनल माइग्रेषन एण्ड पॉपुलेषन रिड्रीस्टीब्यूषन इन इण्डिया", कानसेप्ट पब्लिषिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
3. चैरूनील, फ्रान्सिस, (1987) "पलायन, सेन्सस कोरलेट्स कॉनसिक्यावनसेस ट्रडस एण्ड पॉलिसिस, हिमालया पब्लिषिंग हॉउस, दिल्ली।
4. रावत, पी. एस. (1993), "मागइग्रेषन एण्ड स्ट्रक्चरल चेंज ए स्टडी ऑफ रूरल सोसाइटी इन गढ़वाल हिमालय", प्रकाषन सरीता बुक हाउस, दिल्ली (भारत)।
5. रावत, डॉ0 रूकमा (1997), रिटर्न माइग्रेषन एण्ड रूरल डेवलपमेंट, सिद्धि पब्लिषर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, टिहरी गढ़वाल।
6. मध्य प्रदेष जिला गजेटियर पष्चिम निमाड़ (खरगोन), (1970) – पृ. सं. 97
7- https://hi.wikipedia.org , 26/10/2021, 12:38 pm

E-mail ID : paramsinghbarde@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 172-175
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'आधागाँव' उपन्यास में सौहार्द एवं साम्प्रदायिकता

गुडिया शाक्य
शोधार्थी–(हिन्दी)
ने0मे0शि0ना0दास पी0जी0 कालेज, बदायूँ
म0ज्यो0फु0रू0वि0वि0 बरेली।
डॉ0 गौरव रस्तोगी
असि0प्रो0 हिन्दी विभाग
ने0मे0शि0ना0दास पी0जी0 कालेज, बदायूँ
म0ज्यो0फु0रू0वि0वि0 बरेली।

सारांश– भारत विभाजन भारतीय उपमहाद्वीप की त्रासदीपूर्ण ऐतिहासिक घटना है। जिसने राजनैतिक, भौगोलिक अदला–बदली के साथ ही सामाजिक सम्बन्धों को भी प्रभावित किया है। भारत आज़ाद हो गया लेकिन दो देशों के बंटवारे के साथ। इस तरह एक देश की धरती पर मिलजुलकर रहने वाले लोग अपनी जन्मभूमि, घर, रिश्ते आदि छोड़ने को मजबूर हुये। भारत विभाजन को त्रासदीपूर्ण घटना बनाने का कार्य स्वार्थी नेताओं तथा ब्रिटिशों की कूटनीति ने किया। इसका प्रभाव सामाजिक सम्बन्धों तथा सौहार्द पर पड़ा। हिन्दी साहित्य में विभाजन की त्रासदी का उल्लेख अनेक लेखकों ने किया। जिसमें राही मासूम रज़ा का उपन्यास 'आधा गाँव' महत्वपूर्ण है। आधा गाँव में गंगौली समाज के सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों तथा साम्प्रदायिक तनाव का चित्रण किया गया है। इस शोध पत्र में ''आधा गाँव'' के आधार पर सामाजिक सम्बन्ध, सहयोग, एकता भाईचारा, सद्भावना दोनों धर्मों में विद्यमान थीं। परन्तु राजनीतिक नीतियों ने इनके आपसी सम्बन्धों में साम्प्रदायिकता का बीज बो दिया। जिसका परिणाम विभाजन हुआ। इस उपन्यास में विभाजन की पीड़ा, भय, विस्थापन का दर्द चित्रित हुआ है। इस शोध पत्र के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि विभाजन ने देश का बंटवारा तो किया साथ ही मानवीय आत्मीयता एवं विश्वास को भी तोड़ दिया। इस प्रकार 'आधा गाँव' उपन्यास विभाजन कालीन समाज की संवेदनाओं के साक्ष्य के रूप में सिद्ध होता है।

बीज शब्द– विभाजन, सौहार्द, साम्प्रदायिकता, आधा गाँव, सामाजिक सम्बन्ध

प्रस्तावना– मनुष्य समाज के निर्माण का आधार है। जिसमें यह सामुदायिक रूप से शामिल होता है। क्योंकि मनुष्य अकेला समाज का निर्माण नहीं कर सकता। इसीलिए उसे परिवार, समुदाय, तथा सम्बन्धों की आवश्यकता होती है। जब वह परिवार तथा अन्य लोगों से सम्बन्ध बनाता है। तब समाज से सम्बन्ध जुड़ता है। यह सम्बन्ध जोड़ना ही काफी नहीं होता, बल्कि उन सम्बन्धों में प्रेम, विश्वास सहयोग आत्मीयता होना आवश्यक है। जिससे सौहार्द–पूर्ण वातावरण का निर्माण होता है। जब सामाजिक सम्बन्धों में अविश्वास, दूरी, तनाव, कटुतापूर्ण बातें ही साम्प्रदायिकता का रूप धारण कर लेती हैं। जब ये धर्म का आधार लेकर प्रेम, विश्वास मानवीय गुणों का हनन होने लगता है। तो विभाजनकारी प्रवृतियाँ

उत्पन्न होती है। जो जिसमे परिवार घर, जमीन, समाज का विघटन होने लगता है। इसी तरह विभाजन कालीन उपन्यास राही मासूम रज़ा का 'आधा गांव' में गंगौली के सामाजिक जीवन, सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध तथा साम्प्रदायिक परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है।

जहाँ हिन्दू और मुस्लिम समुदाय परस्पर सौहार्द, विश्वास तथा सहयोग की भावना के साथ रहते थे। गंगौली गाँव के सामाजिक, धार्मिक भिन्नताओं के बाद भी सम्मान, सांस्कृतिक सहभागिता तथा मानवीय संबंधों में प्रेम की गहरी जड़ें दिखाई देती थीं। दोनों समुदाय एक–दूसरे के धार्मिक एवं सामाजिक कार्यो में समान रूप से भाग लेते थे, जिससे साझी सांस्कृतिक परम्परा और सामाजिक एकता की पहचान दिखाई देती है। लेखक ने यह स्पष्ट किया है कि उस समय सामाजिक संबंधों का आधार धर्म नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाएं, पड़ोसीपन और पारस्परिक सहयोग था। गंगौली गाँव का सामाजिक जीवन, प्रेम भाईचारा विश्वास पर टिके हुए थे, लेकिन विभिन्न धार्मिक समुदायों के मध्य किसी प्रकार का मनमुटाव दिखाई नहीं देता था। इस उपन्यास के अनेक संदर्भ इस बात की पुष्टि करते हैं कि विभाजन से पूर्व साम्प्रदायिकता का सामाजिक जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं था लेकिन राजनीतिक परिस्थितियों के प्रीााव से धीरे–धीरे विकसित हुई। इस प्रकार ''आधा गाँव'' विभाजन–पूर्व भारतीय समाज की गंगा–जमुनी संस्कृति, सामाजिक सम्बन्धों, एकता तथा मानवीय मूल्यों का सशक्त दस्तावेज के रूप में प्रस्तुत है। इस शोध पत्र के माध्यम से 'आधा गाँव' उपन्यास में विभाजन पूर्व सामाजिक सम्बन्यों का सौहार्द पूर्ण वातावरण तथा विभाजन के दौरान साम्प्रदायिकता का अध्ययन करना है, इस उपन्यास में चित्रित साम्प्रदायिकता के कारणों तथा विभाजन के सामाजिक, सांस्कृतिक प्रभावों का विश्लेषण करना है, इसके अतिरिक्त ''आधा गाँव'' उपन्यास के माध्यम में मानवीय मूल्यों, सामाजिक एकता का मूल्यांकन करना है।

'आधा गाँव' उपन्यास में 1937 से 1952 तक के बनते–बिगड़ते सामाजिक सम्बन्धों को दिखाया गया है। इस उपन्यास को कथावस्तु गंगौली गांव को केन्द्र करके लिखी गई है। जो गंगौली गांव के माध्यम से विभाजन के समय भारत की सामाजिक परिस्थिति के लिये उचित ठहरती है। गंगौली गांव में मुहर्रम के दिन हिन्दूओं की लम्बी कतार चलती थी। ''मियां लोग दशहरे चन्दा देते थे। मठ के बाबा को जाहीर मियां ने पाँच बीघे जमीन भी दी थी।'' गंगौली गांव के लोगों पर यदि कोई संकट होता तो दोनों सम्प्रदाय के लोग मिलजुल कर सामना करते थे। जब गंगोली में बाढ़ आती है तो ''मुसलमान अजान देने लगते और हिन्दू चढ़ावा चढ़ाने लगते, रूठी गंगा मैया मान जाये।''[2] इससे स्पष्ट है कि एक ही गांव में दोनों की मिलजुली संस्कृति का समन्वय प्रेम, एकता, विश्वास तथा सभी मानवीय मूल्य विद्यमान थे। जब कुछ लोग मुस्लिम लीग का प्रचार करने तथा वोट मांगने आते हैं। तो हाज़ी साहब कहते हैं– ''हम तो अनपढ़ गंवार हैं, बाकी हमारे ख्याल में निमाज खातिर पाकिस्तान –आकिस्तान की तनिकों जरुरत ना है। निमाज के वास्ते ईमान की जरुरत है।[3] हाज़ी बाबा के बस कथन से सौहार्द तथा मानवीय दृष्टि व्यक्त होती है। वह धर्म को राजनीति की दृष्टि से नहीं देखते है। वह धर्म में ईमान और आस्था को महत्व देते है। इससे प्रतीत होता है–कि विभाजन के समय कुछ लोग सम्प्रदायिकता से अलग रहकर हिन्दू–मुस्लिम एकता और सौहार्द को बढ़वा देते हैं। वह चाहते कि है गंगाली गाँव भाईचारा बना रहे। आधा गाँव उपन्यास में लेखक ने लोगों के माधुर्य पूर्ण सम्बन्धों को चित्रित किया है। वहाँ के लोग नहीं चाहते कि उनके सम्बन्धों में दूरी हो यह कथन के माध्यम से स्पष्ट है– ''ई पाकिस्तान त हिन्दू–मुसलमानों को अलग करके बना रहा, बाकी हम तई देख रहे की मियां बीबी, बाप–बेटा और भाई–बहिन को अलग कर रहा है।''[4] इस उपन्यास में राही मासूम रज़ा ने विभाजन के पहले सामुदायिक प्रेम, मिलन, एकता, विश्वास से परिपूर्ण समाज को चित्रित किया है। किन्तु कुछ समय बाद धीरे–धीरे विघटनकारी राजनीति ने विघटन करना प्रारम्भ कर दिया। जो लोग आपस में एक–दूसरे के सुख–दुःख में शामिल हुआ करते थे। वही लोग नफरत करने लगे। गंगौली में सम्प्रदायिकता का विष घुलने लगा। विभाजन के समय भयंकर, नरसंहार, शोषण, हिंसा समाज में व्याप्त हो चुका था। जो गंगौली सामाजिक सौहार्द का प्रतीक था। वह साम्प्रदायिकता में बदल गया। अब गंगौली में सह–अस्तित्व की भावना समाप्त हो गई। दोनों सम्प्रदायों को एक–दूसरे से असुरक्षा प्रतीत हो रही थी। ''आधा गाँव'' उपन्यास के गंगोली गाँव में परिवर्तन दिखाई देता था, जो सौहार्दपूर्ण रहते थे। उन्हीं लोगों का प्रेम, विश्वास, सहयोग, एकता सब संदेह में बदलने लगता है। इसी सन्दर्भ में आधा गाँव उपन्यास में अभिव्यक्त हुआ है – गंगौली में गंगौली वालों की संख्या कम होती जा

रही है और सुन्नियों शियाओं और हिन्दुओं की संख्या बढ़ती जा रही है। शायद इसीलिए नुरूद्दीन शहीद की समाधि पर अब उतना बड़ा मजमा नहीं लगता जिस तरह कभी गूंज उठता था।'[5] इस कथन के द्वारा गंगौली की साम्प्रदायिकता को उभारा गया है। जहाँ गंगौलीवासी सामूहिक रूप से बैठते–उठते थे, वही विभाजन में अलगाव, विवाद होने लगा। इसी अलगाव की मांग के इच्छुक रहमत अली के कथन से स्पष्ट हुआ– ''हम जो क्षेत्र की मांग कर रहे हैं, वह कोई गुनाह नहीं कर रहे हैं। हिन्दू तो वहाँ पिछले आठ सौ सालों से हैं ही नहीं। यदि हम कह रहे हैं कि यह अलग मुस्लिम प्रदेश घोषित कर दिया जाए, तो इसमें हिन्दुओं को आपत्ति क्यों हो, जब वह उनका नहीं है?''[6] आधा गाँव उपन्यास में भी पाकिस्तान की मांग करने वालों लोग कहते हैं– ''हिन्दुस्तान के दस करोड़ मुसलमाल कायदे–आज़म के पसीने पर अपना बहा देंगे. एक मरतबा पाकिस्तान बन गया तो मुसलमान ऐश करेंगे ऐश।''[7] उस समय कुछ व्यक्तियों की कल्पनाएँ और आशाएं थी कि एक ओर एक सुमदाय की आबादी में बढ़ोत्तरी हो रही है। वहीं दूसरे समुदाय में सुरक्षा का डर है। तभी कुछ लोग विचार करते कि यदि पाकिस्तान बन गया तो उनकी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक रूप से स्थिति में सुधार हो जायेगा। इस सोच से समाज में विभाजन के दौरान साम्प्रदायिकता को बढ़ावा मिला। मुस्लिम लीग को वोट मांगने वाले लोग गंगौली के मुसलमानों में नफरत को फैलाने में लगे रहते हैं। ऐसे ही एक पात्र अब्बास है जो लीग का समर्थन करता है। पाकिस्तान बनने के बारे में गंगौली गाँव के लोगों को जानकारी नहीं होती है। अब्बास उन लोगों को भी बहलाता है और वहाँ के लोग बिना सोचे समझे उसका समर्थन करते हैं। गफूरन और सितारा अनपढ़ स्त्रियाँ भी उसके बहकावे में आ जाती हैं। गफूरन कहती है– अब मियाँ, आप पढ़े–लिखे हैं, ठीक ही कह रहे होगें''।[8] इसी तरह हिन्दू पात्र मास्टर साहब छिकुरिया को भड़काने का काम करते हैं। वे मुस्लिमों का विरोध करते हैं– ''इन मलिच्छों ने तो भारत वर्ष को तहस–नहस कर दिया है। मन्दिरों को तोड़–तोड़कर मस्जिदें बनवा ली हैं इन पापियों नें।''[9] साम्प्रदायिकता का सम्बन्ध धर्मों से रहा है। दोनों सम्प्रदायों को अपने धर्म को श्रेष्ठ दिखाने की होड़ में लगे रहते हैं। दूसरे धर्म को नफरत करते हैं। वे एक दूसरे से बात करते हैं ''इस वक्त आपकी समझ में यह बात भले ही न आये, लेकिन होगा यहीं हमारी मस्जिदों में गाय बाँधी जायेंगी।''[10] गंगौली के लोग अपनी भूमि को प्यार करते हैं। कुछ लोगों को विश्वास नहीं होता कि पाकिस्तान बनेगा तथा अपनी भूमि घर, गाँव को छोड़ना नहीं चाहते है। तब उन लोगों में भय, हिंसा, अच्छूत बनने की धारणा, धर्म परिवर्तन जैसी डरावनी मानसिकता को अलीगढ़ लीग प्रचारकों द्वारा विकसित किया जाता है। काली शेरवानी में लड़के लीग तथा जिन्ना का गुणगान करते हैं, और कम्मों को समझाते हैं ''पाकिस्तान न बना तो ये आठ करोड़ मुसलमान यहाँ अछूत बनाकर रह जायेंगे।''[11] इस प्रकार यह लीग सम्प्रदायिकता फैलाती है। कभी हिन्दू नेता हिन्दुओं को, तो मुस्लिम लीग प्रचारक मुसलमानों को एक दूसरे प्रति उकसाने का कार्य करते हैं। समाज में धीरे–धीरे साम्प्रदायिकता का विष घुलता जाता है। जहाँ तक इसका प्रभाव पहुँचा वहाँ के मानवीय सद्भावना से पूर्ण वातावरण को दूषित किया।

''आधा गाँव'' उपन्यास में सामाजिक सम्बन्धों में कभी प्रेम सौहार्द हुआ करता था। वही विभाजन के दौरान परिवर्तित होते दिखाई देता है। मानवीय मूल्य–हिंसा, भय असुरक्षा, अविश्वास में बदल चुके थे। गंगौली में जो कभी भाई चारे से रहते थे, उन लोगों में सामुदायिक तनाव बढ़ गया। आपसी सम्बन्धों में दरारे उत्पन्न हो गई। इस प्रकार ''आधा गाँव'' केवल गंगौली के सामाजिक सौहार्द तथा साम्प्रदायिक तनाव को ही चित्रित नहीं करता, बल्कि यह उपन्यास विभाजनकालीन भारतीय समाज का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है। जैसा कि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी का यह कथन सार्थ प्रतीत होता है– ''प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्तियों का संचित प्रतिबिम्ब होता है।[12] ''आधा गाँव'' भी विभाजन कालीन जनता की आशाओं, निराशाओं, भय, विश्वास, प्रेम, मानवीय मूल्यों तथा साम्प्रदायिक सौहार्द का दस्तावेज बनकर उभरता है।

राही मासूम रजा का उपन्यास ''आधा गाँव'' भारत–विभाजन की ऐतिहासिक त्रासदी का सशक्त दस्तावेज है, जिसमें राजनीतिक घटनाओं का वर्णन ही नहीं, बल्कि विभाजन से उत्पन्न सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय विघटन का गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है। इसके अध्ययन से स्पष्ट होता है कि विभाजन से पूर्व हिन्दू–मुस्लिम समुदायों के मध्य पारस्परिक, विश्वास, सहयोग, सह–अस्तित्व तथा सांस्कृतिक समन्वय विद्यमान था। लेकिन राजनीतिक स्वार्थो, औपनिवेशिक शक्तियों तथा साम्प्रदायिक मतभेदों ने इस सामाजिक सौहार्द को कमजोर किया और समाज में भय, अविश्वास, हिंसा और

विस्थापन जैसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दी। लेखक ने ''आधा गाँव'' उपन्यास के पात्रों एवं घटनाओं के माध्यम से स्पष्ट किया है कि विभाजन का सबसे गहरा प्रभाव सामाजिक जीवन और मानवीय संबंधों पर पड़ा।

इस अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि ''आधा गाँव'' केवल विभाजन की पीड़ा का ही चित्रण नहीं है, बल्कि सामाजिक सम्बन्धों, धर्मनिरपेक्षता, सहिष्णुता तथा मानवीय मूल्यों को पुनःस्थापित करने का भी संदेश देता है। वर्तमान सामाजिक परिप्रेक्ष्य में ''आधा गाँव'' उपन्यास विविधता में एकता, पारस्परिक सहयोग और सामाजिक सद्भाव के रूप में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इस प्रकार ''आधा गाँव'' विभाजन साहित्य की एक महत्वपूर्ण कृति होने के साथ ही भारतीय समाज की साझी संस्कृति और मानवीय संवेदना का जीवंत अभिलेख है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1– आधा गाँव राही मासूम रज़ा राजकमल प्रकाशन 2024 पृ0 173 ।
2– आधा गाँव राही मासूम रज़ा राजकमल प्रकाशन 2024 पृ0 10 ।
3– आधा गाँव राही मासूम रज़ा राजकमल प्रकाशन 2024 पृ0 297 ।
4– आधा गाँव राही मासूम रज़ा राजकमल प्रकाशन 2024 पृ0 242 ।
5– आधा गाँव राही मासूम रज़ा राजकमल प्रकाशन 2024 पृ0 13 ।
6– विभाजन पर विचार उपन्यासों के बहाने कुछ बातें, प्रियंवद आलोचना त्रैमासिक अंक 59
7– आधा गाँव राही मासूम रज़ा राजकमल प्रकाशन 2024 पृ0 58 ।
8– आधा गाँव राही मासूम रज़ा राजकमल प्रकाशन 2024 पृ0 58 ।
9– आधा गाँव राही मासूम रज़ा राजकमल प्रकाशन 2024 पृ0 173 ।
10– आधा गाँव राही मासूम रज़ा राजकमल प्रकाशन 2024 पृ0 240 ।
11– आधा गाँव राही मासूम रज़ा राजकमल प्रकाशन 2024 पृ0 239 ।
12– हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य राम चन्द्र शुक्ल राजपाल प्रकाशन 2023 पृ0 12

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 176-179
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पड़हा ईयार-सइहा अरा टून्टा खुटा

जगदीश उराँव
शोधार्थी ,
विश्वविद्यालय कुँड़ुख़ विभाग , राँची विश्वविद्यालय, राँची |

पड़हा

कुँड़ुख खोड़हा नु पड़हा गहि अकय महबा अड्डा रई। पड़हा पुरखर गहि चलाबाचक अरा कमचक ओन्टा अकय दव रीत तली। एकदा ती खोड़हा नु इन्दरईम किसिम गहि हुँ दव-मलदव गहि अईन अरा खोडहन चलबआ खतरी अईन कमना। एकासे का - नेग-चार, लग्गा-नखरर गुट्ठी हुरमी पड़हा तिम ननतारई।

कुँड़ुख खोड़हा नु पड़हा एन्ने लेक्खा ए:रा गे ख़क्खरई पंचे पद्दा जुमरअर पंचे पड़हा, सय पदा जुरअर सय पड़हा, दोय एंड पद्दा जुमरअर दोय एंड पड़हा, एन्दी ओंद पद्दा जुमरअर एन्दी ओंद पड़हा अरा पन्दी एंड पद्दा जुमरअर पन्दी एंड़ पड़हा गुटठी। एन्ने लेखअम एवंदा पद्दा जुमरर अवंदा पड़हा कमचर। पड़हान दव ती चलवआ खतरी बेल, दिवान, कोटवार, लठईत, पनभरा गुट्ठी जुद्दा-जुद्दा पद्दा ती आलर मन्नर अरा आ गोट्टा पद्दन एका लेखआ ओहदा ख़क्खर'ई अन्नेम बेल पद्दा, दिवान पद्दा, कोटवार पद्दा, पनभरा पट्टा, लवईत पद्दा गुटठी गोटटा पद्दन ओहदा चितारई। हुरमी पद्दा गहि नामे लेखअम नलख हुँ ख़टतारई।

पड़हा इयार सइहा

झारखण्ड राजी ही जोक-जोक पहटा तरा संगी पड़हा, इयार पड़हा हुँ ए:रा गे ख़क्खरई। इबड़ा गहि जुदम महबा अरा बिहइत हुँ रई। ईद बग्गे-ती-बग्गे गुमला पहटा तरा अरा जोक राँची जिला तरा हुँ ए:रा गे ख़क्खरई |

मूली रूपे ती ईय्या गुमला जिला, टोटी प्रखंड गहि बड़ा खटंगा, छोटा खटंगा, पाकरटोली अरा डाड़टोली दरा गुमला जिला ता दिम घाघरा प्रखंड गहि ससो, सरजमा, जंगराटोली मजही ता पड़हा सइहा इयार पत नु तेंगतारआ लगी। आद एन्ने लेक्खा र'ई -

- इय्या पड़हा इयार-सइहा जोड़ोरका पदियर गे पुरखा परिया नु मून्द बच्छर नु ओंगहोन काना-बरना मना लगिया मुदा अक्कुन ही बेड़ा नु पचे बच्छर नु ओंगहोन नन्नर।
- पेठ गुटठी नु एकअम नन्ना अड्डा केरका पाही गुटठी नु हुँ भेट-घाट मना ओंगतारई।

- इयार-सइहा पद्दा गहि डहरे ती काना-बरना मना उँगी मुदा इयार सइहा गहि एड़पा नु कोरना मल्ला।
- पुरखा परिया नु एन्ने रीत चलाबाचका रहचा का इयार-सइहा पद्दा नु परब-तिहा बेंजा-चुंजा का निकइम तंगहा इयार-सइहा एड़पा ता मुंजरर हुँ केरर अन्नु हुँ मल्ला काना। मुदा अक्कुन ही बेड़ा नु इय्या तनिक सुढार नंजर अरा ओक्कर एंड़ो तरती फरी-फटी नंजर का तंगआ इयार सइहा एड़पा नु निकइम मुंजरर केरर होले इयार-सइहा लग्गु एड़पा ता भइर काला ओंगनर। खोड़हा ता आलर गहि घोख कोरचा का इन्दरइम हुँ परब का बेंजा-पाही तु काना बरना गा मल मनी। मुदा पंचे बच्छर नु ओंगहोन जुमुरदत इवंदा दव अस्सदत-पाड़दत-बेचदत, ओनदत मोख़दत अवंगे नेखअय हूँ सइहा-इयार एड़पातर मुंजरर होले कंक मलता खंज्ज चिआगे काना-बरना मन्ना चाहि। एन्ने घोखअर ई मुंजरका नेग नु काना-बरना गहि अइन कमचर।
- मुक्का सेंदरा बेचना गहि रीत हुँ तम्हय पड़हा इयार-सइहा मजही नु काना-बरना मनी। नन्ना पद्दा तर मल काला-बरआ ओंगनर।
- एका-एका पद्दा तर पड़हा इयार-सइहा जोड़रका रअनर आ पद्दा मजही इकला हुँ बेंज्जा-चुंजा का समधी-देवान हुँ मल जोड़रआ ओंगनर।

गुमला पहटा तरा एन्ने किसिम गहि पड़हा इयार-सइहा कइनो पदा नु ए:रा गे खक्खरई। मुदा सन्नी खटंग (छोटा खटंगा), कोहां खटंगा (बड़ा खटंगा), पाकर टोली अरा डाड़टोली दरा इबड़ा गहि पड़हा पद्दा ससो, सरजमा अरा जंगरटोली गुटठी मजही बग्गे-ती-बग्गे नमजदी रई। इबड़ा पड़हा इयार-सइहा पद्दा नमजदी मन्ना गहि मूली कत्था रई – **"टूण्टा खुटा"**।

टूण्टा खुटा

- टूण्टा खुटा छोटा, खटंगा, बड़ा खटंगा, पाकरटोली अरा डाड़टोली गहि मजही ओंद अड्डा नु रई। आ अड्डा नु पच्चा परिया मलता पुरखा परिया तिम टूण्टा जतरा आ अड्डा नु लगाब'अनुग बरआ लगनर।
- टूण्टा जतरा हुरमी बच्छर अबड़ा पद्दा ही ख़द्दी ही नन्ना पईरी लग्गी। मुदा ससो, सरजमा अरा जंगरटोली पद्दा तर हुरमी बच्छर मल बरआ ओंगनर।

टूण्टा खूंटा अरा जतरा गहि पच्चा कत्था (इतिहास)

- टूण्टा खुटा गहि अकय पच्चा खीरी अरा अदि गहि अकय महबा रई।

इतिहास गहि करथा ईद अवतारई का पच्चा परिया नु गुमला एकदा इन्ना सहर नु पेठ लग्गी। पच्चा परिया नु हुँ गुमला पेठ लग्गा लगिया अईय्या ए.ड़ा अड्डो. मनखा गुट्ठी हूँ बीसरआ लगिया। आ पेठ नु ओंद हार अड्डो अकय जुक्की नु खक्खरआ लगिया।

- पेठ ती किरनुम ढेर उख़ा-माखा मंजा केरा खने आर खटंगा पद्दा अडसियर अरा ओंटे टोका नु टटखा मन्न किच्चा उक्कियर। तनिक सथारर अदि खोखा तम्हय गुसन ओंटा टेम्पा रहचा अदिन आ मन्न गुसानिम गड़चर दरा पाड़ा-बेचा हेल्लरर। तम्हय संगे होचका छिपन अस्सनुम पाड़नुम-बिचनुम बीजताचर चिच्चर।
- बि:जया ख़ने अबड़ा हेदे पद्दा तर एनर आर घोखनर का एसता आलर अकय दव पाड़ा-बेचा लगनर। पदियर आरिन मेजर का निम्हय एड़पा पली एसन रई, नीम ईसन एका बीरी अड़सकर मण्डी अम्म ओंडकर का मला, निम गा अकय दव पाड़ा-बेचा लगदर।
- आ खुंटान असानुम गढ़चका अम्बर आर हुँ पदियर ही बाचका लेक्खा ओन्टे-ओन्टे चइल केरर आ बेड़ा की:डा राजी हूँ रहचा अंवगे ओन्टा ओन्टा आलारिन होच्चर। आरिन एड़पा होअर अकया दव ती कड़िरका चिच्चर। एमआ-खजरआ पोखारी गुटठी तरा होच्चर। अदि खोखा एड़पा ओंदरअर अकय लोला-चोन्हा ती अकय की:ड़ा सारचका रअनर घोखअर अहड़ा-गुट्ठी ने एन्दरा ओना-मोख़ा लगियर अन्नेम ओंताचर मोखताचर।
- ओंडका-मोक्का खोखा होरमर ओन गुसन उक्कियर अरा घोखचर का नाम एन्नेम मून्द-मून्द बच्छर नु एंडो तरती काना-बरना मनोत। एन्ने ती नम्हय

नता हुरमी उल्ला रओ। इन्ना ती नाम सइहा-इयार जोड़ोरदत मुदा नम्हय मजही समधी-देवान जोडोरना गुटठी का परब-तीहा गुटठी का एन्नेम बद्दी पाही गुटठी अरा निकइम मुंजरर अइय्या हुँ काना-बरना मल रओ। एंड़ो तरती हुरमी किसिम गहि गच्छरका खोखा एन्ने लेखआ पड़हा इयार गहि फरी फटी मंजा।

- बइसकी खोखा होरमर आ अडडा ती अस्सनुम-पाडनुम बीचनुम अखड़ा बरचर।
- अदि खोखा अबड़ा पहियारिन बिदा ननना ती मुंध आरिन ओनताचर-मोखताचर अदि खोखा बिदा नना हेल्लरर।
- मुदा बिदा ननो बीरी आर अउर ओंगहोन आ टटखा मन्न का टेम्पा खुटा गड़चका अड्डा गुसन केरर। असन अउर हुँ रिझ-रंग ती एड़ो तरतर अकय दव असियर पाडियर अरा बीचयर। अदि खोखा ससो, सरजमा, जंगरा टोली तर बाचर का एका लेखआ ई अड्डा अरा टेम्पा खुंटा गुसन एम ओन्टे मक्का मन्न गहि खूँटा एम्हय तरती ओन्दरअर इसन नेग नियम ननर गडओम।
- ई खुंटा गहि ए:रना-खोजना नलख हुँ एमिम ननोम इदिन निमा (छोटा खटंगा, बड़ा खटंगा, पाकरटोली का डाड टोली) गे एन्देर हूँ फिकिर मल्ला ननना। इद एसरोओ, खतरओ चहे इंदरइम मनो अदि ही अड्डा नु पुना दूंटा खूंटा गड़ना एम्हय नलख तली। निम इसन ओहमा-बिनती भईर नना ओंगदर।
- टून्टा खूंटा अकय दिगहा आ मंजारका आबो मनी। खूंटा गड़ओ बीरी असन ओन्टा कसरी खेर एड़ेबनर।
- टूटा खूंटा गहि अकय महता रई। तेंगनर का टूटा खूंटा खतरआ हिलरई मलता टेड़हो हुँ मनो होले ससो, सरजमा, जंगराटोला पद्दीयर अख़नर कानर।

पड़हा सइहा-इयार काना-बरना

पड़हा सइहा-इयार काना-बरना इदातो जेट्ठे चन्दो नु मनी। पच्चा परिया ता ई रित नु एका पड़हा तर एका उल्ला बरआ गे नेवता चिओर अदिन ति ओन्द उल्ला मुधिम बीडी पुतबीरी ओनर-मोखर दरा माखा बीरी पड़हा बरउर पड़हा मिख़कर तरा बरनर।

- बिज्जा-बिज्जा गे मिख़का उल्ला पड़हा बरउर अड़सनर कानर। पच्चा परिया नु गा एकनुम बरआ लगियर मुदा अक्कु ही परिया नु गढ़ी-दकड़ा गुट्टी नु बरनर।
- एकते बरउर अकय रिझ ती खेल-डमुवा अस्सनुम अरा डण्डी पाडनुम नलते-बेचते बरनर।
- पड़हा सइहा-इयार कालु-बरउर गे ओन्टे अड्डा टिंपिचका रई असानुम आर अड़सनर।
- पड़हा सइहा-इयार मीख़का पद्दा तार होरमर चंदा बिहरी ननर अक्कु ही बेडा नु टेन्ट, ओना गे अम्म, मोखागे बूट अरा गुल्ले गुट्टी सराजमा नन्नर।
- जेतकम हुँ पड़हा सइहा-इयार बगर अड़सोर आर अकय रिझ ती टून्टा खूंटा ही गोल गोल पाडोर-बेचोर।
- पड़हा सइहा-इयार मिख़का पद्दा तर अकय दव ती ताम बेड़ा सिरे मेझेरओर दर परछअना गहि हुरमी समा जोरा नंजका होरमर अकय दव रिझ रंग नन्नुम आरिन परछआ गे कानर।
- परछाचका खोखा अकय दव ती हुरमी पद्दा तर ख़ट्टका लेक्खा तंगआ-तंगआ पद्दा ता अखड़ा नु हुरमी ती मुंध पाडनुम-बिचनुम होओर।
- रयबड़ी अरा फरी-फटी मंजका लेखअम एका पद्दा तर गे एका पदान तम्हय पद्दा होअना रई अन्नेम होओर।
- ई पड़हा सइहा-इयार एन्ने रित तली का आर एकसआनुम रओर मुदा एकागे पड़हा सइहा-इयार काना-बरना रई आ बेड़ा पद्दा का एड़पा नु किर्रना चाँड़ रई। ईद तम्हय पडहा तरतिम अईन कमचका रई।

- पड़हा सइहा-इयार मिखका पद्दा तर तंगआ सइहा-इयार रिन अखड़ा ती एड़पा होच्चका खोखा आरिन अकय सेवा नन्नर |
- ओंडका मोक्का खोखा पदा नु ओन गुसन बइसकी मनी असन होरमर कानर। असन खोडहा ता अकय दव-दव कत्था तेंगनर अरा टूटा खूंटा गहि औरे एकासे मंजा अबड़ा गुट्टी ही पच्चा कत्था हुँ तेंगतारई।
- रयबड़ी मंजका खोखा असते किम पाड़नुम-बेचनुम अखड़ा अडसनर अरा चईयआ बेचनर। पिसा पिसा बेड़ा अखड़ा ती अउर ओंगहोन तम्हय सइहा-इयार बगारिन तंगआ-तंगआ एड़पा होअर ओंतअनर-मोखतअनर अदि खोखा बिदा ननागे ओन संगे उरूखनर।
- पिसा बेडा ओण्डका मोक्का खोखा होरमर ओन संगे अखड़ा गुसन जुमुरनर अरा अकय दव रिझ रंग ती अस्सनुम, पाडनुम, बेचनुम टून्टा खूंटा जतरा टोका कानर। असन तनिक दिरी पाड़नर-बेचनर अरा टून्टा खुटन ओहमा गुट्टी नंजका खोखा बिदा ननागे पद्दा ही सिमान गेच्छा कानर। पद्दा तर सिमान गेच्छा होअर बिदा नन्नर दरा अकय दव ती पाड़नुम बिचनुम पद्दा किर्रनर।
- पड़हा सहहा इयार ही अउर हूँ अकय दव-दव बेड़ा सिरे अईन कमतारकी रई। पड़हा सइहा-इयार बरचकर ही इंदरइम आलो अम्बरा केरा होले अदिन अडसता गेकाना मनी।
- एका आलर अबड़ा आलोन अड्सतआ कालोर आर गहि किर्रका खोखा अजगु तर अउर बइसकी ओकोर दरा एका आलस गहि आलो अम्बरकी का भुलरकी रहचा आस ती डण्डे होअनर | पद्दियर आसिन मेनोर का एका लेक्खा एन्देर ननाा लइकय जे निग्हय आलो अम्बरा का भुल्लरा अरा नम्हय पड़हा सइहा-इयार बगर गे दिकदिक मन्ना मंज्जा।

  मानिम अकय दव एकजुटता ही संगे संगे नेगआगेम दिकदिक मल मनन नेकआ इबडा गहि अकय दव तिहा मनी।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. कुँड़ुख़ कत्थइन – महाबीर उराँव एवं चौठी उराँव – 2005
2. जनजातीय रीति-रिवाज एवं कानून – जनजातीय शोध संस्थान राँची-1995
3. साक्षात्कार
4. डॉ. हरि उराँव – पूर्व समन्वयक एवं विभागाध्यक, जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा संकाय, राँची विश्वविद्यालय, राँची |
5. श्री जौरू उराँव – ऊम्र – 65 वर्ष, ग्राम – पकरटोली, पोस्ट – टोंटो, प्रखंड – टोंटो, जिला – गुमला |
6. श्रीमती मुनिया उराँव – उम्र – 92 वर्ष, ग्राम – पकरटोली, पोस्ट – टोंटो, प्रखंड – टोंटो, जिला – गुमला |
7. श्रीमती बसंती उराँव – उम्र – 62. वर्ष, ग्राम – पकरटोली, पोस्ट – टोंटो, प्रखंड – टोंटो, जिला – गुमला |
8. श्री बिरसई भागत – उम्र – 71 वर्ष, ग्राम – सरजमा, पोस्ट – सरजमा, प्रखंड – घघरा, जिला गुमला |
9. श्री एतवा उराँव – 67 वर्ष, ग्राम – सरजमा, पोस्ट – सरजमा, प्रखंड – घघरा, जिला गुमला |

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 180-184
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

जितेन्द्र श्रीवास्तव के काव्य में स्त्री जीवन की विविध छवियाँ

शुभम शर्मा
शोधार्थी,
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग ,
जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सांबा, जम्मू एवं कश्मीर- 181143

जितेन्द्र श्रीवास्तव समकालीन हिंदी कविता के एक महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं, इनकी कविताओं में स्त्री जीवन के स्वर अत्यंत प्रखर एवं मानवीय रूप में चित्रित हैं। श्रीवास्तव का काव्य केवल शब्दों का जाल नहीं, बल्कि समाज में हाशिए पर खड़े लोगों की आवाज है। समकालीन हिंदी कविता में वे एक ऐसे कवि के रूप में उभरते हैं जिन्होंने स्त्री के घरेलू एवं बाहरी जीवन के अंतर्विरोध को बहुत ही संजीदगी से उकेरा है। इनके लिए स्त्री जीवन का अर्थ केवल पितृसत्ता से आजादी नहीं, बल्कि मानसिक, सांस्कृतिक एवं आत्मिक स्वतंत्रता का भी प्रतीक है। इनका काव्य स्त्री चेतना पर अपना एक अलग महत्व रखता है। श्रीवास्तव के काव्य में स्त्री को संघर्षशील, आत्मनिर्भर एवं चेतनशील अस्तित्व के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जितेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा रचित 'बिल्कुल तुम्हारी तरह' संग्रह में स्त्रीयों के प्रति गहन एवं भावात्मक अभिव्यक्ति मिलती है, जिसमें स्त्री, प्रेम एवं अस्मिता जैसे महत्वपूर्ण विषयों से साबद्ध कविताएँ संकलित की गईं हैं। साहित्य में प्रेम का स्वरूप और उसका वैचारिक परिपेक्ष्य निरंतर बदलता रहता है। विशेषतः इक्कीसवीं सदी में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया के प्रभाव से प्रेम की अवधारणा पुन: संकुचित होकर देह-केंद्रित होती दिखाई देती है। यही स्थिति समकालीन साहित्यिक परिदृश्य में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। 'बिल्कुल तुम्हारी तरह' कविता में कवि दाम्पत्य जीवन का एक यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है। इस कविता में कवि पुरुष के द्वारा स्त्री के श्रम और त्याग को स्वीकार करते हुए, अपनी सीमाओं को पहचानता है। वह यह भी स्वीकार करता है कि वो अपने हिस्से की जिम्मेदारी भी ठीक से नहीं निभा पाता है, जबकि पत्नी बिना किसी शिकायत के उसकी अनुपस्थिति में घर और बाहर दोनों की जिम्मेदारियाँ अकेले निभा रही होती है-

"इधर कई दिनों से अकेले
तुम सँभाल रही होगी घर-बाहर
मैं तो थक जाता हूँ अक्सर
ठीक से नहीं कर पाता अपने हिस्से का भी काम
और तुम हो

जो सबकुछ कर लेती हो हँसती हुई चुपचाप"[1]

श्रीवास्तव के काव्य में प्रकृति को लेकर भी बहुत सारी प्रेम कविताएं हैं जैसे:-'उजास', 'पहाड़', 'शिमला में एक शाम', 'शिमला में एक सुबह', 'मन खिला बसंत का', आदि कविताओं में प्रकृति का वर्णन देखने को मिलता है। इनकी प्रेम कविताओं को पढ़ना और सुनना मानो किसी मधुर संगीत का श्रवण करने जैसा है। इन कविताओं का राग अपनी प्रेयसी के प्रति प्रेम अभिव्यक्त हुई कविताओं से बाहर नहीं है। 'पहाड़' कविता का उदाहरण प्रस्तुत है-

"यह पहाड़ नहीं तुम्हारे हाथ हैं प्रिय!
उठो
छू लो आसमान
देखो, डरो नहीं
संकोच न करो
काँपो भी नहीं!
यह समय तुम्हारा है
सिर्फ तुम्हारा
उठो! लपककर छू लो आकाश
यह धरती भी तुम्हारी है आकाश भी तुम्हारा"[2]

इनकी कविताओं में व्यक्त प्रेम केवल भावनात्मक अनुभव तक सीमित नहीं रहता, वह जीवन-संघर्ष के मध्य एक सशक्त आधार के रूप में उभरता है। यह प्रेम कहीं जीवन-यापन की जटिलताओं के बीच आत्मविश्वास का संचार करता है, तो कहीं भविष्य के प्रति आशा और आस्था का संबल प्रदान करता हुआ दिखाई देता है। कवि के लिए प्रेम एक ऐसी जीवन दृष्टि का निर्माण करता है, जो निराशा के क्षणों में भी मनुष्य को आंतरिक शक्ति और संतुलन प्रदान करती है। 'तुम देखना' कविता से पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं-

"एक दिन खिलेंगे फूल मिलेंगे हम
बीच के दिन बीत जाएँगे शीतलहर की तरह
तुम धूप की तरह दमकती आओगी
मैं शीत की तरह घुल जाऊंगा तुममें
कहीं कोई अवरोध नहीं होगा
कहीं कोई भेद नहीं होगा
तू देखना!"[3]

जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में जीवन विशेषतः स्त्री-अनुभव के विविध रूपों का अत्यंत संवेदनशील एवं यथार्थपरक चित्रण मिलता है। उनकी काव्य-दृष्टि स्त्री को केवल एक पारंपरिक भूमिका तक सीमित नहीं करती, बल्कि उसे माँ, बेटी, पत्नी, बहन एवं स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत करती है। श्रीवास्तव द्वारा रचित 'सोनचिरई' कविता में स्त्री के बहुआयामी जीवन-संघर्ष एवं सामाजिक विडंबनाओं का मार्मिक चित्रण किया गया है। इस कविता में कवि ने स्त्री के उस रूप को केंद्र में रखा है, जिसे समाज 'बाँझ' जैसे अपमानजनक विशेषण से चिन्हित करता रहा है। सदियों से यह धारणा चली आ रही कि संतान न होने का दायित्व केवल स्त्री का ही होता है, जबकि वैज्ञानिक और सामाजिक दृष्टि से यह पूर्णतः एक पक्षीय एवं अन्यायपूर्ण सोच है। जितेन्द्र श्रीवास्तव इस रूढ़ मानसिकता पर प्रहार करते हुए यह स्थापित करते हैं कि मातृत्व से वंचित रह जाना केवल स्त्री की कमी नहीं, इसके लिए पुरुष भी समान रूप से उत्तरदायी हो सकता है। कविता 'सोनचिरई' में स्त्री का बाँझ होना ही उसे

सामाजिक अस्वीकार एवं उपेक्षा की ओर धकेल देता है। परिणामस्वरूप, समाज ही नहीं, उसके अपने भी उसे ठुकरा देते हैं किंतु कविता के इति में किसी अन्य पुरुष के साथ जीवन आरम्भ करने पर वह आठ पुत्रों की माता बनती है। तब यह स्थापित होता है कि पूर्व स्थिति के लिए केवल उसे दोषी ठहराना सरासर अन्याय है। इस प्रकार 'सोनचिरई' कविता के माध्यम से कवि ने न केवल स्त्री के अंतर्मन की पीड़ा एवं उसके मौन संघर्ष को अभिव्यक्ति दी है, बल्कि समाज में व्याप्त लैंगिक पक्षपात और रूढ़ मान्यताओं पर भी तीखा प्रश्न चिन्ह लगाया है। यह कविता स्त्री-जागरूकता का सशक्त दस्तावेज है-

"सोनचिरई आठ बेटों की माँ थी
वह स्त्री थी
और स्त्रियाँ कभी बाँझ नहीं होतीं
वे रचती हैं!
वे रचती हैं तभी हम-आप होते हैं
तभी दुनिया होती है
रचने का साहस पुरुष में नहीं होता
वे होती हैं तभी पुरुष
पुरुष होते हैं"[4]

श्रीवास्तव की 'पिता होना' कविता में पिता बनने की अनुभूति ज़िन्दगी को बंजर नहीं, बल्कि उसे पिता होने की जिम्मेदारी से रूब-रूह करवाती है। इस कविता में बेटी का जो रूप है, वह हमारे समक्ष प्रत्यक्ष रूप से नहीं दिखता, परंतु आंतरिक जिक्र अवश्य आता है-

"पिता होना सिर्फ बच्चे पैदा करना नहीं होता
जिम्मेदारियों में स्वयं को मिटाना होता है"[5]

कवि बेटियों को जीवन में हंसते रहने की सलाह देते हैं और उनमें यह आत्मविश्वास भरते हैं कि जीवन में कभी भी निराश मत होना, हमेशा मुस्कराती रहना। 'बेटियाँ' कविता के माध्यम से कवि कहता है कि बेटियों के होंठो पर जितनी हंसी होती है पिता का जीवन उतना ही उजास से भरा होता है। यदि वह खुश नहीं हैं, तो पिता की ज़िन्दगी भी अँधेरे में खो जाती है। कवि उनकी हँसी-खुशी में अपने जीवन के विश्वास की तलाश करते हैं-

"जितनी हँसी होती है बेटियों के अधर पर
उतनी उजास होती है पिता के जीवन में
जो न हँसें बेटियाँ
तो अँधेरे में खो जाते हैं पिता"[6]

समकालीन हिन्दी कविता में बेटी केवल पारिवारिक सदस्य नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की वाहक के रूप में प्रतिष्ठित हो रही है। कवि बेटियों को सूर्य और चंद्रमा की तरह उर्जा, प्रकाश एवं उत्तरदायित्व से युक्त देखना चाहता है, ताकि वे नए युग में आत्मनिर्भर एवं सशक्त होकर खड़ी हो सकें। 'एक नई स्त्री का आत्मकथ्य' कविता एक ऐसी स्त्री की आवाज है जो अपने अस्तित्व को सिर्फ देह तक सीमित रखने से इंकार कर देती है। वह स्वयं को स्वप्न, चेतना एवं सृजन की मूल शक्ति के रूप में स्थापित करती है। कविता में स्त्री स्पष्ट रूप से कहती है कि उसे अभी जीवन की लंबी और निर्णायक लड़ाई लड़नी है-यह लड़ाई उसके अधिकारों, अस्मिता एवं स्वतंत्रता की है। कविता में 'देह का उत्सव' एक प्रतीक है, जो उसे सामाजिक संरचना की ओर संकेत करता है, जहाँ स्त्री को भोग की वस्तु के रूप में देखा जाता है। स्त्री इस मानसिकता को ठुकराते हुए कहती है कि वह इन 'प्रायोजित' और

‘जादुई’ उत्सवों का हिस्सा नहीं बनेगी। कविता का अंत स्त्री की तीव्र प्रतिरोधात्मक चेतना के साथ होता है, जहाँ वह भोगवादी लालसाओं एवं कृत्रिम मूल्यों को तिरस्कार की दृष्टि से देखती है एवं स्वयं को अबला मानने से इंकार कर देती है-

“मैं स्त्री हूँ
प्रकाशित हूँ अपने ही प्रकाश से
हमी से उधर लिया है सूर्य ने अँजुरी भर उजाला
चन्द्रमा ने चुटकी भर शीतलता
पृथ्वी ने गदोरी भर धैर्य
हमारी बाँहों में समा सकते हैं
कई-कई आसमान
मैं अबला नहीं
एक स्त्री हूँ
मुझे नहीं डूबना प्रायोजित देह के उत्सवों में!”[7]

‘रामदुलारी’ कविता एक असाधारण जीवन-संघर्ष, साहस और मानवीय मूल्यों का सशक्त आख्यान प्रस्तुत करती है। रामदुलारी का चरित्र यह प्रमाणित करता है कि स्त्री केवल सहनशीलता की प्रति मूर्ति नहीं, बल्कि अन्याय के विरुद्ध डटकर खड़ी होने वाली सशक्त इकाई भी है। उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में पति के अत्याचार का प्रतिरोध कर न केवल आत्मसम्मान की रक्षा की, बल्कि आने वाली पीढ़ियों की स्त्रियों के लिए भी प्रेरणादायक उदाहरण स्थापित किया। कविता यह भी रेखांकित करती है कि समाज प्रायः स्त्रियों को उनके कार्य और सामाजिक हैसियत तक सीमित कर देता है, किंतु समय के साथ वही समाज उनके साहस और व्यक्तित्व को स्वीकार कर उन्हें सम्मानित भी करता है। ‘मर्द मरना’ जैसी संज्ञा का ‘योद्धा’ में रूपांतरण इसी मानसिक परिवर्तन का संकेत है। साथ ही, कविता जाति-व्यवस्था और सामाजिक ऊँच-नीच पर भी तीखा प्रहार करती है। रामदुलारी का जीवन इस सत्य को उजागर करता है कि मनुष्य की वास्तविक श्रेष्ठता उसकी जाति, धर्म या पद में नहीं, बल्कि उसके आचरण, समानता और मानवीय संवेदनाओं में निहत होती है। उन्होंने जातिगत भेदभाव को लाँघते हुए सबके प्रति समान व्यवहार किया, जिससे वे सच्चे अर्थों में मानवीय गरिमा की प्रतीक बन जाती है जैसे:-

“माँ कहती हैं
व्यर्थ की बातें हैं बड़ी जाति अपार धन
रामदुलारी न किसी बड़ी जाति में पैदा हुई थीं
न धन्ना सेठ के घर
पर उनके आचरण ने सिखाया हमेशा
निष्कलुष रहने का सलीका
बाभनों, कायस्थों, ठाकुरों, बनियों, भूमिहारों में
डींगें चाहे जितनी बड़ी हों अपनी श्रेष्ठता की
पर कोई स्त्री-पुरुष नहीं इनमें
जो आस-पास भी ठहर सके रामदुलारी के”[8]

‘इस गृहस्थी में’ कविता गृहस्थ जीवन के सूक्ष्म यथार्थ, आर्थिक संघर्ष, दाम्पत्य संबंधों की आत्मीयता तथा स्त्री की अदृश्य किंतु केन्द्रीय भूमिका को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती है। इसे समग्र रूप से देखें तो ‘रसीद’

शब्द कविता का प्रमुख प्रतीक बनकर हमारे समक्ष उभरता है, जो सिर्फ एक कागज़ का टुकड़ा नहीं, बल्कि निम्न-मध्यमवर्गीय जीवन की सुरक्षा, पहचान, श्रम एवं सपनों का दस्तावेज है। यह कविता एक साधारण घरेलू प्रसंग के माध्यम से निम्न-मध्यमवर्गीय जीवन की आर्थिक चुनौतियों, स्त्री की केन्द्रीय भूमिका, दाम्पत्य संबंधों की गहराई तथा उपभोक्तावादी समाज की विडम्बनाओं का सशक्त चित्रण करती है। गृहस्थी जीवन की वास्तविक धुरी स्त्री का अदृश्य श्रम, आर्थिक सजगता एवं संबंधों की संवेदनात्मक ऊर्जा ही है, जो पूरे जीवन-तंत्र को संतुलित एवं सार्थक बनती है। कविता का उदाहरण प्रस्तुत है-

"यह अच्छा है इस गृहस्थी में
जो चीजें गुम हो जाती हैं मुझसे
उन्हें ढूँढ़कर सहेज देती हो तुम
मैंने अब तक किए हैं आधे-अधूरे ही काम
जो हो सके पूरे या दिखते हैं लोगों को पूरे
उनका सारा श्रेय तुम्हारा है"[9]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि जितेन्द्र श्रीवास्तव की स्त्री आधारित कविताओं में स्त्री जीवन के विविध रूप देखने को मिलते हैं। यहाँ स्त्री केवल सहनशीलता और त्याग की प्रतीक नहीं, बल्कि चेतना, प्रतिरोध एवं परिवर्तन की वाहक भी है। वह अपने श्रम, अनुभव और संघर्ष के माध्यम से न केवल स्वयं को गढ़ती है, बल्कि समाज के स्वरूप को भी प्रभावित करती है। इस प्रकार, ये कविताएँ स्त्री-अस्तित्व के बहुआयामी यथार्थ को प्रकट करते हुए उसके सम्मान, समानता और मानवीय गरिमा की पुनर्स्थापना की आवश्यकता को सशक्त रूप में स्थापित करती है। जितेन्द्र श्रीवास्तव की इन स्त्री केंद्रित कविताओं में प्रयुक्त भाषा सहज, आत्मीय दिखते हुए भी गहन मानवीय सरोकारों से जुड़ी हुई है। यही कारण है कि ये कविताएँ न केवल समकालीन साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं, बल्कि दीर्घकाल तक उत्कृष्ट और स्मरणीय काव्य के रूप में पाठकों के मन में बनी रहने की क्षमता भी रखती हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

1. श्रीवास्तव, जितेन्द्र: बिल्कुल तुम्हारी तरह, पृ.61
2. वही, पृ.66
3. वही, पृ.38
4. श्रीवास्तव, जितेन्द्र: इन दिनों हाल-चाल, पृ.243
5. श्रीवास्तव, जितेन्द्र: अनभै कथा, पृ.21
6. श्रीवास्तव, जितेन्द्र: असुंदर-सुंदर, पृ.230
7. श्रीवास्तव, जितेन्द्र: सूरज को अंगूठा पृ.44
8. वही, पृ.19
9. वही, पृ.83

मोबाइल न. 6006586442
ईमेल shubhamsharma25021998@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 185-187
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

आदिवासी 'उराँव' समाज की पारंपरिक पर्व–योहारों में हावी होती आधुनिकता

कृष्णा उराँव
शोधार्थी,
विश्वविद्यालय कुँड़ुख़ विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची।

हम देखते हैं कि आदिकाल से ही भारत कृषि प्रधान देश रहा है। यहाँ की रीति–रिवाज, परंपरा और सांस्कृतिक क्रियाकलापों में भी कृषि की ही मान्यताएं अधिक दिखाई देती है। झारखण्ड राज्य में निवास करने वाली 32 जनजातियों में से एक उराँव जनजाति के समुदाय झारखण्ड में दूसरी सबसे बड़ी जनसंख्याँ मानी जाती है। 2011 की जनगणना के अनुसार यहाँ उराँव की कुल जनसंख्याँ 3,29,66,238 है। इनकी भाषा कुँड़ुख़ है। ये द्रविड़ भाषा परिवार से सम्बंध रखते हैं और द्रविड़ भाषा परिवार भारत का सबसे पुराना भाषा परिवार माना जता है। यहाँ कुँड़ुख़ बोलने वालो की जनसंख्याँ 50 हजार से अधिक है। इन लोगों का रीति–रिवाज, धार्मिक, सांस्कृतिक, रूढ़ी प्रथा जैसी परम्पराओं से इनकी अपनी अलग पहचान होती है। ये लोग प्रकृति के साथ अन्योन्याश्रय संबंध रखते है। इस लिए प्रकृति का मान सम्मान, सुरक्षा, पालनहार, जीवनदायिनी मानी जाती है। जिसके कारण आदिवासी लोग प्रकृति को सर्वोच्च मानते है और इन्हें भगवान का दर्जा देकर उसे पूजते है। उराँव समाज में मुख्य रूप से दो त्योहार माने जाते हैं।

(1) ख़द्दी/सरहुल (2) करम

यहाँ देखते हैं कि उराँव जनजातियाँ अपने आप को प्राकृती का पूजक मानते हैं। अपनी पर्व–त्योहारों में यहाँ के लोगों के द्वारा अपनी संस्कृति को बहुत ही तेजी से आधुनिकता की ओर ढालते जा रहे हैं और अपनी पर्व–त्योहारों में बाहरी कड़ियों को जोड़ते जा रहें है। देखा जाए तो यहाँ के लोगों में अपने रीति–रिवाजों को आधुनिक रूप देते जा रहे हैं और आधुनिकता इन लोगों पर हावी होती हा रही है।

ख़द्दी पर्व/सरहुल– इसी तरह हम देखते है ख़द्दी पर्व/सरहुल हिन्दी पंचांग के चौत्र महीना के तीसरे दिन मनाया जाता है। मुख्यतौर पर यह त्योहार अंग्रेजी महीना के अप्रैल माह में आता है। इसी समय के आस पास हिन्दी पंचांग का नववर्ष भी आरंभ होता है। सरहुल का उत्सव भारत में उराँव आदिवासियों की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और ऐतिहासिक परंपराओं का प्रतिबिंब है।

उराँव रीति–रिवाजों और मान्यताओं के अनुसार सरहुल पर्व के पूर्व तक प्रकृति प्रदत्त नए अन्न, फलों और फूलों का सेवन वर्जित है। सरहुल के दिन प्रकृति को अपने रीति–रिवाजों के साथ धन्यवाद अर्पित करने के बाद ही उनका सेवन आरंभ किया जाता है। यहाँ तक कि सरहुल पर्व के दुसरे दिन सुबह जल्दी ही घर से धान के बीज को खेत में छिट दिया जाता है उसे उराँव जनजाति के लोग कुँड़ुख़ भाषा में 'मुठ ओथोरना' कहते हैं और नए फसलों को बोने और खाद डालने की प्रक्रिया भी सरहुल के बाद ही

आरंभ होता है। यहाँ यह कहना भी उच्चित होगा कि उराँव जनजातियों में चैत्र और पूष माह में शादी विवाह करना वर्जित है। सरहुल झारखंड में उराँव जनजातियों के समुदाय द्वारा बड़े धूमधाम के साथ मनाया जाने वाला एक पारंपरिक और जीवंत त्योहार है।

देखा जाए तो आदिवासी उराँव जनजाति समुदाय में ख़द्दी/सरहुल पर्व मनाने के पीछे बहुत सारी वैज्ञानिक तर्क छुपी हुई है। इस पर्व के पूजा–पद्धति में एक–एक नियम का अपना विशेषता है। लेकिन आज कल के आधुनिक युग में लोग इसकी महत्त्व को भूलते जा रहे हैं और अपनी परंपरा से दूर हटते जा रहे हैं। जो पूजा का मूल रूप है उसे छोड़कर लोग अन्य रास्ते में भटक जा रहे हैं। ख़द्दी/सरहुल पर्व अपनी रीति–रिवाजों के तौर–तरीकों से मनाई जाती है, उसमें भी पारंपरिक तरीको से। ख़द्दी पर्व में सिर्फ रोड में जूलुस निकलने नाचने गाने से भर नहीं होती है। उसमें पाहन–पुजार अपनी परंपरा के अनुसार पूजा पाठ करते है। तथा अपने पूरे गाँव के लोगों के लिए भगवान से सुख–समृद्धि के लिए दुवा मांगते हैं। ये त्योहार मुख्य रूप से दो दिनों का होता है। पहला दिन केकड़ा पकड़ने के साथ घइला में पानी रखना तथा दुसरे दिन फूल खोंसी के साथ–साथ अखड़ा में ढोल–मांदर की ताल में नाच–गान, रीझरंग तथा खान–पान होता है। लेकिन आजकल समाज में देखने को मिल रहा है कि लोग पारंपरिक पूजा पाठ को आधुनिकता में बदल दे रहे हैं। लोग सरना स्थल के जगह को छोड़ कर चाला पच्चो का फोटो को पूजा कर रहे हैं जो की उराँव समाज में फोटो तथा मुर्ति पूजन का प्रचलन ही नहीं हैं। इन्हीं सब हरकतों से ख़द्दी पर्व का महत्व कम होती दिखाई दे रही है और इसमें लोग पूजा–पद्धति का महत्त्व को छोड़ कर अपनी मनोरंजन को महत्त्व दे रहे हैं। लोग ख़द्दी/सरहुल पर्व से पहले पूर्व संध्या मना रहे हैं। ढोल, मांदर के साथ अखड़ा में ना नाच कर मंच मना कर डी.जे. बाजा लगा कर नाच रहे हैं। सरहुल के दिन अखड़ा छोड़ कर रोड में जुलूस निकल रहे हैं और जुलूस में भी बड़ा–बड़ा गाड़ी में डी.जे. लगा कर नाच–डेग रहे हैं। उसमें भी सौख पुरा नहीं हुआ तो सरहुल बितने के बाद सरहुल मिलन समारोह में मंच बना कर डी.जे. लगा के नाच रहे हैं।

करम पर्व– इसी प्रकार से हम देखते हैं उराँव समाज में करम पर्व को मनाने की कुछ कड़ियों में इस बदलती दुनिया में बदलाव देखने को मिल रहा है। करम पर्व में करम डाली को ला कर अखड़ा में गाड़ कर डी. जे. लगाकर नाचने गाने से ही नहीं हो जाता है। इसमें अपनी पारंपरिक रूढ़ीवादी नेग–चार होते है।

करम पर्व भादो महीने के शुक्ल पक्ष के एकादशी में बड़ी हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। यह पर्व कृषि कार्य पर आधारित है और प्रकृति से भी जुड़ा हुआ है। अराध्यदेव वृक्ष करम वनस्पति का एका संवेदनशील सदस्य नहीं, बल्कि वह उराँवों के अस्तित्व रक्षक, आध्यात्मिक जीवन–दर्शन और सामाजिक, धार्मिक परम्पराओं में बस गया है। यही वजह है कि उराँव जनजाति प्रकृति भक्त और उसके प्रति अटूट आस्थावान है। इसके नेग–चार की गतिविधियों में भी वैज्ञानिक तर्क है। आज पूरे देश के वैज्ञानिकों ने माना है कि जंगल–झाड़, नदी–नाले, झरने, गाछ–वृक्ष इत्यादि हमारे जीवन का अटूट हिस्सा है। पेड़–पौधे ही पर्यावरण को संतुलित बनाये रखती हैं और इस गतिविधि को उराँव समाज के पुर्वजों ने समझ–बुझकर सदियों से इसकी पूजा–अर्चना करते आ रहे हैं। करम पर्व को मनाने के लिए मुख्य रूप लड़कियाँ सात या नौ दिन पहले ही जवा उठाती है और अपनी परंपरा के अनुसार उसको प्रतिदिन सेवा करती है।

करम पर्व के दिन लड़कियाँ उपवास करती है और करम डाली को लाकर अख़ड़ा में पाहन के द्वारा गाड़ा जाता है और उसके बाद उसका कथा के साथ करम डाली का पूजा–अर्चना किया जाता है तब तक लड़कियाँ उपवास ही रहती है। करम पर्व में करम डाली की पूजा के समय उसकी पूजा के लिए प्रमुख सामग्रीयाँ होती है। लेकिन आज कल यह देखने को मिल रहा है कि उस सामग्री में भी बदलाव आती जा रही है। जिससे करम पर्व की पूजा–पद्धति गतिविधियों ठेस पहुँच रही है और उसकी महत्त्व कम होती जनर आ रही है। लोगा नाम मात्र के करम त्योहार मनाते है और उसमें अपनी हिसाब से मनोरंजन करते स्रोत बना रहे हैं और पर्व के महत्व हो भूलते जा रहे हैं। आने वाले कुछ दिनों में आधुनिकरण के कारण उराँव समाज के पर्व–त्योहार जो पारंपरिक है वह खतरे में आ सकता है।

निष्कर्ष –

हम कह सकते है कि वर्तमान समय में उराँव आदिवासियों के समाज में आधुनिकता का प्रभाव इस कदर छा गया है कि वे अपने संस्कृति और कला को भूलते ही जा रहे हैं। हम कह सकते हैं कि

हमारे पुरवजों के पास उनकी अपनी साइंस होती थी। वे लोग पढ़े–लिखे नहीं होते थे लेकिन उनके पास जो हुनर होता था उसी को आज आधुनिक युग में वैज्ञानिक रूप दे कर साइंस माना जा रहा है। हम देखते है कि जिस समय साइंस का खोज नहीं हुआ था उस समय आदिवासी के पास अपना खेत–बारी में काम करने के लिए औजार बनाने के लिए अपना साइंस था। वे लोग हल बनाने के लिए कितना साइंस का उपयोग कर के एक हल बनाते थे, जुवाठ बनाते थे। अभी भी आप उसे देख सकते है कि हल तथा जुवाठ बनाने के लिए वे लोग कितना दिमाग लगाया होगा। आप जुवाठ या हल को ही देखें तो वह लकड़ी का ही रहता है लेकिन उसको बनाने लिए कई पार्ट को बना के मिलाया जाता है। सबका अलग–अलग नाम है। इसमें 5 पार्ट बनाना पड़ता है तब उन सभी को मिला के एक हल तैयार होता है। उसी तरह जुवाठ का अलग–अलग पार्ट होता है। इस तरह से हम देखते है कि आदिवासी लोगों का अपना समाज में अपना रीति–रिवाज, भाषा–संस्कृति होता है और उसका अपना–अपना महात्व होता है। इस प्रकार हम देखेंगे कि किसी भी समाज में भाषा–संस्कृति, रीति–रिवाज अपना समाज में कितना महत्व है। आज जरूरत इस बात की है कि इन भाषा, संस्कृतियों पर हमें न केवल गर्व करना चाहिए बल्कि उन्हें कायम रखने का भी प्रयास करना चाहिए ना कि पढ़–लिख के उसे हिन भावना से देखना। बल्कि इसकी बढ़ावा के लिए समाज की भाषा, संस्कृति, रीति–रिवाज, नाच–गान, पूजा–पद्धति की विधि आदि को प्रोत्साहन देना होगा। हम देखते है कि उराँव समाज में लोग पढ़ने–लिखने के बाद अपनी जो परंपरा, रीति–रिवाज है उसका महत्व नहीं देते है लोग रूपया पैसा कमाते हैं और अपनी रूढ़ीवादी परंपरा को भूलते जाते है। जिसके कारण आज हमारे समाज में यह देखने को मिल रहा है कि अपनी परंपरा, रीति–रिवाज से लोग कोसों दूर होते जा रहे हैं। लोग गाँव में परंपरागत विधि–विधाओं से पूजा–पद्धति करते थे वे भी भूलते जा रहे हैं। लोग अपने बच्चों को पढ़ने लिखने के लिए गाँव से दूर शहरों में भेज रहे हैं और पारंपरिक पर्व–त्योहारों से दूर करते जा रहे हैं। इस आधुनिक दुनिया में बदती जमानों के साथ लोगों में भी बदलाव दिखाई दे रही है। बच्चे शहर में पढ़ने–लिखने जा रहे हैं और अपनी परंपरा, रीति–रिवाजों से दूर हो कर आधुनिक युग में मोडन दुनिया को सामने ला रहे हैं। गाँव में जाने के बाद बच्चे पारंपरिक पर्व–त्योहारों में ढोल, मांदर, नागाड़ा को छोड़ कर अखड़ा में डी. जे. बाजा लगा के पारंपरिक लोग गीतों को छोड़ के आधुनिक गीतों में नाच रहे हैं। हमें लगता है ऐसा इस लिए हो रहा है कि–घर में अपने माता–पिता बच्चों को अपनी भाषा–संस्कृति को बता नहीं रहे है या उन्हें अपना भाषा–संस्कृति सिखाना ही नहीं चाहते हैं। अगर माता–पिता अपने बच्चे को अपना भाषा–संस्कृति के बारे में नहीं बताते है नहीं सिखाते हैं तो बच्चे अपना भाषा–संस्कृति सिखेगें कैसे? माता–पिता को अपने बच्चों के प्रति जैसे अन्य विषयों के प्रति जिस प्रकार से जोर देते हैं उसी प्रकार से अपने भाषा–संस्कृति को भी सिखाने के लिए बच्चों को जोर देना चाहिए, लेकिन आजकल ऐसा नहीं हो रहा है। जिससे बच्चे अपनी भाषा–संस्कृति से कोसो दूर होते जा रहे हैं। जिससे भाषा–संस्कृति, परंपरागत वाद्ययंत्र अब लुप्त होती जा रही है और उराँव जनजातियों का रीति–रिवाज, भाषा–संस्कृति, पारंपरिक पर्व–त्योहार अब खतरे में पड़ गई है। इन सभी बातों को मध्य नजर रखते हुए इसका मतलब यह कह सकते है कि हमारा उराँव जनजाति समाज बहुत तेजी से विनास होते हुए विकास कर रही है।

संदर्भ ग्रंथ –

1. *कुँड़ुख़ संस्कार गीतों का सांस्कृतिक अध्ययन*–डॉ. रामकिशोर उराँव
2. *उराँव लोक साहित्य*– डॉ. तेतरू उराँव
3. *सरना अदि धरम* – भिखू तिर्की
4. *उराँव संस्कृति परिवर्तन एवं दिशाएँ*– डॉ० शान्ति खलखो, झारखण्ड झरोखा, राँची, द्वितीय संस्करण–2023
5. *सरना फूल पत्रिका* – सरना नव युवक संघ राँची।
6. *करमा त्योहार पत्रिका*– डॉ. दिवाकर मिंज, प्रधान संपादक, (कुलानुशासक, राँची वि. वि. राँची), सितम्बर– 2015

ग्राम –घुटाम (पाल्ही), पोस्ट–बालू, थाना–बालूमाथ, जिला–लातेहार, झारखण्ड–829206
मोबाइल नंबर– 8789225781
ई–मेल – oraonkrishna90@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 188-193
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हिन्दी यात्रा-साहित्य: भाषागत वैशिष्ट्य

बबीता कुमारी
शोधार्थी हिन्दी,
डॉ०अरुण लता वर्मा
एसो० प्रोफेसर हिन्दी विभाग,शोध निर्देशक ,
एम०एम ०एच ०कॉलिज, गाज़ियाबाद

शोध सार -हिन्दी यात्रा-साहित्य भारतीय साहित्य की एक समृद्ध, सशक्त तथा बहुआयामी विधा के रूप में प्रतिष्ठित है, जिसमें यात्रा के बाह्य अनुभवों के साथ-साथ मनुष्य की आंतरिक चेतना, सांस्कृतिक दृष्टि, ऐतिहासिक बोध तथा सामाजिक संवेदनाओं का समन्वित रूप अभिव्यक्त होता है। मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही यात्रा उसके जीवन का अभिन्न अंग रही है। ज्ञानार्जन, व्यापार, धर्म, संस्कृति, शिक्षा, अन्वेषण तथा आत्मानुभूति जैसे विविध उद्देश्यों ने मनुष्य को निरंतर गतिशील बनाए रखा। इसी गतिशीलता ने अनुभवों के संचयन और उनके साहित्यिक रूपांतरण की प्रक्रिया को जन्म दिया, जिसके परिणामस्वरूप यात्रा-साहित्य का विकास हुआ।

मूल आलेख - आधुनिक हिन्दी साहित्य में यात्रा-साहित्य का सुव्यवस्थित विकास विशेष रूप से बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में दृष्टिगोचर होता है। इस काल में यात्रा का स्वरूप परंपरागत तीर्थाटन, प्राकृतिक सौंदर्य-दर्शन अथवा राजकीय यात्राओं तक सीमित न रहकर सामाजिक यथार्थ, सांस्कृतिक अंतःसंवाद, वैचारिक विस्तार और आत्म-अन्वेषण का सशक्त माध्यम बन गया। इस संदर्भ में निर्मला जैन, नरेश मेहता, अमृतलाल वेगड़, कृष्णदत्त पालीवाल, सुदर्शन वशिष्ठ, विष्णु प्रभाकर, नासिरा शर्मा तथा अन्य अनेक साहित्यकारों ने यात्रा-साहित्य को नवीन दृष्टि, संवेदना और वैचारिक गहराई प्रदान की। इन लेखकों के यात्रा-वृत्तांतों में यात्रा केवल स्थान-परिवर्तन की घटना नहीं है, बल्कि वह जीवन-दृष्टि के विस्तार, सामाजिक चेतना के विकास और सांस्कृतिक विमर्श के सृजन का माध्यम बन जाती है। इनके लेखन में प्रकृति, इतिहास, संस्कृति और मनुष्य के पारस्परिक संबंधों का गहन विश्लेषण मिलता है, जो यात्रा-साहित्य को सामान्य विवरणात्मक लेखन से ऊपर उठाकर साहित्य की गंभीर विधा के रूप में स्थापित करता है।

हिन्दी यात्रा-साहित्य की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में उसकी भाषिक सजीवता, चित्रात्मकता तथा अभिव्यक्ति की बहुरंगी शैली प्रमुख है। यात्रा-वृत्तांतों की भाषा केवल घटनाओं अथवा स्थानों की सूचना देने का माध्यम नहीं होती, बल्कि वह पाठक के समक्ष सम्पूर्ण वातावरण का सृजन करती है। लेखक अपने सूक्ष्म

अवलोकन, कल्पनाशीलता तथा संवेदनात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से ऐसे दृश्य उपस्थित करता है कि पाठक स्वयं को यात्रा का सहभागी अनुभव करने लगता है। पर्वतों की विराटता, नदियों की प्रवहमानता, वनों की हरितिमा, नगरों की चहल-पहल, लोकजीवन की सहजता तथा ऐतिहासिक स्मारकों की गरिमा का चित्रण केवल वर्णनात्मक न होकर भावात्मक और कलात्मक भी होता है। प्रकृति-वर्णन में चित्रात्मकता, सांस्कृतिक संदर्भों में विश्लेषणात्मक दृष्टि तथा आत्मानुभूति के प्रसंगों में आत्मसंवादात्मक शैली का प्रयोग यात्रा-वृत्तांतों को साहित्यिक गरिमा प्रदान करता है। यही कारण है कि हिन्दी यात्रा-साहित्य तथ्य और कल्पना, अनुभव और विचार, संवेदना और विवेक के संतुलित समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण माना जाता है।

भाषागत वैशिष्ट्य -

हिन्दी यात्रा-साहित्य में भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि अनुभव का संवाहक और संवेदना का विस्तार है। सुदर्शन वशिष्ठ, गोविंद मिश्र, नासिरा शर्मा, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, कमलेश्वर, और मनोहर श्याम जोशी, निर्मला जैन, नरेश मेहता, अमृतलाल वेगड़, और कृष्णदत्त पालीवाल की यात्रा-कृतियों में भाषा का स्वरूप विविध होते हुए भी आत्मीय, चित्रात्मक और प्रवाहपूर्ण है। इन लेखकों ने यात्रा-अनुभव को भाषा के माध्यम से जीवंत बनाया है, जहाँ शब्द दृश्य, संस्कृति और मनःस्थिति—तीनों को एक साथ व्यक्त करते हैं।

सुदर्शन वशिष्ठ की यात्रा-कृतियाँ पर्वत से पर्वत तक (1991) तथा हिमालय में देव संस्कृति (1995) हिन्दी यात्रा-साहित्य में प्रकृति, संस्कृति और लोक-चेतना के सशक्त समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। उनकी भाषा केवल प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन नहीं करती, बल्कि हिमालय के आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और मानवीय स्वरूप को भी अभिव्यक्त करती है। वे हिमालयी परिवेश का चित्रण करते हुए लिखते हैं— "पहाड़ की निस्तब्धता में भी एक जीवित संवाद है, जिसे सुनने के लिए भीतर का शांत होना आवश्यक है"।[1] यहाँ भाषा में दार्शनिक गहराई के साथ दृश्यात्मकता भी है। हिमालय में देव संस्कृति में वे लोक-जीवन का चित्रण करते हुए कहते हैं— "देवताओं की यह भूमि केवल आस्था का प्रदेश नहीं, बल्कि मनुष्य और प्रकृति के सह-अस्तित्व का उत्सव है"।[2] उनकी भाषा में संस्कृतनिष्ठ शब्दावली के साथ स्थानीय शब्दों का समावेश मिलता है, जिससे वर्णन में प्रामाणिकता आती है। इस प्रकार उनकी भाषा में वर्णनात्मकता के साथ सांस्कृतिक विमर्श और आध्यात्मिक चेतना का सुंदर समन्वय दिखाई देता है। संस्कृतनिष्ठ शब्दावली, लोक-प्रचलित अभिव्यक्तियों तथा हिमालयी अंचल के स्थानीय शब्दों का संतुलित प्रयोग उनकी भाषा को विशिष्ट प्रामाणिकता और प्रभावशीलता प्रदान करता है। परिणामस्वरूप पाठक केवल प्राकृतिक सौंदर्य का अवलोकन नहीं करता, बल्कि हिमालय की सांस्कृतिक आत्मा और लोक-जीवन की जीवंत अनुभूति से भी साक्षात्कार करता है।

गोविंद मिश्र की यात्रा-कृतियाँ परतों के बीच (1997) तथा और यात्राएँ (2005) हिन्दी यात्रा-साहित्य में आत्मसंवादी, चिंतनप्रधान और सांस्कृतिक दृष्टि से समृद्ध भाषा का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। उनकी भाषा बाह्य प्रकृति अथवा स्थलों के मात्र वर्णन तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यात्रा को आत्म-अन्वेषण, स्मृति और जीवन-दर्शन की प्रक्रिया के रूप में रूपायित करती है। उनके लिए यात्रा का वास्तविक अर्थ केवल नए स्थानों का अवलोकन करना नहीं, बल्कि स्वयं के भीतर छिपे अनुभवों, संवेदनाओं और विचारों को पहचानना भी है। इसी भाव को व्यक्त करते हुए वे लिखते हैं— "यात्रा दरअसल अपने भीतर की परतों को खोलने का नाम है"।[3] यहाँ भाषा में प्रतीकात्मकता और आत्ममंथन की ध्वनि है। और यात्राएँ में वे कहते हैं— "सड़कें केवल स्थानों को नहीं जोड़तीं, वे स्मृतियों और अनुभवों को भी एक सूत्र में पिरोती हैं"।[4] यह कथन उनकी भाषा में निहित दार्शनिक दृष्टि, स्मृतियों की संवेदनात्मकता तथा अनुभव की निरंतरता को अभिव्यक्त करता है। गोविंद मिश्र की भाषा में

साहित्यिक गरिमा और बौद्धिक गहनता का संतुलित समन्वय दिखाई देता है। वे सरल एवं प्रवाहपूर्ण शब्दावली का प्रयोग करते हुए भी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और मानवीय संदर्भों को गहन अर्थवत्ता प्रदान करते हैं। उनकी अभिव्यक्ति में आत्ममंथन, प्रतीकात्मकता, चिंतनशीलता और भावात्मक संवेदनशीलता का ऐसा संतुलन मिलता है, जो यात्रा-वृत्तांत को सामान्य विवरण से ऊपर उठाकर एक गंभीर साहित्यिक अनुभव में रूपांतरित कर देता है। परिणामस्वरूप उनकी भाषा पाठक को केवल यात्रा के स्थलों से नहीं, बल्कि मनुष्य के भीतरी संसार, उसकी स्मृतियों और सांस्कृतिक चेतना से भी जोड़ती है।

अजीत कुमार की यहाँ से कहीं भी (1997) में भाषा अधिक संवादात्मक और मुक्त शैली की है। वे यात्रा को जीवन की अनिश्चितता से जोड़ते हुए लिखते हैं— "यहाँ से कहीं भी जाना संभव है, क्योंकि यात्रा का अर्थ दिशा नहीं, अनुभव है"।[5] उनकी भाषा में बोलचाल की सादगी और आधुनिक संवेदना का मेल मिलता है। वाक्य छोटे और प्रवाहपूर्ण हैं, जिससे पाठक को यात्रा की गति का अनुभव होता है।

विष्णु प्रभाकर की यात्रा-कृति हमसफर मिलते रहे (2008) हिन्दी यात्रा-साहित्य में आत्मीयता, मानवीय संवेदना और जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। उनकी भाषा सहज, सरल, स्पष्ट तथा अत्यंत संप्रेषणीय है, जिसमें कृत्रिम अलंकरण की अपेक्षा जीवनानुभव की सच्चाई और मानवीय आत्मीयता को अधिक महत्त्व दिया गया है। उनके लिए यात्रा केवल भौगोलिक दूरी तय करने का माध्यम नहीं, बल्कि विविध व्यक्तियों, संस्कृतियों और जीवनानुभवों से परिचित होने की प्रक्रिया है। इसी मानवीय दृष्टि को व्यक्त करते हुए वे लिखते हैं— "यात्रा में मिले लोग ही सच्चे हमसफर होते हैं; स्थान तो केवल पड़ाव हैं"।[6] यह कथन उनकी मानवीय दृष्टि, सामाजिक संवेदनशीलता तथा जीवन-दर्शन का प्रतिनिधित्व करता है। उनकी भाषा में मनुष्य के प्रति गहरा विश्वास, आत्मीय व्यवहार और सह-अस्तित्व की भावना निरंतर व्यक्त होती है। वे यात्रा के दौरान मिले सामान्य व्यक्तियों, उनके जीवन-संघर्ष, संस्कारों और सांस्कृतिक मूल्यों का चित्रण अत्यंत संवेदनशीलता के साथ करते हैं। विष्णु प्रभाकर कठिन शब्दावली, दुरूह वाक्य-विन्यास अथवा अत्यधिक अलंकारिक शैली का आश्रय नहीं लेते, बल्कि सहज हिन्दी के माध्यम से गहन मानवीय अनुभूतियों को व्यक्त करते हैं। उनकी भाषा में प्रवाह, आत्मीयता और संप्रेषणीयता का ऐसा संतुलन दिखाई देता है कि पाठक स्वयं को लेखक का सहयात्री अनुभव करने लगता है। परिणामस्वरूप हमसफर मिलते रहे की भाषा यात्रा-वृत्तांत को केवल स्थानों के विवरण तक सीमित न रखकर उसे मानवीय संबंधों, सांस्कृतिक समन्वय और जीवन-दर्शन की व्यापक अभिव्यक्ति में रूपांतरित कर देती है।

नासिरा शर्मा की यात्रा-रचनाओं जहाँ फव्वारे लहू रोते हैं (2003) और यादों के गलियारे (2010) की भाषा अत्यंत संवेदनशील, आत्मीय और बहुसांस्कृतिक है। उनकी भाषा में अरबी-फारसी शब्दावली का सहज प्रयोग मिलता है, जो यात्रा-स्थलों की ऐतिहासिक पीड़ा और मानवीय त्रासदी को गहराई प्रदान करता है। वे लिखती हैं— "यह धरती केवल मिट्टी नहीं, यहाँ हर कण में इतिहास की सिसकी दबी हुई है"।[7] यह भाषा केवल दृश्य का वर्णन नहीं करती, बल्कि स्मृति और पीड़ा को शब्दों में ढाल देती है। यादों के गलियारे में भाषा अधिक आत्मसंवादी हो जाती है, जहाँ यात्रा स्मृतियों की यात्रा बन जाती है — "यात्राएँ बाहर की नहीं होतीं, असल यात्रा तो भीतर घटती है"।[8]

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद तिवारी की यात्रा-कृति एक नाव के यात्री (2001) हिन्दी यात्रा-साहित्य में चिंतनशील, संयमित और साहित्यिक भाषा का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। उनकी भाषा में भावात्मक संवेदनशीलता, दार्शनिक दृष्टि तथा सांस्कृतिक चेतना का संतुलित समन्वय दिखाई देता है। वे यात्रा को केवल भौगोलिक स्थानांतरण नहीं मानते, बल्कि उसे जीवन, समय, स्मृति और आत्मबोध की सतत प्रक्रिया के रूप में

देखते हैं। उनके यात्रा-वृत्तांतों में प्रकृति, इतिहास, संस्कृति और मानवीय संबंधों का चित्रण अत्यंत सूक्ष्म एवं विचारोत्तेजक शैली में किया गया है। इसी दृष्टि को व्यक्त करते हुए वे लिखते हैं— "यात्रा का अर्थ केवल आगे बढ़ना नहीं, बल्कि स्वयं को पहचानना भी है"।[9] यह कथन उनकी भाषा की दार्शनिक गहराई, आत्मविश्लेषणात्मक प्रवृत्ति तथा जीवन-दृष्टि का परिचायक है। उनकी अभिव्यक्ति में अनावश्यक शब्दाडंबर नहीं मिलता, बल्कि संयमित, सटीक और अर्थगर्भित भाषा के माध्यम से गहन अनुभूतियों को व्यक्त किया गया है। उनकी भाषा में काव्यात्मकता का सहज समावेश भी दृष्टिगोचर होता है, जिसके कारण प्राकृतिक दृश्य, सांस्कृतिक परिवेश और मानवीय अनुभव पाठक के मन में सजीव चित्रों का निर्माण करते हैं। संस्कृतनिष्ठ शब्दावली और साहित्यिक हिन्दी का संतुलित प्रयोग उनकी अभिव्यक्ति को गरिमा प्रदान करता है, जबकि सहज वाक्य-विन्यास उसे संप्रेषणीय बनाए रखता है। उनके यात्रा-वृत्तांतों में भाषा विचार और संवेदना के मध्य एक सेतु का कार्य करती है, जिसके माध्यम से पाठक बाह्य यात्रा के साथ-साथ आत्मिक यात्रा का भी अनुभव करता है। इस प्रकार एक नाव के यात्री की भाषा यात्रा-वृत्तांत को केवल वर्णनात्मक न रखकर उसे आत्मान्वेषण, सांस्कृतिक विमर्श और मानवीय चेतना की गंभीर साहित्यिक अभिव्यक्ति में रूपांतरित कर देती है।

कमलेश्वर की रचना कश्मीर: रात के बाद (1995) की भाषा राजनीतिक चेतना, मानवीय करुणा और प्रतीकात्मकता से युक्त है। उनकी भाषा तीखी होते हुए भी संवेदनशील है। वे लिखते हैं— "कश्मीर में रात केवल अँधेरा नहीं, वह एक मानसिक अवस्था है"।[10] यह भाषा यात्रा-विवरण को सामाजिक-राजनीतिक यथार्थ से जोड़ती है और पाठक को केवल दर्शक नहीं, बल्कि साक्षी बना देती है।

मनोहर श्याम जोशी की यात्रा-कृतियाँ क्या हाल है चीन के (2006) तथा पश्चिमी जर्मनी पर उड़ती नज़र (2006) हिन्दी यात्रा-साहित्य में आधुनिक दृष्टि, व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति और संवादधर्मी भाषा का विशिष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। उनकी भाषा में पत्रकारिता की तीक्ष्ण दृष्टि, साहित्यिक संवेदनशीलता तथा व्यंग्य का प्रभावशाली समन्वय दिखाई देता है। वे यात्रा के दौरान देखे गए देशों, समाजों और संस्कृतियों का वर्णन केवल तथ्यात्मक रूप में नहीं करते, बल्कि उनके राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पक्षों का सूक्ष्म विश्लेषण भी प्रस्तुत करते हैं। इसी कारण उनकी भाषा में चुटीलापन, विनोद, व्यंग्य और बौद्धिक प्रखरता का संतुलित समावेश मिलता है। वे विदेशी समाज को एक जिज्ञासु यात्री की दृष्टि से देखते हैं और अपने अनुभवों को अत्यंत सहज, रोचक तथा संवादात्मक शैली में प्रस्तुत करते हैं। क्या हाल है चीन के में वे लिखते हैं— "चीन मुझे जितना बाहर से दिखा, उससे कहीं ज़्यादा भीतर से चौंकाता रहा"।[11] यह कथन उनकी गहरी पर्यवेक्षण-शक्ति तथा सतही दृश्य के पीछे छिपी सामाजिक और सांस्कृतिक वास्तविकताओं को समझने की क्षमता का परिचायक है। उनकी भाषा में बोलचाल की सहजता के साथ विचारों की गंभीरता भी विद्यमान रहती है, जिसके कारण पाठक यात्रा-वृत्तांत को केवल मनोरंजक विवरण के रूप में नहीं, बल्कि समकालीन विश्व की सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचनाओं के आलोचनात्मक अध्ययन के रूप में ग्रहण करता है। पश्चिमी जर्मनी पर उड़ती नज़र में भी वे आधुनिक यूरोपीय जीवन, तकनीकी विकास, सामाजिक अनुशासन तथा सांस्कृतिक भिन्नताओं का चित्रण तीक्ष्ण अवलोकन और व्यंग्यात्मक शैली के माध्यम से करते हैं। उनकी भाषा में छोटे, प्रभावशाली और संवादात्मक वाक्यों का प्रयोग अधिक मिलता है, जो पाठक की रुचि को निरंतर बनाए रखता है। विदेशी परिवेश का वर्णन करते समय वे आवश्यकतानुसार अंग्रेज़ी एवं प्रचलित विदेशी शब्दों का भी प्रयोग करते हैं, जिससे वर्णन अधिक स्वाभाविक और यथार्थपरक बन जाता है। इस प्रकार मनोहर श्याम जोशी की भाषा यात्रा-साहित्य को आधुनिक बौद्धिक चेतना, व्यंग्यात्मक दृष्टि, सामाजिक विश्लेषण और प्रभावी संप्रेषणीयता प्रदान करती है तथा हिन्दी यात्रा-वृत्तांत को नवीन अभिव्यक्ति-शैली से समृद्ध बनाती है।

निर्मला जैन की दिल्ली शहर दर शहर (1994) में भाषा का स्वर आत्मीय, चिंतनशील और सांस्कृतिक चेतना से परिपूर्ण है। दिल्ली के विभिन्न रूपों को व्यक्त करते हुए वे भाषा को इतिहास और वर्तमान के बीच सेतु बना देती हैं। उनकी भाषा न तो अत्यधिक अलंकृत है और न ही शुष्क; वह सहज संवादात्मक रूप में पाठक से संवाद करती है। वे लिखती हैं— "दिल्ली एक शहर नहीं, समय की कई परतों का जीवित दस्तावेज है"।[12] यहाँ भाषा शहर को केवल भौगोलिक इकाई न मानकर सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करती है।

नरेश मेहता की यात्रा-कृति कितना अकेला आकाश (2003) की भाषा दार्शनिक और काव्यात्मक है। उनकी यात्रा बाह्य जगत से अधिक अंतःयात्रा बन जाती है। वाक्य अपेक्षाकृत दीर्घ होते हुए भी भावबोध से परिपूर्ण हैं। वे कहते हैं— "यात्रा में देखे गए आकाश से अधिक विशाल भीतर का आकाश होता है।"[13] यहाँ भाषा आत्मचिंतन का माध्यम बनकर यात्रा-अनुभव को दार्शनिक ऊँचाई प्रदान करती है।

अमृतलाल वेगड़ की सौंदर्य की नदी नर्मदा (2006) में भाषा प्रकृति-केंद्रित और चित्रात्मक है। उनकी भाषा में प्रवाह, लय और दृश्यात्मकता का अद्भुत सामंजस्य मिलता है। नर्मदा उनके लिए केवल नदी नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना की वाहक है। वे लिखते हैं— "नर्मदा के तट पर बैठकर लगता है जैसे सौंदर्य स्वयं ध्यानमग्न हो।"[14] यह भाषा पाठक के मन में दृश्य बिम्ब रचती है और प्रकृति को सजीव बना देती है।

कृष्णदत्त पालीवाल की जापान में कुछ दिन (2003) की भाषा तुलनात्मक और विश्लेषणात्मक है। वे जापानी समाज और संस्कृति को भारतीय दृष्टि से देखते हुए भाषा को सरल और तथ्यपरक रखते हैं, परंतु उसमें सांस्कृतिक बोध भी निहित है। उनका कथन — "जापान की अनुशासनप्रियता वहाँ के जीवन की मौन भाषा है।"[15] यहाँ भाषा सामाजिक संरचना की व्याख्या का साधन बनती है।

इस प्रकार कहा जा सकता कि हिन्दी यात्रा-साहित्य में भाषा अनुभव, संवेदना और विचार का जीवंत माध्यम बनती है। उपर्युक्त लेखकों की रचनाओं में भाषा न केवल यात्रा का विवरण देती है, बल्कि समय, समाज और आत्मा के गहरे सरोकारों को भी अभिव्यक्त करती है।समग्रतः हिन्दी यात्रा-साहित्य की भाषा वर्णनात्मक होने के साथ-साथ चिंतनपरक, सांस्कृतिक, संवादधर्मी एवं सौन्दर्यपरक है, जो पाठक को स्थानों का परिचय कराने के साथ ही उन स्थानों की संस्कृति, लोकजीवन, इतिहास और मानवीय संवेदनाओं से भी आत्मीय रूप से जोड़ती है। यही भाषागत विशेषताएँ हिन्दी यात्रा-साहित्य को अन्य गद्य-विधाओं से विशिष्ट एवं साहित्यिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण बनाती हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वशिष्ठ सुदर्शन, (1991), "पर्वत से पर्वत तक", पुष्पांजलि प्रकाशन, पृष्ठ: 42
2. वशिष्ठ सुदर्शन, (1995), "हिमालय में देव संस्कृति", पुष्पांजलि प्रकाशन, पृष्ठ: 67।
3. गोविन्द मिश्र, (1997), "परतों के बीच", राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ: 15।
4. गोविन्द मिश्र, (2005), "और यात्राएँ", वाणी प्रकाशन, पृष्ठ: 84।
5. अजीत कुमार, (1997), "यहाँ से कहीं भी", किताबघर प्रकाशन दरियागंज नई दिल्ली, पृष्ठ: 28।
6. प्रभाकर, विष्णु, (2008), "हमसफर मिलते रहे", रचनाकार प्रकाशन", पृष्ठ: 102।
7. शर्मा, नासिरा, (2003), "जहाँ फव्वारे लहू रोते हैं", वाणी प्रकाशन, पृष्ठ: 47।
8. शर्मा, नासिरा (2010), "यादों के गलियारे", साहित्य भारती दिल्ली, पृष्ठ: 62।
9. आचार्य विश्वनाथ प्रसाद तिवारी (2001), "एक नाव के यात्री", राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ: 35।
10. कमलेश्वर, (1995), "कश्मीर: रात के बाद", नई दिल्ली: किताबघर प्रकाशन, पृष्ठ: 18।
11. मनोहर श्याम जोशी, (2006), "क्या हाल हैं चीन के", वाणी प्रकाशन, पृष्ठ: 29।

12. निर्मला जैन, (1994), "दिल्ली शहर दर शहर", राजकमल प्रकाशन, वही पृष्ठ: 37।
13. मेहता नरेश, (2003), "कितना अकेला आकाश", भारतीय ज्ञानपीठ, पृष्ठ: 52।
14. अमृतलाल वेगड़, (2006), "सौंदर्य की नदी नर्मदा", पेंगुइन बुक्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ: 81।
15. पालीवाल कृष्णदत्त, (2003), "जापान में कुछ दिन", नयी दिल्ली किताबघर प्रकाशन, पृष्ठ: 64।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 194-200
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

"समकालीन हिन्दी कविता में जन सरोकार और मानवीय मूल्य"

गोविन्द कुमार
शोध छात्र,
हिन्दी और अन्य भारतीय भाषा विभाग,
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

शोध सार :– नई सदी में आधुनिक हिन्दी कविता के तौर पर समकालीन कविता की प्रमुख विशेषता, अपने समय के भीतर ही कविता को तलाशना है और यही इसकी महत्वपूर्ण विशेषता है। समकालीन कविता संघर्ष करते आदमी की शक्ल है। उसका कथ्य व्यापक स्तर पर जन सरोकार और मानवीय मूल्य से जुड़ा है। समकालीन कविता की भावभूमि आजादी के दो दशक बाद की भूमि है जिसमं आपातकाल का लागू होना, साम्प्रदायिक विद्वेष, आतंकवाद, किसान आत्महत्या, राजनीति और अवसरवाद इत्यादि घटनाओं ने समकालीन कविता के युगधर्म का निर्धारण किया है। इन सारी सामयिक संस्कृति को अत्यन्त गहरे संवेदना के साथ उजागर करने में हमारे महत्वपूर्ण और विद्वान कवियों ने अपना अहम् योगदान दिया है। जिसमें प्रमुख रूप में केदारनाथ सिंह, नागार्जुन, शमशेर बहादुर सिंह, त्रिलोचन, रघुवीर सहाय, मुक्तिबोध, अज्ञेय इत्यादि का नाम बड़े आदरपूर्वक लिया जाता है।

केदारनाथ सिंह समकालीन कविता के ऐसे कवि हैं जिन्होंने चींटी से लेकर हाथी तक अपनी कविताओं में स्थान दिया है। उनकी कविताएँ इतनी सहज और सरल होती है कि आसानी से पाठक का ध्यान आकृष्ट कर लेती है। उनकी सबसे बड़ी खासियत है कि उनकी कविता में राजनीति आती है मगर धीमी आँच की कविता में। इसके विपरीत नागार्जुन की कविता अत्यन्त चीखते और चिघाड़ते हुए आती प्रतीत होती है जिसमें देश के आमजन से लेकर सत्ता में बैठे शीर्षस्थ नेता भी भयभीत हो जाते हैं तो वहीं दूसरी ओर जनमानस की व्यथा को अत्यन्त गहरे संवेदना के साथ ऐसे प्रकट करते हैं कि अनायास हृदय से आह निकल जाता है। इसमें सर्वप्रथम नाम शमशेर बहादुर सिंह का आता है। इनकी कविता की भाषा और भाव चित्रात्मक होती है ऐसा लगता है जैसे कविता नहीं एक कलात्मक चित्र दिया हो। जिसमें आम जन की दशा और व्यथा को अत्यन्त गहरे संवेदना के साथ प्रकट करते हैं और यही समकालीन कवियों की सबसे बड़ी विशेषता है। समकालीन कविता आम आदमी के जीवन को उसकी जड़ों को समझने का प्रयत्न करती है। इसलिए मानवीय अनुभवों की तरह ही इन कविताओं का रचना–संसार भी व्यापक है।

बीज शब्दः– समकालीन, यथार्थवाद, निम्न मध्यवर्ग, जन सरोकार, मानव मूल्य, संघर्ष, शोषित, ब्रिटिश औपनिवेशिक, राजनीति, सत्ताधारी शासक, अवसरवाद, किसान।

शोध विस्तार :

अपने समय की पहचान और समय के भीतर ही कविता को तलाशना समकालीन कविताओं की विशेषता है। समकालीन कविता की बात करें तो इसका समय 1970 से शुरू होते हुए 2000 तक

लगभग आ जाता है। आज लोगों के जीवन में इतनी जटिलतायें आ गयी है, जिसके कई खतरनाक परिणाम सामने आ रहे हैं और जीवन की व्यवहारिक सच्चाई को सब अपनी खुली आँखों से देखते हैं। आदमी का कल्पना की दुनिया में प्रवेश करना कठिन हो गया है। इन सब परिस्थितियों के बीच समकालीन कवियों के व्यक्तित्व की चीज सुनाई पड़ना स्वाभाविक है। इसकी साफ झलक 'रघुवीर सहाय' की कविता स्वाधीन व्यक्ति में दिख जाती है। प्रस्तुत है कविता का एक अंश–

"बहुत दिन हुए तब मैंने कहा था लिखूँगा नहीं
किसी के आदेश से
आज भी कहता हूँ
किन्तु आज पहले से कुछ अधिक बार
बिना कहे रहता हूँ
क्योंकि आज भाषा ही मेरी एक मुश्किल नहीं रही
एक मेरी मुश्किल है जनता
जिससे मुझे नफरत है सच्ची और निस्संग
जिस पर कि मेरा क्रोध बार–बार न्योछावर होता है।"[1]

समकालीन कविता संघर्ष करते आदमी की शक्ल है। उसका काव्य व्यापक स्तर पर जन सरोकार और मानवीय मूल्यों से जुड़ा है। वह परिवार से कटी हुई कविता न होकर जीवन का सही यथार्थ है। वह आदमी को पहचानने के लिए जीवन की जड़ों तक जाती है और उसका तटस्थ दृष्टि से सही–सही मूल्यांकन करती है। समकालीन कवियों ने अपने समय की विभक्त धाराओं को पहचान कर अपना रास्ता चुना है।

आधुनिक हिन्दी कविता के इतिहास में स्वतन्त्रता के बाद की कविता को, समकालीन कविता के नाम से जाना जाता है। समकालीन कविता की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की बात करें तो उसमें आपात काल का लागू होना साम्प्रदायिक विद्वेष दंगे फसाद और आतंकवाद का लगातार फैलाव रहा है। किसानों की आत्महत्या उदारीकरण के नाम पर लगातार देश में विदेशी कम्पनियों के हस्तक्षेप का बढ़ना। राजनीति और अपराध का गठबन्धन होना इत्यादि घटनाओं ने समकालीन कविता के युगधर्म का निर्धारण किया है।

समकालीन कवियों ने अपने समय की गम्भीर और दूरगामी घटनाओं को अपनी लेखनी में सम्मिलित किया है। ऐसी ही घटना है युद्ध की समस्या और उससे उपजी विद्रूपता और विसंगतियाँ। यह समस्या सदियों से चलती आ रही है और आज भी बनी हुई है। इस रूप में श्रीकान्त वर्मा की कविता 'युद्ध–नायक' को हम देख सकते हैं। 'युद्ध–नायक' बीसवीं शताब्दी की हिंसक राजनीति का ऐसा दस्तावेज है जिसमें इतिहास मिथक और समकालीन गतिविधियों का सचित्र रूपरेखा खिंचती है। प्रस्तुत है कविता का एक अंश–

"युद्ध कब शुरू हुआ था हिन्दचीन में?
हृदय में
दो करोड़ साठ लाख घाव लिये
वियेतनाम
बीसवीं शताब्दी के बीच
गुजरता है।

× × × × ×

शान्ति का अर्थ किस भाषा में शान्ति नहीं?
युद्ध का अर्थ किस भाषा में युद्ध नहीं?
इतना ही है
कि शान्ति याद्दाश्त के लिए
मोरपंख की तहत् किताबों के बीच रखी हुई है,

---

[1] सुरेश शर्मा (संपादक)– प्रतिनिधि कविताएँ (रघुवीर सहाय), राजकमल प्रकाशन, नेता जी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, तीसरा सं0– 2010, पृ0सं0– 47–48

युद्ध दस्तक दे रहा है,
पृथ्वी की एक–एक सड़क पर
भाग रहा है
मनुष्य
युद्ध पीछा कर रहा है।''[2]

शान्ति के लिए युद्ध आज की ही समस्या नहीं है यह सदियों से चली आ रही है, चाहे रामायण में हो या महाभारत काल में या आधुनिक युग में। प्रश्न उठता है कि क्या शांति के लिए युद्ध जरूरी है क्योंकि युद्ध से किसी भी प्रकार की शान्ति नहीं आती है। अलबत्ता मानवता शर्मसार होती है पर इस बात को कौन समझे आज भी हर देश के आगे एक युद्ध इंतजार कर रही है। आज मानव इतना आततायी हो गया है कि वह अपने साम्राज्य को बढ़ाने के लिए कुछ भी करने को तैयार है। समकालीन कवियों ने एक सजग प्रहरी बनकर उस समय भी आगाह किये थे और अपनी कविताओं के माध्यम से अब भी कर रहे हैं।

जो जीवन संघर्ष में मानव–मूल्यों और लोगों के दैनन्दिन जीवन के सरोकारों से सीधा जुड़ती है। इस सरोकार को आगे बढ़ाने में हिन्दी के समकालीन कवियों का अभिन्न योगदान है। जिसमें प्रमुख रूप से नागार्जुन, शमशेर, त्रिलोचन, रघुवीर सहाय, केदारनाथ सिंह, मुक्तिबोध, अज्ञेय इत्यादि बहुत सारे कवियों का महत्वपूर्ण भूमिका है। 'कविता और समय' नामक पुस्तक में 'अरुण कमल' लिखते हैं– ''समकालीन कविता से यहाँ आशय कवियों की उस पीड़ा की कविता से है जिसने अपनी आँख से निराला को नहीं देखा। मोटामोटी यह वह पीढ़ी है जो सन् सत्तर के बाद हिन्दी कविता में आयी और जिसकी स्वतंत्र पहचान सन् 80 के आस–पास या उसके बाद स्थिर हुई।[3]

समकालीन कविता का समय आजादी के दो दशक बाद का समय है। यहाँ पर देश आजाद हो गया है। आजादी के बाद राजसत्ता की बागडोर हमारे नेताओं ने उठा ली है। जनता ने सोचा कि हमारा राज होगा, सब खुशी और अमन चैन से जिएंगे पर ऐसा देखने को नहीं मिलता।

समकालीन कविता की एक खास विशेषता है कि वह अपने संघर्ष को अत्यन्त गहरे संवेदना के साथ उजागर करते हैं। समकालीन कविता के उदीयमान नक्षत्र या अग्रदूत के रूप सन्दर्भित किया जाय तो उसमें मुक्तिबोध का नाम सर्वप्रथम आता है। कविता के समय और संघर्ष को जितनी गहराई और गम्भीरता से मुक्तिबोध ने उजागर किया है उतना कोई विरला ही है। मुक्तिबोध कविता के साथ जीते हैं, मरते और खुद कविता बन जाते हैं अर्थात् वह अपने समय के साथ इतनी गहराई के संगुफित हो जाते हैं कि देखने को बनता है। शमशेर मुक्तिबोध के संदर्भ में लिखते हैं– ''जिन अनुभूतियों को इस कड़ियल कवि ने झेला है; उनमें लगातार जीकर उनकी अग्नि–परीक्षा देकर वह वहाँ आ खड़ा हुआ है, जहाँ वह प्रत्येक संघर्षशील देश और जनता का अपना हो गया है।''[4] मुक्तिबोध की कविता संग्रह 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' 1964 ई0 में प्रकाशित होती है। यह कविता संग्रह स्वतन्त्रता के पूर्व और पश्चात् की सामाजिक और राजनीति का जीवन्त चित्रण है। इस पुस्तक की भूमिका में शमशेर लिखते हैं– ''यह कविता देश के आधुनिक जन–इतिहास का, स्वतन्त्रता–पूर्व और पश्चात् का एक दहकता इस्पाती दस्तावेज है। इसमें अजब और अद्‌भुत रूप से व्यक्ति और जन का एकीकरण है। देश की धरती, हवा, आकाश, देश की सच्ची मुक्ति, आकांक्षी नए–नए इसमें फड़क रही है।''[5]

मुक्तिबोध एक सच्चे दूरदर्शी और प्रासंगिक कवि हैं। वह कल भी प्रासंगिक थे, आज भी हैं और आने वाले भविष्य में भी रहेंगे। सही अर्थों में देखा जाय तो आज भी हमारे समाज में अनैतिकता,

---

2 विश्वनाथ प्रसाद तिवारी (सम्पादक), प्रतिनिधि कविताएँ (श्रीकान्त वर्मा), राजकमल प्रकाशन, सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, तीसरा सं0–2005, पृ0सं0 88–90

3 अरूण कमल– 'कविता और समय', वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण– 2014, पृ0सं0– 19

4 गजानन माधव मुक्तिबोध– 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नयी दिल्ली, 19वाँ संस्करण– 2009, पृ0सं0–23

5 गजानन माधव मुक्तिबोध– 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नयी दिल्ली, 19वाँ संस्करण– 2009, पृ0सं0–27

घूसखोरी है, अवसरवादिता, भ्रष्टाचार है। समकालीन कवि समाज की इस विसंगति को साहित्य के माध्यम से समय–समय से व्यक्त करते आये हैं। ऐसी ही एक विता है– 'भूल–गलती' इस कविता में वे भूल–गलती या भ्रष्टाचार को किसी राजा या शहंशाह की तरह चित्रित करते हैं। जिसके दरबार में समाज के सभी वर्गों के लोग सिर झुकाकर खड़े हैं। दरबार में सत्य और इमान को जंजीरों में बांधकर लाया जाता है। कविता का एक अंश प्रस्तुत है–

''भूल–ग़लती
आज बैठी है जिरह बख़्तर पहनकर
तख़्त पर दिल के;
चमकते हैं खड़े हथियार उसके दूर तक,
आँखें चिलकती है नुकीले तेज़ पत्थर–सी;
खड़ी हैं सिर झुकाये
सब क़तारें
बेज़ुबाँ बेबस सलाम में,
अनगिनत खम्भों व मेहराबों–थमे
दरबारे–आम में।''[6]

समकालीन कवियों केदारनाथ सिंह का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। केदार जी कविता अत्यन्त सरल और सुबोध होती है। उनकी भी कविता जन सरोकार और मानव मूल्यों को अत्यन्त गहराई से उजागर करती है। उनकी कविता में राजनीति आती है। मगर धीमी आँच में अरूण कमल केदारनाथ सिंह जी के संबंध में लिखते हैं– ''शब्दों के स्वभाव और गुणों की ऐसी कद्र बहुत थोड़े–से समकालीन कवि कर पाते हैं। यह केदारनाथ सिंह की खासियत है, उनका मिजाज।''[7]

ब्रिटिश राज्य में अंग्रेज एक औपनिवेशिक शासक बनकर राज्य करते थे। उनका मकसद सिर्फ भारतीय जनता का आर्थिक शोषण या उनके चले जाने के बाद भारतवासियों को लगा कि अब हम अंग्रेजों के शोषण से मुक्त हो गये। लेकिन ऐसा नहीं हुआ उनके जगह पर बड़े सेठ साहूकार और उद्योगपतियों ने ले ली और वो जनता का शोषण करने लगे। शमशेर बहादुर सिंह की कविता 'बैल' इस वाकया को बयाँ करती है। 'बैल' एक प्रतीकात्मक और महत्वपूर्ण कविता है। इस कविता में बैल को शोषित वर्ग मेहनत–कश इंसान और उसके संघर्ष का जीवंत प्रतीक माना है। यह कविता समाज के दबे–कुचले और शोषित वर्ग के जीवन को दर्शाती है, जाये निरंतर मेहनत करने के बावजूद अभावों में जीता है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

''मैं वह गुट्ठल काली कड़ी कूबड़बाला बैल हूँ
जो अकेला धीरे–धीरे छः मील खींचकर ले जाते हुए
ठेले पर उपर तक लदा हुआ माल
स्टेशन से दूर गोदाम तक
चुपचाप धीरे–धीरे, आँखें बाहर को निकली हुई,
त्यौरी चढ़ी हुई, काँधे जोर लगाते हुए
सीना और छाती आगे को झुककर जोर लगाते हुए
रानें भरी हुईं गर्म पसीने से तर बतर।''[8]

समकालीन कविता के मूर्धन्य कहे जाने वाले नागार्जुन ने आम आदमी के सुख–दुख को इतनी आत्मीयता से अपनी कविता में उजागर किये हैं कि देखने को बनता है। इस सन्दर्भ में 'अरुण कमल' जी लिखते हैं– ''मिथिला से रुचिर भू–भाग से लेकर मुलुण्ड के अति सुदूर प्रदेश तक फैली हुई

---

6 गजानन माधव मुक्तिबोध– 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नयी दिल्ली, 19वाँ संस्करण– 2009, पृ0सं0–31

7 अरूण कमल– 'कविता और समय', वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण– 2014, पृ0सं0– 48

8 डॉ0 नामवर सिंह (सम्पादक), 'प्रतिनिधि कविताएँ', शमशेर बहादुर सिंह, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, 10वाँ सं0–2020, पृ0सं0–169

काव्य–भूमि, बिहार के सामन्ती उत्पीड़न से लेकर अमरीकी साम्राज्यवाद तक की शोषण–श्रृंखला, भूमिहीन मजदूरों के दुर्दम संघर्ष से लेकर जूलियन रोजनबर्ग की महान् संघर्ष–गाथा और नितान्त व्यक्तिगत जीवन–प्रसंगों से प्राप्त सुख–दुःख से लेकर बाकी सारे जगत् के सुख–दुख, मोतिया नेवले और मधुमती गाय तक के यह चोहद्दी है नागार्जुन के काव्य–महादेश की।''[9]

समकालीन कवियों की यह खासियत है कि उनकी कविताएँ सहज, सरल और सुबोध होती है। छोटे से शब्द और छोटे से वाक्य में बहुत गहरी बात कह जाते हैं। नागार्जुन की कविता 'शासन की बंदूक' का एक अंश प्रस्तुत है–

''खड़ी हो गई चाँपकर कंकालों की हूक
नभ में विपुल विराट–सी शासन की बंदूक
उस हिटलरी गुमान पर सभी रहे हैं चूक
जिसमें कानी हो गई शासन की बंदूक
बढ़ी बधिरता दसगुनी, बने विनोबा मूक
धन्य–धन्य वह, धन्य वह, शासन की बंदूक
सत्य एवं घायल हुआ, गई अहिंसा चूक
जहाँ–तहाँ दगने लगी शासन की बंदूक।''[10]

'शासन की बंदूक' कविता भारतीय लोकतंत्र में आपातकाल के समय से पूर्व की है। यह कविता तात्कालीन शासन के प्रति व्यंग्य है जिसमें जनता की संवेदनाओं को सत्तासीन लोगों तक पहुँचने का प्रयास है। बंगाल में सत्ता द्वारा जनता पर अमानुषी व्यवहार किए गए थे। सरकार के विरोध में उठाए गए स्वरों को बेरहमी से कुचला गया था। कवि का जनशक्ति में अगाध विश्वास है और ऐसी अराजक व्यवस्था पर अपने काव्यों के माध्यम से निर्मम प्रहार करते हैं। सत्ताधारी शासक की तुलना वे एक ऐसे तानाशाह से कर रहे हैं, जिसके नाम का पर्याय ही शोषण और दमन का जीवंत स्वरूप बन गया है। ऐसी दमनकारी सत्ता के ऊपर सभी थूककर उसके प्रति अपना असंतोष प्रकट कर रहे हैं। यह शासक के प्रति उपजी वितृष्णा के भी भाव हैं। जिसे वह सुनकर भी अनसुना कर दे रहा है। ऐसे आवेशित वातावरण में मानो सत्ता में बैठे लोगों के सुनने की शक्ति दस गुणा कम हो गयी है। अर्थात् विरोध का स्वर जनता की चीखें, उन्हें सुनाई नहीं दे रही है। यहाँ तक कि विनोबा भावे जैसे जनता के प्रतिनिधि भी मूक बन खड़े हैं।

साहित्य समाज और मूल्य के सन्दर्भ में 'डॉ0 पद्मजा घोड़पड़े' लिखते हैं– ''सामान्यतः यह माना जाता है कि मूल्यों का उद्भव और विकास व्यक्ति और समाज सन्तुलन के लिए सम्भावित सम्बन्धों को लेकर होता है। अतः साहित्य को सामाजिक जीवन के सन्दर्भ में देखने वाले लेखक सामान्यतः मूल्यों के प्रति अधिक चिन्तित रहते हैं।''[11]

सही मायने में मानव मूल्यों का विकास व्यक्ति और समाज के सन्तुलन से ही उपजती है और इस सन्तुलन को साधने का कार्य साहित्य करता है और इसमें प्रबुद्ध विचारक, लेखक, कवि, अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये साहित्यकार व्यक्ति और समाज का सही आईना प्रकट करते हैं। एक कवि अत्यन्त संवेदनशील प्राणी होता है। उसकी संवेदना का फलक बहुत व्यापक होता है, वह अपनी संवेदना प्रकट करने के लिए सदैव प्रकृति का सहारा लेता है, पर उसके केन्द्र में मानव और समाज ही रहता है।

कविता का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

''फूल को हक दो, वह हवा को प्यार करे,
ओस, धूप, रंगों से जितना भर सके, भरे,

---

9 अरूण कमल– 'कविता और समय', वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण– 2014, पृ0सं0– 31

10 डॉ0 नामवर सिंह (सम्पादक), 'प्रतिनिधि कविताएँ', (नागार्जुन), राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, 27वाँ सं0–2022, पृ0सं0–105

11 डॉ0 पद्मजा घोरपड़े– '1960 से 2009 तक समकालीन हिन्दी कविता की नयी सोच', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम सं0– 2013, पृ0सं0–18

सिहरे, काँपे, उभरे,
और कभी किसी एक अँखुए की आहत पर
पंखड़ी–पंखड़ी सारी आयु नाप कर दे दे–
किसी एक अनदेखे–अनजाने क्षण को
नये फूलों को लिए।

× × × × ×

माटी को हक़ दो– वह भींजे, सरसों, फूटे अँखुआये,
इन मेड़ों से लेकर उन मेड़ों तक छाये,
और कभी हारे,
(यदि हारे)
तब भी उसके माथे पर हिले,
और हिले,
और उठती ही जाये–
यह दूब की पताका
नये मानव के लिये।'[12]

समकालीन कविता का वैशिष्ट्य इसी बात से देखा जा सकता है कि– ये अपने समय की प्रत्येक परिस्थिति तथा व्यक्ति के मन का यथार्थ शब्दों में वर्णन करती है।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि समकालीन कवियों का जन सरोकार अत्यन्त गहरे स्तर से जुड़ा है। तत्कालीन समाज का ऐसा कोई पहलू नहीं है जो समकालीन कवियों की पैनी दृष्टि से बच पाया हो। समकालीन कविता की सबसे मुख्य और महत्त्वपूर्ण विशेषता विषय की व्यापकता ही है। दूषित राजनीतिक वातावरण का चित्रण करना भी इन कवियों के उद्देश्य में सम्मिलित है। समाज में जागरूकता लाने, जन–साधारण को प्रेरित करने में भी समकालीन कवियों ने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मानवीय–मूल्यों के विघटन के प्रति भी इन कवियों ने तत्परता दिखाई और जन–साधारण को भारतीय संस्कारों के मूल्यों की ओर लौटने का आग्रह किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. सुरेश शर्मा (संपादक)– प्रतिनिधि कविताएँ (रघुवीर सहाय), राजकमल प्रकाशन, नेता जी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, तीसरा सं0– 2010, पृ0सं0– 47–48
2. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी (सम्पादक), प्रतिनिधि कविताएँ (श्रीकान्त वर्मा), राजकमल प्रकाशन, सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, तीसरा सं0–2005, पृ0सं0 88–90
3. अरूण कमल– 'कविता और समय', वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण– 2014, पृ0सं0– 19
4. गजानन माधव मुक्तिबोध– 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नयी दिल्ली, 19वाँ संस्करण– 2009, पृ0सं0–23
5. गजानन माधव मुक्तिबोध– 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नयी दिल्ली, 19वाँ संस्करण– 2009, पृ0सं0–27
6. गजानन माधव मुक्तिबोध– 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नयी दिल्ली, 19वाँ संस्करण– 2009, पृ0सं0–31
7. अरूण कमल– 'कविता और समय', वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण– 2014, पृ0सं0– 48
8. डॉ0 नामवर सिंह (सम्पादक), 'प्रतिनिधि कविताएँ', शमशेर बहादुर सिंह, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, 10वाँ सं0–2020, पृ0सं0–169

[12] जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी, विजयदेव नारायण साही (सम्पादक), नयी कविता (खण्ड तीन) काव्य पक्ष, लोकभारती प्रकाशन, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद– 211001, संस्करण– 2016, पृ0सं0– 75–76

9. अरूण कमल– 'कविता और समय', वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण– 2014, पृ0सं0– 31
10. डॉ0 नामवर सिंह (सम्पादक), 'प्रतिनिधि कविताएँ', (नागार्जुन), राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, 27वाँ सं0–2022, पृ0सं0–105
11. डॉ0 पद्मजा घोरपड़े– '1960 से 2009 तक समकालीन हिन्दी कविता की नयी सोच', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम सं0– 2013, पृ0सं0–18
12. जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी, विजयदेव नारायण साही (सम्पादक), नयी कविता (खण्ड तीन) काव्य पक्ष, लोकभारती प्रकाशन, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद– 211001, संस्करण– 2016, पृ0सं0– 75–76

ग्राम+पोस्ट– अखोप,
जिला– बलिया, उत्तर प्रदेश कोड– 221715
Email Id: govindkumarsitans@gmail.com
Mob. – 9696045154

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 201-203
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

बुद्धचरित में प्रतिपादित चार आर्यसत्य

डॉ. अश्विनी कुमार
सहायक प्रोफेसर, अतिथि संकाय, संस्कृत विभाग,
हि. प्र. विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय केन्द्र, धर्मशाला।

बुद्धचरित महाकाव्य महाकवि अश्वघोष द्वारा लिखित एक ऐतिहासिक एवं दार्शनिक ग्रन्थ है, जिसमें भगवान् बुद्ध के चरित्र वर्णन के साथ-साथ बौद्ध दार्शनिक सिद्धान्तों की भी व्याख्या की गई है। अश्वघोष स्वयं बौद्ध धर्मानुयायी थे। बुद्धचरित 28 सर्गों में विभक्त है। यह महाकाव्य दार्शनिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

बुद्धचरित में महाकवि अश्वघोष ने चार आर्यसत्यों का सुन्दर ढंग से विवेचन किया है। भगवान् बुद्ध को इन्हीं चार आर्यसत्यों का अनुसन्धान करके ज्ञान की प्राप्ति हुई थी। इनका ज्ञान उसी को हो सकता है जिसका आचरण शुद्ध है। धम्मपद में भी लिखा है कि आर्यसत्य का अभिदर्शन प्रज्ञावान पुरुष को ही होता है।[1] मज्झिमनिकाय में भी वर्णन प्राप्त होता है कि आर्य लोग ही आर्यसत्य का ज्ञान प्राप्त करते हैं। अतएव इसे आर्यसत्य कहा जाता है।[2] चार आर्यसत्य निम्नलिखित हैं - दुःख, दुःख समुदय, दुःख निरोध, दुःखनिरोधगामिनी प्रतिपद्।[3]

संसार में सर्वत्र दुःख का साम्राज्य व्याप्त है। बुद्धचरित में वर्णन आता है कि प्रथम आर्यसत्य दुःख के निवारण के लिए भगवान् बुद्ध ने भिक्षुओं के समक्ष निम्न प्रकार से व्याख्या की है -

हे भिक्षुगण! दुःख प्रथम आर्यसत्य है। जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा तथा रोग सब दुःख हैं। अप्रिय वस्तु के साथ संयोग तथा प्रिय के साथ वियोग भी दुःख है। ईप्सित वस्तु का न मिलना भी दुःख है।[4] इसके साथ ही पञ्चस्कन्ध को भी दुःख ही बताया गया है। अश्वघोष द्वारा बुद्धचरित में प्रतिपादित इस प्रथम आर्यसत्य 'दुःख' तत्व की पुष्टि धम्मपद में होती है।[5] संसार के प्रत्येक कार्य और कारण में दुःख की सत्ता व्याप्त है। जिस द्रव्य के लिए मानवमात्र परिश्रम करता है, उसकी प्राप्ति नितान्त कष्टकारक है। अर्थ के उपार्जन, रक्षण तथा व्यय - इन तीनों में दुःख है। तब अर्थ को सुखकारक कैसे कहा जा सकता है। अग्नि का छोटे से छोटा कण भी दहनशील ही होता है_ शीतल नहीं हो सकता। इसी तरह अहंभाव का एक सूक्ष्म अंश भी दुःख ही होता है।[6]

दूसरा आर्यसत्य 'दुःख समुदय' है। बौद्ध दर्शन में समुदय का अर्थ कारण है। बिना कारण के कार्य की उत्पत्ति नहीं होती है। जब दुःख कार्य है तब उसका कारण भी अवश्य ही होगा। बुद्धचरित में अज्ञान, कर्म एवं तृष्णा की व्याख्या करते हुए तृष्णा को ही दुःख का मुख्य हेतु कहा गया है। भगवान् बुद्ध ने भिक्षुओं के सामने द्वितीय आर्यसत्य 'दुःख समुदय' की व्याख्या करते हुए बताया है कि हे भिक्षुगण! दुःख समुदय दूसरा आर्यसत्य है। दुःख का वास्तविक हेतु तृष्णा[7] है, जो बार-बार प्राणियों को उत्पन्न करती है, विषयों के राग से युक्त है तथा उन विषयों का अभिनन्दन करने वाली है। यहाँ और वहाँ सर्वत्र अपनी तृप्ति खोजती रहती है। यह तृष्णा तीन प्रकार की है – कामतृष्णा, भवतृष्णा तथा विभवतृष्णा।[8]

कामतृष्णा से अभिप्राय उस तृष्णा से है जो अनेक प्रकार के विषयों की कामना करती है। काम सभी दुःखों का कारण है। जब तक तृष्णा रहती है तब तक चित्त अत्यन्त दुःखी रहता है। कामभोग से कभी तृप्ति नहीं होती, जैसे प्रदीप्त अग्नि को हवि से। जैसे-जैसे काम सुख की वृद्धि होती है, वैसे-वैसे विषयों की वृद्धि होती है।[9] पृथ्वी, जल, काल और बीज अंकुर के कारण हैं। इसी तरह काम और राग से उत्पन्न कर्म दुःख के कारण हैं।[10]

भव का अर्थ है - संसार। इस संसार की सत्ता बनाए रखने वाली तृष्णा भव तृष्णा है। इस संसार की स्थिति के कारण हम हैं। हमारी तृष्णा ही इस संसार को उत्पन्न किए हुए है। संसार के रहने पर ही हमारी सुख वासना चरितार्थ होती है। काम और राग से उत्पन्न दोष सृष्टि का अविनाशी बीज है तथा उत्तम, मध्यम और अधम आदि भेद का कारण कर्म है।[11]

विभवतृष्णा का अर्थ है - उच्छेद या संसार का नाश। जिस प्रकार इस संसार के स्थायित्व की कामना दुःखद है, उसी प्रकार इसके उच्छेद की आकांक्षा भी दुःखपूर्ण ही है। दोष के क्षय होने पर यह भव-चक्र निश्चय ही रुक जाता है। बीज के अभाव में अंकुर कहाँ से होगा।[12] इस तृष्णा को समस्त संसार के अपुण्य कर्मों एवं समग्र विद्रोहों की जननी मानना चाहिए। समस्त पाप कर्मों का निदान यही तृष्णा है।

तीसरा आर्यसत्य 'दुःख निरोध' है। निरोध से अभिप्राय नाश से है अर्थात् दुःख का नाश भी होता है। बुद्धचरित में उल्लेख आता है कि भगवान् बुद्ध भिक्षुओं के सामने 'दुःख निरोध' का उपदेश करते हुए कहते हैं कि हे भिक्षुगण! निरोध वह है जिसमें जन्म, मृत्यु, जरा आदि नहीं है तथा जिसका आदि-अन्त नहीं है। जिसमें न सुख है, न दुःख है और न सृष्टि है, वही अक्षर है।[13] दुःख के कारण का नाश होना दुःख निरोध है, क्योंकि तृष्णा नाश से उपादान का निरोध होता है जिससे मन का, भव से जन्म का, जरा का तथा मरण इत्यादि का निरोध हो जाता है।[14] जिसके हृदय में छन्द राग नहीं है वह सभी दोषों से मुक्त हो जाता है। दुःखों के उपशमन से ही सम्पूर्ण अनुशयों का अभाव होता हैं। मूल के उच्छिन्न हो जाने पर जैसे विराट वृक्ष की स्थिति नहीं रहती है, उसी प्रकार तृष्णा रूपी मूल के नष्ट होने पर जरा-मरण इत्यादि के दुःख अभिभूत नहीं करते।[15] इसलिए साधक को आर्यसत्य 'दुःखनिरोध' का साक्षात्कार करना चाहिए।

चौथा आर्यसत्य 'दुःख-निरोधगामिनी प्रतिपद्' है। प्रतिपद् का अर्थ मार्ग है अर्थात् दुः-निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग ही 'दुःख-निरोधगामिनी प्रतिपद्' है। गन्तव्य स्थान यदि है तो उसका मार्ग भी अवश्य होगा। निवार्ण प्रत्येक प्राणी का गन्तव्य स्थान है, तो उसके लिए मार्ग की कल्पना भी न्याय संगत है। इस मार्ग का नाम 'अष्टांगिक मार्ग' है। भगवान् बुद्ध ने 'दुःख-निरोधगामिनी प्रतिपद्', नामक चतुर्थ आर्यसत्य को 'अष्टांगिक मार्ग' कहा है।[16] अष्टांगिक मार्ग ही बुद्ध की साधना एवं दर्शन का आधार स्तम्भ है। यह उनके उपदेशों का केन्द्र बिन्दु है। बुद्धचरित में बताया गया है कि

दुःख को जानना चाहिए। दुःख के हेतु को त्यागना चाहिए। निरोध का अनुभव करना चाहिए तथा मार्ग की भावना को जानना चाहिए।[17]

सारांश में कहा जा सकता है कि भगवान् बुद्ध द्वारा प्रतिपादित इन चार आर्यसत्यों को जो व्यक्ति अच्छी प्रकार से समझ लेगा और उनके बताए हुए मार्ग पर चलेगा तो निश्चय ही वह निर्वाण के पथ पर आरुढ़ हो जाएगा। चार आर्यसत्यों का ज्ञान हो जाने पर मनुष्य इस जीवन में संसार के प्रपञ्चों से छूटकर अपना जीवन सफल बना सकता है।

डॉ. अश्विनी कुमार
सहायक प्रोफेसर, अतिथि संकाय, संस्कृत विभाग,
हि. प्र. विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय केन्द्र, धर्मशाला।
ईमेल – ardhimanadi@gmail.com
मोबइल नंबर – 7018401044

---

1. 'चतारि अरियसच्चानि सम्मपञ्ञाय'। धम्मपद, 1/190
2. अरिया इमानि परिविज्झन्ति, तस्मा अरिय सच्चानि ति बुच्चन्ती। मज्झिमनिकाय, पृ., 373
3. बुद्धचर्या, पृ. , 22-23
4. जन्ममृत्युजराव्याधिसंयोगविप्रयोगजैः।
   दुःखैरेते ध्रुवं सर्वे पीडयन्ते भुवि मानवाः॥, बुद्धचरित, 15/47
5. को नु हासो किमानन्दोनिच्चं पज्जलिते सति।, धम्मपद, गाथा-146
6. अपि वह्निकणः सूक्ष्मोदाहात्मैव न शीतलः।
   दुःखात्मैव तथा चैकोऽहंभाचस्य कणो मतः॥, बुद्धचरित, 15/48
7. तृष्णा एव दुःखस्य मुख्यः हेतुः।, वही, 12/23
8. वही, 16/57
9. हूयते पूज्यते वह्निमन्त्रोच्चारणपूर्वकम्। सकामेनैव ते कामा वर्धान्तेऽतो जहौ मुने॥ वही, 16/57
10. भूवारिकालबीजानि चाङ्कुरस्य हि कारणम्। कामरागोद्भवं कर्म तथा दुःखस्य कारणम्॥ वही, 15/49
11. कामरागोद्भवो दोषः सर्गस्य बीजमव्ययम्। उत्तमाधममध्यानां भेदे कर्म हि कारणम्॥ वही, 15/50
12. दोषक्षये ध्रुवे त्वेतद्भवचक्रं विरम्यते। कर्मक्षये दुःखनाशो बीजाभावेऽङ्कुरः कुतः॥ वही, 15/51
13. स निरोधो न यत्रस्ति जन्ममृत्युजरादिकम्। नाद्यन्तं न सुखं दुःखं न सर्गस्म्वक्षरो हि सः॥ वही, 15/52
14. वही, 14/80
15. वही, 14/48
16. महावग्ग, भाग-10, पृ. 3
17. वही, 15/54

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 204-207
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

बदलते भू-राजनीतिक परिदृश्य में हिंद महासागर : भारत की भूमिका का विश्लेषण

आशीष कुमार
शोधार्थी,
रक्षा अध्ययन विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

सारांश - यह अध्ययन हिंद महासागर में हो रहे भू-राजनीतिक परिवर्तन के कारण हिंद महासागर के बढ़ते सामरिक, आर्थिक एवं सुरक्षा महत्व और उसमें भारत की भूमिका का विश्लेषण करता है। वर्तमान परिदृश्य में हिंद महासागर वैश्विक प्रतिस्पर्धा का केंद्र बन चुका है। व्यापार, ऊर्जा, समुद्री मार्ग ने इसे अत्यंत महत्वपूर्ण महासागर बना दिया है। हिंद महासागर में अमेरिकी सैन्य उपस्थिति और चीन की बढ़ती सैन्य व सामरिक स्थिति ने भू-राजनीतिक परिदृश्य में महत्वपूर्ण बदलाव किए हैं साथ ही भारत भी इस क्षेत्र में 'नेट सिक्योरिटी प्रोवाइडर' की भूमिका निभा रहा है, जिससे वह स्वयं की सुरक्षा ही नहीं अपितु समुद्री सुरक्षा, क्षेत्रीय सुरक्षा व समुद्री डकैती विरोधी अभियान में भी योगदान दे रहा है।

पिछले दशकों तक अटलांटिक महासागर क्षेत्र (अमेरिका और यूरोप) विश्व राजनीति का केंद्र बिंदु रहा है लेकिन वर्तमान समय में व्यापार और शक्ति का केंद्र हिंद और प्रशांत महासागर क्षेत्र है।

चीन के सैन्य व आर्थिक हित, नए गुटों का उदय, आर्थिक संसाधनों की होड़, समुद्री मार्गों की महत्वता एवं सामरिक स्थिति ने राजनीति का स्वरूप बदल दिया है। हिंद महासागर अब सैन्यीकरण की तरफ बढ़ रहा है, आज विश्व की सबसे बड़ी नौ सेनाओं (अमेरिका,चीन, फ्रांस, ब्रिटेन,) की उपस्थिति हिंद महासागर में है। इस प्रतिस्पर्धा ने हिंद महासागर में भू – राजनीतिक के संतुलन में व्यवधान उत्पन्न कर दिए है।

इस शोध का मुख्य उद्देश्य है - हिंद महासागर के बदलते भू-राजनीतिक महत्व का अध्ययन करना -

- बदलते शक्ति संतुलन का विश्लेषण
- भारत की सामरिक एवं कूटनीतिक भूमिका का विश्लेषण एवं मूल्यांकन

यह अध्ययन मुख्यतः वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। शोध में द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है जिनमें शोध पत्र, पुस्तकें, सरकारी रिपोर्ट, विदेश मंत्रालय व रक्षा मंत्रालय की रिपोर्ट, अन्य अंतरराष्ट्रीय संगठनों की रिपोर्ट शामिल है।

प्रमुख शब्द - हिंद महासागर, भू-राजनीतिक, सुरक्षा, शक्ति संतुलन, भारत, चीन, अमेरिका

परिचय - वर्तमान परिदृश्य में वैश्विक राजनीति का केंद्र धीरे-धीरे अटलांटिक क्षेत्र से हिंद व प्रशांत क्षेत्र की ओर स्थानांतरित हो रहा है, जिसमें हिंद महासागर की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। 21वीं शताब्दी में राष्ट्रों की आर्थिक उन्नति, सुरक्षा और विकास का यह प्रमुख आधार है। विश्व व्यापार का लगभग 80% तेल हिंद महासागर के सामुद्रिक जलमार्गों से होकर जाता है। भारत का लगभग 95% व्यापार समुद्री मार्गों से होता है हिंद महासागर की लंबाई 10,400 किलोमीटर और चौड़ाई 9600 किलोमीटर है। भौगोलिक रूप से हिंद महासागर के मध्य एवं उसके तटीय क्षेत्र में 47 राष्ट्र बसे हुए हैं।

हिंद महासागर के रणनीतिक महत्व को समझने के लिए उसके समुद्री मार्गों और भौगोलिक विस्तार को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है, हिंद महासागर पूर्व से पश्चिम दिशा में ऑस्ट्रेलिया से अफ्रीका तक, उत्तर से दक्षिण में यह एशिया से दक्षिणी महासागर तक फैला हुआ है। विश्व की कुल जनसंख्या का 30 प्रतिशत से अधिक भाग इस क्षेत्र में निवास करता है।

इसे विश्व के अन्य हिस्सों से जोड़ने वाले प्रमुख जलमार्ग स्वेज नहर, फारस की खाड़ी, केप ऑफ गुडहोप और मलक्का जलडमरूमध्य हैं। हिंद महासागर में कच्चे माल के विशाल भंडार, आवागमन एवं संचार व्यवस्था और विश्व का 80% से अधिक व्यापार महाशक्तियों के बीच प्रतिस्पर्धा का मुख्य कारण है। इसी क्षेत्र में विश्व का 40% तेल, 90% रबर, 70% टिन, 80% सोना और अन्य खनिज भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसकी समुद्री सतह पर उपलब्ध ऊर्जा स्रोतों की कोई कमी नहीं हैं। इसीलिए हिंद महासागर विश्व की अर्थव्यवस्था, राजनीति और सामरिक वातावरण को प्रभावित कर रहा हैं। हिंद महासागर सैन्य शक्ति, ऊर्जा सुरक्षा, संसाधन प्रतिस्पर्धा और कूटनीतिक प्रभाव का केंद्र बन चुका है।

'**ए0 टी0 महान -** ने समुद्री शक्ति को राष्ट्रीय शक्ति का महत्वपूर्ण आधार माना था। जिसके अनुसार जिस देश की समुद्र पर मजबूत पकड़ होती है, वह वैश्विक राजनीति में प्रभावशाली भूमिका अदा कर सकता है।' यह विचार आज भी हिंद महासागर क्षेत्र की राजनीति में प्रासंगिक है।

भारत की दृष्टि से हिंद महासागर का महत्व और भी अधिक महत्वपूर्ण है। भौगोलिक दृष्टिकोण से हिंद महासागर में भारतीय प्रायद्वीप की केंद्रीय स्थिति, भारत का विशाल समुद्री तट, लक्षद्वीप और अंडमान निकोबार द्वीप समूह उसे हिंद महासागर में विशिष्ट सामरिक स्थिति प्रदान करते हैं। भारत का 95 प्रतिशत व्यापार हिंद महासागर से होता है अतः भारत की आर्थिक, ऊर्जा और राष्ट्रीय सुरक्षा सीधे-सीधे हिंद महासागर की स्थिरता से जुड़ी हुई है।

हिंद महासागर में बदलता भू-राजनीतिक परिदृश्य - हिंद महासागर में चीन की बढ़ती घेराबंदी, भारत का 'नेट सिक्योरिटी प्रोवाइडर' की भूमिका व नए गुटों के उदय ने हिंद महासागर में अमेरिकी एक ध्रुवीय व्यवस्था को खत्म कर दिया है जिससे हिंद महासागर में भू-राजनीतिक बदलाव आया है। संसाधनों की होड, सामरिक चोक पॉइंट, समुद्री मार्ग ने इस बदलाव में अहम भूमिका का निर्वहन किया है।

यहाँ हिंद महासागर में हो रहे भू-राजनीतिक बदलाव के प्रमुख बिंदु निम्न है

1. अमेरिका का हिंद महासागर में सैन्यीकरण - अमेरिका द्वारा हिंद महासागर का सैन्यीकरण शक्ति रिक्तता और शक्ति प्रतिस्पर्धा का परिणाम है। एशिया व अफ्रीका के देशों में हो रही हलचल व विश्व के आर्थिक व्यापार पर भी नजर और अमेरिका की एकल महाशक्ति की अवधारणा का परिणाम है। वर्तमान समय में चीन के बढ़ते प्रभाव को रोकने के लिए भी अपनी सक्रियता अधिक तेज कर दी है। डियागो गार्सिया हिंद महासागर में अमेरिका का एक मुख्य सैन्य आधार है यह चागोस द्वीप समूह का हिस्सा है इस सैन्य अड्डे पर अमेरिका द्वारा बी-52 बमवर्षक, टोही विमान और परिवहन विमान एवं विमान वाहक पोत, पनडुब्बी आदि की तैनाती है, जो अमेरिका को चीन, भारत व अन्य देशों पर नजर रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। अमेरिका की हिंद महासागर नीति का उद्देश्य अपने

रणनीतिक हितों की रक्षा के साथ साथ इस क्षेत्र में समुद्री मार्गों की सुरक्षा, ऊर्जा आपूर्ति की निरंतरता जैसी चुनौतियों से निपटना है। इसी लिए हिंद महासागर में बढ़ती अमेरिकी सैन्य उपस्थिति शक्ति संतुलन और चीन – अमेरिका प्रतिस्पर्धा के लिए भी महत्वपूर्ण है।

2. चीन की बढ़ती घेराबंदी - हिंद महासागर में चीन के बढ़ते रुझान ने भारत की चिंता को अत्यधिक बढ़ा दिया है । चीन 'बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव' (BRI) के तहत हिंद महासागर में भी अपनी उपस्थिति मजबूत कर रहा है इसके तहत वह पाकिस्तान, श्रीलंका, म्यांमार, जिबूती आदि में अपने सैन्य अड्डे विकसित कर रहा है। स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स के तहत चीन द्वारा भारत की सामरिक घेराबंदी की जा रही है जो भारतीय सुरक्षा के लिए एक चुनौती है। चीन दक्षिण चीन सागर के बाद अब हिंद महासागर में अपनी पनडुब्बियों और युद्धपोतों की गश्त बढ़ा रहा है । चीन के लिए हिंद महासागर का अत्यधिक महत्व है उसका 80 प्रतिशत से अधिक व्यापार हिंद महासागर से होता है, इसी कारण से चीन हिंद महासागर में अपनी सामरिक उपस्थिति को अत्यधिक सुदृढ़ करना चाहता है। हिंद महासागर में उपलब्ध आर्थिक संसाधनो के भंडार ने उसे हिंद महासागर में रुचि लेने के लिए मजबूर किया है। चीन को बढ़ती घेराबंदी को केवल सैन्य घेराबंदी के रूप में देखना उचित नहीं होगा इसमें आर्थिक, कूटनीतिक, और समुद्री अवसंरचना के माध्यम भी शामिल है इस प्रकार चीन और भारत के मध्य हिंद महासागर रणनीतिक प्रतिस्पर्धा का केंद्र बन गया है।

3. क्वाड का उदय - हिंद महासागर में चीन के बढ़ते प्रभाव को संतुलित करने के लिए क्वाड QUAD (भारत, यूएसए, जापान और ऑस्ट्रेलिया) का उदय हुआ, जो स्वतंत्र और खुले हिंद - प्रशांत का समर्थन करता है। क्वाड के प्रमुख कार्यों में समुद्री सुरक्षा, रणनीतिक संतुलन, आर्थिक सहयोग और तकनीकी विकास, आपदा प्रबंधन और स्वास्थ्य व संयुक्त सैन्य अभ्यास (मालाबार) शामिल हैं। भारत के लिए क्वाड का एक विशेष महत्व है क्योंकि इससे हिंद महासागर और हिंद - प्रशांत क्षेत्र में भारत की रणनीतिक भूमिका और समुद्री सुरक्षा को एक मजबूत आधार मिलता है।

4. भारत – भारत हिंद महासागर की केंद्रीय स्थिति एवं तटीय राष्ट्रों में सबसे बडा राष्ट्र भी है। इसी कारण से भारत ने हिंद महासागर के बदलते भू-राजनीतिक परिदृश्य में खुद को एक प्रमुख क्षेत्रीय शक्ति के रूप में उभारा है ।

अमेरिका-चीन प्रतिस्पर्धा, चीन की बढ़ती घेराबंदी व इंडो - पैसिफिक की सामरिक महत्वता के बीच भारत समुद्री सुरक्षा, क्षेत्रीय स्थिरता और मुक्त तथा नियम आधारित समुद्री व्यवस्था को बढ़ावा दे रहा है। क्वाड, सागर, IORA, जैसे मंचों के जरिए भारत हिंद महासागर क्षेत्रीय सहयोग को मजबूत कर रहा है। भारत इस क्षेत्र में नेतृत्वकर्ता और अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठा रहा है। हिंद महासागर में भारत की भूमिका एक 'नेट सिक्योरिटी प्रोवाइडर' और प्रथम प्रत्युत्तरकर्ता की है।

निष्कर्ष - बदलते भू-राजनीतिक परिदृश्य में हिंद महासागर शक्ति प्रतिस्पर्धा, वैश्विक शक्ति संतुलन व सामरिक शक्ति का केंद्र बन चुका है। सामरिक जलमार्ग, आर्थिक संसाधन, ऊर्जा आपूर्ति ने इसे विश्व राजनीति के केंद्र का प्रमुख आधार बना दिया है। अमेरिका की सक्रियता और चीन की बढ़ती घेराबंदी, क्वाड का उदय और क्षेत्रीय देशों की बदलती प्राथमिकताएं एवं उनके राष्ट्रीय हित हिंद महासागर को शक्ति प्रतिस्पर्धा के नए दौर में ले जा रहे है। इन्हीं कारणों से भारत की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

बदलते विश्व परिदृश्य में आज भारत हिंद महासागर क्षेत्र का एक सामुद्रिक संपन्न देश बन चुका है। इसी कारण से अमेरिका जैसे देश अपने सामुद्रिक संबंधों तथा नौसैनिक सहयोग को भारत के साथ काफी हद तक बढ़ा रहे हैं। भारत की भूमिका हिंद महासागर में क्षेत्रीय सहयोगों को विभिन्न आर्थिक संगठनों के माध्यम से अधिक से अधिक बढ़ाने की आवश्यकता है। इससे बाहरी शक्तियां की भूमिका को सीमित किया जा सकता है तथा क्षेत्रीय

विवादों को शांतिपूर्ण तरीके से हल भी किया जा सकता है। अपनी केंद्रीय भौगोलिक की स्थिति और नौ सैन्य क्षमता के कारण भारत इस क्षेत्र में स्थिरता और शक्ति संतुलन का कारक बन सकता है। 'नेट सिक्योरिटी प्रोवाइडर' दृष्टिकोण ये है दर्शाता की भारत अब केबल राष्ट्रीय हितों की रक्षा तक सीमित नहीं है बल्कि वह साझा विकास, सहयोग और सामूहिक सुरक्षा की अवधारणा को आगे बढ़ाना चाहता है। अमेरिका की हिंद महासागर में सुदृढ़ स्थिति, चीन के हिंद महासागर में बढ़ती घेराबंदी, संसाधनों की प्रतिस्पर्धा ने भारत के समक्ष चुनौती खड़ी की है। भारत को सुदृढ़ नौसेना, संतुलित कूटनीति, क्षेत्रीय सहयोग के माध्यम से हिंद महासागर में एक निर्णायक राष्ट्र और प्रथम प्रत्युतकर्ता की भूमिका अदा करनी होगी।

संदर्भ –

1. Darshana M. Baruah, The Contest for the Indian Ocean: And the Making of a New World Order, 2024, Yale University Press, New Haven.
2. K. M. Panikkar, India and the Indian Ocean: An Essay on the Influence of Sea Power on Indian History, 1945, George Allen & Unwin, London.
3. हरिशरण और हर्ष कुमार सिन्हा, हिन्द महासागर : चुनौतियाँ एवं विकल्प, 2018, प्रत्यूष पब्लिकेशन, दिल्ली.
4. Robert D. Kaplan, Monsoon: The Indian Ocean and the Battle for Supremacy in the 21st Century, 2010, Random House, New York.
5. सिवाच आर. एस, कुमार सतीश, हिन्द महासागर एवम् भारत की सामुद्रिक सुरक्षा, 2015 ,श्री साईं प्रिंटोग्राफरज, न्यू दिल्ली.
6. अनिल कुमार सिंह, भारत की सुरक्षा चिंताएँ, 2007, मानक पब्लिकेशन प्रा. लि. दिल्ली.
7. https://www.vifindia.org/article/2026/january/15/Evolving-Geopolitical-Balance-in-the-Indo-Pacific.
8. https://www.orfonline.org/hindi/expert-speak/-36-1
9. https://icwa.in/show_content.php?lang=2&level=2&ls_id=4396&lid=3272
10. https://www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/IORA_new.pdf?utm_source=chatgpt.com
11. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2241628&lang=1&reg=6&utm_source=chatgpt.com
12. https://www.tandfonline.com/doi/abs/10.1080/09733159.2017.1410937

पता: ग्राम- दुल्हापुर, पोस्ट – ईसई गोपालपुर, जिला – मैनपुरी, उत्तर प्रदेश
पिन कोड: 205263
मोबाइल नंबर: 7906838142

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 208-211
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारत छोड़ो आन्दोलनः पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार के सन्दर्भ में।

रामजीत राम
सहायक अध्यापक,
इण्टर कॉलेज, खालिसपुर
एम0ए0 आधुनिक इतिहास, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सारांश

अगस्त क्रान्ति के नाम से जाने–जाने वाले भारत छोड़ो आन्दोलन जिसने अंग्रेजो की चूले हिला दी थी। यह आन्दोलन भारत की आजादी और व्यवस्था परिवर्तन का आखिरी धक्का साबित हुआ। अंग्रेज अब भारत को आजादी देने पर विचार करने के लिए मजबूर हुए। महात्मा गाँधी ने इस आन्दोलन को शुरू करने से ठीक पहले अपने ही पार्टी के कुछ लोगों के असहयोग की प्रतिक्रिया में बर्धा कांग्रेस कमेटी की बैठक में कहा था ''अगर कांग्रेस मेरा साथ नहीं देगी तो मैं कांग्रेस छोड़ दूँगा और देश के बालू से एक ऐसा आन्दोलन पैदा करूँगा जो काग्रेस पर भारी पडेगा। इस निर्णायक आन्दोलन का जब नेतृत्व किया जा रहा था उससे पूर्व ही पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार वासियों ने इसकी पृष्ठभूमि तैयार कर दी थी। परिणाम रूवरूप आन्दोलन शुरू होने के पश्चात तो पूर्वी उत्तर प्रदेश में गोरखपुर, बलिया, वाराणसी, गाजीपुर, इलाहाबाद, मिर्जापुर, जौनपुर, आजमगढ़, तथा बिहार में आरा, पटना, बेगूसराय, चम्पारन आदि स्थानो पर इसका असर व्यापक रूप से देखने को मिला।

मुख्य शब्द– भारत छोड़ो, अंग्रेज, आजादी, स्वराज, उपनिवेश, अगस्त क्रान्ति।

1942 का भारत छोड़ो आन्दोलन की आहट विभिन्न आन्दोलनों एवं विद्रोहों के माध्यम से सुनाई देने लगी थी। भारत में नौ सैनिक विद्रोह हो चुका था उसी समय विश्व दो ध्रुवों में बट चुका था। इसी सयम भारत भी उबल रहा था और सदियों पुरानी दासता की बेड़ियो को तोड़ डालने के लिए मचल रहा था। ऐसे वक्त में विश्व युद्ध में ब्रिटेन को भारत के समर्थन के बदले में औपनिवेशिक राज्य का दर्जा देने के प्रस्ताव के साथ स्टेफर्ट क्रिस्प का भारत आगमन हुआ।[1] ब्रिटेन ने महारानी के निष्ठा के बदले में भारत को डोमिनियन स्टेट देने का प्रस्ताव किया। लेकिन उनको इस बात का अहसास नहीं था कि शहीद भगत सिंह और चन्द्रशेखर आजाद जैसे क्रान्तिकारियों ने देश को उपनिवेश बनता दखने के लिए अपने जीवन का बलिदान नहीं किया था। देश भर के स्वतंता सेनानियों की एक ही मांग थी और वह थी पूर्णस्वराज। इस लिए 8 अगस्त 1942 की पूर्व संध्या पर गाँधी जी ने देशवासियों के समक्ष शंखनाद करते हुए कहा 'यह एक छोटा सा मंत्र है जो मैं दे रहा हूँ आप चाहे तो इसे अपनें हृदय पर अंकित कर सकते है और आप की हर सांस के साथ इस मंत्र की आवाज आनी चाहिए ये मंत्र है 'करो या मरो'

भारत की आजादी के लिए छेड़ा जाने वाला यह महान आन्दोलन उस समय शुरू किया गया जब दुनिया एक बड़े बदलाव के दौर से गुजर रही थी। जहाँ एक ओर पश्चिमी देशो में युद्ध का घमासान चल रहा था वही पूर्व में साम्राज्यवाद विरोधी आन्दोलन जोर पकड़ रहा था, इस दौरान भारत

में नंगा फकीर कहे जाने वाले महात्मा गाँधी अपने अहिंसात्मक आन्दोलनों से भारतीय मानस में अपनी पहचान बना चुके थे। वे एक तरफ सत्य और अहिंसा के बल पर समाज को बदलने तथा अंग्रेजो को भारत छोड़ने के लिए कड़ा संघर्ष कर रहे थे, तो दूसरी तरफ एक महान क्रान्तिकर्मी नेताजी सुभाषचन्द्र बोस जापान की सहायता से आजाद हिन्द फौज के साथ भारत की ओर बढ़ रहे थे। और उन्होंने दिल्ली चलो का नारा दिया। भारत में चल रहे जन आन्दोलन से भारत की आजादी के आन्दोलन की मजबूत जमीन पूरी तरह तैयार हो चुकी थी और अब इसमें केवल स्वतन्त्रता के बीज बोने भर की देरी बाकी थी।[2]

भारत छोड़ो आन्दोलन की घोषणा होने के 24 घंटे के भीतर ही सभी बड़े नेता गिरफ्तार कर लिए गये।[3] और जनता का मार्गदर्शन करने वाला कोई न रहा। ऐसी परिस्थिति में आन्दोलन का नेतृत्व करने के लिए जनता के बीच से ही नेता उभरकर सामने आये। लोग ब्रिटिश शासन के प्रतीको के खिलाफ प्रदर्शन करने सड़कों पर निकल पड़े, और उन्होंने सरकारी इमारतों पर कांग्रेस के झंडे फहराने शुरू कर दिये। लोगों ने गिरफ्तारियां देना और सामान्य सरकारी कामकाज में व्यवधान उत्पन्न करना शुरू कर दिया। विद्यार्थी और कामगार हड़ताल पर चले गये। बंगाल के किसानों ने करों मे बढ़ोत्तरी के खिलाफ संघर्ष छेड़ दिया।[4] सरकारी कर्मचारियों ने भी नियमों का उलंघन शुरू कर दिया। यह एक ऐतिहासिक क्षण था। यह विदेशी दासता के खिलाफ महज एक आन्दोलन भर नहीं था, बल्कि भारतीय जनता में एक नयी चेतना का संचार था। भारत छोड़ो आन्दोलन का इतिहास गुमनाम योद्धाओं के बलिदानो से भरा पड़ा है उस दौर के किसानों, फैक्ट्री मजदूरों, पत्रकारो, कलाकारों, छात्रों, शिक्षाशास्त्रियों, धार्मिक संतो और दलितो की कई गुमनाम गाथाएँ है।

1942 का भारत छोड़ो आन्दोलन धीरे–धीरे पूरे भारत में फैला, जिससे पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार भी अछूता नहीं रहा। यहाँ पर क्रान्तिकारी गतिविधियों ने तेजी के साथ जोर पकड़ा। चाहे वह गोरखपुर रहा हो, चाहे बलिया, गाजीपुर, वाराणसी, इलाहाबाद, मिर्जापुर, जौनपुर, आजमगढ़ आदि स्थानो के साथ ही बिहार के आरा, छपरा और पटना इत्यादि।

आज का पूर्वी उत्तर प्रदेश सन् 1942 ई0 में संयुक्त प्रान्त का हिस्सा था संयुक्त प्रान्त के गाजीपुर और आजमगढ़ जिलों में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्र स्वंयसेवकों के आगमन ने ही नहीं बल्कि उनके आगमन की अफवाह ने भी स्थानीय किसानो को आन्दोलित कर दिया वे लोग रेल लाइनो को उखाड़ दिये तथा स्टेशनो को लूटा और तोडफोड़ किया तथा कोर्ट आफ वार्ड आफिस के कागजात जलाने लगे। लेकिन इन जिलों के अनेक स्थानों पर जैसे नन्दगंज, शेरपुर, मुहमदाबाद क्षेत्र में जैसा कि ज्ञानेन्द्र पाण्डेय का कथन है। ''विध्वंश के संदेश'' और अहिंसा के गांधी सिद्धान्त के बीच एक ''असहज सहअस्तित्व'' था क्योंकि कुछ प्रतिबद्ध गाँधीवादी नेताओं ने उसकी अहिंसा की शुद्धता बनाये रखने की कोशिश की।[5] जन आन्दोलन कहीं बहुत अधिक तीव्र था वही बलिया जिले में जहां कुछ दिन के लिए चित्तु पाण्डेय के नेतृत्व में स्वतंत्र सरकार का गठन हो चुका था, लेकिन यहाँ पर अन्तर्विरोधों ने आन्दोलन कमजोर किया। यहाँ कहानी कुछ अधिक भिन्न नही थी क्योंकि बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय और इलाहाबाद विश्वविद्यालय से आने वाले छात्र नेताओं ने किसानों को कार्यवाही के लिए प्रेरित किया। इनमें इलाहाबाद के छात्र कब्जा की गयी आजाद रेलगाड़ी में आये।[6]

14 अगस्त को कई हजार किसानों ने बेल्थरा रोड स्टेशन पर खड़ी एक सैनिक आपूर्ति की गाड़ी पर हमला करके उसको लूट लिया।[7] चार दिन बाद बाँसडीह कस्बे में थाना और तहसील की इमारतों पर कब्जा कर लिया। स्थानीय स्टेशन मास्टर और तहसीलदार ने कोई विरोध नहीं किया और स्थानी क्रांग्रेसी नेताओं ने एक समानान्तर प्रशासन की स्थापना का प्रयास किया। फिर 19 अगस्त 1942 को एक भारी भीड़ ने बलिया नगर पर कब्जा कर लिया तथा जिला मजिस्ट्रेट के खजाने के सारे नोट जलाने और सभी राजनैतिक कैदियो को रिहा करने पर मजबूर कर दिया।[8] उसके बाद रिहा किये गये, गाधीवादी नेता चित्तू पाण्डेय आन्दोलन को संचालित करने लगे और उन्हें ''स्वराज जिलाधीश घोषित किया गया, जब कि उनको पता भी नही था कि आगे क्या करना है, इस लिए अगले दिन जब सेना पहुँची तो सारे नेता भाग गये और बलिया शहर बिरान नजर आने लगा। इस तरह वहाँ पर भारत छोड़ो आन्दोलन को नेतृत्व के अभाव में एक अपेक्षाकृत अपकर्षी अंत हुआ।

बनारस में 1942 का भारत छोड़ो आन्दोलन का केन्द्र काशी हिन्दू वि0 वि0 था।[10] यहाँ के लोगों ने आन्दोलन की शुरूआत हड़ताल से की और 9 अगस्त 1942 संगठित होकर मार्च करते हुए दशस्वमेघ घाट पहुँचे और यहाँ पर कॉग्रेस के कार्यकर्ता भी पहूँचे, और वहॉ के टाउनहाल में मीटिंग की जिसकी अध्यक्षता डॉ0 के0 एन0 गैरोला ने की जो बनारस हिन्दू वि0 वि0 के अध्यापक थे। वह एक क्रियाशील कॉग्रेसी थे और इनको जवाहर लाल नेहरू के द्वारा अधिकार दिया गया था कि बनारस हिन्दू वि0 वि0 के छात्रों को संगठित करें और इस आन्दोलन में सम्मिलित हों। इस कार्य हेतु उनको प्रो0 राधेश्याम शर्मा और राजनारायन सिंह के द्वारा सहायता प्राप्त हुई। लेकिन बाद में 30 अप्रैल 1943 की रात दिल्ली रेलवे स्टेशन पर डिफेंस रूल 129 के अर्न्तगत इनको गिरफ्तार कर लिया गया।[11]

टाउनहाल में जो मिटिंग हुई उसमें तय किया गया कि ब्रिटिश प्रशासन का विरोध किया जाय और ये जो ब्रिटिश प्रशासन है उन्होंने जो एक्ट बनाये है बेवकूफी भरे हैं उन्होंने उन सबका विरोध किया।[12] इसके पश्चात् धीरे–2 जो पुराछात्र थे वो भी इसमे सम्मिलित हुए। केवल बी0 एच0 यू0 ही नहीं बल्कि आसपास के जो स्कूल कालेज थे जैस काशी विद्यापीठ एवं अन्य कालेज आदि के विद्यार्थियों ने इसमें भाग लिया और अंग्रेजो की नीतियों का जोरदार तरीके से विरोध किया। इस आन्दोलन में लोकस्वरूप देखने को मिला।

1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान गाजीपुर के नन्दगंज रेलवे स्टेशन को क्रांतिकारियों द्वारा लूटे जाने और सरकारी सम्पत्ति को नष्ट किये जाने की घटना एक ऐतिहासिक मील का पत्थर है यह घटना अगस्त 1942 के तीसरे सप्ताह में हुई, जिसका नेतृत्व स्वतंत्रता सेनानी पहलवान रामधारी सिंह यादव ने किया।[14]

महात्मा गांधी द्वारा 'करो या मरो' का नारा दिये जाने के बाद गाजीपुर में क्रांति की ज्वाला बहुत तेजी से फैली। आन्दोलनकारियों का एक जत्था पहलवान रामधारी सिंह यादव के नेतृत्व में नंदगंज रेलवे स्टेशन पर एकत्र हुआ तथा स्टेशन पर खड़ी मालगाड़ी को लूट लिया। यातायात और संचार को पूरी तरह ठप करने के लिए रेलवे ट्रेक उखाड़ दिये तथा टेलीग्राफ के खम्भों को काट दिया। इस घटना पर दमन चक्र चलाया गया। नंदगंज और आस–पास के क्षेत्रों में हुई पुलिस गोलीबारी में कई देश भक्त शहीद हुए उसमें जूनैद आलम (कुर्बान सराय) लाल जी सिंह।[15] (बरई गाँव) का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है इस घटना के प्रतिशोध में ब्रिटिश हुकुमत ने नंदगंज के कई नजदीकी गाँवों में घूसकर भारी कहर बरपाया। घरो में आग लगा दी गयी, सम्पत्ति नष्ट कर दी गयी और ग्रामीणों पर घोर अत्याचार किये गये।

1942 को भारत छोड़ो आन्दोलन ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेकने का एक बड़ा संघर्ष था, जिसमें बिहार की भूमिका सबसे आगे और बहुत उग्र रही। इस आन्दोलन में छात्रों का बलिदान जनता का विद्रोह और नेताओ का साहस मुख्य रूप से शामिल था, 11 अगस्त 1942 को छात्रों का एक दल पटना सचिवालय पर तिरंगा फरहाने गया ब्रिटिश कलेक्टर डब्ल्यू0 जी0 आर्चर के आदेश पर पुलिस ने गोली चलाई, जिसमें सात छात्र शहीद हो गये। इन्हे सात शहीद कहा जाता है। जिसकी याद में पटना में शहीद स्मारक बना है।[16]

शीर्ष नेताओ की गिरफ्तारी के बाद बिहार के लोगों ने पुलिस थानो, रेलवे लाइनो, डाकघरों और टेलीग्राफ तारो को निशाना बनाया, पटना, गया मुंगेर पूर्णिया और भागलपुर उग्र केन्द्र बन गये। किसानों और युवाओं ने कई जगहों पर ब्रिटिश राज को नकार कर अपनी समानान्तर सरकारें बनाई। लोक नायक जे0पी0 ने हजारी बाग जेल से भागकर भूमिगत रहकर आन्दोलन का नेतृत्व किया और आजाद दस्ते का गठन किया।[17]

इस तरह भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान अंग्रेजों की नीतियों का विरोध किया गया। इसमें काफी जान माल का नुकसान हुआ। परन्तु अब भारत के लोग यह समझ चुके थे कि आजादी ही एक मात्र विकल्प है। क्योंकि लोग यह भी समझ चुके थे कि किसी भी देश पर विदेशी हुकुमत तभी तक चल सकती है जब तक वहाँ के लोग उसे बर्दास्त कर सकते हैं। जहाँ लोगों ने विदेशी शासन को नकारना शुरू किया वह फिरंगी टिक नहीं सकता। चूकि 1915 में गाँधी जी का भारत में आगमन हो चुका था। उन्होंने पूरे भारत का भ्रमण किया, जनता के हालात से अवगत हुए और उन्होंने सत्य और अहिंसा के बल पर लोगों को काफी प्रभावित किया। उनका सबसे बड़ा कार्य यह था कि उन्होंने राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन को जनान्दोलन (Nation Movement को Mass Movement) बना दिया।

इसी की चरम परिणिति 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन में देखने को मिली। इसने अंग्रेजो की चूलें हिलाकर रख दिया। और अंग्रेज भारत छोड़ने को मजबूर हुए। इसके बाद कोई बड़ा आन्दोलन नही करना पड़ा। इसी कारण इसे अगस्त क्रान्ति भी कहते है। इस आन्दोलन की अंतिम परिणिति के रूप में भारत को गुलामी की जंजीरो से मुक्ति मिली।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सिंह अयोध्या भारत का मुक्ति संग्राम, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, 1994, पृष्ठ .173
2. गाँधी मोहनदास करमचन्द्र, सत्य के साथ मेरा प्रयोग राजकमल प्रकाशन, 2013, पृष्ठ .53
3. नेहरू जवाहर लाल, डिस्कवरी आफ इंडिया, पेगुइन पब्लिकेशन, दिल्ली, 2018, पृष्ठ.67
4. सुभाष कश्यप, आधुनिक भारत, रिसर्च पब्लिकेशन नई दिल्ली 1977, पृष्ठ .90
5. बंधोपाध्याय शेखर, प्लासी से विभाजन तक ओरियंट ब्लैककस्वान हैदराबाद, 2016, पृष्ठ 413
6. पूर्वोक्त, डिस्कवरी आफ इंडिया, पृष्ठ 87
7. पूर्वोक्त, प्लासी से विभाजन तक, पृश्ठ 415
8. आजाद अबुल कलाम, इंडिया विन्स फ्रीडम, ओरियंट ब्लैक स्वान, हैदराबाद, 1988, पृष्ठ.105
9. पूर्वोक्त, प्लासी से विभाजन तक पृष्ठ 416
10. सरकार सुमित, आधुनिक भारत 1885–1947 राजकमल प्रकाशन दिल्ली,2018, पृष्ठ 408
11. एस. एल. दर एण्ड एस सोमस्कंदन, हिस्ट्री 413 आफ दि बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, 2007, पृष्ठ–730
12. एन0 एस0 आई0 होमपाल, एफ नं0 के डब्ल्यू 3/31/42, 1942 पृष्ठ–42
13. वही पृष्ठ–04
14. पीपुल्स आर्कादूब आफ रूरल इण्डिया
15. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर गाजीपुर
16. दत्त कलंकिंकर Freedom Movement in Bihar (1942–1947) पृष्ठ–40
17. चौधरी, पी0के0 Bihar in the Quit India Movement Vol. 111. पृष्ठ–95–101

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 212-215
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

आधुनिक जीवन में पारिवारिक विघटन और मानवीय मूल्यों का संकट

डॉ. जे. अजिता कुमारी,
Assistant Professor,
Nirmala College Muvattupuzha

परिवार प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था है। मनुष्य का जन्म परिवार में होता है और परिवार के स्नेह, संरक्षण तथा संस्कारों के बीच ही उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। परिवार केवल कुछ व्यक्तियों का एक साथ रहना नहीं है, बल्कि यह प्रेम, विश्वास, सहयोग, त्याग, जिम्मेदारी और आत्मीयता का जीवंत संबंध है। व्यक्ति अपने जीवन के प्रारंभिक संस्कार परिवार से ही प्राप्त करता है। इसलिए परिवार को समाज की आधारभूत इकाई माना जाता है। परिवार जितना सुदृढ़ और संस्कारयुक्त होगा, समाज भी उतना ही स्वस्थ और संतुलित होगा।

भारतीय समाज में प्राचीन काल से ही परिवार को विशेष महत्व दिया गया है। संयुक्त परिवार व्यवस्था भारतीय संस्कृति की एक प्रमुख विशेषता रही है। संयुक्त परिवार में दादा-दादी, माता-पिता, भाई-बहन तथा अन्य सदस्य एक साथ रहते थे। परिवार के बड़े सदस्यों के अनुभव और मार्गदर्शन से नई पीढ़ी को जीवन के नैतिक तथा सामाजिक मूल्यों की शिक्षा मिलती थी। बड़ों के प्रति सम्मान, हमउम्र लोगों के प्रति मित्रता और छोटों के प्रति प्रेम तथा स्नेह की भावना भारतीय पारिवारिक संस्कृति का आधार रही है। परिवार के सदस्य एक-दूसरे के सुख-दुःख में सहभागी होते थे और कठिन परिस्थितियों में एक-दूसरे का सहारा बनते थे।

वर्तमान समय में सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण पारिवारिक संरचना में अनेक बदलाव आए हैं। आज संयुक्त परिवारों की अपेक्षा एकल या छोटे परिवारों की संख्या बढ़ती जा रही है। छोटे परिवार में व्यक्ति को अधिक स्वतंत्रता, व्यक्तिगत स्थान और अपने निर्णय स्वयं लेने का अवसर मिलता है। आधुनिक जीवन की आवश्यकताओं के कारण छोटे परिवारों का महत्व भी बढ़ा है। शिक्षा, रोजगार, शहरीकरण और आर्थिक अवसरों के कारण अनेक लोग अपने मूल परिवार से दूर रहकर अपना अलग परिवार स्थापित करते हैं। इस दृष्टि से एकल परिवार आधुनिक जीवन की एक स्वाभाविक सामाजिक व्यवस्था बन गया है।

किन्तु जब स्वतंत्रता का प्रयोग जिम्मेदारी और नैतिकता के साथ नहीं किया जाता, तब यह पारिवारिक संबंधों में दूरी उत्पन्न कर सकती है। व्यक्ति अपने व्यक्तिगत सुख, आर्थिक सफलता और सामाजिक प्रतिष्ठा को अधिक महत्व देने लगता है तथा परिवार के सदस्यों की भावनाओं और आवश्यकताओं की उपेक्षा करने लगता है। परिवार छोटा होने के साथ-साथ यदि उसमें संवाद, प्रेम और आपसी विश्वास भी कम हो जाए, तो परिवार केवल एक घर बनकर रह जाता है। एक ही छत के नीचे रहने के बावजूद परिवार के सदस्य मानसिक और भावनात्मक रूप से एक-दूसरे से दूर हो सकते हैं।

आधुनिक जीवन में भौतिक सुख-सुविधाओं की इच्छा लगातार बढ़ती जा रही है। बड़ा घर, अधिक धन, महंगी वस्तुएँ, उच्च सामाजिक प्रतिष्ठा और आधुनिक जीवन-शैली को सफलता का प्रतीक माना जाने लगा है। व्यक्ति इन उपलब्धियों को प्राप्त करने की दौड़ में इतना व्यस्त हो जाता है कि वह अपने पारिवारिक संबंधों के लिए पर्याप्त समय नहीं निकाल पाता। माता-पिता अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा, महंगे कपड़े, आधुनिक सुविधाएँ और सभी भौतिक वस्तुएँ उपलब्ध कराते हैं, लेकिन कई बार उन्हें प्रेम, स्नेह, मार्गदर्शन और भावनात्मक सुरक्षा नहीं दे पाते। वास्तव में बच्चों के स्वस्थ विकास के लिए केवल सुविधाएँ पर्याप्त नहीं हैं। उन्हें माता-पिता का समय, अपनापन, संवाद और सही दिशा भी चाहिए।

परिवार में संवाद की कमी पारिवारिक विघटन का एक प्रमुख कारण है। जब परिवार के सदस्य अपनी समस्याएँ, भावनाएँ और विचार एक-दूसरे के साथ साझा नहीं करते, तब उनके बीच गलतफहमियाँ और दूरी बढ़ने लगती हैं। आधुनिक जीवन में प्रत्येक व्यक्ति अपने कार्य, मोबाइल, इंटरनेट और व्यक्तिगत व्यस्तताओं में इतना उलझा रहता है कि परिवार के लिए समय कम हो जाता है। साथ बैठकर भोजन करना, एक-दूसरे की बातें सुनना और सुख-दुःख में सहभागी होना धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। परिणामस्वरूप परिवार के सदस्य एक-दूसरे के निकट रहते हुए भी अकेलापन अनुभव करते हैं।

राजकुमार गौतम की कहानी 'कब्र' आधुनिक परिवार में बढ़ती भौतिकता, पारिवारिक दूरी और भावनात्मक विघटन को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती है। कहानी में मिस्टर और मिसेज रस्तोगी अपने परिवार को पीछे छोड़कर एक सफल और सुविधासंपन्न जीवन बनाने की दौड़ में लगे रहते हैं। वे अपनी सामाजिक स्थिति को बेहतर बनाने के लिए निरंतर प्रयास करते हैं। बड़ा घर, अधिक धन और सामाजिक प्रतिष्ठा तो उन्हें प्राप्त होती है, लेकिन एक सुखी और समृद्ध परिवार का वास्तविक आनंद उनसे दूर हो जाता है।

रस्तोगी दंपति अपने बच्चों को जीवन की लगभग सभी भौतिक सुविधाएँ उपलब्ध कराते हैं, परंतु उन्हें उचित प्रेम, समय और नैतिक मार्गदर्शन नहीं दे पाते। उनके घर में आधुनिक सुविधाओं की कोई कमी नहीं है, लेकिन परिवार के सदस्यों के बीच आत्मीय संबंध नहीं हैं। घर में रसोई और भोजन की व्यवस्था होने के बावजूद परिवार के सदस्य एक साथ बैठकर भोजन नहीं करते। प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छा के अनुसार आता-जाता है। इस प्रकार एक ही घर में चार व्यक्ति रहते हुए भी उनमें परिवार जैसी एकता और अपनापन दिखाई नहीं देता।

कहानी में 'बाज़ार' केवल वस्तुओं और उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रतीक नहीं है, बल्कि वह उस मानसिकता का भी प्रतीक है जिसमें व्यक्ति संबंधों से अधिक वस्तुओं को महत्व देने लगता है। रस्तोगी दंपति अपने घर में बाजार की वस्तुएँ तो लाते रहते हैं, लेकिन परिवार के सदस्यों के बीच प्रेम और संवाद का वातावरण समाप्त होता जाता है। भौतिक समृद्धि बढ़ने के साथ-साथ उनके पारिवारिक संबंध कमजोर होते जाते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि

धन और सुविधाएँ जीवन को आरामदायक बना सकती हैं, लेकिन वे पारिवारिक प्रेम और आत्मीयता का स्थान नहीं ले सकतीं।

कहानी के अंत में परिवार की दुखद स्थिति सामने आती है। माता-पिता अपने बच्चों को सही दिशा देने और उनके साथ भावनात्मक संबंध स्थापित करने में असफल रहते हैं। बच्चों के जीवन में उचित संस्कारों और नैतिक समझ का अभाव दिखाई देता है। इस स्थिति के लिए केवल बच्चों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि बच्चों के व्यक्तित्व के निर्माण में परिवार और माता-पिता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जब माता-पिता अपने कर्तव्यों और जिम्मेदारियों से दूर हो जाते हैं, तब बच्चों के जीवन में भी भटकाव उत्पन्न हो सकता है।

'कब्र' शीर्षक अत्यंत अर्थपूर्ण है। कहानी के अंत में घर केवल रहने का स्थान नहीं रह जाता, बल्कि वह भावनाओं से रहित एक ऐसी जगह बन जाता है जहाँ प्रेम, विश्वास और पारिवारिक जीवन की जीवंतता समाप्त हो चुकी है। घर में सभी सुविधाएँ मौजूद हैं, फिर भी वहाँ खुशी और आत्मीयता नहीं है। इसलिए वह घर प्रतीकात्मक रूप से 'कब्र' बन जाता है। यह कहानी आधुनिक उपभोक्तावादी जीवन-शैली की एक गंभीर आलोचना प्रस्तुत करती है।

दूसरी ओर, श्रीकुमारी रामचंद्रन की कहानी 'जवानी@जवानी.कॉम' आधुनिक शहरी जीवन, मानसिक अकेलेपन और पारिवारिक मूल्यों के संकट को प्रस्तुत करती है। कहानी का नायक लगभग पचास वर्ष का एक मध्यमवर्गीय सरकारी कर्मचारी है। वह महानगरीय जीवन की अनेक समस्याओं और तनावों से घिरा हुआ है। ऊँची इमारत में स्थित अपने फ्लैट में रहते हुए भी वह स्वयं को अकेला और घुटन से भरा हुआ महसूस करता है। शहरी जीवन की भीड़ और व्यस्तता के बीच व्यक्ति का मानसिक अकेलापन और अधिक बढ़ जाता है।

कहानी का नायक अपने वैवाहिक जीवन और व्यक्तिगत समस्याओं को लेकर चिंतित है। वह अपनी समस्याओं का समाधान खोजने के लिए इंटरनेट और विभिन्न वेबसाइटों का सहारा लेता है। आधुनिक तकनीक मनुष्य को अनेक प्रकार की जानकारियाँ उपलब्ध कराती है, लेकिन हर जानकारी सही या नैतिक नहीं होती। बिना उचित विवेक के इंटरनेट से प्राप्त जानकारी पर विश्वास करना व्यक्ति को गलत दिशा में ले जा सकता है। कहानी में नायक अपनी समस्या के समाधान के लिए ऐसी सोच को स्वीकार कर लेता है जो उसके पारिवारिक और नैतिक कर्तव्यों के विरुद्ध है।

इस कहानी में यह स्पष्ट होता है कि शहरी जीवन की घुटन, अकेलापन और मानसिक तनाव व्यक्ति की सोच को प्रभावित कर सकते हैं। जब व्यक्ति अपनी समस्याओं को परिवार के साथ साझा नहीं करता और उचित मार्गदर्शन प्राप्त नहीं करता, तब वह गलत उपायों की ओर आकर्षित हो सकता है। कहानी का नायक अपने पारिवारिक दायित्व और पिता के पवित्र संबंध को भूलकर अत्यंत अनुचित मानसिकता का परिचय देता है। यहाँ पारिवारिक विघटन केवल सदस्यों के बीच दूरी का परिणाम नहीं है, बल्कि यह मानवीय संवेदनाओं और नैतिक मूल्यों के पतन का भी संकेत है।

'जवानी@जवानी.कॉम' आधुनिक तकनीकी युग की मानसिकता को भी प्रस्तुत करती है। आज इंटरनेट जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है। इसके माध्यम से शिक्षा, जानकारी और संचार के अनेक अवसर प्राप्त होते हैं। लेकिन तकनीक का गलत उपयोग व्यक्ति के विचारों और व्यवहार को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकता है। इसलिए तकनीक का उपयोग विवेक, जिम्मेदारी और नैतिक समझ के साथ किया जाना आवश्यक है। इंटरनेट जीवन की समस्याओं का पूर्ण समाधान नहीं है। पारिवारिक संवाद, विश्वास और संवेदनशीलता का कोई विकल्प नहीं हो सकता।

दोनों कहानियों में पारिवारिक विघटन की समस्या अलग-अलग रूपों में दिखाई देती है। 'कब्र' में माता-पिता अपने बच्चों को उचित प्रेम, समय और मार्गदर्शन नहीं दे पाते। वे भौतिक सफलता और सामाजिक प्रतिष्ठा को अधिक महत्व देते हैं। इसके विपरीत 'जवानी@जवानी.कॉम' में पिता स्वयं अपनी नैतिक जिम्मेदारियों से भटक जाता है। पहली कहानी में माता-पिता की उपेक्षा के कारण बच्चों का जीवन गलत दिशा में चला जाता है, जबकि दूसरी कहानी में परिवार का जिम्मेदार सदस्य ही अपने कर्तव्य और संबंधों की मर्यादा को भूल जाता है।

इन दोनों कहानियों से यह निष्कर्ष निकलता है कि परिवार केवल आर्थिक सुविधाओं से सुरक्षित नहीं रह सकता। परिवार को सुदृढ़ बनाए रखने के लिए प्रेम, विश्वास, संवाद, त्याग और जिम्मेदारी आवश्यक हैं। माता-पिता को बच्चों की केवल भौतिक आवश्यकताओं पर ध्यान नहीं देना चाहिए, बल्कि उनकी भावनाओं, विचारों और व्यवहार को भी समझना चाहिए। बच्चों के साथ समय बिताना, उनकी समस्याएँ सुनना और उन्हें सही नैतिक दिशा देना माता-पिता का महत्वपूर्ण कर्तव्य है।

वर्तमान समय में पारिवारिक विघटन को रोकने के लिए परिवार के सभी सदस्यों को अपनी जिम्मेदारियों को समझना होगा। परिवार में नियमित संवाद होना चाहिए। परिवार के सदस्यों को एक-दूसरे की भावनाओं का सम्मान करना चाहिए तथा कठिन समय में एक-दूसरे का सहयोग करना चाहिए। आर्थिक सफलता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ पारिवारिक जिम्मेदारियों का संतुलन बनाए रखना आवश्यक है। स्वतंत्रता का अर्थ संबंधों और कर्तव्यों से मुक्त होना नहीं है, बल्कि जिम्मेदारी के साथ अपने जीवन का निर्णय लेना है।

अंततः कहा जा सकता है कि आधुनिक जीवन में परिवार के स्वरूप और सोच में अनेक परिवर्तन आए हैं। शहरीकरण, भौतिकवाद, उपभोक्तावादी संस्कृति, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और तकनीकी विकास ने पारिवारिक जीवन को प्रभावित किया है। परिवर्तन अपने आप में नकारात्मक नहीं है, लेकिन जब परिवर्तन के कारण प्रेम, संवेदना, नैतिकता और पारिवारिक जिम्मेदारियाँ कमजोर हो जाती हैं, तब पारिवारिक विघटन की स्थिति उत्पन्न होती है।

राजकुमार गौतम की 'कब्र' और श्रीकुमारी रामचंद्रन की 'जवानी@जवानी.कॉम' दोनों कहानियाँ आधुनिक परिवार की इसी दुखद स्थिति को उजागर करती हैं। ये कहानियाँ हमें यह संदेश देती हैं कि धन, प्रतिष्ठा और आधुनिक सुविधाओं से जीवन को सफल तो बनाया जा सकता है, लेकिन परिवार को सुखी और सार्थक बनाने के लिए प्रेम, विश्वास और आत्मीयता आवश्यक हैं। परिवार के सदस्य केवल एक साथ रहने से परिवार नहीं बनते, बल्कि एक-दूसरे के प्रति अपनापन, जिम्मेदारी और भावनात्मक जुड़ाव ही परिवार को वास्तविक अर्थ प्रदान करते हैं। इसलिए आधुनिक जीवन की व्यस्तता और भौतिकता के बीच भी हमें मानवीय मूल्यों तथा पारिवारिक संबंधों को सुरक्षित रखना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ

1. 'कब्र' — राजकुमार गौतम
2. 'जवानी@जवानी.कॉम' — श्रीकुमारी रामचंद्रन

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 216-219
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

केरल के वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में राजभाषा हिंदी की समस्याएँ

सुजिता एल.
शोधार्थी,
हिंदी विभाग, कार्यवट्टम कैंपस, केरल विश्वविद्यालय, तिरुवनंतपुरम

'वैज्ञानिक अनुसंधान' विज्ञान पर आधारित है। इसका उद्देश्य है 'वैज्ञानिक आधार पर ज्ञान प्राप्त करना'। वैज्ञानिक अनुसंधान, नई जानकारी की खोज या मौजूद जानकारी तथा सिद्धांतों को पुनः विश्लेषण से बेहतर ढंग से समझने के लिए अपनाई जानेवाली एक प्रक्रिया है। वैज्ञानिक अनुसंधान के परिणाम स्वरूप व्यावहारिक समस्याओं को सुलझाने में तकनीकी नवाचार और वैज्ञानिक ज्ञान को बढ़ावा देने के प्रयास हो रहे हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान के माध्यम से नई तकनीकों का विकास तथा कई क्षेत्रों में सामाजिक सुधार में मदद मिलती है।

वैज्ञानिक अनुसंधान वर्तमान समाज की आवश्यकता बनती जा रही है। वैज्ञानिक अनुसंधान का बहुत अधिक महत्व है क्योंकि सामाजिक सुधार में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। वैज्ञानिक अनुसंधान निर्णय लेने की क्षमता में सुधार लाते हैं और भावी योजनाओं को रूपादित करने में मदद करते हैं। नवीन प्रणालियों को अपनाने में मदद करते हैं और सुनिश्चितता बढ़ाया जाता है। विज्ञान यथार्थ के अध्ययन, पर्यवेक्षण तथा प्रयोग के द्वारा प्राप्त तत्वों की सामान्यीकरण (Generalisation) द्वारा ज्ञान प्राप्त करने के एक माध्यम के रूप में विकसित है। इस संबंध में कार्टर पियर्सन का मत है कि "सत्य तक पहुँचाने के लिए कोई संक्षिप्त पथ नहीं है , विश्व के विषय में ज्ञान प्राप्त करने के लिए हमें वैज्ञानिक पद्धति के द्वार से गुज़रना होगा"।

शिक्षा, विज्ञान और प्रौद्योगिकी तथा तकनीकी अनुसंधान को विशेष महत्व प्रदान करनेवाले केरल राज्य में वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं का महत्व ज़्यादा है। अंतरिक्ष विज्ञान, जैव-प्रैद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी, समुद्री विज्ञान, भूविज्ञान आदि क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपलब्धियों को हाज़िल करने में केरल राज्य सफल हो गया है। राज्य में वैज्ञानिक गतिविधियों के समन्वय और प्रोत्साहन हर वैज्ञानिक संस्थान द्वारा किया जाता है। हर वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान विज्ञान शिक्षा को बढ़ावा देने, नवाचार में वृद्धि लाने, नए तकनीकों की खोज आदि में कार्यरत हैं।

वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में राजभाषा हिंदी कार्यान्वयन को बढ़ावा देने का सक्षम प्रयास जारी है। अध्ययन से पता चलता है कि कृषि और चिकित्सा क्षेत्रों की अपेक्षा वैज्ञानिक क्षेत्र में राजभाषा कार्यान्वयन अधिक सटीक है। भारत अन्य देशों के सामने गर्व से इसलिए खड़े है कि वैज्ञानिक क्षेत्र में भारत की उपलब्धियाँ अन्य देशों की तुलना में अद्भुत है। वैज्ञानिक क्षेत्र की जानकारियों को आम जनता तक पहुँचाने के लिए लोगों की अपनी भाषा में प्रकाशन करना अनिवार्य है। केरल में स्थित कई अनुसंधान संस्थाएँ शोध परिणामों को हिंदी में प्रकाशित कर रहे

हैं। संस्थान के प्रशासनिक और अनुसंधान गतिविधियों को हिंदी और क्षेत्रीय भाषा में उपलब्ध कराने से आगे की पीढ़ी को सहायता मिलती है।

केरल जैसे हिंदीतर प्रदेश में राजभाषा कार्यान्वयन को सक्षम बनाने के लिए अनेक व्यावहारिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। केरल में स्थित वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में कार्यरत हिंदी भाषी क्षेत्र के कर्मचारी भी हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेज़ी में ज्यादा काम करते हैं जिससे हिंदी कार्यान्वयन में रुकावट पैदा होता है। इसमें राजभाषा नीति की पर्याप्त जानकारी का अभाव सबसे महत्वपूर्ण समस्या माना जाता है, क्योंकि कई संस्थाओं में राजभाषा हिन्दी से जुड़ी कर्मचारियों की कमी के कारण प्रशिक्षण में भी कमी हो जाती है। सभी समस्याएँ एक दूसरे के साथ पूरक है।

वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में राजभाषा हिंदी का कार्यान्वयन सक्षम बनाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों को ज़्यादातर आयोजित करना ज़रूरी है। लेकिन वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षेत्र में कार्यशालाओं का आयोजन करने में काफी समस्याएँ और चुनौतियाँ होती हैं। केरल के वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में कार्यरत कर्मचारियाँ अंग्रेज़ी माध्यम से शिक्षित है इसलिए राजभाषा हिंदी में वैज्ञानिक या तकनीकी प्रशिक्षण को स्वीकार करने के लिए कर्मचारियों को दिक्कत होती है।

संस्थाओं में प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन होते हैं फिर भी प्रभावी लाभ सभी कर्मचारियों तक नहीं पहुँच पाता। हिंदी टंकण, अनुवाद तथा वैज्ञानिक लेखन में कर्मचारियों को पर्याप्त प्रशिक्षण देना ज़रूरी है। राजभाषा हिंदी में प्रशिक्षण पूरी तरह होने से ही कार्यान्वयन सफल होगी। तकनीकी क्षेत्रों में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दावली तथा वैज्ञानिक गतिविधियों को हिंदी में करने के लिए तदनुसार प्रशिक्षण देना ज़रूरी है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दों ज़्यादातर अंग्रेज़ी में प्रचलित होने के कारण राजभाषा हिंदी में प्रशिक्षण देने में कठिनाई होती हैं। प्रशिक्षण सामग्रियों का अभाव एक मुख्य समस्या है। हिंदी में सभी वैज्ञानिक अनुसंधान क्षेत्रों की पारिभाषिक शब्दावली प्रचलित नहीं है और इस कारण से वैज्ञानिक प्रशिक्षण में भागीदार होने की विमुखता प्रकट करते हैं। अतिरिक्त प्रशिक्षण और प्रशिक्षण सामग्रियों का निर्माण तथा प्रोत्साहन की कमी के कारण यह समस्या काफी गहरा होता जा रहा है। ज़्यादातर वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रशिक्षण की आवश्यकता को समझकर इस प्रश्न का निवारण किया जा सकता है।

अंग्रेज़ी भाषा विश्व स्तर पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भाषा मानी जाती है। वैज्ञानिक अनुसंधान के अधिकांश कार्य अंग्रेज़ी में किया जाता है। विभिन्न राष्ट्र के वैज्ञानिक अंग्रेज़ी के माध्यम से अपने विचार, शोध निष्कर्ष को दुनिया के सामने रखता है। अंग्रेज़ी का वैश्विक परिदृश्य देखते हुए अनुसंधान में अंग्रेज़ी का प्रयोग ज़्यादा है। शोध-पत्र, तकनीकी दस्तावेज, परियोजना रिपोर्ट, तकनीकी दस्तावेज़, वैज्ञानिक पत्रिकाएँ, वैज्ञानिक सम्मेलनों, अंतर्राष्ट्रीय पत्राचार, शोध परिणामों की रिपोर्ट आदि को वैश्विक स्तर पर प्रेक्षण के लिए अंग्रेज़ी का प्रयोग किया जाता है। इस कारण से हिंदी भाषा का प्रयोग सीमित हो जाता है।

वैज्ञानिक अनुसंधान में हिंदी भाषा का प्रयोग कम होता है। वैज्ञानिक समुदाय वैश्विक स्तर पर अनुसंधान के बारे में संवाद करने के लिए अंग्रेज़ी को अधिक उपयोगी मानता है। शोधकर्ताओं को नवीनतम जानकारी हासिल करने का अवसर अंग्रेज़ी पुस्तकों और अंग्रेज़ी जर्नलों से मिलता है, इसलिए वैज्ञानिक समुदाय अंग्रेज़ी भाषा को निर्भर करता है। शोध निष्कर्षों को तथा खोजों को प्रतिष्ठित वैज्ञानिक जर्नलों में प्रकाशित करने के लिए अंग्रेज़ी का प्रयोग करना पड़ता है।

केरल में स्थित वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में वैज्ञानिक कर्मचारी मुख्य रूप से अंग्रेज़ी में कार्य करते हैं। राजभाषा हिंदी में वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली के प्रयोग में कई व्यावहारिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता

है । वैज्ञानिक अनुसंधान, वैज्ञानिक रिपोर्ट, तकनीकी दस्तावेज़, शोध-प्रपत्र आदि का माध्यम अंग्रेज़ी भाषा है । तकनीकी तथा पारिभाषिक शब्द अंग्रेज़ी में सुलभ है । इस कारण से वैज्ञानिक और शोधकर्ता हिंदी पारिभाषिक शब्दों की अपेक्षा अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग अनुसंधान कार्यों में ज़्यादा करते हैं ।

कई वैज्ञानिक क्षेत्रों में एक ही अंग्रेज़ी शब्द का कई हिंदी शब्द पर्याय के रूप में प्रचलित हैं । इससे शोधकर्ताओं को हिंदी में पारिभाषिक शब्दावली के प्रयोग में भ्रम हो जाता है । वैज्ञानिक सॉफ्टवेयर, डेटाबेस, जर्नल, पुस्तकें आदि सभी शोध सामग्रियाँ अंग्रेज़ी में उपलब्ध होने के कारण हिंदी पारिभाषिक शब्दावली का कम प्रयोग होता है । पारिभाषिक शब्दावली के उपयोग को प्रोत्साहन देने में काफी कठिनाईयाँ होती हैं क्योंकि वैज्ञानिक एवं तकनीकी कर्मचारियों को नियमित रूप से हिंदी पारिभाषिक शब्दावली के उपयोग के लिए प्रशिक्षण सही ढंग से नहीं मिल पाता है । वैज्ञानिक क्षेत्र में दिन प्रतिदिन नए शब्दों तथा अवधारणाएँ विकसित होती हैं और उस समय उनके मानक हिंदी शब्द का अभाव के कारण अंग्रेज़ी शब्द का प्रयोग किया जाता है । हिंदी पारिभाषिक शब्दावली के बारे में कहा जाए तो शब्द संस्कृतनिष्ठ, लंबे, कम प्रचलित और कठिन होगा। इस कारण से प्रयोग में त्रुटियाँ हेती हैं , इसलिए उपयोगकर्ता अंग्रेज़ी का प्रयोग करता है । वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में पर्याप्त कर्मचारियों का अभाव एक गंभीर विषय है । कर्मचारियों के अभाव के कारण अनुसंधान की गति, गुणवत्ता और नवाचार की क्षमता में बाधाएँ उत्पन्न हो जाती हैं । संस्थान में योग्य वैज्ञानिकों और शोधकर्ताओं की कमी के कारण शोध कार्य में देरी हो जाती है । उच्च शिक्षा और प्रशिक्षण प्राप्त वैज्ञानिकों तथा शोधार्थियों की संख्या सीमित है । अनुसंधान संस्थाओं में पर्याप्त नियुक्ति न होने के कारण और प्रशासनिक जटिलताओं के कारण भर्ती प्रक्रिया में हो रही देरी आदि पर्याप्त कर्मचारियों के अभाव का एक प्रमुख कारण है। आजकल एक मुख्य समस्या के रूप में 'ब्रेन ड्रेन' है - इसका मतलब यह है कि हमारे देश से बेहतर वेतन, अवसरों और सुविधाओं की तलाश में प्रतिभाशाली वैज्ञानिक विदेश चले जाते हैं।

पर्याप्त कर्मचारियों के अभाव के कारण नई तकनीकों और खोजों के विकास में देरी हो जाती है और कर्मचारियों की कमी के कारण मौजूद कर्मचारियाँ सिर्फ अपने काम में ही व्यस्त रहते हैं । उन्हें कार्यालयीन कामकाज में अंग्रेज़ी के स्थान पर हिंदी का प्रयोग करने में दिक्कत होती हैं । राजभाषा कर्मचारियों की कमी के कारण वैज्ञानिक क्षेत्र में राजभाषा हिंदी के प्रयोग के लिए उचित प्रशिक्षण नहीं मिलता । राजभाषा नीति का अनुपालन सही तरीके से नहीं हो जाते हैं । वैज्ञानिक प्रगति को आम जनता तक पहुँचाने में बाधाएँ आती है । पर्याप्त कर्मचारियों के अभाव के कारण वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं की कार्यक्षमता कम हो जाते हैं । इसलिए वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में मानव संसाधनों की उपलब्धता को सुनिश्चित करना अनिवार्य है ।

भारत सरकार, राजभाषा विभाग द्वारा जारी राजभाषा नीति के अनुपालन को देखते हुए औपचारिकता के रूप में केरल में स्थित वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में राजभाषा हिंदी का प्रयोग होते हैं । केरल में स्थित वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में देशभर से लोग आते हैं और केरल की मातृभाषा मलयालम है। इन दोनों कारण से इन लोगों के बीच कार्यभाषा अंग्रेज़ी बन जाते हैं । कर्मचारियों की यही मानसिकता के कारण राजभाषा हिंदी का प्रयोग में कमी होती है । कई वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में अधिकांश वैज्ञानिक हिंदी के पक्ष में खड़े होते हैं और आम जनता की भाषा में कार्य करने के लिए तैयार हो जाते हैं । वैज्ञानिक कार्य की वैश्विक संप्रेषण के कारण अंग्रेज़ी को अपनाया जाता है, लेकिन प्रशासनिक तथा वैज्ञानिक क्षेत्र में राजभाषा हिंदी के उपयोग को प्रोत्साहन देने का प्रयास भी करते हैं ।

केरल राज्य वैज्ञानिक, तकनीकी तथा शैक्षिक क्षेत्र में अग्रणी माना जाता है । यहाँ पर अंतरिक्ष विज्ञान, अंतर्विषयी विज्ञान, भूविज्ञान, पृथ्वी विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी विज्ञान जैसे अनेक क्षेत्रों में अनुसंधान कार्य

हो रहे हैं। अधिकांश शोध कार्य अंग्रेज़ी में होता है। अनुसंधान कार्य को हिंदी माध्यम में करने के लिए अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में शोध-पत्र, तकनीकी दस्तावेज़, शोध-रिपोर्ट तथा वैज्ञानिक पत्रिकाएँ अंग्रेज़ी में उपलब्ध हैं। हिंदी माध्यम में वैज्ञानिक अनुसंधान करने के लिए वैज्ञानिक शब्दावली की उपलब्धता एक महत्वपूर्ण विषय है। आधुनिक वैज्ञानिक खोजों के लिए अनुरूप मानकीकृत वैज्ञानिक शब्दावली उपलब्ध कराना आसान नहीं है। शोधकर्ताओं को उच्च स्तरीय शैक्षिक पुस्तकें, जर्नल, शोध-पत्र आदि सिर्फ अंग्रेज़ी में प्राप्त होते हैं। हिंदी में उपलब्ध सामग्री कम और रगड़ा हुआ होता है। इस कारण से हिंदी में सामग्री संकलन मुश्किल हो जाता है। वैज्ञानिक दस्तावेज़ों को हिंदी में अनुवाद करने पर अर्थ की शुद्धता बनाए रखने में बाधाएँ होने की संभावना है। शाब्दिक अनुवाद करने से अर्थ में स्पष्टता नहीं होगी। लेकिन इन स्थितियों को सुधारने के लिए भारी प्रयास किए जा रहे हैं।

हिंदी में लिखे गए शोध प्रबंध की वैश्विक पहुँच में कमी होगी। हिंदी में शोध लेखन, तकनीकी अनुवाद, डिजिटल सुविधाओं का प्रयोग तथा वैज्ञानिक प्रस्तुतीकरण में प्रत्येक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को आयोजित करना होगा। प्रशिक्षण देने के साथ ही कर्मचारियों तथा वैज्ञानिकों को इन सुविधाओं का कार्यालयीन कामकाज में प्रयुक्त करने के लिए प्रेरणा देना वांछनीय है। साथ-साथ सक्रिय कार्यान्वयन को तेज़ी से आगे बढ़ाने के लिए प्रयोग पर मूल्यांकन भी करना ज़रूरी है। वैज्ञानिक लेखन, प्रशिक्षण और शब्दावली की थोड़ी और बेहतर व्यवस्था करने से हिंदी माध्यम में शोध कार्य करने में बढ़ावा होगी तथा राजभाषा के ज़रिए भारत के वैज्ञानिक ज्ञान के प्रसार को सशक्त बनाने में सफल होगा।

केरल में राष्ट्रीय स्तर के अनेक वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाएँ कार्यरत हैं। क्षेत्रीय भाषा मलयालम के साथ वैज्ञानिक भाषा के रूप में अंग्रेज़ी का व्यापक प्रयोग होता है। भारत सरकार द्वारा जारी राजभाषा नीति के अनुपालन के अंतर्गत केरल में स्थित केन्द्रीय वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में राजभाषा हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने का निरंतर प्रयास जारी है। वर्तमान में हर संस्थान राजभाषा हिंदी को बढ़ावा देने के लिए विविध कार्यक्रमों का आयोजन करता है। हर संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन की गई है। प्रत्येक तिमाही में राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा बैठकें आयोजित की जाती हैं। बैठकों में राजभाषा कार्यान्वयन का मूल्यांकन करते हैं। हर तिमाही में कार्यक्रमों के आयोजन पर चर्चा की जाती हैं। हर वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान में राजभाषा हिंदी कार्यान्वयन के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किए जाते हैं। हिंदी दिवस को पखवाड़ा के रूप में आयोजित की जाती है। पहले से बढ़कर वैज्ञानिक तथा तकनीकी कार्यशालाओं का आयोजन वर्तमान में हो रहा है।

सहायक सूची

1. वार्षिक रिपोर्ट आई.आई.एस.टी
2. वार्षिक रिपोर्ट एन.आई.आई.एस.टी
3. पृथ्वी हिंदी गृह पत्रिका- एन.सी.ई.एस.एस

सहायक वेबसाईट सूची

1. https://www.iisertvm.ac.in/
2. https://iist.ac.in/
3. https://iist.ac.in/

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 220-224
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

खाड़ी देशों में राजनीतिक अस्थिरता और भारत के ऊर्जा हित : कच्चे तेल एवं प्राकृतिक गैस की आपूर्ति के संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ0 अमित कुमार
सहायक आचार्य,
राजनीति विज्ञान विभाग, के0 बी0 पी0 जी0 कालेज मिर्जापुर

सारांश

खाड़ी क्षेत्र विश्व की ऊर्जा व्यवस्था का एक अत्यंत महत्वपूर्ण केंद्र है, जहाँ सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, कतर, कुवैत, इराक और ईरान जैसे देश वैश्विक कच्चे तेल तथा प्राकृतिक गैस बाजार में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। भारत की तीव्र आर्थिक वृद्धि, औद्योगिकीकरण, नगरीकरण और परिवहन आवश्यकताओं के विस्तार के कारण ऊर्जा की मांग निरंतर बढ़ रही है। घरेलू उत्पादन से बढ़ती आवश्यकताओं की पूर्ण पूर्ति संभव न होने के कारण भारत अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा बाजार पर निर्भर है और खाड़ी क्षेत्र उसकी ऊर्जा आपूर्ति का प्रमुख आधार बना हुआ है। इसलिए भारत की ऊर्जा सुरक्षा पश्चिम एशिया की राजनीतिक स्थिरता, समुद्री परिवहन और वैश्विक ऊर्जा बाजार की परिस्थितियों से गहराई से जुड़ी हुई है। खाड़ी क्षेत्र में ईरान–सऊदी अरब प्रतिस्पर्धा, इराक एवं यमन की अस्थिरता, इजराइल–फिलिस्तीन संघर्ष, क्षेत्रीय तनाव तथा होर्मुज जलडमरूमध्य की सामरिक संवेदनशीलता ऊर्जा आपूर्ति के लिए गंभीर जोखिम उत्पन्न करती है। 2025 में लगभग 20 मिलियन बैरल प्रतिदिन तेल होर्मुज जलडमरूमध्य से गुजरा, जिससे इसकी वैश्विक ऊर्जा व्यवस्था में महत्ता स्पष्ट होती है। ऐसी परिस्थितियों में आपूर्ति बाधित होने से तेल एवं गैस की कीमतों, परिवहन लागत, मुद्रास्फीति और भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। प्राकृतिक गैस के संदर्भ में स्छळ की आपूर्ति भी वैश्विक बाजार, दीर्घकालीन अनुबंधों और सुरक्षित समुद्री मार्गों पर निर्भर रहती है।

अतः अध्ययन का केंद्रीय तर्क है कि भारत को खाड़ी देशों से अपने ऊर्जा संबंध समाप्त करने के बजाय ''ऊर्जा स्रोतों का विविधीकरण, रणनीतिक भंडारण, दीर्घकालीन स्छळ समझौते, घरेलू उत्पादन, नवीकरणीय एवं परमाणु ऊर्जा तथा सक्रिय ऊर्जा कूटनीति'' के माध्यम से संभावित जोखिमों को कम करना चाहिए। इस समन्वित दृष्टिकोण से भारत अपनी ऊर्जा सुरक्षा, आर्थिक विकास और राष्ट्रीय हितों को अधिक प्रभावी ढंग से सुरक्षित कर सकता है।

''मुख्य शब्दः– खाड़ी क्षेत्र, राजनीतिक अस्थिरता, ऊर्जा सुरक्षा, कच्चा तेल, प्राकृतिक गैस, स्छळ, भारत, ऊर्जा कूटनीति, होर्मुज जलडमरूमध्य, पश्चिम एशिया, समुद्री सुरक्षा, ऊर्जा विविधीकरण, रणनीतिक पेट्रोलियम भंडार

प्रस्तावना

खाड़ी क्षेत्र का सामरिक एवं ऊर्जा महत्व

खाड़ी क्षेत्र आधुनिक अंतरराष्ट्रीय राजनीति में अपनी भौगोलिक स्थिति और प्राकृतिक संसाधनों के कारण विशेष महत्व रखता है। फारस की खाड़ी पश्चिम एशिया को हिंद महासागर तथा वैश्विक समुद्री व्यापार से जोड़ती है। इसके आसपास स्थित देश विश्व के प्रमुख तेल एवं गैस उत्पादक देशों में शामिल हैं। इस कारण खाड़ी क्षेत्र में उत्पन्न राजनीतिक संकट का प्रभाव स्थानीय सीमाओं से बाहर निकलकर एशिया, यूरोप और वैश्विक अर्थव्यवस्था तक पहुँच सकता है। भारत के लिए खाड़ी क्षेत्र का महत्व ऐतिहासिक, आर्थिक, सामरिक और मानवीय सभी स्तरों पर है। भारत के पश्चिमी समुद्री तट से खाड़ी क्षेत्र की भौगोलिक निकटता ऊर्जा परिवहन को अपेक्षाकृत सुविधाजनक बनाती है। साथ ही भारत और खाड़ी देशों के बीच व्यापारिक संबंध, निवेश और भारतीय प्रवासी समुदाय ने दोनों पक्षों के संबंधों को बहुआयामी बना दिया है। भारत के विदेश मंत्रालय ने भी खाड़ी देशों को भारत की ऊर्जा सुरक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण माना है। ऐतिहासिक रूप से खाड़ी क्षेत्र भारत के कच्चे तेल तथा स्छळ आयात का प्रमुख स्रोत रहा है और इस क्षेत्र में बड़ी संख्या में भारतीय नागरिक कार्यरत हैं।

सऊदी अरब भारत के लिए महत्वपूर्ण कच्चे तेल आपूर्तिकर्ताओं में रहा है। ब्।म् भी ऊर्जा के साथ–साथ निवेश, व्यापार और रणनीतिक सहयोग में महत्वपूर्ण साझेदार बन चुका है। कतर भारत के स्छळ आयात में विशेष महत्व रखता है। कुवैत और इराक भी भारत की तेल आपूर्ति में योगदान देते हैं। इस प्रकार खाड़ी क्षेत्र भारत के लिए किसी एक देश पर आधारित ऊर्जा संबंध नहीं बल्कि अनेक देशों से जुड़े व्यापक ऊर्जा नेटवर्क का स्वरूप रखता है। खाड़ी क्षेत्र का महत्व केवल तेल उत्पादन के कारण नहीं है। प्राकृतिक गैस के संदर्भ में भी कतर विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। स्छळ के वैश्विक व्यापार में कतर की प्रमुख स्थिति भारत जैसे एशियाई आयातक देशों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। होर्मुज जलडमरूमध्य से गुजरने वाले स्छळ का बड़ा भाग एशियाई बाजारों की ओर जाता है। प्म्। के अनुसार 2025 में होर्मुज से गुजरने वाले स्छळ का लगभग 90ः एशिया की ओर गया और भारत, बांग्लादेश तथा पाकिस्तान ने मिलकर अपने स्छळ आयात का बड़ा हिस्सा इसी मार्ग से प्राप्त किया। इस प्रकार खाड़ी क्षेत्र की स्थिरता भारत के ऊर्जा हितों की आधारभूत शर्त है। यदि इस क्षेत्र में राजनीतिक तनाव बढ़ता है तो उसका प्रभाव उत्पादन, निर्यात, समुद्री परिवहन, बीमा, जहाजरानी और अंततः भारतीय उपभोक्ताओं तक पहुँचने वाली ऊर्जा की कीमत पर पड़ सकता है।

भारत की ऊर्जा निर्भरता और खाड़ी क्षेत्र

भारत विश्व की तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है और आर्थिक विकास के साथ ऊर्जा की मांग भी बढ़ रही है। परिवहन, उद्योग, बिजली, पेट्रोकेमिकल, उर्वरक और घरेलू उपयोग के लिए तेल तथा गैस की आवश्यकता लगातार बढ़ रही है। घरेलू उत्पादन इस बढ़ती मांग की पूरी पूर्ति करने में सक्षम नहीं है। इसलिए आयात भारत की ऊर्जा व्यवस्था का महत्वपूर्ण हिस्सा बना हुआ है। प्म्। के अनुसार भारत 2023 में विश्व का दूसरा सबसे बड़ा शुद्ध कच्चा तेल आयातक था और उसकी कच्चे तेल की आयात मात्रा लगभग 4.6 मिलियन बैरल प्रतिदिन थी। प्म्। ने अनुमान लगाया था कि 2030 तक भारत का कच्चे तेल का आयात लगभग 5.8 मिलियन बैरल प्रतिदिन तक पहुँच सकता है। यह स्थिति भारत की ऊर्जा सुरक्षा को अंतरराष्ट्रीय घटनाओं के प्रति संवेदनशील बनाती है। जब अंतरराष्ट्रीय तेल कीमतें बढ़ती हैं तो भारत का आयात बिल बढ़ता है। इसका प्रभाव व्यापार घाटे, चालू खाते, मुद्रा विनिमय दर और घरेलू मुद्रास्फीति पर पड़ सकता है। पेट्रोल, डीजल, स्च्ळ और अन्य पेट्रोलियम उत्पादों की कीमतों पर भी इसका प्रभाव पड़ता है।

प्राकृतिक गैस की स्थिति कुछ अलग है। भारत घरेलू प्राकृतिक गैस का उत्पादन करता है, लेकिन स्छळ आयात भी आवश्यक है। गैस का उपयोग बिजली उत्पादन, उर्वरक, पेट्रोकेमिकल, उद्योग, ब्छळ और च्छळ क्षेत्रों में होता है। स्छळ की कीमतें वैश्विक बाजार की परिस्थितियों और आपूर्ति मार्गों से प्रभावित होती हैं। इस संदर्भ में खाड़ी क्षेत्र भारत के लिए दोहरी भूमिका निभाता है, एक ओर यह ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है, दूसरी ओर यह समुद्री ऊर्जा परिवहन का महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इसलिए भारत की ऊर्जा सुरक्षा केवल उत्पादक देशों के साथ संबंधों पर नहीं बल्कि समुद्री मार्गों की सुरक्षा पर भी निर्भर करती है। यहाँ भारत की रणनीति में विविधीकरण का महत्व बढ़ जाता है। भारत ने रूस, अमेरिका, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका और अन्य क्षेत्रों से भी ऊर्जा आयात बढ़ाने का प्रयास किया है। इससे किसी

एक क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भरता कम करने में सहायता मिलती है। फिर भी भौगोलिक निकटता, उत्पादन क्षमता और दीर्घकालीन संबंधों के कारण खाड़ी क्षेत्र भारत की ऊर्जा व्यवस्था में महत्वपूर्ण बना रहेगा।

राजनीतिक अस्थिरता और ऊर्जा आपूर्ति के जोखिम

खाड़ी क्षेत्र में राजनीतिक अस्थिरता का स्वरूप जटिल, बहुआयामी और निरंतर परिवर्तित होने वाला है। अंतर–राज्यीय प्रतिस्पर्धा, क्षेत्रीय शक्ति–संघर्ष, राजनीतिक एवं वैचारिक विभाजन, गृहयुद्ध, आतंकवाद, अंतरराष्ट्रीय प्रतिबंध तथा बाहरी शक्तियों का हस्तक्षेप एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं। इन परिस्थितियों का प्रभाव केवल संबंधित देशों की आंतरिक राजनीति और सुरक्षा तक सीमित नहीं रहता, बल्कि कच्चे तेल एवं प्राकृतिक गैस के उत्पादन, निर्यात, मूल्य निर्धारण तथा समुद्री परिवहन पर भी पड़ता है। ईरान और सऊदी अरब के बीच लंबे समय से चली आ रही रणनीतिक प्रतिस्पर्धा ने खाड़ी क्षेत्र के राजनीतिक एवं सामरिक वातावरण को प्रभावित किया है। यद्यपि दोनों देशों के बीच संवाद और तनाव कम करने के प्रयास हुए हैं, फिर भी क्षेत्रीय संघर्षों तथा विभिन्न पक्षों के बीच हितों का टकराव ऊर्जा सुरक्षा के लिए चुनौती बना हुआ है। इसी प्रकार इराक की राजनीतिक एवं सुरक्षा संबंधी अस्थिरता भारत के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि इराक भारत के कच्चे तेल के प्रमुख स्रोतों में शामिल है। वहाँ राजनीतिक संकट या सुरक्षा व्यवधान होने पर उत्पादन, निर्यात और आपूर्ति की निरंतरता प्रभावित हो सकती है।

यमन संकट तथा लाल सागर क्षेत्र में बढ़ते तनाव ने ऊर्जा परिवहन से जुड़े जोखिमों को और स्पष्ट किया है। समुद्री जहाजों की सुरक्षा प्रभावित होने पर ऊर्जा टैंकरों को वैकल्पिक और लंबे मार्ग अपनाने पड़ सकते हैं, जिससे मालभाड़ा, बीमा और परिवहन लागत में वृद्धि होती है। इजराइल–फिलिस्तीन संघर्ष तथा उससे जुड़े व्यापक क्षेत्रीय तनाव भी वैश्विक ऊर्जा बाजार में अनिश्चितता बढ़ा सकते हैं। इसी क्रम में ईरान से संबंधित सैन्य तनाव होर्मुज जलडमरूमध्य को विशेष रूप से संवेदनशील बनाता है। 2025 में लगभग 20 मिलियन बैरल प्रतिदिन तेल इस मार्ग से गुजरा, जो वैश्विक समुद्री तेल व्यापार का लगभग एक–चौथाई था। कतर और संयुक्त अरब अमीरात के स्छळ निर्यात का भी बड़ा हिस्सा इसी मार्ग पर निर्भर रहता है। होर्मुज जलडमरूमध्य में गंभीर व्यवधान की स्थिति भारत के लिए ऊर्जा उपलब्धता, कीमत और परिवहन व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है। इससे आयात बिल में वृद्धि, मुद्रास्फीति, औद्योगिक लागत और आर्थिक विकास पर दबाव बढ़ सकता है। 2026 के क्षेत्रीय तनावों ने भी भारत के लिए वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों तथा परिवहन मार्गों की उपयोगिता को स्पष्ट किया है। अतः भारत की ऊर्जा सुरक्षा का अर्थ केवल पर्याप्त तेल एवं गैस की उपलब्धता नहीं, बल्कि ''आपूर्ति की निरंतरता, सुरक्षित समुद्री परिवहन, रणनीतिक भंडारण, वैकल्पिक स्रोतों और प्रभावी ऊर्जा कूटनीति'' को सुनिश्चित करना भी है।

भारत की ऊर्जा कूटनीति और खाड़ी देशों के साथ संबंध

भारत ने खाड़ी देशों के साथ अपने संबंधों को केवल कच्चे तेल और प्राकृतिक गैस के आयात तक सीमित न रखते हुए उन्हें व्यापक आर्थिक, सामरिक और कूटनीतिक साझेदारी का स्वरूप प्रदान किया है। सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, कतर, ओमान, कुवैत और अन्य खाड़ी देश भारत की ऊर्जा सुरक्षा के साथ–साथ व्यापार, निवेश, रक्षा, समुद्री सुरक्षा, प्रौद्योगिकी तथा प्रवासी भारतीयों के हितों से भी जुड़े हुए हैं। संयुक्त अरब अमीरात भारत के लिए महत्वपूर्ण ऊर्जा एवं निवेश साझेदार है, जबकि सऊदी अरब कच्चे तेल की आपूर्ति के साथ व्यापक आर्थिक एवं रणनीतिक संबंधों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कतर भारत की प्राकृतिक गैस तथा स्छळ आवश्यकताओं की पूर्ति में विशेष भूमिका निभाता है और दीर्घकालीन स्छळ समझौते आपूर्ति की निरंतरता बनाए रखने में उपयोगी हैं। ओमान अपनी भौगोलिक एवं समुद्री स्थिति के कारण भारत के लिए सामरिक महत्व रखता है। ईरान के साथ भारत के ऐतिहासिक संबंधों में चाबहार बंदरगाह महत्वपूर्ण है, जिसके माध्यम से भारत मध्य एशिया तक संपर्क एवं व्यापार के नए अवसर विकसित करना चाहता है। हालांकि ईरान पर अंतरराष्ट्रीय प्रतिबंधों तथा अमेरिका–ईरान तनाव के कारण भारत के लिए इस संबंध में संतुलन बनाए रखना आवश्यक हो जाता है।

भारत की वर्तमान ऊर्जा कूटनीति का उद्देश्य केवल तेल और गैस प्राप्त करना नहीं, बल्कि ''निरंतर, सुरक्षित, किफायती और विविधीकृत ऊर्जा आपूर्ति'' सुनिश्चित करना है। इसके लिए भारत विदेशों में तेल एवं गैस परिसंपत्तियों में निवेश, दीर्घकालीन तेल एवं स्छळ समझौते, रणनीतिक

पेट्रोलियम भंडार, आपूर्ति स्रोतों के भौगोलिक विविधीकरण तथा ऊर्जा अवसंरचना के विकास पर विशेष ध्यान दे रहा है। इससे अंतरराष्ट्रीय बाजार में कीमतों के उतार–चढ़ाव और संभावित आपूर्ति संकटों के प्रभाव को कम किया जा सकता है। साथ ही खाड़ी देशों के साथ निरंतर उच्चस्तरीय राजनीतिक संवाद भारत को संकट की परिस्थितियों में वैकल्पिक कूटनीतिक विकल्प उपलब्ध कराता है। अतः भारत के लिए खाड़ी क्षेत्र के साथ ''संतुलित, विश्वसनीय, पारस्परिक हितों पर आधारित और दीर्घकालीन ऊर्जा साझेदारी'' बनाए रखना आवश्यक है।

कच्चा तेल, प्राकृतिक गैस और भारत की ऊर्जा सुरक्षा : चुनौतियाँ एवं भविष्य की दिशा

भारत की ऊर्जा व्यवस्था में कच्चे तेल और प्राकृतिक गैस की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, किंतु दोनों की आपूर्ति तथा उनसे जुड़े जोखिमों की प्रकृति अलग–अलग है। भारत की तीव्र आर्थिक वृद्धि, औद्योगिकीकरण, परिवहन तथा शहरीकरण के कारण तेल की मांग लगातार बढ़ रही है और घरेलू उत्पादन से इसकी संपूर्ण आवश्यकता पूरी नहीं हो पाती। भारत अनेक देशों से कच्चे तेल का आयात करता है, जिससे एकल स्रोत पर निर्भरता का जोखिम कुछ कम होता है। फिर भी अंतरराष्ट्रीय कीमतों में अचानक वृद्धि, उत्पादन में कमी अथवा समुद्री मार्गों में व्यवधान से भारत के आयात व्यय, व्यापार संतुलन, मुद्रास्फीति तथा आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। प्राकृतिक गैस के क्षेत्र में स्थिति कुछ भिन्न है। भारत घरेलू गैस उत्पादन के साथ–साथ स्छळ का आयात करता है। स्छळ की आपूर्ति उत्पादन, द्रवीकरण, समुद्री परिवहन, पुनर्गैसीकरण टर्मिनलों तथा वैश्विक बाजार की कीमतों से जुड़ी रहती है। इसलिए खाड़ी क्षेत्र में राजनीतिक तनाव अथवा समुद्री मार्गों में व्यवधान भारत की गैस उपलब्धता और कीमत दोनों को प्रभावित कर सकता है। दीर्घकालीन स्छळ समझौते इस जोखिम को कम करने में सहायक हो सकते हैं।

ऐसी परिस्थिति में भारत के सामने सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता ''ऊर्जा स्रोतों और आपूर्ति मार्गों का विविधीकरण'' है। खाड़ी देशों के साथ संबंध बनाए रखते हुए रूस, अमेरिका, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका तथा अन्य उत्पादक क्षेत्रों से आयात के विकल्प विकसित करना आवश्यक है। इसके साथ रणनीतिक पेट्रोलियम भंडार की क्षमता बढ़ाकर आकस्मिक आपूर्ति संकट से निपटने की तैयारी मजबूत की जानी चाहिए। दीर्घकालीन दृष्टि से सौर एवं पवन ऊर्जा, जैव ईंधन, हरित हाइड्रोजन और परमाणु ऊर्जा में निवेश बढ़ाना आवश्यक है, ताकि जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता धीरे–धीरे कम की जा सके। साथ ही हिंद महासागर और पश्चिमी समुद्री मार्गों की सुरक्षा भारत की ऊर्जा रणनीति का अभिन्न हिस्सा होनी चाहिए। अतः भारत की भविष्य की ऊर्जा रणनीति ''स्रोत–विविधीकरण, रणनीतिक भंडारण, सुरक्षित समुद्री परिवहन, वैकल्पिक ऊर्जा तथा सक्रिय ऊर्जा कूटनीति'' के समन्वित आधार पर निर्मित होनी चाहिए।

निष्कर्ष

खाड़ी क्षेत्र और भारत की ऊर्जा सुरक्षा के बीच गहरा एवं बहुआयामी संबंध है। भारत की बढ़ती ऊर्जा मांग, सीमित घरेलू उत्पादन तथा तीव्र आर्थिक विकास की आवश्यकताओं के कारण देश अंतरराष्ट्रीय तेल एवं प्राकृतिक गैस बाजार पर निर्भर है। इस स्थिति में खाड़ी देश भारत के लिए केवल ऊर्जा आपूर्तिकर्ता नहीं, बल्कि आर्थिक, सामरिक और कूटनीतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण साझेदार हैं। सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, कतर, इराक और अन्य देशों के साथ भारत के ऊर्जा संबंध उसकी विकास प्रक्रिया को आधार प्रदान करते हैं।

खाड़ी क्षेत्र में राजनीतिक अस्थिरता भारत की ऊर्जा सुरक्षा के लिए गंभीर चुनौती उत्पन्न कर सकती है। क्षेत्रीय संघर्षों से तेल और गैस के उत्पादन तथा निर्यात में बाधा आ सकती है। इसके अतिरिक्त होर्मुज जलडमरूमध्य जैसे महत्वपूर्ण समुद्री मार्गों में व्यवधान से जहाजरानी, बीमा और परिवहन लागत बढ़ने के साथ वैश्विक ऊर्जा कीमतों में वृद्धि हो सकती है। इसका प्रभाव भारत के आयात व्यय, व्यापार संतुलन, मुद्रास्फीति और औद्योगिक विकास पर पड़ सकता है। प्राकृतिक गैस एवं स्छळ की आपूर्ति में व्यवधान का प्रभाव बिजली, उर्वरक तथा औद्योगिक क्षेत्रों पर भी पड़ सकता है। इन परिस्थितियों में भारत के लिए ''ऊर्जा स्रोतों का विविधीकरण, रणनीतिक पेट्रोलियम भंडार, दीर्घकालीन स्छळ अनुबंध, घरेलू उत्पादन, नवीकरणीय एवं परमाणु ऊर्जा तथा सुरक्षित समुद्री मार्गों'' को मजबूत करना आवश्यक है। साथ ही खाड़ी देशों के साथ संतुलित और सक्रिय ऊर्जा कूटनीति बनाए रखना भी जरूरी है।

अतः भारत के लिए खाड़ी क्षेत्र से दूरी बनाना व्यावहारिक विकल्प नहीं है। अधिक प्रभावी रणनीति यह है कि खाड़ी देशों के साथ दीर्घकालीन संबंध बनाए रखते हुए ऊर्जा निर्भरता से जुड़े जोखिमों को विविधीकरण, रणनीतिक भंडारण और वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों के माध्यम से कम किया जाए। यही दृष्टिकोण भारत की दीर्घकालीन ऊर्जा सुरक्षा तथा आर्थिक हितों को अधिक प्रभावी ढंग से सुरक्षित कर सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. दीक्षित, जे. एन. (2018). भारतीय विदेश नीति. प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. खन्ना, वी. एन. (2020). भारत की विदेश नीति. विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
3. पंत, पुष्पेश कुमार. (2021). अंतरराष्ट्रीय संबंध. मैकग्रा हिल एजुकेशन, नई दिल्ली।
4. यादव, आर. एस. (2017). भारत की विदेश नीति : सिद्धांत एवं व्यवहार. पीयरसन इंडिया, नई दिल्ली।
5. सिंह, एम. पी. (2019). अंतरराष्ट्रीय राजनीति एवं भारत की विदेश नीति. ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली।
6. श्रीवास्तव, एस. सी. (2018). पश्चिम एशिया की राजनीति और भारत. हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
7. मिश्रा, आर. के. (2022). भारत की ऊर्जा सुरक्षा और विदेश नीति. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. Pant, H. V. (2019). India and the Gulf: New Delhi's changing relations with the Gulf states. Routledge.
9. Mohan, C. Raja. (2015). Modi's World: Expanding India's sphere of influence. HarperCollins India.
10. Yergin, D. (2020). The New Map: Energy, Climate, and the Clash of Nations. Penguin Press.
11. Fattouh, B., & Sen, A. (2018). Saudi Arabia's Vision 2030 and Energy Reform. Oxford Institute for Energy Studies.
12. International Energy Agency. (2024). India Oil Market Report 2024. International Energy Agency.
13. International Energy Agency. (2025). Strait of Hormuz and Global Oil Security. International Energy Agency.
14. Ministry of Petroleum and Natural Gas, Government of India. (2024). Energy Diplomacy and International Cooperation. Government of India.
15. Ministry of External Affairs, Government of India. (2024). Annual Report 2023–24. Government of India.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 August 2026 Page No. : 225-231
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

उषा यादव के बाल कथा–साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ

आशा कुमारी
सहायक प्रध्यापक (हिन्दी विभाग)
रमा देवी बाजला महिला महाविद्यालय, देवघर।

हिन्दी साहित्य में बाल साहित्य की परम्परा अत्यंत ही समृद्ध माना जाता है। मनुष्य की जितनी भी अवस्थाएँ होती है उसमें से सबसे सर्वश्रेष्ट बाल्यावस्था को माना गया है। इस अवस्था में हर प्राणी जीभर के जीना चाहता है। बालकों की कुछ प्रवृतियाँ यथा–नटखट, अठखेलियाँ, बाल मनोवृतियाँ, तरंगिनी की लोल लहरों जैसी चंचल शरारते मनोहरी क्रीड़ायें, खिले हुए सुमनों सी कोमल मुस्कान, प्रातःकालीन समीर की मानिंद आनन्ददायक चेष्टायें कुम्हड़बतियाँ से भी अधिक संवेदनशील भाव निर्झर सी खिलखिलाहट तितली जैसी चंचलता, जल सी सरलता व निर्मलता बरबस ही सहृदय का मनमोहने का कार्य करती है। ये अनिर्वचनीय, अभिराम, अतुलनीय, अद्वितीय, अलौकिक, अद्‌भुत बाल–क्रीडायें, संवेदनाऐं किसी कवि हृदय के अन्तस्थल का स्पर्श करते हुए अभिव्यक्त होकर बाल साहित्य में रूपांतरित हो जाती है। भावी कर्णधार होने के लिए बालक की बाल्यावस्था रूपी कच्ची किन्तु उर्वर मिट्‌टी के सुसंस्कार का बीज डाला जाना आवश्यक है। तभी वे बच्चे अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित होकर भविष्य के सुसभ्य, अनुशासित, संवेदनशील और सुसंस्कारित नागरिक के रूप में फलित हो सकेंगे। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि इन समूची प्रक्रिया होना बाल साहित्य द्वारा ही संभव है।

बाल साहित्य का इतिहास अत्यंत ही गौरवशाली रहा है तथा इसे गौरवशाली बनाने में अनेकों बाल साहित्याकारों का अविस्मरणीय योगदान रहा है। जिसमें सर्वेश्वर दयाल शर्मा, डॉ0 श्री प्रसाद, हरिओम गुणाकर, श्रीघर पाठक, विष्णु प्रभाकर, डॉ0 श्री हरिकृष्ण देवसरे, प्रकाश मनु, राजेश जोहरी, राष्ट्र बंधु सीताराम गुप्ता और दीनदयाल शर्मा का नाम अविस्मरणीय है। इसी परम्परागत माला के एक मोती के रूप में उषा यादव का नाम सर्वविदित है। बाल साहित्य को अपने मुकाम तक पहुंचाने में इसका योगदान अति महत्वपूर्ण है। बाल साहित्य के सृजन की जब राष्ट्रीय स्तर पर बात की जाए तो यह स्पष्ट होता है कि उत्तर प्रदेश के इस बाल साहित्यकार का नाम किसी परिचय का मुहताज नहीं है, उन्होंने विगत काई वर्षों से बहुत ही निष्ठा व ईमानदारी के साथ बच्चों के लिए साहित्य सृजन का कार्य किया है। इनके अविस्मरणीय योगदान को कभी भूलाया नहीं जा सकता है।

बीज शब्द

बाल साहित्य, बाल मनोविज्ञान, सृजनशीलता, नैतिकता, संवेदनशीलता, करूणा, यथार्थपरक दृष्टिकोण, कोमलता, प्रभावशाली भाषा, उपदेशात्मक, स्वभाविक्ता, शिक्षात्मक।

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य की समृद्ध परंपरा में बाल साहित्य का विशेष स्थान है। बाल साहित्य न केवल मनोरंजन का साधन है, बल्कि यह बच्चों के बौद्धिक, भावनात्मक, नैतिक एवं सामाजिक विकास का सशक्त माध्यम भी है। इसी परंपरा को आगे बढ़ाने में उषा यादव का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। उन्होंने बाल

मनोविज्ञान, सामाजिक यथार्थ, नैतिक मूल्यों तथा संवेदनात्मक अनुभवों को अपने बाल कथा–साहित्य में अत्यंत सहज और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया है।

उषा यादव हिन्दी की एक सुप्रसिद्ध साहित्यकार हैं, जिन्होंने कहानी, उपन्यास, कविता तथा बाल साहित्य की अनेक विधाओं में सृजन किया है। उनकी सौ से अधिक पुस्तकों की रचना है तथा उन्हें साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में उनके योगदान के लिए पद्मश्री से भी सम्मानित किया गया है। उनके बाल साहित्य में विशेष रूप से बाल कथाएँ उल्लेखनीय हैं, जिनमें जीवन के विभिन्न पक्षों को सरल, रोचक और शिक्षाप्रद शैली में प्रस्तुत किया गया है।

बाल साहित्य का महत्व और संदर्भ

बाल साहित्य का मूल उद्देश्य बच्चों के मानसिक एवं नैतिक विकास को दिशा देना होता है। यह साहित्य बच्चों को उनके परिवेश से परिचित कराते हुए उनमें संवेदनशीलता, नैतिकता, कल्पनाशीलता और सृजनशीलता का विकास करता है। बाल कथा–साहित्य इस प्रक्रिया का सबसे प्रभावी माध्यम है, क्योंकि कहानी बच्चों के लिए सबसे प्रिय और सहज विधा होती है। बाल कथाएँ बच्चों को न केवल मनोरंजन प्रदान करती हैं, बल्कि वे उन्हें जीवन के मूल्यों जैसे सत्य, ईमानदारी, सहयोग, साहस और करुणा का बोध भी कराती हैं।[1] इस दृष्टि से उषा यादव का बाल कथा–साहित्य अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि इसमें शिक्षा और मनोरंजन का संतुलित समन्वय देखने को मिलता है।

उषा यादव का साहित्यिक व्यक्तित्व

उषा यादव का जन्म 2 अप्रैल 1948 को उत्तर प्रदेश के कानपुर में हुआ। वे एक बहुआयामी रचनाकार हैं, जिन्होंने कथा–साहित्य, उपन्यास, कविता तथा बाल साहित्य में उल्लेखनीय योगदान दिया है। उनके साहित्य में मानवीय संवेदनाओं, सामाजिक सरोकारों और यथार्थपरक दृष्टिकोण का गहरा प्रभाव दिखाई देता है।[2] उनकी प्रमुख कृतियों में बाल साहित्य के अंतर्गत ''नन्हा दधीचि,'' लाखों में एक,'' यहाँ सुमन बिखेर दो'' आदि उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त हिन्दी की श्रेष्ठ बाल कहानियाँ'' जैसे संग्रहों के माध्यम से उन्होनें बाल कथा साहित्य को समृद्ध किया है।

उषा यादव के बाल कथा–साहित्य की विशेषताएँ–

उषा यादव के बाल कथा–साहित्य की कुछ प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित है :–

1. बाल मनोविज्ञान की गहरी समझ
2. सरल, सहज एवं प्रभावशाली भाषा
3. नैतिक मूल्यों का समावेश
4. सामाजिक यथार्थ का चित्रण
5. कल्पनाशीलता और रोचकता
6. संवादात्मक शैली
7. विषय–वस्तु और सामाजिक चेतना
8. पात्र–चित्रण और कलात्मकता

1. बाल मनोविज्ञान की गहरी समझ

उनकी कहानियों में बाल मन की जिज्ञासा, संवत्तेनाएँ, कल्पनाएँ और संघर्ष अत्यन्त स्वाभाविक रूप से चित्रित होते हैं। वे बच्चों की दृष्टि से संसार को देखने का प्रयास करती हैं, जिससे उनकी रचनाएँ बच्चों के लिए सहज और आत्मीय बन जाती हैं। उषा यादव के बाल कथा–साहित्य की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता उनकी बाल मनोविज्ञान पर गहरी पकड़ है। वे बच्चों के मन, उनकी भावनाओं, जिज्ञासाओं, कल्पनाओं और अंतरिक द्वंद्वों को अत्यन्त सूक्ष्मता और संवशेदनाशीलता के साथ प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि वे बाल मन की संरचना और उसकी कार्यपद्धति को भली–भाँति समझती हैं। सबसे पहले, उनकी कहानियों में बच्चों की जिज्ञासा को अत्यन्त स्वाभाविक रूप में चित्रित किया गया है। बच्चे अपने आसपास की दुनिया को समझने के लिए निरंतर प्रश्न करते हैं– क्यों, कैसे, कब और क्या? उषा यादव इन प्रश्नों को दबाने के बजाय उन्हें कहानी का आधार बनाती हैं। उनकी कथाओं में बाल पात्र नई–नई चीजों को जानने के लिए उत्सुक रहते हैं, जिससे पाठक बच्चों को अपनी ही तरह अनुभव करता है। यह जिज्ञासा न केवल ज्ञानवर्धक होती है, बल्कि बच्चों के बौद्धिक विकास को भी प्रेरित करती है। उनकी कहानियों में संवत्तेनाओं का अत्यन्त मार्मिक चित्रण मिलता है। बच्चे बहुत जल्दी खुश होते हैं, उतनी ही जल्दी आहत भी हो जाते हैं। उषा यादव इस भावनात्मक कोमतला को बड़ी ही सहजता से

अभिव्यक्त करती हैं।[3] उनके बाल पात्र प्रेम, स्नेह, ईर्ष्या, भय, अकेलापन और अपनापन जैसी भावनाओं से गुजरते हैं। इन भावनाओं का चित्रण इतना स्वाभाविक होता है कि पाठक स्वयं को उन स्थितियों से जुड़ा हुआ महसूस करता है। कल्पनाशीलता उनके बाल कथा–साहित्य की एक विशिष्ट पहचान है। बच्चे स्वभाव से कल्पनाशील होते हैं और अपनी दुनिया को अपनी कल्पना के रंगों से सजाते हैं। उषा यादव इस कल्पनाशीलता को अपनी कहानियों में सजीव रूप देती हैं। उनके पात्र कभी साधारण वस्तुओं में भी असाधारण अर्थ खोज लेते हैं, तो कभी कल्पना के माध्यम से अपने डर और समस्याओं का समाधान करती हैं। इससे बच्चों की रचनात्मकता को प्रोत्साहन मिलता है। उनकी कहानियों में संघर्ष का चित्रण भी अत्यन्त यथार्थपर्ण है। यह संघर्ष बाहरी परिस्थितियों से भी हो सकता है और आतंरिक द्वंद्व से भी, जैसे सही और गलत के बीच चयन, आत्मविश्वास की कमी, सामाजिक दबाव या पारिवारिक परिस्थितियाँ। उषा यादव इन संघर्षों को इस प्रकार प्रस्तुत करती हैं कि बच्चे उनसे सीख लेते हैं, बिना किसी बोझ या उपदेश के। इसके अतिरिक्त, उषा यादव की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वे बच्चों को केवल एक पात्र के रूप में नहीं, बल्कि एक स्वंत्रत व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनके बाल पात्र अपनी सोच रखते हैं, निर्णय लेते हैं और अपने अनुभवों से सीखते हैं। यह दृष्टिकोण बाल साहित्य को अधिक जीवंत और प्रभावशाली बनाता है। उनकी कहानियों में भी बाल मनोविज्ञान के अनुरूप होती हैं। बच्चों के बीच होने वाली बातचीत सरल, स्वाभाविक और जीवंत होती है। इससे पाठक को ऐसा अनुभव होता है मानो वह स्वयं उस कथा का हिस्सा हो। अंततः यह कहा जा सकता है कि उषा यादव का बाल कथा–साहित्य बाल मनोविज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है। वे बच्चों की दुनिया को उनकी ही आँखों से देखती हैं और उसी के अनुरूप अपनी रचनाओं का निर्माण करती हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियाँ बच्चों के लिए न केवल रोचक होती हैं, बल्कि वे उनके मानसिक, भावनात्मक और नैतिक विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इस प्रकार, बाल मनोविज्ञान की गहरी समझ उषा यादव के बाल कथा–साहित्य को विशिष्ट और प्रभावशाली बनाती है।[4]

2 सरल और प्रभावशाली भाषा

उनकी भाषा सरल, सहज और संवादात्मक है, जो बच्चों के स्तर के अनरूप होती है। वे कठिन शब्दों और जटिल संरचनाओं से बचते हुए स्पष्ट और बोधगम्य शैली का प्रयोग करती हैं। उषा यादव के बाल कथा–साहित्य की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता उनकी सरल, सहज और प्रभावशाली भाषा है। बाल साहित्य की सफलता का सबसे बड़ा आधार उसकी भाषा होती है, क्योंकि वही बच्चों तक विचारों और भावनाओं को पहुँचाने का माध्यम बनती है। उषा यादव इस तथ्य को भली–भाँति समझती हैं, इसलिए उनकी भाषा बच्चों के मानसिक स्तर, उनकी समझ और उनकी अभिव्यक्ति के अनुरूप होती है। सबसे पहले, उनकी भाषा सरलता से परिपूर्ण है। वे कठिन, जटिल और क्लिष्ट शब्दों के प्रयोग से बचती हैं तथा ऐसे शब्दों का चयन करती हैं, जो बच्चों के दैनिक जीवन में प्रचलित होते हैं। इससे बच्चे बिना किसी कठिनाई के कहानी को समझ पाते हैं और उसके साथ सहज रूप से जुड़ जाते हैं। उनकी भाषा में सहजता का गुण विद्यमान है। उनकी कहानियाँ पढ़ते समय ऐसा प्रतीत होता है मानो कोई परिचित व्यक्ति बच्चों से बातचीत कर रहा हो। यह सहजता बच्चों के मन में आत्मीयता का भाव उत्पन्न करती है और उन्हें कहानी से भावनात्मक रूप से जोड़ती है। उषा यादव की भाषा संवादात्मक है। उनकी कहानियों में संवादों का प्रयोग अत्यंत प्रभावी ढंग से किया गया है, जो कथा को जीवंत और रोचक बनाता है। बच्चों के बीच होने वाले संवाद उनकी वास्तविक बोलचाल के निकट होते हैं, जिससे पाठक को स्वाभाविकता का अनुभव होता है। यह शैली बच्चों की रुचि बनाए रखने में सहायक होती है। उनकी भाषा में स्पष्टता और बोधगम्यता का विशेष ध्यान रखा गया है। वे विचारों को सीधे और स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करती हैं, जिससे बच्चों को संदेश समझने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती। उनके वाक्य छोटे, सरल और अर्थपूर्ण होते हैं, जो बाल पाठकों के लिए उपयुक्त हैं। इसके अतिरिक्त, उनकी भाषा में भी विद्यमान है। वे सरल शब्दों के माध्यम से ही गहरी भावनाओं को व्यक्त करने में सक्षम हैं। उनकी कहानियों में प्रयुक्त भाषा बच्चों के मन को छूती है और उनमें संवेदनशीलता विकसित करती है। उषा यादव की भाषा की एक अन्य विशेषता यह है कि वह शिक्षात्मक होते हुए भी उपदेशात्मक नहीं होती। वे किसी भी नैतिक संदेश को सीधे न देकर उसे कहानी के माध्यम से इस प्रकार प्रस्तुत करती हैं कि बच्चे स्वयं उससे सीख ग्रहण कर लेते हैं। यह उनकी भाषा की प्रभावशीलता को और अधिक बढ़ा देता है। अंततः, यह कहा जा सकता है कि उषा यादव की भाषा न केवल सरल और सहज है, बल्कि अत्यंत प्रभावशाली भी है। यह भाषा

बच्चों को आकर्षित करती है, उन्हें कहानी से जोड़ती है और उनके मानसिक एवं भावनात्मक विकास में सहायक होती है। इस प्रकार, सरल और प्रभावशाली भाषा उषा यादव के बाल कथा–साहित्य को बच्चों के लिए अधिक आकर्षक, बोधगम्य और प्रभावशाली बनाती है।

3 नैतिक मूल्यों का समावेश

उषा यादव के बाल कथा–साहित्य की एक प्रमुख और अत्यंत महत्वपूर्ण विशेषता उनकी कहानियों में नैतिक मूल्यों का सहज समावेश है। बाल साहित्य का एक मूल उद्देश्य बच्चों में अच्छे संस्कारों और नैतिक आदर्शों का विकास करना होता है, और उषा यादव इस उद्देश्य को अत्यंत प्रभावी ढंग से पूरा करती हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उनकी कहानियाँ उपदेशात्मक नहीं होतीं। वे बच्चों को सीधे–सीधे सीख देने के बजाय कथा के माध्यम से इस प्रकार मूल्य प्रस्तुत करती हैं कि बच्चे स्वयं उन्हें अनुभव करके समझते हैं। यह अप्रत्यक्ष शिक्षण पद्धति बच्चों के मन पर अधिक स्थायी प्रभाव छोड़ती है, क्योंकि इसमें सीख किसी बोझ की तरह नहीं लगती, बल्कि स्वाभाविक रूप से आत्मसात हो जाती है। उनकी कहानियों में सत्य, ईमानदारी, सहयोग, दया, करुणा, परोपकार, अनुशासन और साहस जैसे नैतिक मूल्यों का अत्यंत सुंदर और स्वाभाविक चित्रण मिलता है। उदाहरण के रूप में, कई कहानियों में बच्चे कठिन परिस्थितियों में भी सत्य का साथ देते हैं, जिससे पाठकों में सत्यनिष्ठा का भाव विकसित होता है। इसी प्रकार, सहयोग और मित्रता पर आधारित कथाएँ बच्चों को सामूहिकता और सह– अस्तित्व का महत्व समझाती हैं। उषा यादव के बाल पात्र केवल आदर्श प्रस्तुत करने वाले नहीं होते, बल्कि वे त्रुटियों और संघर्षों से गुजरते हुए सीखने वाले पात्र होते हैं। वे कभी गलती भी करते हैं, परंतु अनुभव से सीखकर स्वयं को सुधारते हैं। इस प्रकार का चित्रण बच्चों के लिए अधिक यथार्थपूर्ण और प्रेरणादायक होता है, क्योंकि वे स्वयं को उन पात्रों में देख पाते हैं। उनकी कहानियों में परिस्थितिजन्य नैतिकता का भी सुंदर समावेश है।[5] अर्थात, मूल्य किसी सिद्धांत के रूप में नहीं, बल्कि परिस्थितियों के अनुसार विकसित होते हुए दिखाए जाते हैं। इससे बच्चों में निर्णय लेने की क्षमता और सही–गलत का विवेक विकसित होता है।

इसके अतिरिक्त, उनकी कथाओं में परिवार, समाज और प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता का भी समावेश मिलता है। वे बच्चों को न केवल अच्छे इंसान बनने की प्रेरणा देती हैं, बल्कि उन्हें जिम्मेदार नागरिक बनने की दिशा भी दिखाती हैं। उषा यादव की एक विशेषता यह भी है कि वे नैतिक मूल्यों को रोचक घटनाओं और आकर्षक कथानक के साथ जोड़ती हैं। इससे कहानी नीरस नहीं होती और बच्चे पूरे उत्साह के साथ उसे पढ़ते हैं। कहानी के अंत में मिलने वाली सीख उनके मन में गहराई तक उतर जाती है। अंततः, यह कहा जा सकता है कि उषा यादव का बाल कथा–साहित्य नैतिक शिक्षा का एक सशक्त माध्यम है। उनकी कहानियाँ बच्चों को बिना किसी दबाव के, सहज और रोचक तरीके से जीवन के महत्वपूर्ण मूल्यों से परिचित कराती हैं।

4 सामाजिक यथार्थ का चित्रण

उनकी कहानियों में समाज के विविध वर्गों, समस्याओं और परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण मिलता है। वे बच्चों को सामाजिक जीवन की वास्तविकताओं से परिचित कराती हैं। उषा यादव के बाल कथा–साहित्य की एक अत्यंत महत्वपूर्ण विशेषता उनकी कहानियों में सामाजिक यथार्थ का सजीव और प्रभावशाली चित्रण है। वे बाल साहित्य को केवल कल्पनाओं तक सीमित नहीं रखतीं, बल्कि उसे समाज की वास्तविक परिस्थितियों से जोड़ती हैं। उनकी कहानियाँ बच्चों को जीवन की सच्चाइयों से परिचित कराती हैं और उन्हें समाज के प्रति सजग एवं संवेदनशील बनाती हैं। उनकी कथाओं में समाज के विभिन्न वर्गों गरीब, मध्यमवर्गीय और संपन्न का संतुलित चित्रण देखने को मिलता है। वे आर्थिक असमानता, संसाधनों की कमी, शिक्षा के अवसरों में अंतर आदि विषयों को बच्चों के स्तर के अनुरूप सरलता से प्रस्तुत करती हैं। इससे बच्चे समाज की विविधताओं को समझते हैं और उनमें सहानुभूति एवं सहयोग की भावना विकसित होती है। उषा यादव की कहानियों में सामाजिक समस्याओं का यथार्थपरक प्रस्तुतीकरण भी प्रमुख रूप से दिखाई देता है। जैसे गरीबी, अशिक्षा, बाल श्रम, लैंगिक असमानता, पारिवारिक तनाव आदि मुद्दों को वे अत्यंत संवेदनशीलता के साथ चित्रित करती हैं। वे इन समस्याओं को भयावह रूप में प्रस्तुत नहीं करतीं, बल्कि इस प्रकार दिखाती हैं कि बच्चे उन्हें समझ सकें और उनसे सकारात्मक सीख ग्रहण कर सकें। इसके अतिरिक्त, उनकी कहानियों में पारिवारिक और सामाजिक संबंधों का गहरा चित्रण मिलता है।[6] माता–पिता, भाई–बहन, मित्र और शिक्षक के साथ बच्चों के संबंधों को वे बड़ी सहजता और

यथार्थता के साथ प्रस्तुत करती हैं। इससे बच्चों को अपने संबंधों को समझने और उन्हें सुदृढ़ बनाने की प्रेरणा मिलती है। उनकी कथाओं की एक विशेषता यह भी है कि वे समाज में व्याप्त अच्छाइयों और बुराइयों दोनों को संतुलित रूप प्रस्तुत करती हैं। जहाँ एक ओर वे सामाजिक कुरीतियों और समस्याओं को उजागर करती हैं, वहीं दूसरी ओर सकारात्मक पहलुओं जैसे सहयोग, सहानुभूति, एकता और मानवीयता को भी प्रमुखता देती हैं। इससे बच्चों में सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास होता है।

उषा यादव बच्चों को केवल दर्शक नहीं बनातीं, बल्कि उन्हें सक्रिय भागीदार के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियों में बच्चे सामाजिक समस्याओं को समझते हैं और कभी उनके समाधान में भी योगदान देते हैं। यह दृष्टिकोण बच्चों में आत्मविश्वास और सामाजिक जिम्मेदारी की भावना को विकसित करता है। अततः यह कहा जा सकता है कि उषा यादव का बाल कथा–साहित्य सामाजिक यथार्थ का एक सशक्त दर्पण है। उनकी कहानियाँ बच्चों को समाज की वास्तविकताओं से परिचित कराते हुए उन्हें संवेदनशील, जागरूक और जिम्मेदार नागरिक बनने की दिशा में प्रेरित करती हैं।

5 कल्पनाशीलता और रोचक

उनकी कथाओं में कल्पना और यथार्थ का संतुलन है, जो बच्चों को आकर्षित करता है और उनकी सृजनात्मक क्षमता को विकसित करता है। उषा यादव के बाल कथा–साहित्य की एक अत्यंत आकर्षिक विशेषता उनकी कहानियों में निहित कल्पनाशीलता और रोचक ता है। बाल साहित्य का मूल स्वभाव ही कल्पना से जुड़ा होता है, और उषा यादव इस तथ्य को भली–भाँति समझते हुए अपनी कहानियों में कल्पना और यथार्थ का सुन्दर संतुलन स्थापित करती हैं। सबसे पहले, उनकी कहानियों में कल्पनाशीलता का अद्‌भुत विस्तार देखने को मिलता है। बच्चे स्वभावतः कल्पनाशील होते हैं और अपने चारों ओर की दुनिया को नए–नए रूपों में देखने का प्रयास करते हैं। उषा यादव इस बाल–स्वभाव को अपनी कथाओं में सजीव रूप देती हैं। वे साधारण घटनाओं को भी कल्पनात्मक रंग देकर उन्हें रोचक और आकर्षिक बना देती हैं। उनकी कहानियों में कभी वस्तुएँ बोलती हुई प्रतीत होती हैं, तो कभी बच्चे अपनी कल्पना के माध्यम से असंभव को संभव बना लेते हैं। उनकी कहानियों में रोचक ता का विशेष ध्यान रखा गया है। कथानक इस प्रकार रचा जाता है कि पाठक की जिज्ञासा प्रारंभ से अंत तक बनी रहती है। घटनाओं का क्रम, पात्रों का विकास और परिस्थितियों का निर्माण इस प्रकार किया जाता है कि कहानी में उत्सुकता बनी रहे और बच्चे उसे पूरा पढ़ने के लिए प्रेरित हों।[7]

उषा यादव की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वे कल्पना और यथार्थ के बीच संतुलन बनाए रखती हैं। वे न तो केवल कल्पना की उड़ान भरती हैं और न ही केवल यथार्थ की कठोरता को प्रस्तुत करती हैं, बल्कि दोनों का समन्वय करती हैं। इससे बच्चे न केवल आनंद लेते हैं, बल्कि वास्तविक जीवन की समझ भी विकसित करते हैं। उनकी कहानियों में रचनात्मकता को प्रोत्साहित करने की प्रवृत्ति भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। वे बच्चों को नए विचारों के प्रति प्रेरित करती हैं और उन्हें अपनी सोच का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित करती हैं। इस प्रकार, उनकी कहानियाँ बच्चों के बौद्धिक विकास में सहायक होती हैं। इसके अतिरिक्त, उनकी कथाओं में मनोरंजन और शिक्षा का संतुलन भी देखने को मिलता है। रोचक घटनाएँ, संवाद और कल्पनात्मक प्रसंग बच्चों को आनंदित करते हैं, जबकि उनमें निहित संदेश उन्हें जीवन के महत्वपूर्ण पहलुओं से परिचित कराते हैं। उषा यादव की कहानियों की रोचकता का एक अन्य कारण उनकी सरल और प्रवाहमयी शैली भी है, जो बच्चों को कहानी से जोड़े रखती है। वे कहानी को इस प्रकार प्रस्तुत करती हैं कि बच्चों को न तो कहीं ऊबापन महसूस होता है और न ही जटिलता का अनुभव होता है।[8] अंततः यह कहा जा सकता है कि कल्पनाशीलता और रोचकता उषा यादव के बाल कथा–साहित्य की आत्मा है। उनकी कहानियाँ बच्चों को एक ऐसी दुनिया में ले जाती हैं, जहाँ वे आनंद के साथ–साथ सीख भी प्राप्त करते हैं।

वर्तमान समय में जब बच्चे तकनीकी माध्यमों की ओर अधिक आकर्षित हो रहे हैं, तब गुणवत्तापूर्ण बाल साहित्य की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। ऐसे में उषा यादव का बाल कथा–साहित्य बच्चों को न केवल मनोरंजन प्रदान करता है, बल्कि उन्हें जीवन के मूल्यों से भी जोड़ता है।

उनकी कहानियाँ बच्चों में –

- नैतिक चेतना
- सामाजिक समझ

• आत्मविश्वास
• संवेदनशीलता

का विकास करती हैं। इसलिए उनके बाल कथा–साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन अत्यंत आवश्यक है। उषा यादव का बाल कथा–साहित्य वर्तमान शिक्षा प्रणाली और बाल विकास के संदर्भ में अत्यंत उपयोगी है। उनकी कहानियाँ बच्चों को जीवन के विभिन्न पहलुओं से परिचित कराती हैं और उन्हें एक बेहतर नागरिक बनने की प्रेरणा देती हैं। आज के प्रतिस्पर्धात्मक और तनावपूर्ण वातावरण में बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए ऐसे साहित्य की आवश्यकता है, जो उन्हें मानसिक संतुलन, नैतिकता और सामाजिक समझ प्रदान कर सके।[9] उषा यादव का साहित्य इस आवश्यकता को पूर्ण करता है। उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि उषा यादव का बाल कथा–साहित्य हिंदी बाल साहित्य की एक महत्वपूर्ण धरोहर है। उनकी कहानियाँ न केवल बच्चों के लिए मनोरंजक हैं, बल्कि वे उनके व्यक्तित्व के निर्माण में भी सहायक हैं। इस प्रकार, उषा यादव के बाल कथा–साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन न केवल साहित्यिक दृष्टि से, बल्कि शैक्षिक एवं सामाजिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह अध्ययन बाल साहित्य की दिशा और विकास को समझने में सहायक सिद्ध होगा। उषा यादव का बाल साहित्य बहुआयामी है। उन्होंने बाल कहानियों, बाल उपन्यासों, लोरियों, बाल कविताओं और नाटकों में लिखा है।[10]

बाल कहानियों के अलावा उन्होंने 'पारस पत्थर', 'रसगुल्ला', 'डायरी', 'तस्वीरें', 'दीप से दीप जले', 'गुस्सा हैं हम जाओ जी', 'उफ बस्ता कितना भारी है', 'सो जाओ अब, रात हो गई' जैसी लोकप्रिय कहानियाँ और कविताएँ रची। बाल उपन्यासों में उनकी यात्रा 1990 के दशक से शुरू हुई और अब तक 15 से अधिक बाल उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। इनमें 'पारस पत्थर' (चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट), 'महारास', 'कनिका का विश्व भ्रमण', 'जल पर बिखर गया है सोना' आदि उल्लेखनीय हैं। उनके बाल उपन्यास समग्र (3 खंडों में) भी उपलब्ध हैं। उनकी रचनाएँ बच्चों के लिए होने के बावजूद सभी आयु वर्ग के पाठकों को आकर्षित करती हैं, क्योंकि इनमें सरल भाषा के साथ गहन मनोवैज्ञानिक अंतर्दृष्टि है।

6 ''भाषा और शैली का विश्लेषण''

उषा यादव की बाल कथाओं की सबसे बड़ी विशेषता उनकी सरल, सहज और प्रभावपूर्ण भाषा है। वे बालकों की समझ के अनुरूप शब्दों का चयन करती हैं, लेकिन भाषा कभी भी बचकानी या कृत्रिम नहीं लगती। उन्होंने बोलचाल की हिंदी, मुहावरों और लोकोक्तियों का कुशल प्रयोग किया है, जो कहानियों को जीवंत बनाता है। उदाहरणस्वरूप, उनकी कहानियों में संवाद बच्चों की वास्तविक बोलचाल को प्रतिबिंबित करते हैं जैसे स्कूल जाते बच्चों की शिकायतें, दोस्तों के बीच की ठिठोलियाँ या माता–पिता से की जाने वाली जिद। शैली वर्णनात्मक और कथात्मक दोनों है। वे दृश्यों का चित्रण इतना जीवंत करती हैं कि बच्चा स्वयं को कहानी का हिस्सा महसूस करता है। कई कहानियों में जादुई तत्व और वास्तविकता का सुंदर मिश्रण है।[11] जैसे 'चॉकलेट का पेड़' में कम्प्यूटर गेम और स्वप्न की दुनिया का वैज्ञानिक ढंग से चित्रण किया गया है, जो बाल मन की कल्पनाशीलता को उत्तेजित करता है। उनकी शैली में उपदेशात्मकता है, लेकिन यह सीधे–सीधे उपदेश के रूप में नहीं आती। नैतिकता कहानी के स्वाभाविक विकास से उभरती है। इससे बच्चों में मूल्यों का अंतःकरण होता है, न कि जबरन थोपना। उनकी लोरियों और बाल कविताओं में लय, ताल और सरलता है जैसे 'तू सो जा मेरी लाडली', 'सुनते–सुनते लोरी', 'सो जाओ अब' आदि। इनमें मातृत्व की कोमलता और बाल सुलभ मासूमियत दोनों विद्दमान है।

7. विषय–वस्तु और सामाजिक चेतना

उषा यादव की कहानियाँ केवल मनोरंजन तक सीमित नहीं हैं। वे समकालीन समाज की चुनौतियोंकृ पर्यावरण, विज्ञान, परिवार, दोस्ती, साहस, लिंग समानता आदि को बाल दृष्टि से प्रस्तुत करती हैं।

- **बाल मनोविज्ञान पर आधारित कहानियाँः** उनकी रचनाएँ बालकों की जिज्ञासा, भय, क्रोध, अनुकरण प्रवृत्ति और स्वप्नों को केंद्र में रखती हैं। ''उफ! बस्ता कितना भारी है'' जैसे शीर्षक स्कूली बच्चों की वास्तविक पीड़ा को व्यक्त करते हैं। ''गुस्सा हैं हम जाओ जी'' क्रोध प्रबंधन पर रोचक ढंग से प्रकाश डालती है।
- **साहसिक और ऐतिहासिक तत्वः** कई कहानियों में साहस, अन्वेषण और ऐतिहासिक बोध है। वे बच्चों को राष्ट्रीय गौरव और सांस्कृतिक विरासत से जोड़ती हैं।

- **वैज्ञानिक बोधः** ''चॉकलेट का पेड़'' जैसी कहानी में विज्ञान और कल्पना का मेल है। कंप्यूटर, स्वप्न और वास्तविकता का संयोजन बालकों में वैज्ञानिक सोच विकसित करता है।
- **सामाजिक और नारी विमर्शः** हालाँकि मुख्यतः बाल साहित्य, लेकिन उनकी कहानियों में लड़कियों की भूमिका सशक्त है।[12] वे लिंग–भेदभाव, कन्या–जन्म जैसी सामाजिक कुरीतियों पर भी सूक्ष्म ढंग से टिप्पणी करती हैं (जैसे उनके वयस्क उपन्यासों में भी यह झलकता है)। बाल कहानियों में दोस्ती, परिवार और सहयोग जैसे मूल्य प्रमुख हैं।
- **पर्यावरण और नैतिकताः** कैक्टस, पेड़–पौधे, जानवर आदि के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण का संदेश दिया जाता है।

उनकी कहानियाँ मध्य वर्ग से लेकर सामान्य परिवारों तक के बच्चों को प्रतिनिधित्व देती हैं, जिससे बाल साहित्य की सीमाएँ विस्तृत होती हैं।

8 पात्र–चित्रण और कलात्मकता

उषा यादव के पात्र जीवंत और बहुआयामी हैं। बच्चे पात्र मासूम, जिज्ञासु, कभी शरारती और कभी गंभीर होते हैं। वे आदर्श नहीं, बल्कि वास्तविक दोष–गुणों वाले दिखाए जाते हैं, जिससे बच्चे स्वयं को उनसे जोड़ पाते हैं। वयस्क पात्र (माता–पिता, शिक्षक) सहयोगी और मार्गदर्शक के रूम में आते हैं, न कि दमनकारी के रूम में। पशु–पक्षी और जादुई पात्र भी कहानी को रोचक बनाते हैं। कलात्मकता के स्तर पर वे प्रतीकात्मकता का उपयोग करती हैं जैसे ' पारस पत्थर' में स्पर्श से सोना बनाने का प्रतीक अच्छे कर्म या ज्ञान का हो सकता है। संरचना में शुरूआत आकर्षक, मध्य में संघर्ष और अंत में सकारात्मक संदेश होता है।[13]

उषा यादव के योगदान का मूल्यांकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने बाल साहित्य को आधुनिक दृष्टिकोण प्रदान किया है। उनकी रचनाएँ बच्चों को केवल पाठक नहीं बल्कि विचारशील व्यक्ति बनाने का प्रयास करती हैं। उनके रचनाओं में यह संदेश मिलता है कि बच्चे समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं और उनके अनुभवों को गंभीरता से समझाना आवश्यक है।

संदर्भ–सूची

1. यादव, उषा. (2005). नन्हा दधीचि. नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन।
2. यादव, उषा. (2008). लाखों में एक. नई दिल्लीः बाल साहित्य प्रकाशन।
3. यादव, उषा. (2010). यहाँ सुमन बिखेर दो. नई दिल्लीः साहित्य भवन।
4. यादव, उषा. (2012). बाल कहानियाँ (संकलन), नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट।
5. यादव, उषा. (2015). हिंदी की श्रेष्ठ बाल कहानियाँ. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
6. शर्मा, रामकुमार. (2011). हिंदी बाल साहित्य का इतिहास. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन।
7. गुप्ता, श्यामसुंदर. (2013). बाल साहित्यरू सिद्धांत और विकास. इलाहाबादः लोकभारती प्रकाशन ।
8. सिंह, मीनाक्षी. (2016). बाल मनोविज्ञान और साहित्य. नई दिल्लीः ज्ञानदीप प्रकाशन ।
9. वर्मा, अर्चना. (2014). हिंदी बाल कथा साहित्य का स्वरूप, वाराणसीः विश्वविद्यालय प्रकाशन।
10. मिश्रा, देवेंद्र. (2017). बाल साहित्य और समकालीन संदर्भ, नई दिल्लीः साहित्य अकादमी।
11. त्रिपाठी, राधेश्याम. (2012). बाल साहित्य की प्रवृत्तियाँ. इलाहाबादः हिंदी साहित्य सम्मेलन।
12. द्विवेदी, रामप्रसाद. (2018). हिंदी साहित्य में बाल विमर्श. नई दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन।
13. कुमारी, सुनीता. (2019). बाल कथा साहित्य का मनोवैज्ञानिक अध्ययन. पटनाः बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी।

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/1

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Vinita Sharma

(Sanskrit department)

Monad University, Hapur

for the paper titled,

कालिदास के साहित्य में नारी : एक आलोचनात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 11-15

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/2

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० सुमन कुमारी

आरा, बिहार

for the paper titled,

मैत्रयी पुष्पा के उपन्यासों मे नारी विमर्श : एक आलोचनात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 16-19

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/3

Certificate of Publication

is awarded to

शिल्पी सक्सेना

पीएचडी शोधार्थी, हिन्दी विभाग,

महात्मा ज्योतिबा फुले रूहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली

प्रोफेसर निशात बानो

(विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग) शोध पर्यवेक्षक,

राजकीय महिला पी. जी. महाविद्यालय, रामपुर 244901

for the paper titled,

नागार्जुन के उपन्यासों में स्त्री

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 20-25

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/4

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. भाविनकुमार अंबालाल वणकर

सहायक प्राध्यापक,

नवगुजरात आर्ट्स एंड कोमर्स कोलेज, बालासिनोर, (गुजरात)

for the paper titled,

भारतीय समाज में अंधविश्वास के प्रतिरोध में उभरती दलित चेतना

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 26-28

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/5

Certificate of Publication

is awarded to

प्रियंका

शोधार्थी

हिन्दी-विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय चंडीगढ़।

for the paper titled,

अर्चना पैन्यूली के उपन्यास 'परिवर्तन' में अन्तरपीढ़ी संघर्ष

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 29-32

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/6

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Vinita Sharma

(Sanskrit department)
Monad University, Hapur

for the paper titled,

भगवद्गीता में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा: एक आलोचनात्मक अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 33-36

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/7

Certificate of Publication

is awarded to

मोनिका
शोधार्थी,
हिंदी विभाग महर्षि विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा

डॉ० अनिल कुमार
सहायक प्रोफेसर,
हिंदी विभाग महर्षि विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा

for the paper titled,

आदिवासी समाज की सामाजिक एवं राजनितिक स्थिति

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 37-42

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/8

Certificate of Publication

is awarded to

सुनीता कुमारी
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड)

for the paper titled,

स्त्री विमर्श आधुनिक युग के संदर्भ में

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 43-45

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/9

Certificate of Publication

is awarded to

अलिका कुमारी

शोधार्थी,

विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची

संप्रति-सहायक शिक्षिका (हिन्दी)

राजकीय कन्या उत्क्रमित उच्च विद्यालय सरायकेला ।

for the paper titled,

केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रेम

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 46-50

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/10

Certificate of Publication

is awarded to

विवेक सोनी
शोधकर्ता
भूगोल विभाग,
पद : सहायक आचार्य भूगोल
माता भगवती देवी देव संस्कृति महिला कला महाविद्यालय,
सीसवालीं जिला बारां (राजस्थान)

for the paper titled,

हाडौती की हथकरघा विरासत और स्वाधीनता संग्रामः मांगरोल के खादी उद्योग का ऐतिहासिक व सामाजिक-आर्थिक विश्लेषण

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 51-56

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/11

Certificate of Publication

is awarded to

ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ

ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ

ਡੀ.ਏ.ਵੀ ਕਾਲਜ, ਬਠਿੰਡਾ।

for the paper titled,

ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਵਰਿਆਮ ਮਸਤ ਦਾ ਸਥਾਨ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 57-62

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/12

Certificate of Publication

is awarded to

ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ ਬਲਵਿੰਦਰ ਕੌਰ

ਸਹਾਇਕ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ

ਡੀ ਏ ਵੀ ਕਾਲਜ ਬਠਿੰਡਾ

for the paper titled,

ਮਾਂ ਬੋਲੀ ਦਾ ਮਹੱਤਵ

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 63-67

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/13

Certificate of Publication

is awarded to

Keerthi P R

Research Scholar,

Department of Political Science,

University College, Thiruvananthapuram, Kerala

for the paper titled,

Gendered Encounters with Policing and the Reconstitution of State Accountability

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 68-71

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/14

Certificate of Publication

is awarded to

ब्लेस्सनराजू
शोधार्थी,
हिंदी विभाग, केरल विश्वविद्यालय

for the paper titled,

समकालीन प्रेम का समाजशास्त्र और काव्य-चेतना: 'पनसोखा है इन्द्रधनुष' के विशेष संदर्भ में

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 72-76

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/15

Certificate of Publication

is awarded to

अमित कुमार यादव
शोधार्थी,
काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी -221005

for the paper titled,

यात्रा-साहित्य और जनपदीयता का अंतर्संबंध

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 77-79

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/16

Certificate of Publication

is awarded to

Dr.Amalakumary.B

Assistant Professor in Hindi ,

SVR NSS College, Vazhoor.

for the paper titled,

उपेन्द्रनाथ अश्क -हिन्दी नाटक के यथार्थवादी स्वर

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 80-83

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/17

Certificate of Publication

is awarded to

ਅਵਤਾਰ ਸਿੰਘ,
ਖੋਜਾਰਥੀ,
ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪਟਿਆਲਾ

for the paper titled,

ਡਾ. ਰਘਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬੈਂਸ : ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਯੋਗਦਾਨ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 84-89

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/18

Certificate of Publication

is awarded to

प्रो. विरेंद्र मुवेल

सहायक प्राध्यापक,वाणिज्य,

वी.बी.के.एन. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा जिला बड़वानी(म. प्र.)

for the paper titled,

भारतीय ज्ञान परंपरा और मानव संसाधन प्रबंधन: एक वर्णनात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 90-96

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/19

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. सुल्तान मोरे

सहायक प्राध्यापक,

पद्मश्री लेट कांताबेन त्यागी शासकीय महाविद्यालय, निवाली जिला बड़वानी (मध्यप्रदेश)

for the paper titled,

बढ़ते आर्थिक विकास का पर्यावरण पर प्रभाव: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 97-104

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/20

Certificate of Publication

is awarded to

अंजना प्रसाद . एस

शोधार्थी,

केरल विश्वविद्यालय, कार्यकट्टम कैंपस, तिरुवनन्तपुरम

for the paper titled,

'दीवार में एक खिड़की रहती थी' : आम आदमी की रोज़मर्रा की ज़िंदगी का दस्तावेज़

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 105-107

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/21

Certificate of Publication

is awarded to

मालोती बांगठाई

सहायक प्रोफेसर, हिंदी

गोलाघाट वाणिज्य महाविद्यालय (स्वायत्त) गोलाघाट, असम -785621

for the paper titled,

"असमिया लोक साहित्य: सामान्य परिचय एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष"

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 108-113

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/22

Certificate of Publication

is awarded to

वागीश तिवारी

प्रयागराज

for the paper titled,

मलयज की डायरी: सृजन के विविध आयाम

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 114-121

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/23

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० चन्द्रप्रभा कण्डवाल
अससीटेंट प्रोफेस (भूगोल विभाग),
रा० स्नातकोत्तर महाविद्यालय कोटद्वार पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

for the paper titled,

कण्वाश्रम का ऐतिहासिक भौगोलिक विश्लेषण

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 122-126

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/24

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० रेणु देवी

सहायक प्राध्यापक(हिंदी विभागाध्यक्ष)

रानी धर्म कुमार राजकीय महाविद्यालय दल्लावाला,खानपुर, हरिद्वार (उत्तराखंड)

पिनकोड- 247663

for the paper titled,

पद्य साहित्य के अनुवाद की चुनौतियाँ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 127-130

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/25

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० अंकित भोई

सहायक प्राध्यापक (हिन्दी),

शासकीय नवीन महाविद्यालय पिरद, जिला महासमुंद (छत्तीसगढ़)

for the paper titled,

1084वें की माँ : एक किशोरवय बागी की क्रांति गाथा

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 131-134

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/26

Certificate of Publication

is awarded to

Breese k Rudhan

Research Scholar,

PG Department of Hindi and Research Center,

Government Art and Science College Kozhikodw.

Affiliated to University of Calicut. Kerala India.

Dr. Hema. G

Research Supervisor,

Associate Professsor(Rtd)

PG Department of Hindi and Research Center,

Government Art and Science College Calicut.

for the paper titled,

'मुड़-मुड़के देखता हूँ' (राजेन्द्र यादव) में प्रतिरोध

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 135-143

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/27

Certificate of Publication

is awarded to

Risana CP

Research Scholar,

Department of Political Science,

University College, Thiruvananthapuram

for the paper titled,

State Intervention in the Context of Forced Return: Nitaqat and Kerala's Policies on Migrant Reintegration

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 144-148

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/28

Certificate of Publication

is awarded to

कमलेश कुमार मीना
असिस्टेंट प्रोफेसर
शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय सवाईमाधोपुर

for the paper titled,

सामाजिक नियमों के पुनर्मूल्यांकन का आग्रह
(काशीनाथ सिंह के उपन्यास 'महुआचरित' के संदर्भ में)

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 149-153

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/29

Certificate of Publication

is awarded to

अजय सिंह

सहायक प्राध्यापक,

फातमा टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, दुबलिया, चंदवे, काँके, राँची

for the paper titled,

"झारखण्ड के लोक संगीत के शैक्षिक उपयोग एवं विद्यार्थियों के सांस्कृतिक बोध के विकास का अध्ययन"

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 154-158

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/30

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० हेलन मेरी ए जे

अस्सिस्टेंट प्रोफेसर

हिंदी विभाग, सेंट आलबर्टस कॉलेज (स्वायत्त) एर्नाकुलम केरला

for the paper titled,

संजीव के 'धार' उपन्यास में आदिवासी जीवन का संघर्ष और संवेदना

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 159-164

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/31

Certificate of Publication

is awarded to

फरहीन

शोधार्थी (हिंदी विभाग),

एमबीपीजी कॉलेज हल्द्वानी कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

for the paper titled,

आधुनिक हिंदी प्रबंधकाव्य: ह्रास और रूपांतरण

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 165-168

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/32

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. परम सिंह बरडे

सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र)

वीर बलिदानी खाज्या नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेन्धवा जिला बड़वानी (म.प्र.)

for the paper titled,

बारेला जनजाति में पलायन की प्रवृत्ति तथा उसके स्वरूप का अध्ययन (बड़वानी जिले के विशेष संदर्भ में)

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 169-171

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/33

Certificate of Publication

is awarded to

गुडिया शाक्य
शोधार्थी-(हिन्दी)
ने०मे०शि०ना०दास पी०जी० कालेज बदायूँ
म०ज्यो०फु०रु०वि०वि० बरेली

डॉ० गौरव रस्तोगी
असि०प्रो० हिन्दी विभाग
ने०मे०शि०ना०दास पी०जी० कालेज बदायूँ
म०ज्यो०फु०रु०वि०वि० बरेली

for the paper titled,

'आधागाँव' उपन्यास में सौहार्द एवं साम्प्रदायिकता

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 172-175

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/34

Certificate of Publication

is awarded to

जगदीश उराँव

शोधार्थी,

विश्वविद्यालय कुँड़ुख़ विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची |

for the paper titled,

पड़हा ईयार-सइहा अरा टून्टा खूटा

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 176-179

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/35

Certificate of Publication

is awarded to

शुभम शर्मा
शोधार्थी,
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग ,
जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सांबा, जम्मू एवं कश्मीर- 181143

for the paper titled,

जितेन्द्र श्रीवास्तव के काव्य में स्त्री जीवन की विविध छवियाँ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 180-184

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/36

Certificate of Publication

is awarded to

कृष्णा उराँव

शोधार्थी,

विश्वविद्यालय कुँड़ुख़ विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची |

for the paper titled,

आदिवासी 'उराँव' समाज की पारंपरिक पर्व-त्योहारों में हावी होती आधुनिकता

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 185-187

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/37

Certificate of Publication

is awarded to

बबीता कुमारी
शोधार्थी हिन्दी,

डॉ०अरुण लता वर्मा
एसो० प्रोफेसर हिन्दी विभाग,शोध निर्देशक ,
एम०एम ०एच ०कॉलिज, गाज़ियाबाद

for the paper titled,

हिन्दी यात्रा-साहित्यः भाषागत वैशिष्ट्य

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 188-193

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/38

Certificate of Publication

is awarded to

गोविन्द कुमार
शोध छात्र,
हिन्दी और अन्य भारतीय भाषा विभाग,
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी

for the paper titled,

"समकालीन हिन्दी कविता में जन सरोकार और मानवीय मूल्य"

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 194-200

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/39

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. अश्विनी कुमार

सहायक प्रोफेसर, अतिथि संकाय, संस्कृत विभाग,
हि. प्र. विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय केन्द्र, धर्मशाला।

for the paper titled,

बुद्धचरित में प्रतिपादित चार आर्यसत्य

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 201-203

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/40

Certificate of Publication

is awarded to

आशीष कुमार
शोधार्थी,
रक्षा अध्ययन विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

for the paper titled,

बदलते भू-राजनीतिक परिदृश्य में हिंद महासागर : भारत की भूमिका का विश्लेषण

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 204-207

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/41

Certificate of Publication

is awarded to

रामजीत राम

सहायक अध्यापक,

इण्टर कॉलेज खलिसपुर

एम०ए० आधुनिक इतिहास, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

for the paper titled,

भारत छोड़ो आन्दोलन : पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार के सन्दर्भ में

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 208-211

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/42

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. जे. अजिता कुमारी,
Assistant Professor,
Nirmala College Muvattupuzha

for the paper titled,

आधुनिक जीवन में पारिवारिक विघटन और मानवीय मूल्यों का संकट

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 212-215

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/43

Certificate of Publication

is awarded to

सुजिता एल.

शोधार्थी,

हिंदी विभाग, कार्यवट्टम कैंपस, केरल विश्वविद्यालय, तिरुवनंतपुरम

for the paper titled,

केरल के वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं में राजभाषा हिंदी की समस्याएँ

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 216-219

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/44

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० अमित कुमार

सहायक आचार्य,

राजनीति विज्ञान विभाग, के० बी० पी० जी० कालेज मिर्जापुर

for the paper titled,

खाड़ी देशों में राजनितिक अस्थिरता और भारत के ऊर्जा हित : कच्चे तेल एवं प्राकृतिक गैस की आपूर्ति के संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 220-224

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. August 2026/45

Certificate of Publication

is awarded to

आशा कुमारी

सहायक प्राध्यापक (हिन्दी विभाग)

रमा देवी बाजला महिला महाविद्यालय, देवघर ।

for the paper titled,

उषा यादव के बाल कथा-साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

August 2026, Vol. 24, Issue-2(part-one), Page No. 225-231

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152